(10064)

जिनेन्दु

अहिंसक क्रांति का अग्रदूत

(हिन्दी-गुजराती साप्ताहिक)

महात्मा महाप्रज्ञ
अभिवन्दन विशेषांक

卐 **6 नवम्बर, 2005** 卐

वर्ष : 9 अंक : 45

प्रधान सम्पादक
• जिनेन्द्रकुमार •

विशिष्ट सहायक
• आर.के. जैन, जयपुर •
• अमृत जैन, जयपुर •

प्रबंध निदेशक
• धर्मेन्द्र जैन •

विशेष सहयोगी
• ललित सालेचा, अहमदाबाद •
• भूपेश जैन, सिलवासा •
• पारस जैन (सरावगी), बोरावड़ •

इस प्रति का मूल्य : रु. 100/- मात्र

('जिनेन्दु' के समस्त वार्षिक सदस्यों को निःशुल्क भेंट)

• प्रकाशक •

जिनेन्दु साप्ताहिक

टाइम्स प्रेस प्राईवेट लिमिटेड,
पोस्ट बॉक्स नं. 271, जे.पी. चौक, खानपुर,
अहमदाबाद-380001

वार्षिक : रु. 200/- दो वर्ष : रु. 300/-
पांच वर्ष रु 700/- आजीवन : रु. 2000/-
फोन (079) 25502999/25500811 अथवा अधिक
फैक्स 25501082 (कमसे कम अवधि दस वर्ष)

अनुक्रम

समग्र जैन समाज का एकमात्र साप्ताहिक समाचार पत्र 'जिनेन्दु' ने 'भगवान महावीर के 2600 वें जन्म कल्याणक' के पावन अवसर पर पांच सौ पेजों का एक शानदार विशेषांक का प्रकाशन किया था। इस विशेषांक का परमपूज्य आचार्य महात्मा महाप्रज्ञजी और परमपूज्य युवाचार्य श्री महाश्रमणजी के पावन सान्निध्य में गुजरात राज्य के पूर्व मुख्यमंत्री श्री केशुभाई पटेल ने लोकार्पण किया। चित्र में सम्पादक जिनेन्द्रकुमार जैन उपस्थित विशाल जनमेदिनी को सम्बोधित कर रहे हैं। समीप ही श्री केशुभाई पटेल विराजमान हैं।

महात्मा महाप्रज्ञ

✍ *जिनेन्द्रकुमार*

परम वन्दनीय आचार्य महाप्रज्ञजी वर्तमान युग के महान प्रभावक धर्मगुरू और विलक्षण प्रतिभा के धनी महात्मा हैं। धर्म संस्कृति के इतिहास में कुछेक महापुरूषों के नाम के संग 'महात्मा' सम्बोधन लगा है। महाभारत काल में महात्मा विदुर हुए, जो प्रखर विद्वान और न्याय शास्त्र ज्ञाता थे, बाद में महात्मा बुद्ध और महात्मा महावीर का अवतरण हुआ जिन्होने अपनी करूणा, साम्यता, अध्यात्मिकता और ज्ञान-दर्शन-चरित्र के गुणों से सकल जगत का मार्गदर्शन किया। महात्मा फूले भी इसी युग के महापुरूष हुए हैं, जिन्होंने समाज के अति दुर्बल, गरीब एवं दलित वर्ग को वाणी दी। महात्मा गांधी और महात्मा तुलसी तो समकालीन ही थे। यद्यपि ये दोनों महात्मा कभी एक-दूसरे से मिल नही पाये, लेकिन दोनों ही युगान्तिकारी और क्रांत दृष्टा थे। दोनों के विचारों और कार्यक्रमों में विशेष भेद नही था। विचारों की समानता के कारण दोनों स्वाभाविक रूप से एक दूसरे के पूरक बन गये।

महात्मा गांधी ने अहिंसा को क्रांति के रूप में अनुभव किया। उन्होंने देश को विदेशी दासता से मुक्ति दिलाने के लिए चल रहे आन्दोलन में अहिंसा और सत्य को प्रमुखता दी। फलतः विश्व के जिन देशों में स्वतंत्रता प्राप्ति के आन्दोलन चल रहे थे, उसमें हिंसा और मारकाट के स्थान पर अहिंसा और सत्याग्रह महत्वपूर्ण हो गये। महात्मा गांधीजी की अहिंसक क्रांति को शानदार कामयाबी मिली, देश में स्वराज्य स्थापित हो गया।

लेकिन इस स्वराज्य प्राप्ति की हमें बहुत बड़ी कीमत चुकानी पड़ी। देश का विभाजन हो गया। यही नहीं जिन लोगों ने सत्ता सम्भाली उनमें ऐसे लोगों की संख्या बढ़ने लगी जो देशभक्ति और जन सेवा श्री अपेक्षा व्यक्तिगत स्वार्थों और निजी आकांक्षाओं को ज्यादा महत्व देने लगे थे।

आजादी पाने के बाद भी देशवासी स्वयं को ठगे गये जैसा महसूस करने लगे थे। ऐसे में देश को बनाने, 'स्वराज' को 'सुराज' में बदलने का बीड़ा उठाया महात्मा तुलसी ने। उन्होंने 'अणुव्रत क्रांति' का श्री गणेश किया। महात्मा तुलसी को 'अणुव्रत कांति' की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि उन्होंने इसमें सरकार की सहायता नहीं ली। उन्होंनें अपने विराट एवं चुम्बकीय व्यक्तित्व के बल पर आम जनता को इस महा अभियान में सम्मलित किया। एक प्रकार से यह भी एक अनूठा प्रयोग था।

यह वह समय था जब महात्मा गांधी निराश हो कर कहने लगे थे कि मैं सवा सौ साल जीवित रहना चाहता

था, लेकिन देश की वर्तमान दयनीय हालत मुझसे देखी नही जाती। अपने ही लोग अपने ही लोगो के साथ बेशर्म व्यवहार कर रहे है। अत मै भगवान से प्रार्थना करता हू कि मै अब जीवित नहीं रहना चाहता ।

इस मायने मे महात्मा तुलसी महात्मा गांधी से अधिक दृढ संकल्प प्रतीत होते है। व महात्मा गांधी जी की तरह स्वतत्रता प्राप्ति के बाद की स्थितियो से निराश प्रतीत नही होते। अपने 'अणुव्रत आन्दोलन' के माध्यम से वे 'स्वराज' को 'सुराज' मे बदलने हेतु गतिशील और सक्रिय हो गये। देश के अग्रणी महानुभावो ने 'अणुव्रत आन्दोलन' की सार्थकता अनुभव की और धीमी रफ्तार से ही सही, लेकिन समग्र देशवासियो का ध्यान उन्होने इस दिशा में आकृष्ट किया।

'जिनेन्दु' के इस विशेषाक के महानायक महात्मा महाप्रज्ञ परमपूज्य गुरूदेव श्री तुलसी के सर्वोत्तम उत्तराधिकारी है। मेरी दृष्टि से महात्मा महाप्रज्ञ 'विश्व धर्म इतिहास' मे वर्णित समस्त महात्माओं के खास खास गुणो को स्वय मे सजोये हुए है। ये प्रज्ञा और ध्यान योग से सम्पन्न है। महान दार्शनिक है कवि, साहित्यकार और मनीषि है। गम्भीर से गम्भीर विषय को सहज ढग से समझाने की अपूर्व क्षमता रखते है।

महात्मा महाप्रज्ञ भारतीय सस्कृति, जैन सस्कृति और जैन आगम के ज्ञाता है। आगम सूत्रो की व्याख्या भी वैज्ञानिक और आधुनिक सदर्भ में करते है। यही कारण है कि ज्ञान पिपासु व्यक्ति, भले ही वह झोपडे मे रहनेवाला हो, अथवा ऊची अट्टालिका का वासी हो, इनकी अमृतवाणी से लाभान्वित हो सकता है/हो रहा है।

इनके प्रेक्षाध्यान, जीवन विज्ञान, अणुव्रत और अहिसा दर्शन के नित नये प्रयोगो से मानव समाज के जीवन मे आशा और विश्वास का सचार हुआ है। तेरापथ धर्मसघ को जन जन तक पहुचाने का आपने अथक प्रयास किया है। बहुचर्चित 'अहिसा यात्रा' से समाज मे समन्वय, भाई चारा और मैत्री भावना का विस्तार हुआ है।

परम पूज्य गुरूदेव श्रीजी का जीवन तप एव सयम का जीवन है। ये अहिसावादी सिद्धातो के सिर्फ द्रष्टा ही नहीं, प्रयोगकर्ता भी है। इनका मानना है कि दुनिया से भागे नहीं, उसे और अधिक सुन्दर बनाने का सतत प्रयास करे। सचमुच महात्मा महाप्रज्ञ इस युग के आलोक स्तम्भ है। अपने आराध्य गुरूदेव महात्मा तुलसी के साथ आपने कोलकाता से कन्याकुमारी तक की धरा पर पदचिन्ह अंकित किये है। आपके सुयोग्य नेतृत्व मे आपके उत्तराधिकारी युवाचार्य महाश्रमणजी भी विद्वानों, नेताओं, श्रमिको, किसानो, विद्यार्थियो के सच्चे मार्गदर्शक के रूप मे उभरे है।

जैन श्रावक का अपने पूज्य गुरूदेव को अभ्यर्थना करना, उनकी सेवा करना, उन्हे प्रसन्न रखना पुनीत कर्तव्य माना जाता है। शास्त्रो मे उल्लेख है कि जिस श्रावक पर गुरू का आशीर्वाद रहता है वह सदा सदा आनन्दित रहता है।

'जिनेन्दु' के हजारो पाठक परमपूज्य महात्मा महाप्रज्ञजी के श्रद्धालु है, उनसे मार्गदर्शन से लाभान्वित हुए है। यह विशेषाक हम अपने समस्त पाठको की ओर से गुरू चरणो मे सादर समर्पित कर रहे है। चूकि विशेषाक की उम्र साधारण अक की अपेक्षा कुछ अधिक लम्बी होती है। अत हमारा मानना है कि आगामी सौ वर्षो के बाद आने वाली पीढ़ी भी गुरूदवश्री के महान अनुदानो और उपकारो को न केवल समझेगी ही, अपितु उनके आदर्शों को अपने जीवन मे धारण कर उन्नति के पथ पर अग्रसर भी होगी।

'जिनेन्दु' अपने प्रिय पाठको की सेवा में यह विशेषाक निःशुल्क उपहार के रूप मे प्रेषित कर रहा है। विशेषाक प्रकाशन में कुछ कमिया रह गई है। आशा है, आप सभी मित्र इस पर विचार नहीं करेंगे, और जिस रूप मे विशेषाक प्रस्तुत कर रहे है, कृपापूर्वक स्वीकार कर अनुग्रहित करेगे।

अन्त मे इस विशेषाक मे जिन विद्वान महापुरूषो की रचनाए सकलित की गई है उनमे कुछ हमने इधर-उधर से एकत्रित की है, रचनाकार की स्वीकृति भी नहीं ले पाये। कुछ मित्रो ने हमे अपनी रचनाए तो प्रेषित की ही, साथ मे महत्वपूर्ण सामग्री प्रेषित की। अत इन सबका हम हृदय से आभार व्यक्त करते है।

हमारे जिन सरक्षक महापुरूषो ने इस विशेषाक मे विज्ञापन प्रदान कर आर्थिक और नैतिक सहयोग प्रदान किया है, उनके हम आभारी है। क्योंकि आधुनिक युग मे धन के बिना अनेक सार्थक काय होने से रह जाते है। अत हम धन का महत्त्व अनुभव करते है, और जिन महानुभावों ने आर्थिक सहयोग प्रदान कर हमारा उत्साह बढ़ाया, उनका बार-बार धन्यवाद ज्ञापित कर रहे है।

विशेषांक आपको कैसा लगा, कृपया अपनी प्रतिक्रिया से हम अवश्य ही अवगत करावे।

• जिनेन्द्रकुमार जैन
• धर्मेन्द्रकुमार जैन

अमृतपुरुष आचार्य श्री तुलसी

(परम पूज्य आचार्य महात्मा महाप्रज्ञजी के गुरुदेव श्रीजी)

✍ साध्वी संघमित्रा

जैनधर्म को जनधर्म का व्यापक रुप देकर उसकी गरिमा को प्रतिष्ठित करने में अहर्निश प्रयत्नसील, आगम, अनुसंधान, के महत्वपूर्ण कार्य में प्रवृत्त, साधना, शिक्षा और शोध की संगमस्थली, जैनविश्व भारती के अध्यात्म पक्ष को उन्नयन करने में दत्तचित अणुव्रत आन्दोलन के माध्यम से नैतिक मंदाकिनी को प्रवाहित कर वैयक्तिक, सामाजिक तथा राष्ट्रीय चरित्र को सुदृढ बनाने की दिशा में जागरुक, मानवता के मसीहा, युग प्रधान आचार्य श्री तुलसी का नाम प्रभावक आचार्यों की श्रेणी में सहज ही उभर आना है।

गुरु परम्परा

आचार्यश्री के दीक्षा गुरु तेरापंथ धर्मसंघ के अष्टामाचार्य 'कालूगणी' थे। आचार्य श्री तुलसी के जीवन का बहुमुखी विकास आचार्य कालूगणी के संरक्षण में हुआ। आचार्य कालूगणी से पूर्व गुरु परम्परा के आदिस्त्रोत तेरापंथ धर्मसंघ के प्रवर्त्तक आचार्य भिक्षु हैं।

जन्म एवं परिवार

आचार्य श्री तुलसी का जन्म वी. नि. 2441 (वि.सं. 1671) कार्तिक शुक्ला द्वितीया को राजस्थानन्तर्गत लाडनूं शहर के खटेड वंश में हुआ। पितामह का नाम राजरुपजी, पिताश्री का नाम झूमरमलजी एवं माता का नाम वदनाजी था। झूमरमलजी के 6 संतानों में ज्येष्ठ श्री मोहनलाल जी थे। अपने नौ भाई बहनों में आपका (आ.तुलसी) क्रम आठवां था।

जीवन वृत्त

आचायश्री तुलसी के बाल्यकाल का प्रथम दशक मां की ममता, परिवार का अमित स्नेह एवं धार्मिक वातावरण में बीता। जीवन के दूसरे दशक के प्रारम्भ में पूर्ण वैराग्य के साथ जैन श्वेताम्बर तेरापंथ संघ के अष्टमाचार्य श्री कालूगणी से ज्येष्ठ भगिनी लाडांजी सह वी. 2452 (वि.सं 1682) में दीक्षित हुए। ज्येष्ठ बन्धु चम्पालाल जी उनसे पूर्व दिक्षित थे।

भगिनी और युगल भ्राता खटेड वंश के ये तीनों रत्न तेरापंथ धर्मसंघ के अंलकार बने। कालान्तर में मुनि तुलसी आचार्य श्री तुलसी बने। साध्वी श्री लाडांजी साध्वी प्रमुखा पद पर नियुक्ति हुई एवं ज्येष्ठ बन्धु मुनि चम्पक सेवाभावी बने। आचार्यश्री तुलसी की जननी वदनाजी लगभग साठ वर्ष की उम्र में अपने ही पुत्र द्वारा दीक्षित होकर साध्वी बनी। यह इतिहास की विरल घटना है। साध्वी वदनांजी के जीवन में संयम तथा तप की ज्योति प्रज्जवलित थीं। उन्होंने 18 वर्ष तक एकान्तर तप की आराधना की। समता, सरलता और सौम्यभाव उनके जीवन के सहज गुण थे।

विनय वात्सल्य की प्रतिमूर्ति मातुश्री वदनाजी की विशिष्ट तपः साधना एवं संयम साधना से प्रभावित होकर आचार्यश्री तुलसी ने उन्हें साध्वी श्रेष्ठा पद से विभूषित किया। उनका 68 वर्ष की दीर्घ आयु में पूर्ण समाधि की अवस्था में स्वर्ग वास हुआ।

खटेड परिवार से तेरापंथ धर्मसंघ को इन चार महान आत्माओं के रुप में विशिष्ट देन हैं। इस परिवार के अन्य कई साधु साध्वी भी दिक्षित हुए है। आचार्य श्री तुलसी, मातुश्री वदनांजी, ज्येष्ठ भगिनी लाडांजी की दीक्षा मे प्रेरणा स्त्रोत प्रमुख रुप से सेवाभावी मुनिश्री चम्पालाल जी रहे।

आचार्य श्री तुलसी का मुनि जीवन अनुशासन की भूमिका पर विशेष प्रेरक था। सयम साधना स्वीकार कर लेने के बाद लघु वय मे दीक्षित मुनि तुलसी की चिंतनात्मक एवं मननात्मक शक्ति का स्त्रोत पठन पाठन मे प्रवाहित हुआ। व्याकरण कोष सिद्धान्त, काव्य, दर्शन, न्याय आदि विविध विषयों का उन्होने गम्भीर अध्ययन किया। वे संस्कृत, प्राकृत हिन्दी, राजस्थानी भाषा के अधिकारी विद्वान बने।

दुरुह ग्रन्थों की पारायणता केसाथ लगभग बीस हजार श्लोकों को कंठस्थ कर लेना उनकी सद्यः ग्राही स्मृति का परिचायक।

सोलह वर्ष की लघुवय मे वे विद्यार्थी मुनियों के शिक्षाकेन्द्र का सफलतापूर्वक संचालन करने लगे। उनकी आत्मीयता से विद्यार्थी बाल मुनियों को अन्त तोष प्राप्त होता था। यह उनकी अनुशासन कुशलता का सजीव निदर्शन था।

संयमी जीवन की निर्मल साधना, विवेक का जागरण, सूक्ष्म ज्ञान का विकास, सहनशीलता, धीरता आदि विविध विशेषताओं के कारण बाईस वर्ष की अल्पअवस्था मे सन्त तुलसी को महामनीषी आचार्य कालूगणी ने वी नि. 2463 (वि.स 1663) को गगापुर मे आचार्य पद का गुरु तर दायित्व प्रदान किया।

तेरापंथ जैसे विशाल एवं मर्यादित धर्मसंघ को युवक साधक का नतृत्व मिला। यह जनसंघ के इतिहास की विरल घटना थी, अवस्था एवं योग्यता का कोई अनुबन्ध नहीं होता।

तेरापंथ जैसे विशाल एवं मर्यादित धर्मसंघ को युवक साधक का नतृत्व मिला। यह जनसंघ के इतिहास की विरल घटना थी, अवस्था एवं योग्यता का कोई अनुबन्ध नहीं होता।

तरुण का उत्साह, नभ की विशालता,हंस मनीषा का विवेक लिए युवक सन्त नेता ने अपना कार्य सम्भाला। प्रतिरक्षण जागरुकता के साथ चरण आगे बढ़े। उद्‌बुद्ध विवेक हस्तस्थित दीपक की भांति मार्गदर्शक बना। सर्वप्रथम तेरापंथ के अन्तरंग विकास के लिये उनका ध्यान विशेष रुप से केन्द्रित हुआ। प्रगतिशील सघ का प्रमुख अंग शिक्षा है, श्रुतोपासना है। आचार्यश्री तुलसी ने सर्वप्रथम प्रशिक्षण का कार्य अपने हाथ में लिया। साधु-समाज का विद्या विकास पूज्य कालूगणी से प्रारम्भ हो गया था। आचार्य श्री तुलसी की दीर्घदृष्टि साध्वी समाज पर पहुंची। यह विषय पूज्य कालूगणी के चिन्तन मे भी था परन्तु कुछ परिस्थितियों के कारण यह फलवान नहीं हो सका। उसकी पूर्ति आचार्यश्री तुलसी ने की। साध्वियों की शिक्षा के लिए वे प्रयत्नशील बने। उनके चतुर्मुखी प्रगति के लिए शिक्षा केन्द्र, कला केन्द्र, परीक्षा केन्द्र और सेवा केन्द्र खुले। योग्य, योग्यतर एवं योग्यतम आदि परीक्षाओं के रुप में नवीन पाठ्यक्रम बने। उस समय से अब तक पाठ्यक्रम के कई रुप परिवर्तित हो गए हैं।

इन प्रयत्नों के फलस्वरुप साध्वी समाज के लिए बहुमुखी विकास के द्वार उद्घाटित हुए। मुनिवृन्द की भांति तेरापंथ धर्मसंघ की साध्वियों ने शिक्षा के क्षेत्र मे कई कीर्तिमान स्थापित किए हैं। आज अनेक विदुषी साध्वियां है। आज उनमें प्रभावक प्रवचनकार, संगीतकार, ग्रन्थरचनाकार तत्वज्ञा, विविध दर्शनो की मर्मज्ञा, आगमज्ञा तथा संस्कृत, प्राकृत आदि कई भाषाओं की विशेषता है।

साध्वी समाज की इस प्रगति के मूल प्रेरणा स्त्रोत आचार्य श्री तुलसी है। साध्वी शिक्षा के विकास में सहिष्णुता की प्रतिमूर्ति साध्वी प्रमुखा स्वर्गीया श्री लाडांजी का भी महान् योगदान रहा है।

साध्वी प्रमुखाश्री लाडांजी साध्वियों को मधुर शब्दों में अध्ययन के लाभ को समझाती, ज्ञानकणों को बटोरने के लिए अन्त:सनेह से उन्हे प्रेरित करती। भाषण, संगीत आदि की गोष्ठियां करवाती घंटों साध्वियों के बीच विराजकर ध्यान मे मग्न होकर उनको सुनती, उनका उल्लास बढ़ाती, उनको पुरस्कृत करती, अध्ययन शील साध्वियों को आवश्यक कार्यों से मुक्त रखकर अध्ययनानुकूल सुविधाएं और अवकाश प्रदान करती।

आचार्यश्री तुलसी के अनवरत परिश्रम एवं साध्वियां प्रमुखाश्री लाडांजी की सतत प्रेरणाओं का योग पाकर शिक्षा के क्षत्र मे साध्वी समाज गतिमान हुआ एवं आचार्यश्री कालूगणी का अधूरा स्वप्न साकार हुआ।

वर्तमान म तेरापथ का साध्वी समाज उच्चस्तरीय शिक्षा के पठन-पाठन में गम्भीर साहित्य सृजन मे एव आगमशोध महत्वपूर्ण कार्य मे प्रवृत्त है। भारतीय एवं भारतीयेतर भाषाओं पर उनका गहरा अध्ययन है। कवि, आशुकवि, लखक, वेयाकरण साहित्यकार के रुप मे श्रमण श्रमणी मंडली आचार्यश्री कालूगणी की वृहद कृपा एवं आचार्यश्री तुलसी की श्रमशीलता का सुमधुर परिणाम है। अध्ययन अध्यापन मे तेरापंथ धर्मसंघ अत्यधिक स्वावलम्बी है।

साध्वी समाज की शिक्षा क क्षत्र में अभूतपूर्व प्रगति हुई है। जैनधर्म की प्रभावना में साध्वी समाज का शिक्षा विकास महान् निमित्त बना है। इन सबके ऊर्जा केन्द्र आचार्यश्री तुलसी रहे है।

तपायोग की भूमिका भी आचार्यश्री तुलसी के शासनकाल मे पूर्वाचार्यों की अपेक्षा अधिक विस्तृत हुई थी। भद्रोत्तर तप, लघुसिह, तप, तेरह महीनों का आयम्बिल तप, एक सौ आठ दिन का निर्जल तप, आछ प्रयोग पर छहमासी, नवमासी, बारहमासी तप जैन शासन के तपोमय इतिहास की सुन्दर कडी हे।

जनकल्याण की दृष्टि से आचार्यश्री तुलसी ने 33 वर्ष की अवस्था मे अणुव्रत आन्दोलन का प्रवर्त्तन किया। अणुव्रत एक नैतिक आचारसंहिता है। जाति, लिंग, भाषा, वर्ण, वर्ग, सम्प्रदाय आदि से उपर उठकर यह आन्दोलन अपना काम कर रहा है।

'संयमः खलु जीवनम्' अर्थात् संयम ही जीवन है, इन आन्दोलन का उद्घोष है। अणुव्रत सर्वोदय है। वह सबके उदय की बात कहता है। वह मांग रहा है-

नारी समाज से शील और सादगी,
व्यापारियों से प्रमाणिकता और ईमानदारी,
पूंजीपतियों से करुणा और विसर्जन,
राज-कर्मचारियों से सेवा ओर त्याग,

नेताओं से सिद्धान्त-निष्ठा और मर्यादा,

धार्मिकों से सहिष्णुता और समन्वय।

अणुव्रत सबका है इसलिए सबका समर्थन इसे प्राप्त हुआ।

राजस्थान विधानसभा द्वारा पारित अणुव्रत सराहना प्रस्ताव और उत्तरप्रदेश विधानसभा द्वारा प्रशंसित सरकारी समर्थन इस आन्दोलन की प्रियता के उदाहरण है।

नैतिक अभियान की मशाल को कर में थामे आचार्यश्री ने अब तक लगभग पचास हजार से अधिक किलोमीटर की पदयात्रा की। लक्षाधिक व्यक्तियों ने अणुव्रत दर्शन का अध्ययन किया है। और सहस्रों व्यक्तियों ने अणुव्रत के नियमों को स्वीकारा है। यह आज राष्ट्रीय चरित्र आन्दोलन के रुप में समादृत हुआ है।

स्वर्गीय राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्रप्रसाद, डॉ. राधाकृष्णन, पूर्व प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरु, आचार्य विनोबाभावे, सर्वोदय नेता जयप्रकाश नारायण, मौलाना अब्दुल कलाम आजाद, डॉ.जाकिर हुसैन एवं डॉ. सम्पूर्णानन्द आदि शीर्षस्थ नेताओं ने इस अभियान की भूरि भूरि प्रशंसा की थी।

स्वर्गीय प्रधानमंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री ने कहा था "राष्ट्रीय चरित्र निर्माण और उन्नयन की दिशा में अणुव्रत एक महत्वपूर्ण भूमिका संकलन कर रहा है।"

अणुव्रत आन्दोलन की सर्व कल्याणकारी भावना ने नेताओं को ही नहीं जन - जन को प्रभावित किया है। सैकडो कार्यकर्ताओं भी इस आन्दोलन की प्रचार प्रसारात्मक प्रवृत्तियों के साथ जुड़े है। देशभर में एक नैतिक वातावरण बना है। बहुत से व्यसनी व्यक्ति व्यसन मुक्त होकर आनन्दमय स्वस्थ जीवन जीने लगे है। मिलावट विरोधी अभियान, मद्यपान, निषेध, संस्कार निर्माण आदि आयोजनों द्वारा सभी वर्गों मे वैचारिक क्रान्ति घटित हुई हैं।

आचार्यश्री तुलसी के शासनकाल में साधु साध्वियों की यात्राओं का विस्तार हुआ है। राजस्थान, उत्तरप्रदेश, बिहार, बंगाल, आसाम, सिक्किम, भूटान, मेघालय नागालैंड मिजोरम तमिलनाडु, कन्याकुमारी, केरल, कर्नाटक, आन्ध्रप्रदेश, महाराष्ट्र, गोवा, मध्यप्रदेश उड़ीसा, गुजरात, हरियाणा,पंजाब, हिमाचल प्रदेश, कश्मीर आदि भारत के प्रायः सभी प्रान्तों मे तथा भारत से बाहर भूटान, नेपाल में भी साधु साध्वियां पहुंचे हे। उन्होंने जनजन को मानवता का सन्देश दिया है एवं धर्म प्रचार का महान् कार्य किया है।

सदियों से उपेक्षित नारी जागरण हेतु आचार्यश्री तुलसी ने गम्भीर चिन्तन किया। जीवन अभ्युत्थान के लिए नए मोड की सुव्यवस्थित योजना प्रस्तुत कर उन्हें जीने की कला सिखाई। सादा जीवन उच्च विचार का प्रशिक्षण देकर अर्थहीन मूल्यों, अन्धविश्वासों एवं गलत परम्पराओं से नारी समाज को मुक्त किया है। अशिक्षा, पर्दाप्रथा, बालविवाह, वृद्धविवाह आदि रूढ़ियों की जड़ों का उन्मूलन हुआ है। आज आचार्यश्री तुलसी का अनुयायी नारी समाज अध्यात्म की गहराइयां एवं सामाजिक दायित्व को समझने लगा हे। अखिल भारतीय तेरापंथ महिला मंडल के नाम से उनका अपना सबल संगठन है। आचार्यश्री के सान्निध्य मे प्रतिवर्ष उनका वार्षिक सम्मेलन होता है। इसमे प्रशिक्षित नारियां समाज की विभिन्न गतिविधियों के सन्दर्भ में चिन्तन करती है। साम्य योगी, परम कारुणिक, नारी उद्धारक आचार्य श्री तुलसी की प्रेरणा और मार्गदर्शन से नारी समाज में कई नए उन्मेष उद्घाटित हुए है।

समण श्रेणी की स्थापना आचार्यश्री तुलसी के प्रगतिशील कार्यक्रमों की एक और कड़ी

है। इस श्रेणी मे दीक्षित समणीवर्ग द्वारा धर्मप्रभावना का व्यापक कार्य हो रहा है। जहां साधु साध्वियों नहीं पहुंच पाते वहां समणियां गई है। आचार्य प्रवर द्वारा प्रदत्त नैतिक सन्देश को उन्होंने विदेशों तक पहुंचाया है।

पारमार्थिक शिक्षण संस्था की मुमुक्ष बहनों की एवं जैन विश्व भारती की अध्यात्मन्मुखी प्रवृतियों का विकास आचार्यश्री के जीवनकाल की दो विशिष्ट उपलब्धियां है। आपकी प्रेरणा से आज जैन विश्व भारती विद्वानों शिक्षाविदो, दार्शनिकों एवं योग साधकों की जिज्ञासा का केन्द्र बना हुआ है।

जैन समन्वय की दिशा मे आचार्य श्री तुलसी अनवरत प्रयत्नशील है। आपके द्वारा प्रस्तुत पंचसूत्री योजना एवं त्रिसत्री योजना समसामायिक कदम है। पंचसूत्री योजना के निम्नोक्त बिन्दु है-

मण्डनात्मक नीति बरती जाएं, अपनी मान्यता का प्रतिपादन किया जाए। दूसरो पर मौखिक या लिखित आक्षेप नही किए जाएं।

दूसरों के विचारों के प्रति सहिष्णुता रखी जाए।

दूसरे सम्प्रदाय और उसके अनुयायियों के प्रति घृणा, तिरस्कार की भावना का प्रचार न किया जाए।

काई सम्प्रदाय परिवर्तन करे तो उसके साथ सामाजिक बहिष्कार आदि अवांछनीय व्यवहार न किया जाए।

धर्म के मौलिक तथ्य-अहिसा,सत्य, अचौर्य, अपरिग्रह को जीवन-व्यापी बनाने का सामूहिक प्रयत्न किया जाए।

वर्तमान म आचार्यश्री तुलसी ने त्रिसूत्री योजना के जो बिन्दु दिए है, वे इस प्रकार है-

जैन समाज म सम्वत्सरी पर्व एक हो।

समस्त जैन समाज के सब साधुसाध्वियों के लिए एक सर्वसम्मत न्यूनतम आचार सहिता स्थापित हो।

जैन एकता की दिशा में पचसूत्री एवं त्रिसूत्री योजना आचार्यश्री तुलसी के सम्प्रदायातीत विचारा का परिणाम है।

प्रतिवर्ष आपके सान्निध्य मे समायोजित जैनविद्या परिषद जैन पुरातत्त्वविद्या को उजागर करने की दिशा मे महत्वपूर्ण चरण है।

आचार्यश्री तुलसी योग एवं ध्यान के प्रेरक आचार्य हे। उन्होने ध्यान योग एवं दीर्घकालीन एकात साधना से अपने सयम का उत्कर्ष किया। अपने धर्मसंघ का योग साधना मे विशेष प्रगतिशील बनाने के लिए प्रणिधान कक्ष तथा कई अध्यात्म शिविर लगाए। उपासक संघ के साधना शिविरों से श्रावक श्राविकाओं समाज मे चेतन्य जागरण हुआ।

आचार्यश्री तुलसी के उत्तराधिकारी प्रज्ञाधर युवाचार्यश्री महाप्रज्ञ थे। अपन गुरु के मार्गदर्शन में उन्होंने प्रेक्षाध्यान और जीवन विज्ञान संबधी अनेक विशेष प्रयोग किए है जा मानव जाति क लिए कल्याणकारी सिद्ध हुए थे। आचार्यश्री तुलसी का विशाल श्रमण श्रमणी समुदाय अणुव्रत, प्रेक्षाध्यान, जीवन विज्ञान के सन्देश को जन जन तक पहुंचान मे प्रयत्नशील है।

आचार्यश्री तुलसी की प्रवृतियां जनहिताय है। वर्णभेद, जातीयता और प्रान्तीयता की

दीवारें कभी उनके कार्य क्षेत्र में खड़ी न हो सकी। उन्होंने एक ओर धनाधीशों को बोध दिया तथा दूसरी ओर दलित वर्ग के हृदय की हीन ग्रन्थियों का विमोचन किया।

दलित वर्ग मे संस्कार निर्माण उनके मानवतावादी दृष्टिकोण का एक पहलू है। आचार्यश्री तुलसी के सान्निध्य में विराट हरिजन सम्मेलन हुए थे। उन्होंने उन सम्मेलनों को हरिजनोद्धार सम्मेलन नही मानवोद्धार सम्मेलन कहा।

आचार्यश्री तुलसी जैन श्वेताम्बर तेरापंथ सम्प्रदाय का संचालन कर रहे है। पर उन्होंने संघ विस्तार से अधिक मानवता की सेवा को प्रमुख माना था। बहुत बार वे अपना परिचय देते हुए कहते है- "मैं पहले मानव हूं फिर जैन हूं और फिर तेरापंथी हूं।" आचार्यश्री तुलसी के विचारों की यह उन्मुक्तता एवं व्यवहार मे अनाग्रही प्रवृत्ति उनके गरिमामय व्यक्तित्व के अनुकूल थी।

वे धर्म के आधुनिक भाष्यकार थे। उन्होंने धर्म के क्षेत्र मे नए मूल्यों की प्रतिष्ठा की है। जो धर्म परलोक सुधार की बात करता, उसे इहलोक के साथ जोड़ा है। उनकी परिभाषा मे वह धर्म धर्म नहीं है, जिसमे वर्तमान को आनन्दमय बनाने की क्षमता नही है उन्होंने जैन धर्म को जन जन का धर्म कहकर धर्म की मौलिक व्याख्या दी है। उनकी निष्पक्ष धर्मप्रचार नीति उच्च स्तरीय साहित्य निर्माण, उदार चिंतन एवं विशुद्ध अध्यात्म भाव ने जन-मानस को विशेष आकृष्ट किया था।

पूर्व से पश्चिम एवं उत्तर से दक्षिण तक भारत के अधिकांश भू भाग मे विशाल श्रमण संघ के साथ पाद विहार कर आचार्य श्री तुलसी ने अहिंसा के सदेश को दूर दूर तक पहुंचाया। आचार्यश्री की पजाब, बंगाल, दक्षिण आदि की सभी यात्राए धर्म प्रचार की दृष्टि से महत्वपूर्ण थी।

भारत का दक्षिणाण्चल प्राकृतिक सौन्दर्य से परिपूर्ण है तथा वह अध्यात्म सम्पदा से भी समृद्ध है। प्राचीन भारतीय संस्कृति के चिन्ह दक्षिण के कण कण मे हमें देखने को मिलते है। अध्यात्म बीज के अंकुरण के लिए यह भूमि उर्वरा है। समन्तभद्र, अकलंकभद्र आदि अनेक प्रभावक जैनाचार्यों ने दक्षिण भारत मे अध्यात्म का सिंचन किया है। दिगम्बर परम्परा के अनुसार सहस्रों वर्ष पूर्व इस पावन धरा पर आचार्य भद्रबाहु श्रमण परिवार सहित पधारे थे। आचार्यश्री तुलसी ने दक्षिण भारत को अपने चरणों से पवित्र कर आचार्य भद्रबाहु के इतिहास को पुनरुज्जीवित किया है। आचार्य भद्रबाहु दक्षिण के कुछ ही क्षेत्रों मे पधारे थे। आचार्य श्री तुलसी के चरण अनेक प्रमुख स्थलों का स्पर्श करते हुए कन्याकुमारी तक पहुंचे। भगवान महावीर कि वाणी को दूर दूर तक प्रसारित करने का उल्लेखनीय कार्य आपने किया है। अनेक व्यक्तियों ने आपके चरणों मे बैठकर जीवन की समस्याओं का समाधान पाया। आपके सम्प्रदायान्तर्गत कार्यक्रमों से अध्यात्म की व्यापक प्रभावना हुई है।

आपके आचार्यकाल के पच्चीस वर्ष की सम्पन्नता पर धवल समारोह का आयोजन किया गया। भारत के तत्कालीन उपराष्ट्रपति महान् दार्शनिक स्वर्गीय डॉ राधाकृष्णन द्वारा उस सुअवसर पर अभिनन्दन ग्रन्थ भेंट किया गया। सुदुर दक्षिण यात्रा की समाप्ति पर आचार्य श्री तुलसी द्वारा विहित जन कल्याणकारी कार्यो के परिणामस्वरुप धर्म सघ ने उन्हे युगप्रधान की उपाधि से अलंकृत किया। यह समय वी नि 2467(वि स, 2027,) का था। भारत के तत्कालीन राष्ट्रपति श्री वी वी गिरी द्वारा इस अवसर पर शुभकामना और विशेष सदेश प्रेषित किया गया था।

षष्ठीपूर्ति समारोह के अवसर पर आप द्वारा की गई अध्यात्म की व्यापक प्रभावना के कारण पूर्व राष्ट्रपति श्री फखरुद्दीन अली अहमद द्वारा विशेष सम्मान किया गया था।

आचार्य श्री तुलसी का विराट व्यक्तित्व व्यापक कार्यों की भूमिका पर अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त था।

महान दार्शनिक डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन लिखित "Living with Purpose" पुस्तक में 14 महान व्यक्तियों के जीवन का वर्णन है। उनमें एक नाम आचार्य श्री तुलसी का है। विशेष उल्लेखनीय है- उन 14 व्यक्तियों में 13 व्यक्ति स्वर्गीय है। वर्तमान में आचार्य श्री तुलसी ही है जो नैतिक प्रवृतियों को सबल प्रदान कर रहे हैं एवं जन कल्याण के कार्यों में प्रवृत है। प्रख्यात साहित्य और गम्भीर विचारक श्री जैनेन्द्र कुमार जी ने लिखा है- आचार्य श्री तुलसी युग प्रवर्तन का काम कर रहे हैं। शास्त्रागम को ग्रन्थवाद से उभार कर निर्ग्रन्थता प्रदान की है। वेशभूषा से वे जैनाचार्य हैं, किन्तु आन्तरिक निर्मलता और संवेदन की क्षमता से सभी मत और सभी वर्गों के आत्मीय बन गए।

डॉ शिवमंगलसिंह सुमन ने कहा-आचार्य श्री तुलसी की उदात्त भावनाओं से हम सभी परिचित हैं। आज सम्पूर्ण मानव जाति आपके सद्वचनो से लाभान्वित हो रही है।

चक्रवर्ती राजगोपालचार्य, राजर्षि पुरुषोत्तमदास टन्डन, गांधीवादी, विचारक काका कालेलकर, राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त, प्रसिद्ध कवयित्री महादेवी वर्मा आदि राजनेता, समाजशास्त्री,कवि, साहित्यकार आपके कार्यों एवं विचारों से प्रभावित हुए है। तथा आगामी कार्यों के प्रति उन्होंने समय समय पर शुभकामनाएं एवं आशाएं प्रकट की है।

साहित्य जगत मे आचार्यश्री तुलसी की सेवाएं अनुपम है। वे कई भाषाओं के विद्वान है। उन्होंने संस्कृत, हिन्दी, राजस्थानी तीनों भाषाओं में उच्च कोटि के ग्रन्थों की रचना की है। वे सिद्धहस्त कवि थे। राजस्थानी भाषा में उनकी कई सरस रचनाएं हैं। कई काव्यग्रन्थ है। अध्यात्म, दर्शन न्याय आदि विषयों पर सारगर्भित विपुल सामग्री आपके ग्रन्थों में मिलती है।

'जैन सिद्धान्त दीपिका', भिक्षुन्यायकर्णिका, मनोनुशासनम्, पण्चसूत्र ये संस्कृत के ग्रन्थ हे, इनमे सिद्धान्त, न्याय तथा योग विषयक सामग्री उपलब्ध है।

'कालू यशोविलास' पूज्य कालुगणि के जीवन पर रचा गया राजस्थानी गेय काव्य है। इसकी रचना मे लेखक का महान् शब्दशिल्पी रुप निखरकर आया है। विषय वर्णन शैली बेजोड़ है। माणक महिमा, डालम चरित्र और मगनचरित्र आदि काव्य ग्रन्थों में आचार्यों एवं विशिष्ट मुनियों का जीवन चरित्र है। भरत-मुक्ति, आषाढ़-भूति, अग्नि परीक्षा में आचार्यश्री की काव्य प्रतिभा प्रतिबिम्बित है।

अणुव्रत गीत, नन्दन निकुण्ज, सोमरस, चन्दन की चुटकी भली-ये चारों हिन्दी एवं राजस्थानी की पद्य रचनाएं है।

मुक्तिपथ, विचारदीर्घा, उद्बोधन, अतीत का अनावरण, अनागत का स्वागत, प्रेक्षा-अनुप्रेक्षा, भगवान महावीर, बीती ताहि विसारि दे, बूंद भी लहर भी, खोए सो पाए, क्या धर्म बुद्धि गम्य है? धर्म एक कसौटी एक रेखा, मेरा धर्म केन्द्र और परिधि, बूंद-बूंद से घट भरे, अणुव्रत के आलोक में, अणुव्रत के संदभ मे, कालू तत्व शतक, प्रज्ञापुरुष जयाचार्य, महामनस्वी आचार्यश्री कालूगणी अणुव्रत साहित्य,योग विषयक साहित्य आदि हिन्दी भाषा की अनेक मौलिक रचनाएं

हैं जो अध्यात्म, धर्म दर्शन सिद्धान्त और जीवन विज्ञान से सम्बन्धित है।

'जैन तत्व विद्या' जैन तत्व ज्ञान विषयक उत्तम कृति है। इसमे जैन तत्वों की विस्तृत व्याख्या है। जैन ज्ञानामृत से परिपूरित यह कृति अमृत पुरुष आचार्य श्री तुलसी की सद्यस्क रचना है जो इसी अमृत महोत्सव वर्ष में प्रकाशित हुईहै। तत्व रसिक पाठकों की ज्ञान वृद्धि में यह कृति सहायक है।

साहित्य जगत को आचार्य श्री तुलसी की सबसे महत्वपूर्ण देन आगमवाचना है। आगम साहित्य का टिप्पण, संस्कृत छाया सहित आधुनिक संदर्भ में सुसम्पादन और उसके अनुवाद का कार्य आगम वाचना प्रमुख आचार्य श्री तुलसी के निर्देशन मे सुव्यवस्थित चल रहा है। निर्मल प्रज्ञा के धनी, प्रकाण्ड विद्वान एवं गम्भीर दार्शनिक मुनिश्री नथमलजी (वर्तमान में युवाचार्य महाप्रज्ञ) आगम ग्रन्थों के सम्पादक और विवेचक हे। अब तक आगम संबंधी विपुल साहित्य जनता के हाथों पहुंच गया है। कई पुस्तके मुद्रणधीन है, और कई पुस्तका की पाण्डुलिपियां तैयार हो चुकी है।

आचार्यश्री तुलसी की सृजन क्षमता ने विपुल साहित्य के सृजन के साथ अनेक साहित्यकारों का निर्माण किया है।

तुलसी प्रज्ञा-, श्री भिक्षु शब्दानुशासन की लघुवृत्ति, तुलसी मजरी, जैन न्याय का विकास, जैन दर्शन मनन और मीमांसा, भिक्षु विचार दर्शन, घट-घट दीप जले, श्रमण महावीर, जैन परम्परा का इतिहास, जीव अजीव, तेरापंथका इतिहास, अपने प्रश्न अपने उत्तर, नींव के पत्थर, शब्दों की वेदी अनुभव के दीप, शान्ति की खोज, दक्षिण के अंचल मे, महक उठी मरु धर माटी निर्माण का पथ, जेन कथा कोष, उडिसा मे जेनधर्म, विश्व प्रहेलिका इतने प्रकार का अन्य मौलिक साहित्य, कथा साहित्य, योग साहित्य, प्रेक्षा साहित्य, काव्य साहित्य मुक्तक साहित्य, शोध निबन्ध, संगीत कला, कोष विज्ञान, एकांकी, गद्य, पद्य एकाहिनक पचशती तेरह घंटों मे एक सहस्त्र श्लोक रचना, आदि लघुकाय एवं वृहद काय ग्रन्थ तेरापंथ धर्मसंघ के साहित्यकार मुनियों एव साध्वियो समागम द्वारा हुआ है, जो नारी प्रतिभाको क्षमता को प्रकट कर रहा है। इन क्षमताओं को उजागर करने में अनन्य प्रेरणा स्रोत आचार्यश्री तुलसी है। महिला वर्ग के द्वारा कोष ग्रंथों की रचना, इतिहास की असाधारण घटना है। मुनियों एव साध्वियों द्वारा सो, पांच सो, सहस्त्राधिक तक अवधानों की प्रस्तुति से स्मरण शक्ति के प्रभावक प्रयोग आचार्यश्री तुलसी के शासनकाल के नए कीर्तिमान है।

स्मरण शक्ति के चमत्कार और अवधान विद्या के सम्बन्ध मे कईलघु रचनाएं भी अवधानकार सन्तों द्वारा निर्मित है। स्मृति विकास के लिए उत्सुक व्यक्तियों के मार्गदर्शन मे ये लघु कृतियां सहायक बन सकती है। आचार्यश्री तुलसी के शासनकाल का समग्र साहित्य सरस्वती का विशाल भंडार है।

व्यक्तित्व के बिन्दु

बालक तुलसी के ग्यारह वर्ष की अवस्था में मुनि तुलसी के रुप मे परिवर्तन, बाइस वर्ष की अवस्था मे आचार्य पदारोहण, संघ संचालन की दिशा मे स्वभगिनी स्वर्गीया साध्वीश्री लाडांजी की एव वर्तमान में विदुषी साध्वीश्री कनकप्रभाजी की साध्वी प्रमुखा पद पर नियुक्ति, धर्मशासन की प्रभावना मे बहुमुखी प्रयास, चौंतीस वर्ष की अवस्था मे अणुव्रत आन्दोलन के रुप मे जागरण

का अभियान, नैतिक भागीरथी को प्रवाहित करने के लिए समंघ इस महायायावर की सहस्त्रों मील की पदयात्राए, आचार्य काल के पच्चीस वर्ष सम्पन्न होने के उपलक्ष्य में डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन द्वारा सम्मान स्वरुप उन्हें तुलसी अभिनन्दन ग्रंथ का समर्पण, दक्षिणाचंल की चतुर्वर्षीय सुदीर्घ यात्रा की समपन्नता पर वी. नि. 2467 (वि.सं. 2027) मे विशाल जनसमूह के बीच गयुप्रधान के रु प मे उनका सम्मान, भारत के तत्कालीन राष्ट्रपति श्री वी.वी गिरि द्वारा इस अवसर पर विशेष संदेश प्रदान, युनस्को के डायरेक्टर लूथर इवेन्स, अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिज्ञ बेकननाम आदि विदेशी व्यक्तियों द्वारा उनकी नीति का समर्थन, मैक्समूलर भवन के डायरेक्टर जर्मन विद्वान होमियोरोड द्वारा विदेश पदार्पण के लिए आमन्त्रण, अमेरिकन युवक जिम मोरगिन द्वारा सात दिन के लिए मुनिकल्प जैन दीक्षा का स्वीकरण,शिक्षा, शोध, साधना की संगमस्थली जैन विश्व भारती, अणुव्रत विश्व भारती के माध्यम से भगवान महावीर के दर्शन का सर्वतोभावेन उन्नयन तथा विस्तार, ई.सन् 1675 जयपुर, लाडनूं में प्रेक्षाध्यान विधि का प्रारम्भ, ई. सन् 1980 लाडनूं में जीवन विज्ञान एव समण दीक्षा के रु प में नए आयामों का उद्घाटन, उदयपुर में सना् 1986 मे राजस्थान युनिवर्सीटी की ओर से 'भारत ज्योति' का अलंकरण, निस्संदेह श्रमण परम्परा के सबल प्रतिनिधि, आधुनिक युग के महर्षि, भारतीय संस्कृति के प्राण, स्वस्थ परम्परा के संवाहक, प्रकाश स्तम्भ, आगम वाचना प्रमुख जैन श्वेताम्बर तेरापंथ धर्मसंघ के आचार्यश्री तुलसी का जीवन विभिन्न अनुभूतियों से अनुबद्ध एक महाकाव्य है। इसका प्रत्येक सर्ग साहस और अभय की कहानी है। हर सर्ग का प्रत्येक श्लोक अहिंसा तथा मैत्री का छलकता निर्झर है तथा हर श्लोक की प्रत्येक पंक्ति शौर्य, औदार्य एवं माधुर्य की उभरती रेखा है।

कुल मिलाकर आचार्यश्री तुलसी का पचास वर्षीय आचार्य काल विविध उपलब्धियों को संजोये मानवता एवं आध्यात्मिकतता का एक प्रेरक अध्याय कहा जा सकता है।

आचार्य श्री तुलसी ने आचार्यकाल मे विष पिया है और अमृत बांटा है। अपनी अमृतमयी वाग् धारा से धारा से मानवता के उपवन को सिंचन देकर उसे सरसब्ज बनाया। अमृत पुरु ष के सर्वव्यापी कल्याणकारी कार्यों के उपलक्ष में अमृत महोत्सव समारोह व्यापक स्तर पर मनाया गया। दहेज उन्मूलन, अस्पृश्यता निवारण, मद्यपान निषेध, मिलावट परित्याग एवं भावनात्मक एकता- इन पांच प्रतिज्ञाओं का संकल्प पत्र भरा कर देशभर में एक स्वस्थ वातावरण बनाने का सशक्त प्रयत्न किया गया। आचार्य श्री का यह अभिनंदन मानवता का अभिनंदन है, अध्यात्म का अभिनंदन है, एवं त्याग तपोमयी भारतीय संस्कृति का अभिनंदन है।

सम्पादकीय नोट: पूज्य साध्वीश्री ने यह लेख परमपूज्य गुरु देवश्रीजी के जीवनकाल में लिखा था, अत: इसमें काल दृष्टि से मामूली सुधार किया गया है।

आत्मानुशासन

जागरु कता का विकास अपेक्षित लगता है, पर उन लोगों में जागरु कता कम मिलती है जिनका जीवन केवल यांत्रिक होता है, कोरा अनुशासनात्मक होता है। भारतीय संस्कृति का यह प्रखर स्वर रहा है कि बाहरी अनुशासन के साथ-साथ भीतरी अनुशासन भी रहे। परानुशासन के साथ-साथ आत्मानुशासन भी जागें। जहां केवल परानुशासन होता है और आत्मानुशासन नहीं होता, वहां व्यक्तित्व का विकास नहीं होता। उससे केवल यांत्रिक विकास हो सकता है। — *आचार्य महाप्रज्ञ एकला चलो रे, पृष्ठ 15*

परम पूज्य गुरूदेव आचार्य महाप्रज्ञजी गणाधिपति गुरूदेव श्री तुलसी से विचार-विमर्श करत हुए।

महाप्रज्ञ : मेरी दृष्टि में

✍ आचार्य तुलसी

दृष्टि वह पारदर्शी स्फटिक है, जिसके सामने से गुजरने वाला हर व्यक्ति अपना प्रतिबिम्ब वहां छोड़ देता है। बार-बार छोड़ गए बहुरुपी प्रतिबिम्ब एक रंग बिरंग गुलदस्ते के रुप मे स्थिर हो सकते हो जाते है और उनके आधार पर व्यक्ति का स्वाभाविक विश्लेषण होता रहता है। युवाचार्य महाप्रज्ञ का व्यक्तित्व भी मेरी दृष्टि पर इस प्रकार स अंकित हो चुका है, जिससे लगभग पांच दशकों के संस्मरण अपनी व्यापक प्रस्तुति के लिये उतावले हो रहे है। उन सबका व्यक्तिकरण या लिपिकरण न तो सम्भव है और न अपेक्षित हो है। फिर भी मेरे मन म जिस स्थिति की अमिट छाप है, वह है अचिन्तित रुपान्तरण। एक व्यक्ति अपने समर्पण अपने सकल्प और अपनी साधना से कितना बदल जाता है और कहा से कहा पहुच जाता है, इसका प्रत्यक्ष निदर्शन है हमारे युवाचार्य महाप्रज्ञ, जिनकी इस यात्रा का प्रारम्भ मुनि नथमल के रुप म होता है।

मुनि की भूमिका

वि स 1687, शीतकाल का समय, मर्यादा-महोत्सव का उल्लास और माघ शुक्ला दशमी का दिन। स्वर्गीय गुरु देव पूज्य कालूगणीजी न एक साढ़े दस वर्षीय बालक नथमल को दिक्षित करं मुझे सौप दिया। यह सौपना एक शैक्ष मुनि को साधु जीवन का प्रारम्भिक अब बोध कराने या अध्ययन कराने की दृष्टि से ही नहीं था, इसमें निहित थी जीवन के सर्वांगीण विकास की सम्भावनाओं कोउभार देने की एक व्यापक दृष्टि। उस दिन स लेकर अब तक मुनि नथमलजी एक समर्पित शिष्य के रुप मे मेरे पास रहे और भी उनके सर्वात्मना समर्पित जीवन के रेखाचित्र मे अपेक्षित रंग भरता रहा। मुनि नथमल जी की ग्रहणशीलता और मेरी सृजनशीलता के अन्योन्याश्रित संयोग ने उनको युवाचार्य महाप्रज्ञ की भूमिका तक पहुंचा दिया, जिसकी मैंने उस समय कोई कल्पना ही नही की थी।

कालूगणी की कृपा

महाप्रज्ञ अपने मुनि जीवन के प्रारम्भिक वर्षों मे बहुत भोले थे। इन्होंने अपने खाने-पीने, घूमने-फिरने, बैठने-सोने, पहनने-ओढ़ने आदि के सम्बन्ध मे कभी सोचने-विचारने का प्रयत्न ही नही किया। मै जो कुछ कहता, उसे ये सहजभाव से कर लेते। भोजन कब करना है और क्या करना है? इस दैनंदिन कार्य में ये मेरे निर्देश की प्रतीक्षा करते रहते। वस्त्र कब सिलाने है और कब पहनने है, यह काम भी ये अपने आप नहीं करते थ। शीतकाल मे स्वाध्याय करते-करते बिना ही वस्त्र ओढ़े तब तक सोते रहते, जब तक मै इन्हे जगाकर वस्त्र ओढ़े नही सुला देता। इनकी गति भी विलक्षण थी। कालूगणी बहुत बार इन्हे अपने सामने दस बीस कदम चलने के लिए कहते और जब ये टेढ़े-मेढे कदम भरते

हुए गुरुदेव के निकट से गुजरते तो आपको बड़ा अच्छा लगता। कालूगणी भोले भाले मुनियों की पंक्ति मे थे, जिन्हे गुरुदेव का अतिशायी स्नेह प्राप्त था। इन्हें वे बगू, शभू, वल्कलचीरी, हाबू या नाथू कहकर पुकारते थे।

स्थितिपालकता

महाप्रज्ञ ने अपने सहपाठी मुनि बुधमलजी के साथ मेरे पास अध्ययन शुरु किया। इनके अध्ययन के प्रारम्भिक क्रम मे मैं स्वय इनके साथ बैठता और आधा भाग घण्टा तक इनके साथ साथ पद्यों का उच्चारण करता था। ऐसा करने का मेरा एक ही उद्देश्य था कि इनका उच्चारण अशुद्ध न रहे। याद करने की क्षमता इसमे शुरु से ठीक थी, पर उस समय समझ विकसित नही थी। बुधमलजी इनसे अच्छा समझते थे। मेरे मन मे कई बार आता था कि ये छोटी-छोटी बात को ही नही समझते है तो आगे जाकर क्या करेगे? मै बहुत बार इन्हे समझाने का प्रयत्न करता पर सफलता नहीं मिली। तीन साल तक ये मुझे बराबर असफल करते रहे।

अप्रत्याशित बदलाव

महाप्रज्ञ की दीक्षा के तीन-चार साल बाद कालूगणी जोधपुर की यात्रा पर थे। वहा इनकी आखे बहुत अधिक खराब हो गई। पहले भी आंखों की पीड़ा कई बार हो जाती थी। कभी आखो मे दाने हो जाते, कभी आखे दुखने लगती, कभी कुछ और हो जाता। इनकी आखे ठीक करने के लिए मैने बहुत प्रयत्न किए। कभी पिप्पली, कभी नीबू का रस, कभी शहद तो कभी कुछ पर विशेष लाभ नहीं हुआ। उस समय का गर्मी का मौसम था। कालूगणी को जसोल, बालोतरा आदि क्षेत्रों की आगे जाना था। मैने गुरुदेव से निवेदन किया- नथमलजी की आखे बहुत दुःख रही है, इन्हे यहीं छोड़ दिया जाए तो ठीक रहेगा। कालूगणी ने इनको वहा मुनि श्री हेमराजजी के पास छोड़ दिया। जोधपुर कालूगणी वापस पधारे तब तक ढाई महीनों का समय लग गया। यह समय इनकेजीवन मे एक बहुत बड़े रुपान्तरण का समय था। वह क्षेत्र परिपाकी क्षयोपशम था या अवस्था परिपाकी की क्षयोपशम कुछ कहा नहीं जा सकता। पर जब हम आए तो वे हमें सर्वथा बदले हुए मिले। यह बदलाव बाहर भीतर दोनों ओर से घटित हुआ था। उस ढाई मास के छोटे से काल मे इनकी समझ काफी विकसित हो गई। जो कुछ पहले का सीखा हुआ था, उसे पक्का, शुद्ध और व्यवस्थित कर लिया गया। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि ये एक अबोध शिशु की भूमिका से ऊपर उठकर आत्म बोध की भूमिका तक पहुच गए थे।

मेरी शाला के प्रथम छात्र

नथमलजी, बुधमलजी आदि मेरी छोटी सी पाठशाला के प्रथम छात्र थे। धीरे धीरे छात्रों की सख्या मे वृद्धि होती रही। कई मुनि उस क्रम मे आए और चले गए पर महाप्रज्ञ बराबर बने रहे। उस समय इनके बारे मे मेरी यह कल्पना नहीं थी कि इनमे कोई विलक्षणता है। उस समय न तो इनमे प्रतिभा का इतना निखार था और न ही इनके बारे मे ऐसी कोई सम्भावना थी। मेरे मन पर इनकी किसी बात का कोई प्रभाव था तो वह था इनका सहज समर्पण। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि इनके निर्माण मे इनके अपने समर्पण का स्थान सर्वोपरि रहा है। जैसे कहे वैसा करना, इस एक सूत्र ने इनको विकास की दिशा मे अग्रसर किया। जोधपुर चातुर्मास के बाद मुझे भी इनसे कुछ आशा बधी, जो उदयपुर और गंगापुर, इन दो चातुर्मासों मे फलित होती हुई सामने आई।

गंगापुर चातुर्मास के प्रारम्भ तक ये अविच्छिन्न रुप से मेरे पास रहे। उसके बाद पूज्य गुरुदेव कालूगणी का स्वर्गवास होने के बाद मेरी स्थिति बदल गई। अब ये सेवाभावी जी की देखरेख मे रहने लगे। वे

इनकी संभाल पूरी करते थे, फिर भी ये अनमने से हो गए। इन्हें अकेलापन सा अनुभव होने लगा। इस कारण सहज ही ये उदास रहने लगे। मैने एक दिन इनको अपने पास बुलाकर पूछा - तुम उदास क्यों हो? ये बोले- मेरा मन नहीं लगता।मैने इन्हें आश्वस्त करते हुए कहा कि तुम मेरे पास आया करो और अपने अध्ययन के क्रम को चालू रखो। इसके बाद मैंने इनके विकास की दृष्टि से एक विशेष लक्ष्य बनाया और समय-समय पर इन्हें प्रेरणा देता रहा।

शिक्षा में नये आयाम

कालूगणी के स्वर्गवास केबाद बीकानेर चातुर्मास में मैंने दर्शन और संस्कृत काव्य साहित्य का विशेष अध्ययन शुरु किया। हम लोग (मैं, मुनि धनराजजी, मुनि चन्दन मलजी आदि) पण्डित रघुनन्दनजी शर्मा के पास अपना अध्ययन चलाते। भाषा और व्याकरण की दृष्टि से पंडित जी का ज्ञान विशिष्ट था, पर सैद्धान्तिक और दार्शनिक परिभाषाओं मे वे रुक जाते। वहां हम लोग अपनी जानकारी का उपयोग करते। इस प्रकार एक मिल जुले प्रयत्न से हमारी, दर्शन के संस्कृत ग्रन्थों (प्रमाण, नयतत्व,लोकालंकार आदि) की यात्रा निर्बाध रुप से चल रही थी। उस समय मैंने महाप्रज्ञ आदि से कहा कि तुम भी अध्ययन के समय साथ रहो। कुछ समझ में आए या न आए सुनते रहो सुनते-सुनते एक क्रम बन गया। वि.सं. 2001 का हमारा चातुर्मास सुजानगढ़ था, उस समय मेरे मन में आया कि हमारे धर्मसंघ म इतनी साधु साध्वियां हे, इनमें कोई भी उच्चकोटि का चिन्तक, लखक और वक्ता नही है। काश! हमारे साधु साध्वियां भी हिन्दी मे बोल और लिख सकते। इसी बीच शुभकरण दसानी ने मुझे बताया कि कुछ मुनि हिन्दी में बहुत अच्छा लिखने हे- कविताएं भी, निबन्ध भी, पर आपसे संकोच करते ह, इसलिए बताते नही। उनमे महाप्रज्ञ भी एक थे। मैंने इनकी कविताओं को देखा, निबन्धों को पढ़ा, प्रसन्नता हुई। इसके बाद समय समय पर संस्कृत, हिन्दी और प्राकृत भाषा में बोलने, लिखने, श्लोक बनाने का अभ्यास चलता रहा। यथा समय प्रतियोगिताओं का आयोजन, प्रोत्साहन और प्रेरणा ने थोड़े समय मे अकल्पित सफलता का द्वार खोल दिया। वि.सं. 2002 राजगढ़ चातुर्मास मे एक विद्वान व्यक्ति सम्पर्क म आया। उसने तेरापंथ के बारे मे साहित्य देखना चाहा। उस समय तक साहित्य लेखन की कोई बात ध्यान मे नहीं थी। छोगमलजी चोपडा द्वारा लिखित तेरापंथ की शार्ट हिस्ट्री नामक छोटी सी पुस्तक हमारे धर्मसंघ का साहित्य था। मुझे एक अभाव महसूस हुआ। मैने उसी समय इनको बुलाकर कुछ ट्रैक्ट तैयार करने के लिए कहा। उन्नीसवी सदी का नया आविष्कार, धर्म और लोक व्यवहार, अहिंसा आदि कुछ ट्रेक्ट तैयार हुए, मन को थोड़ा सन्तोष मिला।

वि.सं. 2003 श्रीडूंगरगढ़ चातुर्मास मे धर्मदेव विद्यावाचस्पति दिल्ली से दर्शन करने आए थे। वे एक अच्छे वक्ता थे। उन्होंने अपने वक्तव्य में संस्कृत श्लोकों का धारावाहिक और प्रभावशाली उपयोग किया, मुझे अच्छा लगा। मैंने उसी दिन महाप्रज्ञजी आदि कुछ संतो को बुलाकर वक्तृत्व कला के विकास तथा संस्कृत मे धारा प्रवाह बोलने के लिए निरंतर अभ्यास करने का संकल्प करा दिया। अभ्यास करने का संकल्प करा दिया। अभ्यास इतना व्यवस्थित और परिपक्व हुआ कि जिसकी मुझे आशा नहीं थी। कुल मिलाकर यही कहा जा सकता है कि वि.सं. 2006 तक महाप्रज्ञ इस रुप मे तैयार हो गए कि हर क्षेत्र में ये मेरे सहयोगी बन गए। एक ओर ये मेरे चिन्तन के सफल भाष्यकार थे तो दूसरी ओर ये मेरे हर स्वप्न को आधार देने के लिए कटिबद्ध हो गए। यद्यपि किसी नए कार्यको प्रारम्भ करने में ये हिचकिचाते थे, किन्तु मेरे द्वारा प्रारब्ध कार्य को परिसम्पन्नता तक पहुंचाना इनकी सहज प्रवृति हो गई थी।

बीज का विस्तार

मेरे युग तक पहुंचते-पहुंचते अठारह उन्नसी दशकों की लम्बी अवधि पार करने पर भी तेरापंथ के सिद्धान्त लोगों के गले नहीं उतर रहे थे। मैंने पाया- आचार्य भिक्षु का तत्व चिन्तन मौलिक है। उनकी प्ररुपणा विलक्षण है। लोगों ने अब तक भी उसकी गहराई तक पहुंचने का प्रयास नहीं किया है। यही कारण है कि वे तेरापंथ की सैद्धान्तिक मान्यताओं का विरोध कर रहे हैं। यदि हम उन मान्यताओं को युगीन सन्दर्भ में प्रस्तुत कर सकें तो विरोधी वातावरण को ठीक करने में जो शक्ति और समय लगता है, उसका उपयोगी किसी रचनात्मक काम में हो सकता है। मैंने अपने चिन्तन के बीज महाप्रज्ञ के सामने विकीर्ण कर दिए। उसके बाद इन्होंने उन बीजों को विस्तार दिया। भिक्षु विचार दर्शन तैयार होकर आ गया। प्रबुद्ध लोगों की धारणाएं बदली। धीरे धीरे विरोध का कुहरा छंट गया और सत्य का सूरज दुगुने तेज से दमकने लगा। अणुव्रत आन्दोलन को लेकर भी समाज में एक तूफान खड़ा हो गया था। इसकी क्या जरुरत हैं? अणुव्रत के नाम पर मिथ्यादृष्टि को सम्यकदृष्टि बनाया जा रहा है, सन्त किसी आन्दोलन के प्रवर्तक नहीं हो सकते आदि अनेक मुद्दों को लेकर हलचल हुई थी। नए मोड़ को लेकर काफी बवंडर हुआ। उस सन्दर्भ में मैंने अपने विचार इनको बता दिए। इन्होंने उन विचारों के साथ सैद्धान्तिक सामंजस्य स्थापित कर उन्हें संतुलित रुप में प्रस्तुत कर दिया। प्रसंग अणुव्रत का हो या अन्य किसी सिद्धान्त का, उसे तुलनात्मक दृष्टि से, व्यवहारिक दृष्टि से और सैद्धान्तिक दृष्टि से विस्तृत विवेचन के साथ प्रतिपादित कर उसका औचित्य सिद्ध कर देते। इसकेबाद हमारे धर्मसंघ में जितने परिवर्तन हुए, प्राचीन धारणाओं मे जितना परिमार्जन हुआ, उन सबमें ये मेरे पूरे सहयोगी रहे। किसी भी परिस्थिति में मैने इनका अपने विचारों से प्रतिकूल होते हुए नहीं देखा।

मेरे स्वप्न साकार हुए

मैं एक स्वप्नदृष्टा हूं। मेरे ये स्वप्न रात को नींद में नही आते। मै जागृत अवस्था मे सपन देखता हूं। दिन हो या रात, जब भी अवकाश मिलता है, मैं नई कल्पनाएं करता हूं और इन्हे साकार करने के लिए महाप्रज्ञ को आमंत्रित कर लेता हूं। मेरी ये कल्पनाएं शिक्षा, साहित्य, शोध आदि अनेक विषयों से सम्बन्धित हैं। मैं यहां कुछ कल्पनाओं को उल्लेखित कर रहा हूं।

वि.सं 2007 की बात है। उस समय तक हमारे धर्मसंघ मे एक लेख पत्र पर प्रत्येक साधु को प्रतिदिन हस्ताक्षर करने होते थे। लेखपत्र की धाराएं बहुत उपयोगी थी, पर वे थी ठेठ राजस्थानी भाषा मे। भाषा युगानुरुप नहीं थी। अत उस लेखपत्र को भाषान्तरित करने की बात सूझी और वह काम इनको सौंप दिया। प्रश्न उठा कि लेखपत्र को बदलने का क्या उद्देश्य है? उद्देश्य स्पष्ट था, उसे सन्तों को बताकर पहले संस्कृत भाषा में लेखपत्र का रुपान्तरण हुआ। बाद में उसे हिन्दी मे कर दिया और हस्ताक्षर करने के स्थान पर प्रतिदिन प्रातःकाल उसका प्रत्यावर्तन करने का क्रम स्थिर कर दिया।

सामयिक साहित्य सृजन के साथ मैंने सैद्धान्तिक एवं दार्शनिक साहित्य निर्माण की अपेक्षा अनुभव की। मैंने इनके सामने अपने मन की बात रखी। इन्होंने मेरी अनुभूति को अधिक तीव्रता से अनुभव किया और काम शुरु हो गया। मैं लिखाता गया और ये लिखते गए। लिखने के बाद उसे विस्तृत और व्यवस्थित कर दिया। जैन सिद्धान्त दीपीका और भिक्षु न्याय कर्णिका, ये दो ग्रन्थ तैयार हो गए।

वि.सं. 2005 तक हमारे साधु साध्वियों के अध्ययन हेतु कोई पाठ्यक्रम नही था। रुस की एक पत्रिका में मैने वहां का पाठ्यक्रम देखा और तत्काल इन्हे बुलाकर कहा- अपने यहां भी कोई निश्चित पाठ्यक्रम होना चाहिए। मेरा संकेत इनके लिए आलम्बन था कुछ ही समय में व्यवस्थित पाठ्यक्रम

तैयार हो गया और साधु साध्वियों ने उसके आधार पर अध्ययन शुरु कर दिया। समय-समय पर अपेक्षित संशोधन के साथ एक स्तरीय शिक्षा का क्रम चल पड़ा जो अब तक चल रहा है।

महाराष्ट्र के मंछर गांव में आहार के बाद धर्मदूत नामक पत्र के पन्ने पलट रहा था। सहसा मेरा ध्यान केन्द्रित हो गया। वहां बौद्धि पिटकों के संपादन की सूचना थी। एक क्षण का विलबं किए बिना मैने इनको बुला लिया और पत्र का उल्लेख करते हुए कहा क्या हम भी जैन आगमों का सम्पादन नहीं कर सकते? नही क्यों? आपकी कृपा से सब कुछ कर सकते हैं। महाप्रज्ञ के एक वाक्य ने मुझे आश्वस्त कर दिया। फिर भी इनके धैर्य की थाह पाने के लिए मैंने कहा- काम तो बहुत बड़ा है। कैसे हो सकेगा? बिना एक पल सोचे ये बोले - ऐसी क्या बात हैं? आप जो चाहेगे, वह काम हो जाएगा।

उस समय आगम सम्पादन के कार्य का न तो हमें कोई अनुभव था और न ही कोई विज्ञ व्यक्ति ही हमारे सामने था। हमने सोचा पांच वर्ष में सारा काम हो जाएगा। उसी वर्ष काम शुरु भी कर दिया। काम करने का अनुभव जैसे जैसे बढ़ा, हमें लगा कि यह काम पांच क्या पचास वर्षो में भी पूरा नही हो सकेगा। अब तो ऐसा लगता हे कि काम की कोई सीमा है ही नही। जितना काम करते हैं, उससे अधिक काम की नई सम्भावनाएं खुलती रहती हैं। ऐसा होने पर भी इनको काम भार नही लग रहा हे। बड़ी दत्तचित्तता से आगे बढ़ रहे हैं।

साधना के क्षेत्र में भी एक अभाव सा महसूस हो रहा था। सतरह अठारह वर्ष पूर्व मैंने इनके सामने चर्चा की- जैनों कोई स्वतंत्र साधना पद्धति नही हे। भगवान महावीर की जीवन, साधना का जीवन्त प्रतीक रहा है, किन्तु वर्तमान में कहीं भी उसका व्यवस्थित उल्लेख या प्रयोग नही है। क्या मैं आशा करु कि साधना की इस अवरुद्ध धारा को हम आगे बढ़ा सकते हे? उस दिन से एक लक्ष्य बना। अध्ययन ओर प्रयोग-प्रयोग और अध्ययन। निष्कर्ष के रुप में आज प्रेक्षाध्यान की पद्धति हमारे यहां प्रचलित हो गई।

और भी अनेक घटनाएं हैं जो महाप्रज्ञ के समर्पण भाव को उजागर करने वाली है। उन सबके आधार पर यही कहा जा सकताा हे कि मैंने इनको जिस रुप में ढालना चाहा, ये ढलते गए। मैंने इनसे जो अपेक्षाएं की, ये पूरी करते गए। हमारे बीच में शिक्षक एवं विद्यार्थी का जो सम्बन्ध था। वह आगे जाकर गुरु शिष्य के रुप मे और फिर आगे चलकर अद्वैत रुप में स्थापित हो गया। अब मुझे ऐसा प्रतीत नही होता कि ये मुझसे भिन्न कोई व्यक्ति है। जब से मैंने इनमे अपना उत्तराधिकार नियोजित किया है, मै इनमें अपना ही रुप देखता हूं। अपने ही प्रतिरुप को मैं प्रशस्ति की दृष्टि से देखुं, अपेक्षित नही लगता क्योंकि इनकी प्रशस्ति मेरा अपना आत्म ख्यापन होगा। इस दृष्टिसे कुछ तथ्यों की प्रस्तुति का काम पूरा कर में अपने अग्रिम स्वप्न संजोने में लग रहा हूं।

-महाप्रज्ञ (व्यक्तित्व एवं कृतित्व) से साभार

आचार्य भिक्षु की मर्यादाएं

•आचार्य महाप्रज्ञ

आचार्य भिक्षु ने पद और महत्वकांक्षा को सीमित कर सगठन को चिरजीवी बना दिया। तेरापंथ तीसरी शताब्दी मे उच्छवास ले रहा है, आचार्य भिक्षु कृत मौलिक मयादाओं को बदलने की आवश्यकता कभी महसूस नही हुई। यह उनके आभामंडल और अंतर्दृष्टि का परिणाम है। इन पच्ची दशकों मे अनेक परिवर्तन हुए है और भविष्य में भी होते रहेंगे, किंतु आधारभूत मर्यादाओं को अपिवर्तित रखना है। यह हमारा पवित्र कर्तव्य है। परिवर्तन में हमारा विश्वास है। केवल परिवतंम मे हमारा विश्वास नही है। अनेकांत का सूत्र है- परिवर्तन और अपरिवर्तन का समन्वय — आचार्य महाप्रज्ञ अतीत का बसंत- वर्तमान का सौरभ, पृष्ठ 166

मेरे देव!

आचार्य महाप्रज्ञ

मेरे देव!
मैं तुम्हारी पूजा इसलिए नहीं करता
कि तुम बड़े हो
किन्तु इसलिए करता हूं
कि तुम मुझ तक पहुंचते हो

मैं उस हिमालय की पूजा करता हूं
जो गंगा के आकार में
प्रवाहित होता है
और मुझ तक पहुंचता है

मेरे मन में कोई उत्साह नहीं है
उस 'सुमेरु' की पूजा करने के लिए
भले फिर वह सबसे ऊंचा हो
सोने का हो
धूप और छांह की भांति
मेरी और उसकी दूरी
कभी नहीं पटेगी

मैं उस सूरज की पूजा करता हूं
जो प्रकाश का देवता बन
प्रवाहित होता है
और मुझ तक पहुंचता है

मेरे मन में कोई उत्साह नहीं है
उस स्वर्ग की पूजा करने के लिए
भले फिर वह हजारों सूर्यों से
अधिक तेजस्वी हो
समानान्तर रेखा की भांति
मैं और वह
कभी नहीं मिलेंगे
मैं उस खारे समुद्र की पूजा करता हूं
जो जल का देवता बन
आकाश में झूमता है
और मुझ तक पहुंचता है

मेरे मन में कोई उत्साह नहीं है
उस 'क्षीर समुद्र' की पूजा करने के लिए
भले फि वह दूध से भरा हो
मीठा हो।
तीन और छः की भांति
मेरी और उनकी दिशा
कभी एक नहीं होगी

मैं उस 'नीम' की पूजा करता हूं
जो हवा के रथ पर
बैठ घूमता है
और मुझ तक पहुंचता है
मेरे मन में कोई उत्साह नहीं है
उस कल्पवृक्ष की पूजा करने के लिए
भले फिर वह
सब कुछ देने वाला हो
जीवन और मौत की भांति
मेरी और उसकी दूरी
कभी नहीं पटेगी

मेरे देव!
मैं तुम्हारी पूजा इसलिए नहीं करता
कि तुम बहुत बड़े हो
किन्तु इसलिए करता हूं कि
तुम मुझ तक पहुंचते हो।

जैन परम्परा में संस्कृत साहित्य सृजन की परम्परा आचार्य महाप्रज्ञ के संदर्भ में

✍ डॉ. प्रकाश सोनी 'रत्न'
(निदेशक-जीवन विज्ञान अकादमी, मुंबई)

भारतीय संस्कृति के परिज्ञान के लिए संस्कृत भाषा का ज्ञान अत्यंत आवश्यक है। संस्कृत भाषा सर्वातिशयिनी भाषा है। प्राचीन काल से अद्य पर्यन्त उसका महत्व यथावत् अक्षुण्ण है। विश्व का सबसे प्राचीन ग्रंथ 'ऋग्वेद' को इसी भाषा में होने का गौरव प्राप्त है। आर्य संस्कृति के प्रतिपादक अधिकांश ग्रन्थरत्न इस भाषा में विरचित है और इस भाषा के ज्ञान से ही उस संस्कृति और जीवन दर्शन तक पहुंच संभव है। संस्कृत में भारतीयों का मनन, चिन्तन और अनुभूति सन्निविष्ट है। यह हमारी प्राणभूत भाषा है। इस देश में सांस्कृतिक, सामाजिक, धार्मिक लक्ष्यों की पूर्ति हेतु संस्कृत का विशेष महत्व है। इसे देवभाषा, देववाणी, गीर्वाणवाणी अथवा अमर वाणी (भारती) भी कहते हैं।

संस्कृत साहित्य सर्वांगीण है। साधारणतया लोगों की अवधारणा बनी हुई है कि संस्कृत साहित्य में केवल धर्म ग्रंथों की ही बहुलता है परंतु वास्तविकता इससे भिन्न है। संस्कृत के प्राचीन ग्रंथकारों ने भौतिक जगत् के साधनभूत तत्वों का भी पर्याप्त विश्लेषण किया है। विज्ञान, ज्योतिष, वैद्यक, स्थापत्य, पशु-पक्षी संबंधी लक्षण ग्रंथ संस्कृत साहित्य मे प्रचुर मात्रा में विद्यमान है। श्रेय और प्रेय इन दोनों ही प्रकार के ग्रंथों की उपलब्धि संस्कृत साहित्य में है। अन्य भाषा के साहित्य की ऐसी स्थिति नही है। पश्चिमी विद्वानों का मत है कि संस्कृत साहित्य का जो अंश प्रकाशित हुआ है। वह भी ग्रीक और लेटिन के साहित्य के समग्र ग्रंथों से दुगुना है। जो अभी तक हस्तलिखित ग्रंथों के रुप में पड़ा है या किसी प्रकार नष्ट हो गया है, उसकी तो गणना ही अलग है।'

जीवन और जगत् के प्रखर अनुभवों, संवेग संचालित एवं शाब्दिक अभिव्यक्ति का नाम ही साहित्य है। अत: किसी देश या समाज के इतिहास, धर्म, दर्शन, संस्कृति एवं सभ्यता आदि के ज्ञान के लिए उसके साहित्य का अध्ययन अपेक्षित है। साहित्य में समाज के यथार्थ स्वरुप का चित्रण किया जाता है। इसलिए साहित्य समाज का दर्पण कहा गया है। समाज जिस प्रकार का होगा वह उसी भांति साहित्य में प्रतिबिम्बित रहता है। समाज के रुप-रंग, वृद्धि-ह्रास, उत्थान-पतन, समृद्धि-दुःखास्था के निश्चित ज्ञान का प्रधान अपनी मधुर झांकी सदा दिखलायी करती है। संस्कृति के उचित प्रसार तथा प्रचार का सर्वश्रेष्ठ साधन साहित्य ही है। संस्कृति का मूल स्तर यदि भौतिकवाद

के ऊपर आश्रित रहता है। तो वहां का साहित्य कदापि आध्यात्मिक नहीं हो सकता और यदि संस्कृति में भीतर आध्यात्मिकता की भव्य भावनाएं हिलोरें मारती रहती हैं, तो उस देश तथा जाति का साहित्य भी आध्यात्मिकता से अनुप्रमाणित हुए बिना नहीं रह सकता। साहित्य सामाजिक में भावना तथा सामाजिक विचार की विशुद्ध अभिव्यक्ति होने के कारण यदि समाज का मुकुर है, तो सांस्कृतिक आचार तथा विचार के विपुल प्रचारक होने में हेतु, संस्कृति के संदेश को जनता के हृदय तक पहुंचाने के कारण, संस्कृति का वाहन होता है।

संस्कृत साहित्य का इतिहास पूर्वोक्त सिद्धांत का पूर्ण समर्थन है। संस्कृति साहित्य भारतीय समाज के भव्य विचारों का रुचिर दर्पण है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि ज्ञान-विज्ञान के सभी अंगों का विशाल साहित्य संस्कृत भाषा में विद्यमान होना हमारे ऋषियों, मुनियों, कवियो, मनीषियो की संस्कृत प्रियता का परिचायक हैं। इस भाषा का माधुर्य, लालित्य, संगीतात्मकता और ध्वन्यात्मकता ही उसके प्रति सहज आकर्षण के लिए पर्याप्त हैं। संस्कृत साहित्य के महत्व के संबंध में डा. एम. विन्टरनित्स का कथन उपयुक्त ही है- "लिटरेचर अपने व्यापक अर्थ में जो कुछ भी सूचित करता है वह सब संस्कृत में विद्यमान है"।

जैन परम्परा में संस्कृत साहित्य का प्राचुर्य है। जैनाचार्य और जैन मनीषी प्रारंभ में प्राकृत भाषा में ही ग्रंथ रचना करते थे। जैन आगमों तथा तत्सम ग्रंथों की भाषा मूलतः प्राकृत, अर्द्धमागधी तथा शौरसेनी रही है। आगमोत्तर साहित्य की अधिकांश प्राचीन रचनाएं भी प्राकृत में हुई है। भगवान महावीर ने प्राकृत में उपदेश किया। उनके प्रमुख शिष्य गौतम आदि गणधरों ने उनका प्राकृत में ही गुंफन किया। उनके निर्वाण की पंचम शताब्दी तक धर्मोपदेश तथा ग्रंथ रचना में प्राकृत की ही उपयोग होता रहा। निर्वाण की छठी शताब्दी में संस्कृत का स्वर गुंजित हुआ। आर्य रक्षित ने संस्कृत और प्राकृत दोनों ही ऋषि भाषा कहा। उनकी यह ध्वनि स्थानांग के स्वरमंडल में भी प्रतिध्वनित हुई। ऐतिहासिक प्रमाण उपलब्ध है कि ईसवी सन् की आरंभिक शताब्दियों में संस्कृत भाषा तार्किकों के तीक्ष्ण तर्क बाणों के लिए तूणीर बन चुकी थी। इसलिए संस्कृत भाषा का अध्ययन मनन न करने वालों के लिए विचारों की सुरक्षा खतरे में थी। भारत के समस्त दार्शनिकों ने दर्शनशास्त्र के गंभीर ग्रंथों का प्रणयन संस्कृत भाषा में प्रारंभ किया। जैन कवि और दार्शनिक भी इस दौड़ में पीछे नहीं रहे। उन्होंने प्राकृत के समान ही संस्कृत पर अपना अधिकार कर लिया और काव्य तथा दर्शन के क्षेत्र में अपनी महत्वपूर्ण रचनाओं के द्वारा समृद्ध बनाया। भारतीय वाङ्मय के विकास में जैनाचार्यों द्वारा विहित योगदान की प्रशंसा डॉ. विन्टरनित्स ने बहुत अधिक की है। संस्कृत काव्य के विकास काल में जितने साहित्य जैन आचार्यों और मनीषियों ने लिखे है, उनसे कई गुने अधिक ह्रासोन्मुख काल में भी जैनों ने लिखे हे। इसीलिए जैन संस्कृत काव्य ग्रंथों में संस्कृत के विकास और ह्रसोन्मुख काल की सभी प्रवृत्तियों का समवाय प्राप्त है।

जैन आचार्यों को संस्कृत साहित्य के निर्माण जिन कारणों से प्रेरणा प्राप्त हुई उनको मुनि गुलाबचन्द 'निर्मोही' ने उद्घाटित किया-

1. जैन धर्म के मौलिक तत्वों का प्रसार।
2. आप्तपुरुषों तथा धार्मिक महापुरुषों की गरिमा का बखान।
3. प्रभावी राजा, मंत्री या अनुयायियों का अनुरोध।

उक्त कारणों के अतिरिक्त एक अन्य कारण यह भी बतलाया है कि अनेक जैन आचार्य मूलतः ब्राह्मण थे। अतः बचपन से ही संस्कृत उन्हें विरासत के रुप में प्राप्त हुई थी। उस विरासत से अपनी प्रतिभा को और अधिक विकसित करने के लिए साहित्य सृजन का माध्यम उन्होंने संस्कृत को चुना। जैन संस्कृत साहित्य का प्रवाह ईसा की दूसरी शती से प्रारंभ हुआ और चौदहवी शती तक निरंतर चलता रहा। पन्द्रहवी और सौलहवीं शती के संस्कृत ग्रंथों में रचना स्थल का उल्लेख प्राप्त नहीं होता। सतरही और अठारहवी शती में संस्कृत में प्रचुर साहित्य लिखा गया। उन्नीसवीं शती में जैन विद्वानों द्वारा लिखित संस्कृत साहित्य बहुत कम प्राप्त है। बीसवीं शती में जैन संस्कृत साहित्य का पुनः उत्कर्ष हुआ। इस उत्कर्ष के मूल श्रेयोभ्राक् दिगंबर और तेरापंथ धर्म संघ के आचार्य तथा विद्वान मुनि हैं। दिगंबर परम्परा के आचार्य ज्ञानसागर, आचार्य विद्यासागर ने संस्कृत साहित्य में विभिन्न विद्याओं में ,संस्कृत कृतियो का प्रणयान कर संस्कृत परम्परा को प्रवह्ममान बनाये रखा।

संस्कृत साहित्य के इतिहास मे जैन मुनियों का विविध विधाओं में महत्वपूर्ण अवदान रहा है। इस संबंध में डा. नेमिचंद शास्त्री एवं डा. श्यामसुन्दर दीक्षित आदि विद्वानों ने विशेष प्रकाश डाला है। संस्कृत के जैन काव्यो के संबंध मे जो अध्ययन प्रस्तुत किए गए हैं, उनसे ज्ञात होता है कि जैन कवियो ने लगभग दूसरी-तीसरी शताब्दी मे संस्कृत में काव्य लिखना प्रारंभ कर दिया था। तब से लेकर वर्तमान युग तक जैन कवियों द्वारा संस्कृत जैन कवियों द्वारा संस्कृत के सैकड़ों ग्रंथ लिखे गए है। इनका संक्षिप्त परिचय विद्वानों ने प्रस्तुत किया हैं। उससे यह ज्ञात होता है कि संस्कृत में महाकाव्य खंड काव्य, एकार्थ काव्य, ऐतिहासिक काव्य, संदेश काव्य, लघु काव्य, स्तोत्र एवं सूक्ति काव्य और चंपू काव्य आदि विभिन्न विधाओं मे ग्रंथ लिखे गए है। इन सब विधाओं में महत्वपूर्ण ग्रंथो का मूल्यांकन भी दोनो द्वारा प्रस्तुत किया गया है।

संस्कृत जैन साहित्य के प्रथम सूत्रधार आचार्य उमास्वामि है। उनकी रचना 'तत्वार्थसूत्र' (मोक्षशास्त्र) जैन दर्शन का प्रथम संस्कृत सूत्र ग्रंथ है। इस रचना में जैन मान्यतानुसार तत्व-दर्शन, पदार्थ-विज्ञान, आचारशास्त्र, प्रमाण-मीमासा, नयवाद तथा स्याद्वाद आदि का सविस्तार विवेचन किया गया। इसके बाद समन्तभद्र ने दार्शनिक तथ्यों के आधार पर संस्कृत काव्यों की रचनाएं की। समन्तभद्र ने वैदिक ऋषियो के स्तोत्र-स्तवन काव्य की परम्परा पर स्तुतियों का प्रणयन किया है। इनके स्तोत्र दो धाराओं मे विभक्त दिखाई पड़ते है-बुद्धिवादी नैयायिक के रुप में तीर्थकरों को अन्य देवो की अपेक्षा उत्कृष्ट बतलाने के लिए आप्तमीमासा और युक्त्यानुशासन जैसी दार्शनिक स्तोत्रधारा एवं भक्तिभावपूर्ण तीर्थकरो के गुणानुवाद के रुप मे बृहांस्वयम्भूस्तोत्र और स्तुति विद्या जैसी काव्यात्मक स्तोत्रधारा। समन्तभद्र के काव्यत्मक स्तोत्रो मे इतिवृत्तात्मक अनेक संकेत उपलब्ध होते है। प्रबंध काव्य का प्रारंभ रविषेण के पद्‌भचरित या जटासिंहनन्दी के वरांगचरित से होता है। रविषेण का समय ई. सन् 676 है जटासिंहनन्दी का ई. सन् 778 से पूर्व है। अतः जैन कवियों द्वारा प्रबंध काव्य लिखे जाने की परम्परा पद्‌भचरित और वरांगचरित से आरंभ हुई है। ये दोनों ही पौराणिक काव्य है। इनमें पद्‌मचरित की अपेक्षा वरांगचरित में काव्यतत्व अधिक हैं। वस्तु वर्णन और भावाभिव्यंजन में महाकाव्य के शास्त्रीय लक्षण घटित है। अतएव आठवीं शती से जैन कवियों द्वारा संस्कृत में विभिन्न काव्य विधाओं का संवर्धन होता रहा है। काव्य की कुछ विधाएं तो ऐसी हैं, जिनका संवर्धन विशेषरुप से जैन कवियों द्वारा ही संपन्न हुआ है। समस्यापूर्ति

और पादपूर्ति काव्य विधा का विकास जैन कवियों द्वारा सर्वप्रथम संपन्न हुआ। ई. सन् 9वीं शती में जिनसेन द्वितीय ने मेघदूत के समस्त श्लोकों की पादपूर्तिमय पार्श्वाभ्युदय नामक काव्य 364 मन्दाक्रांता वृत्तों में संपन्न किया है। मेघदूत के श्रृंगार रस का शांत रस के रुप में अद्‌भुत परिवर्तन किया गया है। कवि ने मूलकाव्य की पदावलियों के भाव और पदलालित्य की पूर्ण रक्षा की है। मेघदूत के अंतिम चरण की पादपूर्ति रुप चारित्रसुन्दर गणि ने वि. सं. 1484 में शीलदूत नामक काव्य 131 पद्यों में रचा है। इसी शताब्दी में सांगण के पुत्र विक्रम ने मेघदूत के चतुर्थ पाद की पूर्ति कर 126 पद्यों में नेमिदूत या नेमिचरित की रचना की है। इस काव्य में तीर्थंकर नेमिनाथ का चरित अंकित है। माघकाव्य, नैषधकाव्य भक्तामर जैनस्तोत्र आदि पर समस्यापूर्ति, पादपूर्ति स्तोत्र प्राप्य है।

इस प्रकार संस्कृत के जैन कवियों ने समस्यापूर्ति काव्य विधा का संवर्धन तो किया ही, साथ ही नवीन अर्थ का विन्यास कर एक नयी शैली की उद्‌भावना की। श्रृंगार की रसधारा को वैराग्य की ओर मोड़ना और मेघदूत आदि काव्यों के चरणों को ग्रहण कर नवीन अर्थ की उद्‌भावना कर देना साधारण बात नहीं है। संस्कृत जैनकवियों ने काव्य स्थापना की साजसज्जा के लिए भले ही अजन्ता की चित्र और मूर्तिकला, वात्स्यायन का कामसूत्र, रामायण, महाभारत एवं अश्वघोष, कालिदास माघ और बाणभट्ट के ग्रंथों का अध्ययन कर प्रेरणाएं और सहायक प्रतिष्ठा की हो परंतु काव्य आत्मा को सजाने में द्वादशांग वाणी का ही उपयोग कर श्रमणिक परम्परा की प्रतिष्ठा की है। 23

अतः संस्कृत भाषा में जैन साहित्य की (मधुर) सरिता द्वितीय शताब्दी से लेकर अद्यावधी तक निर्बाध गति से प्रवाहित होती रही है। यद्यपि साहित्य सृजन की यह धारा कभी तीव्र हुई तो कभी क्षीण। परंतु 8वीं शताब्दी से 18वीं शताब्दी तक यह अविच्छिन्न रुप से प्रवाहित होती रही। 18वीं शताब्दी के पश्चात् भी संस्कृत भाषा में जैन साहित्य लिखा जाता रहा है। 20वीं शदी के प्रमुख संस्कृत जैन रचनाकारों में आचार्य ज्ञानसागर, आचार्य कुन्थुसागर, आचार्य तुलसी, आचार्य महाप्रज्ञ, आचार्य विद्यासागर, आचार्य अजितसागर, पं. मूलचन्द्र शास्त्री, डा. पन्नालाल साहित्याचार्य, पं. दयाचन्द्र साहित्याचार्य, पं. जवाहरलाल सिद्धांतशास्त्री, युवाचार्य महाश्रमण, मुनि बुद्धमल, मुनि नवरत्नमल, मुनि छत्रमुनि, चन्दनमुनि, मुनि नथमल 'बागोर' आर्यिका सुपार्श्वमती, साध्वी यशोधरा आदि प्रभृति विधाओं पर सुन्दर रचनाएं प्रस्तुत कर संस्कृत साहित्य के भंडार को समृद्ध बनाया है।

तेरापंथ में संस्कृत का सूत्रपात

तेरापंथ धर्म संघ के उद्‌भव का इतिहास दो सो से कुछ अधिक वर्षों का है। किन्तु संस्कृत भाषा का बीजारोपण वि. सं. 1881 मे हुआ। विगत पांच दशकों मे वह निरंतर पुष्पित और फलित होता रहा।

तेरापंथ धर्मसंघ के नवम आचार्य तुलसी के समय मे तो वह वृक्ष शाखा-प्रशाखाओं से और अधिक सघन हो गया। इससे उसकी शीतल छाया और स्वादिष्ट फलो का लाभ मात्र तेरापंथ को ही नहीं अपितु समग्र संस्कृत वाङ्‌मय को प्राप्त हुआ। आचार्य तुलसी ने तेरापंथ धर्मसंघ मे साधु-साध्वियों को संस्कृत मे कार्य करने की विशेष प्रेरणा-प्रोत्साहन दिया तथा अनेक कार्यक्रमो का आयोजन संस्कृत भाषा में होने लगा। दशम आचार्य महाप्रज्ञ ने इस सुदीर्घ परम्परा को आगे

बांधते हुए विविध विषयक संस्कृत कृतियों का निर्माण किया तथा निर्माण में संलग्न भी हैं। युवाचार्य महाश्रमण, साध्वी प्रमुख कनकप्रभा तथा अन्य विदुषी साध्वियां-साधु भी संस्कृत सेवा में लगे हुए है। बीसवीं शती के जैन संस्कृत में से यदि तेरापंथ का संस्कृत साहित्य अलग कर दिया जाए तो बहुत बड़ी रिक्तता की अनुभूति होगी। तेरापंथ का संस्कृत साहित्य मुख्यतः नो भागों में विभक्त किया जा सकता है-

(1) व्याकरण	(2) दर्शन और न्याय	(3) योग
(4) महाकाव्य	(5) खण्डकाव्य (गद्य-पद्य)	(6) प्रकीर्णक काव्य
(7) संगीतकाव्य	(8) स्तोत्र काव्य	(9) नीति काव्य

जैन परम्परा में संस्कृत नाटक साहित्य का विकास बहुत सीमित हुआ है। तेरापंथ में भी अन्य साहित्यिक विकास की तुलना में संस्कृत नाटक साहित्य का विकास होना अवशेष हैं। प्रारंभिक रुप में कुछ एकांकी अवश्य लिखे गए है किन्तु निकटवर्ती अतीत काल में संस्कृत के विकास के देखते हुए भविष्य में नाटक साहित्य का भी यथेष्ट विकास हो सकेगा, ऐसी संभावना खोजी जा सकती है।

एक प्रत्यक्ष दृष्टा होने के नाते मुझे यह लिखते बड़ी प्रसन्नता होती है कि जैन परम्परा के अन्तर्गत श्वेताम्बर तेरापंथी संघ के विगत कुछ वर्षों से संस्कृत विधा के अध्ययन, अनुशीलन, अभिनव साहित्य सृजन एवं प्रसार के संदर्भ मे जो उत्साह, अध्यवसाय तथा जागरुकता रही हैं, आज भी है। वह निःसंदेह सर्वथा स्तुत्य है। जब मै सैकड़ों साधु-साध्वियों को संस्कृत में निर्बाध गति से भाषण करते देखता हूं तो मेरा मन हर्ष से उत्फुल्ल हो जाता है। मुझे प्राचीन भारत के वे गुरु कुल प्रत्यक्ष हो जाते है, जहां ब्रह्मचारी देववाणी में आलाप-प्रलाप करते हुए अपने जीवन के निर्माण मे संलग्न रहते थे।

आचार्य महाप्रज्ञ

वीर भूमि राजस्थान के शेखावटी के झुंझनूं जिले मे टमकोर ग्राम की पावन धरती पर 14 जून 1920 को चौरड़िया परिवार मे आपका जन्म हुआ। वर्तमान में आप तेरापंथ धर्मसंघ के दशम आचार्य के रुप में प्रतिष्ठित है। आचार्य महाप्रज्ञ अनुशास्ता, कवि, दार्शनिक, चिन्तक आदि अनेक गुणों से विभूषित है। आप बहुमुखी प्रतिभा संपन्न है, आपका अनेक क्षेत्रों में प्रभूत योगदान है। आपके द्वारा अविष्कृत प्रेक्षाध्यान, जीवनविज्ञान सामान्य जनता के लिए तथा आधुनिक विश्रृंखलित समाज के लिए रसायण के समान हैं। आचार्य महाप्रज्ञ का संस्कृत, प्राकृत, हिन्दी, राजस्थानी आदि भाषाओं मे अनेक उत्कृष्ट ग्रंथ विरचित है। संस्कृत भाषा में आपकी विविध विधाओं मे अनेक रचनाएं प्रसिद्ध है। जिनका वर्णन इस प्रकार है।

संबोधि

संबोधि युवाचार्य महाप्रज्ञ (आचार्य महाप्रज्ञ) की 16 आध्यायों मे विभक्त 703श्लोकों में आच्छादित एक श्रेष्ठ एवं अमर काव्य है। उनमें से पहले आठ अध्यायो की रचना वि. स. 2012 में महाराष्ट्र में तथा शेष आठ अध्यायों की रचना वि. सं. 2016 में कलकत्ता में हुई। संबोधित का सम्पादन और विवेचन मुनि श्री शुभकरण और मुनि श्री दुलहराज ने किया है। इसका अंग्रेजी अनुवाद भी प्रकाशित हो चुका है।

प्रस्तुत ग्रंथ में आचारांग, सूत्रकृतांग, स्थानांग, भगवती, ज्ञातृधर्मकथा, दशाश्रुत स्कन्ध,

प्रश्नव्याकरण, उपासकदशा आदि आगमों का सार संगृहीत है। इसकी शैली गीता के समतुल्य है। गीता के तत्त्वदर्शन में ईश्वरार्पण का जो माहात्म्य है, वही माहात्म्य जैन दर्शन में आत्मार्पण का है। जैन दर्शन के अनुसार आत्मा ही परमात्मा व ईश्वर है। गीता का अर्जुन कुरुक्षेत्र की युद्ध भूमि में कायर होता है तो संबोधि का मेघकुमार साधना की समरभूमि में कायर होता है। गीता के संगायक कृष्ण हैं तो संबोधि के संगायक महावीर है। कृष्ण का वाक संबल प्राप्त कर अर्जुन का पुरुषार्थ जाग उठता है तो महावीर की वाक् प्रेरणा से मेघकुमार की मूर्च्छित चेतना जागृत हो जाती है। मेघकुमार ने जो प्रकाश पाया, उसी का व्यापक दिग्दर्शन संबोधित में है। अर्थात् यह काव्य जहां एक और आध्यात्मिकता का बोध कराता है वही दूसरी ओर जैन न्याय के दिगन्तव्यापी विस्तार का संस्पर्श भी कराता है। संबोधि मे ध्यान, अहिंसा, निष्काम कर्म तथा आत्मा की अमरता आदि का ज्ञान मिलता है।

इस ग्रंथ का प्रत्येक, अध्याय एक-एक विषय को अपने में समेटे हुए है। यह कृति जैन दर्शन के सिद्धांत को समझने का अनुपम ग्रंथ है। संबोधि के पद जहां सरल और रोचक है वहां उतनी ही सरलता पूर्वक गहराई में पैठे है। उसकी सरलता और मौलिकता का एक कारण यह भी है कि वे भगवान महावीर की मूलभूत वाणी पर आधारित है। बहुत सारे पद्य तो अनूदित है किन्तु उनका संयोजन सर्वथा नवीन शैली में है।

भाषीय लालित्य एवं प्रवाह-दार्शनिक विषय के रहते हुए भी इसकी भाषा में एक अपूर्व लालित्य एवं प्रवाह है दृष्टान्त दृष्टव्य है-

नानासंतापःसंतप्तां, तापोन्मूलनतत्पराः।
तमाजग्मुर्जनाभूयः, सुचिरं शांतिमिच्छवः।।

इस पद्य में त वर्ग का सुन्दर उपनिबंधन तथा मृदुल पद विन्यास अपूर्व गरिमा का सृजन कर रहा है। प्रासादिकता का सुन्दर समायोजन निदशनार्थ श्लोक प्रस्तुत है

वदन्तश्चाप्यकुर्वतो, बंधमोक्षप्रवेदिनः।
आश्वासयन्ति चात्मानं, वाचा वीर्येण केवलम्।। 30

प्रस्तुत श्लोक निःसंदेह कथ्य को इतनी सहजता से प्रकट क र रहे है मानो कहीं भी सायास कुछ नाही जोड़ना पड़ रहा हो अपितु हृथपद अपने आप अहमहमिकया निर्बाधित हो रहे हो।

आचार्य महाप्रज्ञ ने संबोधि में लगभग 703 श्लोकों मे वर्ण्यविषय को निरुपित किया है, जिसमें 5 श्लोक (2,10,11,14,15,19) इन्द्रवजा और 4 श्लोक (2,8,9,12,13) उपेन्द्रवज्रा और शेष अनुष्टप् छन्द में निबद्ध है। आचार्य श्री महाप्रज्ञ रचित संस्कृत साहित्य के अधिकांश भाग में अनुष्टुप् छन्द ही विनियुक्त है। संबोधि मे प्रस्तुत छन्द का प्रयोग मेघकुमार के आख्यान प्रतिपादन एवं जैनादर्शन के तथ्यो के उपपादन के क्रम में किया है। उदाहरण

अकष्टासादितो मार्ग, कष्टापाते प्रणश्यति।
कष्टेनापादितोमार्ग, "कष्टेष्वपि न नश्यति।। 31

प्रस्तुत पद्य में अनुष्टुप् छन्द के समस्त लक्षण घटित होते हैं। इसके चारों चरण समान है। प्रत्येक चरण का पांचवा अक्षर गुरु तथा द्वितीय एवं चतुर्थ चरण में लघु है। संबोधि में एक ओर जीवन निर्माण के सूत्र है तो दूसरी ओर सूक्ति, रस, अलंकारों का प्राधान्य है। संबोधि में सूक्ति का सुन्दर विनियोजन देखने को मिलता है-

ऐं ॐ. स्वयंभूस्सत्यात्मा तीर्थकरो महान्।
वर्धमानो-वर्धमानो ज्ञान-दर्शन सम्पदा।। 32

प्रस्तुत श्लोक में तीसरे पाद में वर्धमाना वर्धमान में न केवल यमक अलंकार का प्रयोग है अपितु सूक्ति का संयोग भी प्राप्य है। जैन-दर्शन में 'संबोधि' आत्मा-मुक्ति का मार्ग है। बोधि के तीन प्रकार हैं-ज्ञान, बोधि व चारित्र बोधि। इसप्रकार संबोधि शब्द सम्यक् -ज्ञान, सम्यक्-दर्शन और सम्यक्-चरित्र को अपने समेटें हुए हैं। सम्यक्-दर्शन के बिना ज्ञान, अज्ञान बना रहता है और सम्यक् चरित्र के ज्ञान और दर्शन निष्क्रिय रह जाते है आत्मा-दर्शन के लिये तीनों का सामान और अपरिहार्य महत्व है। इस दृष्टि को ध्यान में रखते हुए इस ग्रंथ का नाम संबोधि रखा गया है जो सर्वथा उचित ही है।

मेघकुमार भगवान महावीर से वही प्रश्न करता है जो एक सामान्य प्राणी सोचता है अपनी इसी विचारधारा के वशीभूत होकर सुख-दुख के मिथ्या मोह में पड़करअपने अमूल्य मानव-जीवन को व्यर्थ गंवा देता है। मेघकुमार कहता है कि जीवन में जो सुख विद्यमान है, उनसे विमुख होकर कष्ट क्यों सहा जाए, जबकि जीवन की अवधि अत्यंत अल्प है और इसे कौन जानता है कि यह जीवन पुनः प्राप्त होगा अथवा नही। वैसे भी सुख प्राणियों को स्वाभाविक व प्रिय लगता है और दुःख अप्रिय। तब क्यों सुख को ठुकराकर दुःख सहा जाये।

सुखानि पृष्ठतः कृत्वा, किमर्। कष्टमुद्वहेत्।
जीवनं स्वल्पमेवैतत्, पुनर्लभ्यं न वाऽथवा।।
सुखं स्वाभाविकं भाति, दुःखमप्रियमऽिगनाम्।
किं दुःख हि सोढव्यं, विहाय सुखमात्मनः।।3

प्रत्युत् मे महावीर कहते हैं कि मनुष्य की यह सुखासक्ति उसे कर्तव्य से परांडमुख करती है। साथ ही वे स्पष्ट करते हे कि 'जो सुख पुद्‌गल जनित है, वह वस्तुतः दुःख है, किन्तु मोहवश व्यक्ति इस सही तत्व तक नही पहुंच पाता और दर्शन मोह अर्थात् दृष्टि को मूढ़ बनाने वाले मोह कर्मों से मुग्ध मनुष्य मिथ्यात्व की और आकृष्ट होता है तथा मित्यात्वी घोर कर्म उपार्जन करता हुआ संसार में परिभ्रमण करता रहता है। 34/ कष्ट और दुःखों को सहकर मनुष्य जो प्राप्त करता वह स्थायी होता है क्योंकि सहजता से प्राप्त मार्ग कष्टो के सम्मुख आ जाने पर नष्ट हो जाता है। 35/

कई व्यक्ति इस भ्रांत धारणा को मानते है कि अहिंसा कायरों का सहारा होती है। किन्तु वस्तुतः अहिंसा निर्भीक व्यक्तियो का गुण होती हे। कवि का भी मानना है कि जहां अभय सिद्ध होता है, वहां अहिंसा सिद्ध हो जाती है। एक व्यक्ति अहिंसक भी हो और भयभीत भी हो, ऐसा न कभी हुआ है और न कभी होगा। कवि की कामना है कि मनुष्य किसी के साथ विरोध न करे, न किसी से डरे और न किसी को डराये, न किसी के अधिकारों का अपहरण करे और न जाति का गर्व करे। मनुष्य दूसरों को तुच्छ न समझे और अपने को भी तुच्छ न समझे। जो सब जीवों को अपनी आत्मा के समान समझता है, वह अहिंसा-परायण है-

न विरुध्येत केनापि, न बिभियान्न भावयेत्।
अधिकारान्न मुष्णीयान्न जातेर्गर्वमुद्वहेत्।।
न तुच्छान् भावयेज्जीवान्, न तुच्छं भावयेन्निजम्।
सर्व-भूतात्मभूतो हि, स्यादहिंसापरायणः।।

कवि की दृष्टि में सत्य प्रिय और प्राणी मात्र के प्रति प्रेम भाव का पोषक है। वह मानता है कि यही सुभाषित है, यही सनातन सत्य है कि व्यक्ति सदा सत्य से संपन्न बने और सब जीवों के प्रति मैत्री का व्यवहार रखे।

स्वाख्यातमेत देवास्ति, सत्यमेतत् सनातनम्।
सदा सत्येन संपन्नो, मैत्रीं भूतेषु कल्पयेत्।। 37

मन अत्यंत चंचल होता है, इसकी चंचलता के वशीभूत होकर मानव विषयोपभोग में लिप्त होता है। मन एक दुष्ट घोड़ा है, वह साहसिक व भयंकर है। वह दौड़ रहा है। उसे जो भली भांति अपने अधीन करता है, वह मनुष्य नष्ट नहीं होता, सन्मार्ग से च्युत नहीं होता-

मनः साहसिको भीमो, दुष्टाऽश्वः परिधावति।
सम्यग् निगृहते येन, स जनो नैव नश्यति।। 38

आत्मा को जानने वाला सब दुःखों को पार कर लेता है। आत्मा ही जानने योग्य है, आत्मा का दर्शन, श्रवण, चिंतन व ध्यान हो जाने पर सब कुछ जान लेने की स्थिति आ जाती है। इसी आशय को 'संबोधि' में भी स्पष्ट करते हुए लिखा है कि जिसने आत्मा को साथ लिया, उसने विश्व को साथ लिया। जिसने आत्मा को गंवा दिया, उसने सब कुछ गंवा दिया। भगवान महावीर मेघ से कहते हैं कि आत्मा अनन्त आनंद से परिपूर्ण है। मेघ! तू उसी में चित्त को रमा, उसी में मन को लगा और उसी मे अध्यवसाय का संजोग रख-

येनात्मा साधितस्तेन, विश्वमेतत् प्रसाधितम्।
येनात्मा नाशितस्तेन, सर्वमेव विनाशितम्।। 39

अपि च

अनन्तानन्दसम्पूर्ण, आत्मा भवति देहिनाम्।
तच्चित्तस्तन्मना मेघ! तदध्यवसितो भव।।

निष्कर्षतः जैसा कि पूर्व मे भी कहा जा चुका है कि 'संबोधि' शब्द सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन और सम्यक् चरित्र को अपने में समाहित किए हुए है। इस दृष्टि से मुनि नथमल रचित प्रस्तुत 'संबोधि' अपने यथा नाम तथा नाम तथा गुण को प्रमाणित करती है। जैन दर्शन सिद्धांतो के अनुरूप योग-प्रक्रिया को रचनाकार ने सरल व काव्यमय भाषा-शैली में विश्लेषित किया है। काव्यलिंग एवं अर्थान्तरन्यास अलंकार के सुन्दर समायोजन से कवि ने इस दार्शनिकता की नीरस भूमि से उठकर काव्य की सरस भूमि पर प्रतिष्ठित कर दिया है। 'संबोधि' को जैन गीता कहना न केवल अनतिशयोक्तिपूर्ण है वरन् सर्वथा उपयुक्त भी है।

आश्रुवीणा

'अश्रुवीणा' युवाचार्य महाप्रज्ञ (आचार्य महाप्रज्ञ) द्वारा मन्दाक्रांता वृतम् में विरचित सौ पद्यों का एक खंड काव्य है। इसकी रचना वि. स. 2016 में हुई। प्रस्तुत काव्य भर्तृहरि आदि विश्रुत कवियों द्वारा रचित 41/ शतक काव्यो के साथ प्रतिस्पर्धा करने में सक्षम है। अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त संस्कृत विद्वान डा. सतकड़ी मुखर्जी ने इस काव्य के विषय में लिखा है- "इस काव्य में एक और जहां शब्दों का वैभव है, वहां दूसरी ओर अर्थ की गंभीरता है। इसमें शब्दालंकार और अर्थालंकार दोनों एक दूसरे से बढ़े-चढ़े हैं। भक्ति रस से परिपूर्ण उदात्त कथावस्तु का आलम्बन लेकर यह लिखा गया है" ।42/ काव्यानुरागियों, तत्वजिज्ञासुओं तथा धर्म के रहस्य को प्राप्त

करने की आकांक्षा वालों के लिए समान रुप से समादरणीय है। इस काव्य की कथावस्तु जैन आगमों से ही ली गयी है।

महावीर ने तेरह बातों का घोर अभिग्रह धारण किया था। वे,घर-घर जाकर भी भिक्षा नही ले रहे थे क्योंकि अभिग्रह पूर्ण नहीं हो रहा था। उधर चन्दनबाला राजा की पुत्री होकर भी अनेक कष्टपूर्ण स्थितियों में से गुजर रही थी। उसका शिर मुंड़ित था। हाथ-पैरों में जंजीरें थी। तीन दिनों की भूखी थी। आज के कोने में उबले हुए उड़द थे। इस प्रकार अभिग्रह की अन्य सारी बातें तो मिट गयी किन्तु उसकी आंखो में आंसू नही थे। महावीर उस एक बात की कमी देखकर वापस मुड़ गए। चन्दनबाला का हृदय दुःख से भर गया। उसकी आंखों में अश्रुधारा बह चली। उसने अपने अश्रु-प्रवाह के माध्यम से चन्दनबाला का संदेश ही इस कृति का प्रतिपाद्य है। कविताकामिनीविलासकविकुलगुरु कालिदास ने अपने मेघदूत काव्य में मेघ को यक्ष का दूत बनाकर भेजा और अश्रुवीणा मे अश्रुप्रवाह को चन्दनबाला का दूत बनाया गया है। चन्दनबाला अपने संदेश में कहती हैं-

धन्यां निद्रा स्मृति-परिवृढं निह्नुते या न देवं,
धन्यां स्वप्नां सुचिरमसकृद ये च साक्षान्नयन्ते।
जाग्रन्कालः पालमपि न वा त्वां च सोढुं महाऽभू,
च्छलाध्योऽश्लाध्यः क्वचिदपि न वैकान्तदृष्ट्या विचार्य।।

अश्रुवीणा की नायिका चन्दनबाला का चरित्र दुःखाग्नि में तपकर कुन्दन की भांति निखर गया है। 'चन्दनबाला' अपने नाम को सार्थक करती है। जिस प्रकार चन्दन वृक्ष विषधर नागो से लिपटे रहने पर भी दिशाओं को अपनी सुगंधी से सुवासित करने का कार्य नही छोड़ता, उसी प्रकार चन्दन जीवन भव दुःखो से जूझती है, कष्टो का हलाहल पीती रहती है, किन्तु कुछ नही कहती, विपरीत परिस्थितियो में भी अपनी मानवीय सवेदना, श्रद्धा, आशा एवं विश्वास का दामन नही छोड़ती44। अर्थालंकार मे उत्प्रेक्षालंकार का उदाहरण दृष्टव्य-

धन्यां धन्यं शुभदिनमिदं विद्युता द्योतिताशः,
सिञ्चन्नुर्वी नवजलधरः कर्षकेणाद्यदृष्टः।
तापः पापोऽगणितदिसैरन्तरुर्व्याः पप्रविष्टः,
श्वासनान्त्यान् गणियतितमां निःश्वसन्नुष्णमुच्चैर्वाः।। 45

इसमें भावो का सुन्दर समायोजन बन पाया है। 'नवजलधर' शब्द आषाढ़ मास मे प्रथम बार देखे गये मेघ के लिए आया है। 'मेघ' मन में आशा का सचार करता है, कृषक इन्हे देखकर आह्लादित होते है, वहाँ दुःखी लोगो के ताप का शमन भी होता है।

अश्रुवीणा का प्रत्येक पद्य उत्कृष्ट सूक्ति का निर्देशन है। किसी भी लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए उसमे अटूट श्रद्धा का होना महत्व रखता है। काव्य में सरसता, सुमधुरता तथा लालित्य है। आचार्य महाप्रज्ञ की भाषाशैली रोचक एवं हृदयावर्जक है। आशुवीणा आध्यात्मिक सौन्दर्य को स्पृहणीय मानने की शिक्षा देती है।

आचारांग भाष्य

अध्यात्म से अनुप्राणित आचारशास्त्र का महनीय ग्रंथ हे आचारांग। इस पर अनेक व्याख्यान ग्रंथ उपलब्ध है। उन सबमे प्राचीन-निर्युक्ति है। चूर्णि, टीका, दीपिका, अवचूरी, बालावबोध,

पद्यानुवाद और वार्तिक आदि व्याख्याएं भी महत्वपूर्ण है। व्याख्या ग्रंथों में आचार्य प्रवर द्वारा प्रणीत आचारांग भाष्य शीर्ष स्थानीय है। यह भाष्य प्राचीन परम्परा से हटकर लिखा गया है। अब तक जैन आगमों पर जितने भी भाष्य लिखे गए हैं वे पद्यात्मक प्राकृत भाषा में है। 46 प्रस्तुत भाष्य संस्कृत भाषा में रचित गद्यात्मक रचना है। भाष्यकार ने सूत्रों की वैज्ञानिक मनोवैज्ञानिक और परामनोवैज्ञानिक दृष्टि से व्याख्याएं कर भाष्य को समृद्ध बनाया है। इसकी भाषा शैली सरस व गंभीर है। तुलनात्मक दृष्टि से सूत्रों का प्रतिपादन पाठक के अन्तःहृदय को झकझोर देता है। यथास्थान यथोचित शब्दों के नए अर्थ, नवीन परिभाषाएं और मौलिक व्याख्याएं कर गागर में सागर भर दिया है। ग्रंथकार ने अपने प्रतिभाज्ञान से प्राचीन और अर्वाचीन व्याख्या स्थलों पर सामजस्यपूर्ण टिप्पणियां कर अनेक रहस्यों का उद्घाटन किया है। संपूर्ण भाष्य में भाष्यकर्ता का मौलिक चिन्तन दृष्टिगोचर हुआ है।

आचारांग भाष्य के अंतिम भाग 'परिशिष्ट' में विशेष शब्दार्थों के साथ देशी शब्द तथा धातु धातुपद आदि विषयों को तुलनात्मक दृष्टि से भी व्याख्यायित किया है। आचारांग भाष्य में सूक्तों तथा सुभाषितमय वाक्यों को भी अपना विषय बनाया है। आचारांग भाष्य जितना सरल, सुगम एवं सुबोध है उतना ही गहन गंभीर है। उसकी अर्थ सृष्टि जितनी विराट है शब्द सृष्टि उतनी ही संक्षिप्त है। यह कहा जाए कि उसके प्रत्येक शब्द बिन्दु में अर्थ-सिन्धु समाया हुआ है तो कोई अतिश्योक्ति नही होगी।

आयरो 6/55वां सूत्र सुब्भिं अदुवा 'सुब्भि', 'दुब्भि' को चूर्णि 47 व टीका में गंध की विशेषण माना है। आहार के प्रसंग में इस अर्थ की संगति संभव है। परंतु प्रकरण मुनि की विशिष्ट साधना का चल रहा है। सूत्र में स्पष्ट निर्देश है कि 'एहमंगेसि एगचरिया होति' से महावी परिव्वए49 मेंधावी या गीतार्थ मुनि विशिष्ट साधना के लिए एकलचर्या का स्वीकार करता है। कर्म निर्जरा के लिए श्मशान प्रतिमा को स्वीकार करता है। उस समय मनोज्ञ अमनोज्ञ शब्द सुनाई देते है। उन्हें समभाव से सहन करें। भाष्यकार50 ने सुब्भि दुब्भिं को शब्द का विशेषण माना है। 'अदुवा' तत्य भेखा51 से भी उपर्युक्त विशेषण शब्द का प्रतीत होता है। ज्ञातासूत्र 52 में गंध की तरह मनोज्ञ, अमनोज्ञ विशेषण शब्द के लिए भी प्रयुक्त है। श्मशान प्रतिमा में शब्दादि के उपसर्ग अवश्यंभावी है। अतः शब्द 'सुब्भिं दुब्भि' विशेषण शब्द के है। यह चिन्तन ही संगत है। इसके अतिरिक्त भी आचारांग भाष्य में अनेक स्थलों पर भाष्यकार की मौलिकता का दिग्दर्शन होता है। निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि आचारांग भाष्य वह विरल संस्कृत भाष्य है जिसमें आचार्य महाप्रज्ञ की प्रज्ञापूर्ण तुलनात्मक दृष्टि का प्रकाम निदर्शन होता है। आचारांग भाष्य आचार्य महाप्रज्ञ की सूक्ष्मग्राही प्रज्ञा का अमिट आलेख है, हस्ताक्षर है।

रत्नपालचरितम्

जैन पौराणिक आख्यान पर युवाचार्य महाप्रज्ञ (सम्प्रति आचार्य महाप्रज्ञ) द्वारा विरचित पद्यमय खण्डकाव्य है। इसकी संपूर्ति वि. स. 2002 में श्रावण शुक्ल पञ्चमी के दिन हुई। इसका हिन्दी अनुवाद मुनि दुलहराज द्वारा किया गया है। पांच संर्गों में निबद्ध प्रस्तुत काव्य में कथानक की अपेक्षा कल्पना अधिक है। कल्पना काव्य का आभूषण है। किन्तु उसकी भी एक मर्यादा है। कल्पना का अर्थ है-अनुभूति के प्रकाशन में सहायता देना। कभी-कभी कवि कल्पना को इतनी अधिक प्रधानता दे देता है कि काव्य का मूल भाव गौण हो जाता है। ऐसी कल्पना हृदय में रस संचार

नहीं करती। प्रस्तुत कृति मे कल्पना को इतना महत्त्व नही दिया गया है जिससे भाव गौण हो जाए। वस्तुत कल्पना के लिए किसी प्रकार का कृत्रिम प्रयास नही है । वह सहज और वास्तविकता से अनुस्यूत है। रत्नावली रत्नपाल की खोज मे जंगल में घूमती हुई वृक्षो लताओं फूलो आदि से बात करती हुई कहती है-

नाऽशोकां कुरु षे किमशोक!, मां च सशोकां प्रिय विरहेण।
लज्जास्पदमपि भवतिः सखो, नाम तवेदं गुणशून्यत्वात्।।53

इस प्रकार समग्र काव्य मे कल्पनामयी कथा प्रस्तुत है सहज शब्द विन्यास के साथ भाव-प्रवणात के लिए प्रस्तुत काव्य सस्कृत भारती को गरिमान्वित करने वाला है। रत्नपालचरितम् के संपूर्ण अवलोकन से सहज बोधक मार्धुय गुण की आसक्ति सर्वत्र प्रतीत होती है। कही भी लंबे सामासिक पदो का दर्शन नही होता। कालिदासीय कविता की तरह रसिक पाठक का रत्नपालचरितम् मे सहज प्रवश हो जाता है।

अतुला तुला

आचार्य महाप्रज्ञ द्वारा विरचित एक मुक्तक काव्य हे। प्रस्तुत काव्य विविधा, आशुकवित्व, समस्यापूर्ति, उन्मेष आर और स्तुतिचक्र नामक पाच विभागो मे सविभक्त है। अग्रगण्य आचार्य श्री महाप्रज्ञ के प्राय सभी श्लोक सुभाषितमय है। किन्तु उनमे से बहुत से पद्याश इस प्रकार के है जिन्हे हम सूक्ति की कोटी मे रख सकते है। अतुला तुला की सूक्तिया वर्तमान परिप्रेक्ष्य मे हर दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। जैसे सामाजिक, नैतिक, साहित्यिक, धार्मिक या आध्यात्मिक सभी सूक्तिया सदेश परम तथा नीतिपरक। वस्तुत यह काव्य किसी भी तुलना पर अतुलनीय है। किचित सूक्तिया दृष्टव्य है-

1 न स्याच्छून्यताया स्वतजः (पृ 10) (शून्यता म अपना तेज नही होता)
2 भीता हि जडा भवन्ति (पृ 10) (जो डरते है व जड़ होते है।)
3 अपात्र विद्या भयकरी (पृ 73) (अपात्र को दी गई शिक्षा भयकर होती है)
4 सत्यस्य पूजा परमात्मापूजा। (पृ 104) (सत्य की पूजा परमात्मा की पूजा है)

आचार्य महाप्रज्ञ कल्पना प्रवण कवि है। कल्पना उनके भावो की सहचरी है। आध्यात्मिक कवि होने के कारण उनकी कल्पना सूक्ष्म, रहस्यमयी, अन्तर्मुखी और कोमल है। उदाहरण दृष्टव्य है-'अन्यालम्बनतो यदूर्ध्वगमन तत्रास्ति रिक्त भयात्' मघाष्टक मे मेघ को लक्ष्य कर की गयी कल्पना आज क अकर्मण्य परालबी ओर पराश्रित लोगो को नया सबोध देने वाली है।

अतुलतुला का पचम विभाग 'स्तुतिचक्रम्' है। इसमे सात स्तुतिया है।

(1) जैनशासनम्

प्रस्तुत स्तोत्र मे भावभरित शुद्ध हृदय से परम श्रद्धा से युक्त होकर कवि उन्मुक्त भाव से गाता है। इसमे आचार, रत्नत्रय आद का भी प्रतिपादन प्राप्त होता है।

(2) महावीरो वर्धमानः

प्रस्तुत स्तोत्र मे लगता है कवि का भक्त हृदयतीर्थकर प्रभु के प्रति सवतोभावेन समर्पित है। ब्रह्मा, विष्णु, शिव रुप मे यह उन्ही का दर्शन करता है।

(3) आचार्य स्तुति

प्रस्तुल कृति मे आचार्य तुलसी की महिमा वर्णित है। जैन धर्म विश्वघटक छ तत्त्व मानता है। काल, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय।

कवि कहता है आचार्य तुलसी इन तत्त्वों के रुप में प्रतिष्ठित है। शनिश्चर मानो इनकी कीर्ति छाया में अपनी मां छाया को पहचानने के लिए शनैः (धीरे-धीरे) चर (शनिचर) हो गया है। कामदेव सोचता है मैं पहचाने से भी विप्रलब्ध नहीं हुआ, इनसे हो गया हूं क्योंकि ये पंच महाव्रत रुप बाण धारण करते हैं। मेरा पुष्प धनु है, इनकी शांति और मृदुता है। मेरी रति प्रिया है। इनकी प्रिया संयम रति है। मेरा चिन्ह शंवर मत्स्य है और इनका भी संवर है।

(4) सिद्धस्तवन स्तोत्र

प्रस्तुत रचना में कवि अपने गुरु के प्रति श्रद्धा भाव में और भी दूर तक पहुंचता है और उनसे शांतिमय परमेश्वर परमौषध प्रदान करने की विनय करता है। "परमेश्वर परमौषधं शांतिमयं प्रविदाय, संहर संहर मोहरुजं मे" 55 यहां सनातन भक्त परम्परा का कवि जैसे अपने गुरु से परमेश्वर को मिलने की प्रार्थना करता है। तद्वत् कविवर अर्चना करते है। परमेश्वर का स्थान भी अक्षय विगतरुज स्थान ज्योति रुज्जवलितह्यम्लान बताया है।

(5) भिक्षुगुणकीर्तनम्

'भिक्षुगुणकीर्तनम्' में कवि तेरापंथ धर्म संघ के प्रवर्तक आचार्य भिक्षु का गुणानुवाद करते हुए उनकी कल्पवृक्ष की भांति मनोकामनापूर्ण करने वाला मानता है और निवेदन करता है "सकल विपाशिचच्चेतसि रमतमित्याशासे नाथ! मोदेऽहं नथमल्लः शिरसा, तां च सदा धारं धारम्"।

(6) कालूकीर्तनम्

युवावस्था में लिखा गया शब्द संचयन एवं भाव गुम्फन की मुर्धरिमा तथा सांगीतिक लयात्मकता का सुंदर अभिव्यंजन प्रस्तुत रचना में है। कविवर ने प्रस्तुत स्तोत्र में अपनी दीक्षा गुरु पूज्यवर कालूगणि को जिनशासन का भर्ता-कल्पवृक्ष एवं कर्ता, भर्ता, संहर्ता मानकर उन्हें समतामृत से पुष्ट और अर्हत् पट्ट पर आसीन मानकर उनकी वंदना 6 श्लोकों में व्यक्त की है।

(7) श्री तुलसी स्तवन

इस स्तोत्र में आचार्य तुलसी को "त्रिभुवन संसृत शुभ कीर्ति भैक्षव शासन भर्ता" 57 कहकर उनकी महिमा का ज्ञान किया है और भक्त कवि की तरह गाता है।

निपुण जनेभ्यो बोधं दातुं, निपुणगणो बहुरस्ति,
मत्सन्निभबालाय तु भगवन्नस्ति तवैव प्रशस्तिः॥58

इस प्रकार आचार्य महाप्रज्ञ का संपूर्ण स्तोत्र मालिका में मुख्यतः स्तव्य गुरु चरणारविन्द ही है। उन्ही के व्याज से कवि ने परमात्मतत्व का स्तवन किया है। वस्तुतः बिना सद्‌गुरु के इस भवाटवी से कौन मुक्ति पा सकता है।

तुलसी अष्टकम्

प्रस्तुत स्तोत्र शिखरिणी वृतम् में निबद्ध है। प्रकृष्ट भावों की अभिव्यक्ति, गुणोंक उदात्तता का सृजन एवं परमप्रिय वस्तु के चित्रात्मक उपस्थापन के लिए कवियों ने शिखरिणी छन्द का प्रयोग किया है। इस छन्द के माध्यम से भक्त मन सहज ही अपने उपास्य के साथ तादात्म्य स्थापित कर उनके ही गुणों की अभ्यर्थना करने लगता है। प्रस्तुत स्तोत्र आकार में छोटा होते हुए भी गंभीर और उदात्त है। है। महाप्रज्ञ की साधना से संभूत अनेक रत्नमणिगण सहज ही इस स्तोत्र में उपस्थित हो गए है। शब्दों का विनियोजन, भावों का गांभीर्य, अभिव्यक्ति की चारुता, सामर्थ्य की अनुगूंज, मंगल की संरचना एवं गुह्य मर्मज्ञों के प्रयोग से यह अष्टक श्रेष्ठ स्तोत्र परम्परा में प्रतिष्ठित होता

है। निश्चय ही यह भक्त परम्परा एवं साधक संसार के लिए कल्पवृक्ष के समान सिद्ध ही होगा। प्रस्तुत ग्रंथ में अलंकारों का प्रतिपादन काव्यशास्त्रीय दृष्टि से सर्वथा उपयुक्त है। तुलसी अष्टकम् में अर्थापत्ति का कवि ने प्रभूत उपयोग किया है। वर्ण्य की श्रेष्ठता उद्घोषित करने के लिए कैमुत्यन्याय एवं दंडापूपिकान्याय से अर्थापत्ति अलंकार का प्रयोग किया जाता है।

सवर्णं किं धर्मो यद न मनुजो नीतिनिपुणः।
मनोवाक्कायानां कथमिव सुयोगोऽजनि महान्।।59

आचार्य महाप्रज्ञ के कवित्व में पाण्डित्य का दर्शन यत्र-तत्र प्रचुर मात्रा में होता है। उनकी मंत्रवादी मेधा ने बीजमंत्रों को भी काव्य में सजा दिया। नाम जप के महत्व को व्याख्यायित किया है।

'श्रिय श्रीं श्रीं श्रीं श्रीं जपतु तुलसीनाम वसथे,
ह्रिये ह्रां ह्रीं ह्रौ ह्रः भवतु शिवनिष्ठा श्रुतवती।
धिये ऐं ऐं ऐं ऐं स्फुरतु सततं कण्ठ कमले,
जगद्वर्यं स्वामी विशदचरितो नाम तुलसीः।।60

श्री को तंत्रशस्त्र में लक्ष्मीबीज, श्रियोबीज पद्मबीज, कमल, यक्ष, माया आदि नामों से जाना जाता है। 61 माना जाता है कि जिस मंत्र के आदि में यह बीज रहता है वहां सर्वतोमुखी लक्ष्मी निवास करती है। 62 यह बीज मंत्रों में सर्वाधिक प्रयुक्त होता है।

स्तोत्र में बीजमंत्रों का न्यास कर आचार्य महाप्रज्ञ ने इसे मंत्रतुल्य बलशाली बना दिया।

मुकुलम्

मुकुलम् युवाचार्य महाप्रज्ञ द्वारा विरचित संस्कृत के लघु निबंधों का संकलन है। इसमें प्रांजल और प्रवाहपूर्ण भाषा में छात्रोपयोगी 49 गद्यों का संग्रह है। इसकी रचना वि. स. 2004 में पड़िहारा (राज.) में हुई थी इसका विषय निर्वचन बड़ी गहराई से किया गया है। इसमें वर्णनात्मक और भावनात्मक विषयों के साथ संवेदनात्मक विषयों का भी संधान किया गया है। काव्य के आधुनिक मानदण्डों के आधार पर वर्तमान में वहीं काव्य प्रशस्त माना जाता है जो संक्षिप्त, प्रसाद गुणयुक्त तथा स्वल्प सामाजिक पद वाला हो। मुकुलम इस कसौटी पर खरा उतरता है। आध्यात्मनीति का तो यह उत्कृष्ट ग्रंथ है ही इसके साथ-साथ शिक्षा नीति, राजनीति, समाजनीति, अर्थनीति, मनोविज्ञान, आयुर्वेद आदि के अनेक सूत्र उपलब्ध किये जा सकते है।

मुनि दुलहराज ने इसका हिन्दी भाषा में अनुवाद किया है। मुकुलम् नाम श्रुतिमधुर तो है ही अन्वर्थक है। संस्कृत कोष में मुकुलम् नाम अधखिले फूल का हैं। 63 अधखिला फूल अपने अंदर अनेक संभावनाओं को समेटे हुए होता हैं। विकास की अनंत संभावनाएं खोजती सी प्रतीत होती है। ऐसा मेरा मानना हैं। 64

प्रस्तुत पुस्तक में कुछ सुक्तियां अपना अलग ही स्थान रखती हैं जो कि पठनीय, मननीय और स्मरणीय ही नही हृदयग्राही है। कुछ सुक्तियां इस प्रकार हैं-

1. कुक्षिं भरय आत्म हितानामरयश्य (पाठ 3)
2. अध्यात्मोपजीविनां विनय एवं भूषा (पाठ 5)
3. कूपखनको न नीचैर्गच्छेदितिकुतः (पाठ 12)
4. यत्रनास्ति सुखदानुशिष्टिस्तत्र सृष्टिरवनागुणाना (पाठ 15)
5. अनुशासनमेव संघस्य प्राणाः (पाठ 16)

6. न लाधवं बिनोर्ध्वगतिमेति कश्चित् (पाठ 47)

मुकुलम् में स्थान-स्थान पर अनुप्रासों को निहारा जा सकता है।

कर्णतिथीकृतमपि पुनः कर्णकोटर कुटुम्बी करणीयं स्मरणीयं खेतसीं स्वामिसच्चारित्रम (पाठ 16) रुपक-प्रस्तुत पुस्तक में रुपक के प्रयोग भी सरसता के साथ हुए हैं।

चरणचन्दपादपम् (पाठ 34) -चरणाम्भोरुहमुपासीनः (पाठ 36) आत्मविजय में ही संपूर्ण समस्याओं का निराक रण मानते हुए वे 'मुकुलम्' में कहते हैं।

निःशेषा अपि जना यदि स्युरात्मविजये प्रयतास्तन्नियतं,

रचये दशन्तिरपि निजाननं कृतावगुण।66

अर्थात् यदि समस्त लोग आत्मविजय के लिए प्रयत्नशील हों तो संभव है कि अशांति अपना मुंह घूंघट में छिपा ले।

"जितात्मदृष्टि न विषयीः करोतिरिपुमेकमपि"।67

अर्थात् जिसने आत्मा को जीत लिया उसे कहीं भी शत्रु दिखाई नही देते।

सुप्रभातम्

प्रस्तुत कृति आचार्य महाप्रज्ञ के द्वारा रचित प्रतिदिन के एक विचारों का संकलन है। सुप्रभातमम् में कला, दर्शन तथा कविता का संगम है। इसका प्रत्येक पद परमास्वाद एवं आह्लाद को उत्पन्न करता है। सुप्रभातम् वह पारस मणि है जिसके संपर्क मात्र से सब कुछ दिव्य, भव्य और रम्य बन जाता है। यह यह ज्योति है जिसके ज्वलित होने पर मानव मात्र हृदय प्रकाशित हो जाता है। सुप्रभातम् साहित्याकाश में जाज्वल्यमान वह नक्षत्र है जिसकी रश्मि से मानव मन आह्लाद हो उठता है। सुप्रभातम् तीन खण्डों में विभक्त है, जिसमें वर्ष पर्यन्त के प्रतिदिन के क्रम से आचार्यश्री ने विचारत्मक घटनाओं एवं लघुकथाओं के माध्यम से हेयोपदेय का वर्णन किया है। यह एक आर्ष परम्परा की विचार सरणि है। 'सुप्रभातम्' सुललित एवं सुगठित संस्कृत गद्यशैली में निबद्ध है। इसमें बिम्ब, प्रतीक, अलंकार तथा जीवन का मधुमय संगीत भी है।

आलोक प्रज्ञा का

दार्शनिक शब्दावलियों की स्वरु प अवधारणात्मक स्पष्ट परिभाषाओं से युक्त, सहज, सरल, संस्कृत भाषा में रचित आचार्य महाप्रज्ञ की सर्वोत्तम रचना है। आलोक प्रज्ञा के विषय में स्वयं ग्रन्थकार ने कहा है-"प्रज्ञा" स्वयं आलोक है। वह दूसरोंं को आलोकित करती है इसलिए कहा जाता है प्रज्ञा का आलोक"68।

योगक्षेम वर्ष को प्रज्ञा का वर्ष कहा है। योगक्षेमवर्ष तपस्या, साधना, अनुशासन और निष्ठा के समुच्चय का वर्ष हैं। जिसमें एक ही शक्तिशाली स्वर गूंजायमान होता है वह है प्रज्ञा। उस वर्ष में आचार्य श्री ने जो भी कहा वह यदा-कदा श्लोक बनाकर कहा। प्रस्तुत पुस्तक में वे ही श्लोक संकलित है। इसमें जैन दर्शन के मूलभूत तत्वों, आत्मा, परमात्मा, सम्यकत्व, धर्म, अनेकांत, स्याद्वाद आदि का काव्यात्मक भाषा में निरुपण है। पद्य काव्य छोटे होते हुए भी मार्मिक है। इन पद्य काव्यों में कवि की अनुभूतियों की तीक्ष्णता पाठक के हृदय को बांधे बिना नही रहती। इसमें आचार्य महाप्रज्ञ का दार्शनिक रुप नहीं अपितु कवि हृदय अधिक बोल रहा है। वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में गुरु के प्रति शिष्यों का जो अनादर भाव देखा जाता है। उसी संबंध में रचनाकार ने कहा है कि गुरु शिष्य का संबंध कैसा होना चाहिये-आज्ञा निर्देश कारित्वं संबध्नाति गुरोर्मतिम्।

प्रीतिर्विनम्रता सेवा कृतज्ञभावविश्रुति।। 69 अपराध के निवारण को व्यक्त करते हुए कहते है-

विश्वासो वर्तते दण्डे न्याये तावन्न विद्यते।
यदि न्यायः प्रवृत्तः स्याद् दण्ड किं चिरमुच्छ्वसेत्।।70

आज के मनुष्य को जितना विश्वास दण्ड में है उतना न्याय में नहीं है। यदि समाज में न्याय प्रवृत्त हो जाए तो दण्ड क्या चिरकाल तक उच्छ्वास ले सकेगा। वह अपने आप समाप्त हो जायेगा।

इस पद्य के माध्यम से हमारी न्याय प्रणाली की ओर संकेत करते हुए कहा है कि न्याय हमेशा पक्षपात रहित होना चाहिए तथा दण्ड, सजा को समाप्त करने का प्रयास करना चाहिए।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि यह ग्रंथ व्यक्ति के लिए प्रेरणा स्रोत और आनन्द की अनुभूति कराने का माध्यम है।

भिक्षु गाथा

'भिक्षु गाथा' जैसा कि नाम से स्पष्ट है इसमें आचार्य भिक्षु के जीवन का सर्म्पण वृतांत 103 श्लोकों में निबद्ध है। रचना सरलता के साथ पाठकों के हृदय में स्थान बनाने में सक्षम है।

तुलसी मंजरी

प्रस्तुत कृति आचार्य हेमचन्द्र के प्राकृत व्याकरण की बृहत्प्रक्रिया रुप है। अष्टाध्यायी का क्रम विद्यार्थी के लिए सहजगम्य नही होता। वह उसको हृदयंगम करने में कठिनाई का अनुभव करता है। इसलिए उसकी अपेक्षा का क्रम अधिक उपयोगी और सहजग्राह्य होता है। इसी दृष्टि में इस प्रक्रिया-ग्रंथ का निर्माण हुआ।

इस कृति का नामकरण आचार्य तुलसी के नाम पर हुआ है। प्रक्रिया ग्रंथ की प्रकृति के अनुसार इसमें शब्दों के सिद्धिकारण सूत्र आस-पास में उपलब्ध हो जाने के कारण विद्यार्थियों को शब्द-सिद्धि करने में सुगमता और सरलता हो जाती है। हेमचन्द्र की प्राकृत व्याकरण में यह सुविधा नही है। उसमे एक ही शब्द सिद्धि के लिए दो-चार सूत्र भी लंबे व्यवधान के बाद उपलब्ध होते है। विद्यार्थी उसमें उलझ जाता है।

प्रस्तुत ग्रंथ में 1116 सूत्र हैं। इसमें सात परिशिष्ट हैं-

(1) अकारदिक्रम से सूत्र (2) प्राकृत शब्दरुपावलि (3) धातुरुपावलि (4) धावादेश (5) देशीधातु (6) आर्ष-प्रयोग (7) गण।

यह प्राकृत पढ़ने वालों के लिए एक सुगम व्याकरण ग्रंथ है।

संस्कृत भारतीया संस्कृतिश्च

अखिल भारतवर्षीय संस्कृत साहित्य सम्मेलन काशी ने एक गोष्ठी आयोजित की थी। उसमें भारत के विभिन्न विद्वानों ने प्रस्तुत विषय पर अपने-अपने निबंध भेजे थे। कुछेक विद्वानों ने उस गोष्ठी में उपस्थित होकर अपने निबंधों का वाचन किया था। उस समय युवाचार्य महाप्रज्ञ भी संस्कृत निषेध लिखा और एक विद्वान गृहस्थ ने उसका वहां वाचन प्रस्तुत किया।

जैन, बौद्ध और वैदिक परम्परा की त्रिवेणी भारतीय संस्कृति की मूल आधार है। जैन आचार्यों ने मूलतः प्राकृत भाषा के भंडार को भरा और बौद्ध मनीषियों ने पाली भाषा में साहित्य सर्जन किया। किन्तु इन धाराओं के अनेक मनीषी आचार्यों ने संस्कृत भाषा के विकास और उन्नयन के लिए सतत प्रयत्न किया और प्रचुर साहित्य की रचना की, जो आज भी भारतीय साहित्य-भंडार की अमूल्य निधि मानी जाती है। प्रस्तुत लघु निबंध में लेखक ने लिखा है भारतीय संस्कृति अध्यात्म

प्रधान है। संस्कृत उसकी आधार शिला है, यह मैं निसंकोच कह सकता हूं। भारतीयों की संस्कृत भाषा के प्रति उदासीनता हितकर नहीं है।

प्रस्तुत कृति में तीनों परम्पराओं की धारा ने किस तरह संस्कृत के माध्यम से अध्यात्म को पुष्पित और पल्लवित करने का प्रयास किया इसका निर्देशनों के द्वारा प्रतिपादन है।

भिक्षु गीता

आचार्य महाप्रज्ञ द्वारा प्रणीत 'भिक्षु गीता' एक ऐसी रचना है जिसमें आचार्य भिक्षु के सिद्धांतों का विवेचन किया है। आज प्रतिस्पर्धा की अंधी दौड़ में मनुष्य अपने दायित्वों को विस्मृत करता जा रहा है। यह कृति मनुष्य को दायित्वो का बोध कराते हुए कहती है-

स लोको नाम जागर्ति दायित्वं वेत्ति यो ध्रुवम्।
पुंसो दायित्वहीनस्य समं रात्रिर्दिवा भवेत्।। 71

अर्थात् जो अपने दायित्वो को जानता है, वह मनुष्य जाग्रत है। दायित्वहीन पुरुष के लिए दिन-रात होते है, न कोई दिन की सार्थकता होती है न रात की। प्रस्तुत कृति में अनुशासन के स्वरुप का वर्णन करते हुए कहते है कि-

इच्छारोधः स्वरुपं स्यात् प्रसादः समता फलम्।
सुस्थिरां जायते संघः विद्यमानेऽनुशाने।।72

तेरापंथ के संस्कृत साहित्यकारों मे आचार्य श्री महाप्रज्ञ का नाम बड़े आदर के साथ लिया जाता है। इनके विविध भाषाओं मे लगभग 200 से अधिक रचनाएं प्रकाशित हो चुकी हे। आचार्य श्री महाप्रज्ञ ने सस्कृत मे विपुल साहित्य सृजन कर संस्कृत की मस्ती सेवा की हे। सस्कृत साहित्य की महाकाव्य, खण्डकाव्य, नीनिविषयक काव्य, पूजाव्रतोद्यापन काव्य और ओर गहन गभीर दार्शनिक विषयो को आलम्बन करके संस्कृत साहित्य के सृजन मे योगापूर्वक निरत हे।

साहित्य सृजन के लिये रचनाकार को जिन और जितनी मात्रा मे अनिवार्यताओं का अनुकरण करना चाहिए, इन सभी पर प्रस्तुत रचनाकार ने पूर्णत ध्यान केन्द्रित किये हुए है। भारत-राष्ट्र, राष्ट्रीयता, संस्कृत भारती, काव्य की इतिहास, भाषा शास्त्र और सस्कृति के उदात्त आदर्शो ओर रुणा का अभिव्यक्त करती है। सम-सामयिकता का प्रतिबिम्ब और अंकन इन रचनाओं में पर्याप्त मात्रा म निर्दशित ह। आचार्यश्री ने समान भाव से अहिसा, अनकातवाद ओर अपरिग्रहवाद के उच्च आदर्शो का सस्कृत साहित्य की मुख्य धारा मे सम्पृक्त किया। उनका यह प्रयत्न पर्याप्त पल्लवित और फलीभृत भी हु आ। इसी का लेखा-जोखा प्रस्तुत शधात्मक लेख मे निर्दशित है। उनक कायों स लगता हे कि व व्यक्ति नही, एक सस्था है। जागरुकता प्रहरी के रुप मे उनका सशक्त हस्ताक्षर अमिट रहगा। वस्तुत आचाय महाप्रज्ञ के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का वर्णन कोइ प्रज्ञावान् ही कर सकता ह, अल्पज्ञ नही। इसलिए मेरे मानस मे आचार्य महाप्रज्ञ की पंक्तिया निरतर अनुगुंजित हाती रही-

तुम महाग्रंथ हो, मैने तुम्हारे कई अर्थ लगाए,
पर वह अर्थ नहीं लगा, जो मूल है।

Dr. Prakash soni
Jyoti Classes, 6/1 Mithai lal Chael, Near Santoshi
Mata Mandir, kurar, Malad (E), Mumbai-400097
Mob. 93246 00977, 022.28401477

संदर्भ सूची

1 तुलसीप्रज्ञा-ले गुलाबचन्द निर्मोही-व्याख्यान, अंक 4 जनवरी-मार्च 1992, पृ. 208

2, संस्कृत साहित्य का इतिहास-डॉ जर्नार्दन स्वरूप अग्रवाल के पृ 4 पर उद्धृत डा एम. विंटरनित्स का मत।

3 राजस्थान की जैन साहित्य-महामहोपाध्याय विनय सागर, पृ 66

4. (क) आर्य कालक का जन्म काल ईस्वी पूर्व (वि सं 52), दीक्षा ई सदी 18 (वि. सं 74) युग प्रधान ई. सदी 58 (वि. सं 114) स्वर्गवास ई सदी 71 (वि. सं 127)

(ख) तुलसी प्रज्ञा-ले मुनि गुलाबचन्द निर्मोही, खण्ड 17, अंक-4 जनवरी-मार्च 1992, पृ 208

5. Jaina Vijaya Muni, Ahmedabad, 1946 Page-4 (The jains in the History If indian of literatute/edited by Dr. Winternize.

6 विस्तार के लिए द्रष्टव्य द जैनस् इन द हिस्ट्री इंडियन लिटरेचर अहमदाबाद 1946, पृ 4

7 तुलसीप्रज्ञा-ले मुनि गुलाब चन्द निर्मोही खण्ड 17

8 संस्कृत काव्य के विकास म जैन कवियों का योगदान-नेमीचन्द शास्त्री, पृ 43

9 13-14 वीं शताब्दी में जैन संस्कृत महाकाव्यो का अध्ययन-श्यामसुन्दर दीक्षित,

10 संस्कृत काव्य के विकास म जैन कवियो का योगदान-नेमीचन्द शास्त्री, पृ 43

11 तत्रैव

12 तत्रैव

13 सनातन जैन ग्रन्थमाला बनारस, सन् 1914 ई

14 पं जुगल किशोर मुख्तार कृत हिन्दी व्याख्यान सहित-वीर सेवा मंदिर सरसावा, 1951 ई

15 उपर्युक्त संस्था स 1951 म प्रकाशित

16 तत्रैव, सन् 1950 ई म प्रकाशित

17 द्विशताभ्यधिक समासहस्र समतीतेऽ षचतुर्थवर्षयुक्त पचाचरित

18 संस्कृत काव्य के विकास मे जैन कवियो का योगदान-नेमीचन्द शास्त्री पृ 112, 182

19 निर्णयसागर प्रेस बम्बई सन् 1906 ई

20 संस्कृत काव्य के विकास मे जैन कवियों का योगदान नेमीचन्द शास्त्री पृ 605

21 तत्रैव

22 तत्रैव पृ 647

23 तत्रैव पृ 10-11

24 18वीं शती में आचार्य भिक्षु ने एक एसे युगान्तकारी संशोधनात्मक उपक्रम को प्रतिष्ठित किया जिसे आज विश्व तेरापंथ के नाम से जानता है। तुलसी प्रज्ञा ले मुनि गुलाब चन्द निर्मोही खण्ड 17, अंक 4 जनवरी मार्च 1992, पृ 208

25 जन्म चैत्र शुक्ला एकादशी रविवार वि सं 1897

26 तेरापंथ का इतिहास (द्वितीय खण्ड)-मुनि बुद्धमल

27 तुलसीप्रज्ञा-ले मुनि गुलाब चन्द निर्मोही खण्ड 17 अंक 4 जनवरी मार्च 1992, पृ 209

28 तत्रैव पृ 213

29 सर्वार्थ 1 4

30 तत्रैव 1 1 7

31 आचार्य महाप्रज्ञ का संस्कृत साहित्य, पृ 82

32 संबोधि 7 3

33 तत्रैव 2 1,4

34 यत् सोऽयम् पुद्गलैः सृष्ट, दुग्ध तद् वस्तुता भवत्।
मोहाविष्टा मनुष्या हि, सत्यं न ही विन्दति।।
दृष्टिमोहन मूढोऽयं मिथ्यात्वं प्रतिपद्यते।
मिथ्यात्वी घोरकर्माणि सृजन भ्राम्यति संसृतो।। तत्रैव 2 5,6

35 अकष्टासाधितो मार्गो कष्टापात प्रणश्यति।
कष्टेनासाधितो मार्गो कष्टेष्वपि न नश्यति।। तत्रैव 3 5

36 संबोधि 7 31,33

37 तत्रैव 11 26

38 तत्रैव 13 31

39 तत्रैव 13 37

40 तत्रैव 16.2
41. तुलसीप्रज्ञा-से मुनि गुलाब चन्द निर्मोही खण्ड 18, अंक अप्रैल-जून 1992, पृ 57
42. महाप्रज्ञ साहित्य: एक सर्वेक्षण-मुनि धनंजय, प्रस्तुति, पृ 10
43. [illegible]-आचार्य महाप्रज्ञ
44. आचार्य महाप्रज्ञ संस्कृत साहित्य, पृ. 144
45. [illegible] पद्य 12
46. आचार्य महाप्रज्ञ संस्कृत साहित्य, पृ 185
47. आचारांग चूर्णि, पृ 215
48. आ. चू. पृ. 243
49. आचारांग सूत्र 7.52
50 आचारांग भाष्य, पृ 321-22
51. आचारांग सूत्र 6.56
52 [illegible] 1 12 16
53 आचार्य महाप्रज्ञ संस्कृत साहित्य, पृ 259
54. अतुला तुला-आचार्य महाप्रज्ञ, पृ 25 मघाष्टकम् 7 (1 6 7)
55. अतुला तुला पंचम विभाग-आचार्य महाप्रज्ञ, स्मृतिचक्रम् 4 1, पृ 218
56 तत्रैव 5.1, पृ 214
57 तत्रैव 7.2 पृ, 217
58 तत्रैव 7 6 पृ 217
59 तुलसी अष्टकम्- आचार्य महाप्रज्ञ 3,4
60 तत्रैव गाथा 8
61 उत्तरसंदेश, 1 24
62 सारसरहस्यम्, 175
63. संस्कृत हिन्दी कोश-वामन शिवराम आप्टे, पृ 803
64 आचार्य महाप्रज्ञ संस्कृत साहित्य, पृ 233
65 मुकुलम्- आचार्य महाप्रज्ञ, आत्मना युध्यस्व, पृ 18
66 तत्रैव
67. तत्रैव
68 आलोक प्रज्ञा का-आचार्य महाप्रज्ञ प्रस्तुति
69 तत्रैव पद्य-6
70 तत्रैव 29
71 भिक्षुगीता आचार्य महाप्रज्ञ
72 तत्रैव ❖

वैरवृति का परिष्कार

-आचार्य महाप्रज्ञ

दो बातें स्पष्ट समझ लेनी है। एक है इष्ट का संपादन और दूसरी है अनिष्ट का निवारण। इष्ट का संपादन व्यवहार की बात है, अनिष्ट का निवारण अपने अंतर से संबंधित है। यह इतना व्यापक बन जाता है कि व्यक्ति किसी भी प्राणी का अनिष्ट नही करेगा, यह है वैरवृत्ति का परिष्कार कर आदमी मैत्री के उस बिंदु पर आरोहण कर सकता है जहां चढ़ जाने पर व्यवहार बहुत नीचे रह जाता है, किंचित्कर बन जाता है।

— आचार्य महाप्रज्ञ, सोया मन जग जाए, पृष्ठ 111

तेरापंथः सार्वभौम धर्म का महान प्रयोग

आचार्य तुलसी

मैं एक संप्रदाय का आचार्य हूं, पर सांप्रदायिकता का समर्थक नहीं हूं। इन दो स्थितियों में अंतर्विरोध जैसा प्रतीत होता है। समुद्र में रहने वाला जीव समुद्र के अस्तित्व का विरोधी हो, यह समझने में हर व्यक्ति को कठिनाई होगी। क्या इस विरोधाभास के पीछे कोई ऐसा समर्थ हेतु है, जो उसे निरस्त कर सके?

मेरी मान्यता में संप्रदाय और सांप्रदायिकता की एकता उन लोगों को प्रतीक होती है, जो उनकी अर्थ-परंपरा से अभिज्ञ नहीं हैं। मैं संप्रदाय को गतिशील परंपरा के अर्थ में स्वीकार करता हूं। सांप्रदायिकता रुद्ध परंपरा में पनपती है। मैं एक पक्षीय स्थितिशीलता से बचा हूं। मैं उससे बचा हूं, उसमें मेरा कर्तृत्व ही नहीं है, मुझे अतीत से जो मिला है, उसका भी महान योग है।

धर्म किसके लिए?

मैं जिस परंपरा का आचार्य हूं, उसका नाम तेरापंथ है। तेरापंथ का प्रवर्तन दो सौ पचास वर्ष पूर्व हुआ था। इसके प्रवर्तक थे आचार्य भिक्षु। वे बहुत क्रांतदर्शी थे। इसीलिए उन्होंने पीठ नहीं चुना, किन्तु पंथ चुना। पीठ स्थिर/रुद्ध होता है और पंथ गतिशील। पीठ अमुक-अमुक के लिए होता है और पंथ सबके लिए। जो पंथ सबके लिए नहीं होता, वह लंबे समय तक गतिशील भी नहीं होता। आचार्य भिक्षु का पंथ सबके लिए है, इसलिए वह गतिशील है। मैं उसकी गतिशीलता से प्रभावित हूं, इसलिए सांप्रदायिकता से मुक्त हूं। आचार्य भिक्षु ने भगवान महावीर की वाणी का मुक्त समर्थन किया। महावीर के सिद्धांत उन सबके लिए हैं-

. जो उत्थित हैं या अनुत्थित हैं।
. उपस्थित हैं या अनुपस्थित हैं।
. दंड से विरत हैं या दंड से विरत नहीं हैं।
. परिग्रह से मुक्त हैं या परिग्रह से मुक्त नहीं हैं।
. संयोग से मुक्त हैं या संयोग से मुक्त नहीं है।

भगवान महावीर ने समता धर्म का निरुपण किया। समता धर्म है, विषमता धर्म नहीं है। इस वाणी से अप्रभावित व्यक्ति पंथ नहीं चुनेगा, पीठ चुनेगा! आचार्य भिक्षु ने पंथ चुना, पीठ नहीं चुना, इसलिए मैं मानता हूं कि वे इस महावीर-वाणी से प्रभावित थ। धर्म के लिए वह प्रत्येक व्यक्ति अधिकृत हैं, जिसकी अन्तश्चेतना उद्बुद्ध हो उठी, भले फिर वह किसी भी परंपरा का अनुगमनकारी हो। मेरी धर्म-परंपरा में यदि यह बीज विकसित न हुआ होता तो न मैं सांप्रदायिकता से मुक्त होता और न मुझसे

अणुव्रत का आंदोलन शुरू होता। इसीलिए मैं मानता हूं कि मेरी धार्मिक विशालता की सृष्टि उन हाथों से हुई है, जो अपनी परंपरागत थाली को थामे हुए हैं।

मैं आचार्य भिक्षु के प्रति सहजभाव से कृतज्ञ हूं, पर इस बात के लिए बहुत कृतज्ञ हूं कि उन्होंने धर्म को व्यापक दृष्टि से देखा और उसे व्यापक भित्ति पर ही प्रतिष्ठित किया।

धर्म और संप्रदाय

धर्म वस्तुत: धर्म ही है। वह आकाश की भांति मुक्त और व्यापक है कोई भी व्यापक वस्तु पकड़ में नहीं आती। संप्रदाय उसकी पकड़ का माध्यम है। मैं संप्रदाय को उपलब्धि नहीं, किन्तु सत्य की उपलब्धि में एक सहयोगी मानता हूं। वह अपने-आप में कुछ नहीं है। उसका दुरुपयोग किया जाए तो वह अनिष्टकारी बन सकता है। वैसे तो हर कोई इष्ट दुरुपयोग करने पर अनिष्ट बन सकता है।

सांप्रदायिकता की रेखा संप्रदाय को माध्यम न मानकर ममात्रूल मानने से बनती है। मूल सत्य है। सत्य की उपलब्धि के लिए संप्रदाय हो तो वह अनिष्ट नहीं बनता। किन्तु संप्रदाय के लिए सत्य हो जाता है तब संप्रदाय साध्य बन जाता है और वह अनिष्टकारी बन जाता है। जहां संप्रदाय सत्य से शासित नहीं होता, किंतु सत्य संपप्रदाय से शासित होने लग जाता है, वहां धर्म निष्प्राण और तेजस शून्य हो जाता है। मेरी आस्था इस बात में है कि संप्रदाय अपने स्थान पर रहे और उसका उपयोग भी होता रहे, किन्तु वह सत्य का स्थान न ले। सत्य का माध्यम ही बना रहे, स्वयं सत्य न बने। इस आस्था में मुझे धर्म की तेजस्विता प्रतीत होती है।

मेरी इस आस्था को जहां प्राण/पोष मिला, उस संप्रदाय को मैं बहुत ही स्वस्थ माध्यम मानता हूं। जिन आचार्यों ने इस प्रकार की स्वस्थ परंपरा को सुरक्षित रखा, उनको भी मैं महान मानता हूं।

यह भाद्रमास आचार्य भिक्षु की समाधि-संपन्नता का मास है तथा अन्य अनेक आचार्यों के शासन-आरंभ का मास है। इस पवित्र अवसर पर मैं आचार्य भिक्षु से लेकर परम पूज्य गुरुदेव कालूगणी तक के सभी आचार्यों तथा तेरापंथ की सत्योन्मुखी परंपराओं के प्रति अपनी विनम्र श्रद्धांजलि समर्पित करता हूं। ◆

संयम का विकास

• आचार्य महाप्रज्ञ

संयम का विकास जीवन साक्षेप है। जीवन ही न रहे, तब संयम का विकास कौन करे। अत: संयम का विकास करने के लिए जीवन को बनाए रखना आवश्यक है। इस प्रकार जीवन को बनाए रखना भी अहिंसा का उद्देश्य है- यह फलित होता है। यह प्रश्न हो सकता है। किंतु अहिंसा का सीधा सबंध संयम से हैं, इसलिए इसे कोई महत्व नहीं दिया जा सकता। जीवन बना रहे और संयम न होतो वह अहिंसा नहीं होती। संयम की सुरक्षा में जीवन चला जाए तो भी वह अहिंसा है। आगे के संयम के लिए वर्तमान का असंयम संयम नहीं बनता, आगे की अहिंसा के लिए वर्तमान की हिंसा अहिंसा नहीं बनती। इसलिए जीवन को बनाए रखना : यह अहिंसा का साध्य या उद्देश्य नहीं हो सकता।

— आचार्य महाप्रज्ञ अहिंसा तत्वदर्शन, पृष्ठ 25

संघ को प्रणाम

✍ आचार्यश्री महाप्रज्ञ

तेरापंथ का अर्थ है- आत्मोसर्ग। जो व्यक्ति आत्मोत्सर्ग करना नहीं जानता, वह तेरापंथ को नहीं जान सकता। जिस व्यक्ति में आत्मोसर्ग की क्षमता होती है, व्यक्तिगत अंह और व्यक्तिगत स्वार्थ के विसर्जन की क्षमता हांती है, वही व्यक्ति तेरापंथ का अर्थ समझ सकता है। आचार्य भिक्षु ने तेरापंथ का दर्शन दिया उसमें सबसे पहली बात आत्मोत्सर्ग की कही। समर्पण और आत्मोत्सर्ग का विकास निरंतर हुआ है, इसमें कोई संदेह नहीं। आज तक की हमारी परंपरा में बहुत पहले से आत्मोत्सर्ग और समर्पण की बातचीत रही है, विनम्रता और अनुशासन की बात रही है। जिस संघ में गुरु के प्रति सर्वात्मना समर्पण होता है, उस संघ का नाम है- तेरापंथ। साधु बनना, पाचउ महाव्रतों का पालन करना, पांच समितियों और तीन गुप्तियो का पालन करना अनिवार्य बात है। किंतु उसमें भी अर्निवार्य बात है- समर्पण और अनुशासन की। आचार्य भिक्षु ने सोचा यदि संघ में संगठन और अनुशासन नहीं होगा तो महाव्रतों, समितियों और गुप्तियों का पालना भी नही होगा। इसीलिए उन्होनें आचार के साथ-साथ अनुशासन को भी बड़ा महत्त्व दिया।

तेरापंथ आचार-प्रधान संघ हैं, साथ-ही-साथ प्रधान संघ भी है। जितना मूल्य इसमें आचार का है, उतना ही अनुशासन का भी हैं। आज तक की हमारी परंपरा ने इस बात को प्रमाणित किया है। जिस व्यक्ति ने अनुशासन को भंग किया, वह आचार में भी स्थिर नहीं रह सका। आचार और अनुशासन दो आंखों की तरह हैं। तेरापंथ धर्मसंघ के परिसर में पनपने वाला, तेरापंथ की आत्मा को समझने वाला व्यक्ति इस बात को बड़ी गहराई से स्वीकार करेगा कि अनुशासन की गरिमा बराबर बनी रहे। आज मुझे गर्व होता है कि तेरापंथ के हर श्रावक को अपनी आनुर्वंशिकता और पैतृक विरासत के रुप मे यह संस्कार मिलता है। इसीलिए वह अनुशासन और संगठन को बराबर मूल्य देता चला जा रहा हैं। संघ और संघपति के पति अटूट आस्था और समर्पण तेरापंथ की प्रगति का महत्वपूर्ण केन्द्र हैं। तेरापंथ की चहुमुंखी प्रगति का आधार यही रहा है और रहेगा

संघ को प्रणाम

तेरापंथ आज के विशाल वृक्ष का रुप धारण कर सबको सुखद शीतल छांव दे रहा है। तेरापंथ आज एक दिव्य ज्योति के रुप में अंधकार को प्रकाश में बदल रहा है।नीरसता में सरसता का अनुकरण कर रहा है तथा अनास्था में आस्था को जगा रहा है।

भिक्षा भिक्षु का विचार,आचार, तथा दर्शन आज भी जीवित हैं। इस दुनिया में जो जीवित है, जिसमें वर्तमान सांस लेने की क्षमता है- उसी की पूजा होती है। आचार्य भिक्षु स्वयं वर्तमान को समझने वाले

थे। उन्होंने वर्तमान को जितना समझा, बहुतकम लोग समझ पाते हैं। वर्तमान और विवेक, दोनों से, उन्होंने काम लिया। आचार्य भिक्षु ने केवल एक पद आचार्य का रखा। लोगों ने कहा-महावीर के समय की यह परंपरा है कि संघ में सात पद होते है। महावीर की परंपरा आपने कैसे मिटा दी ? आचार्य भिक्षु ने कहा- सातों पदों को मै ही देख रहा हूं। जो अनुशासन, जो संगठन, जो व्यवस्था आज तेरापंथ में हैं, वह न केवल भारतीय समाज में बल्कि पूरे संसार के धार्मिक संप्रदायों मे अद्वितीय मानी जा रही है। उसके पीछे है आचार्य भिक्षु ने कुछ घोषणाएं की, कुछ ऐसे सिद्धांत दिए जो आगमों में स्पष्ट नहीं है, पर उन्होंने उनको इतना विकसित किया कि आज वे वर्तमान के विचार बन रहे है। तेरापंथ की विचारधारा सदैव युग के साथ चली है। हमारी मान्यता रही है कि तेरापंथ का आचार्य वही होता है जो वर्तमान युग का प्रतिनिधित्व करता है। जब आचार्य भिक्षु की जरुरत थी, तब आचार्य भिक्षु जन्मे। जयाचार्य की जरुरत थी, तो जयाचार्य और कालूगणी की जरुरत थी। तो कालूगणी और आचार्य तुलसी की जरुरत हुई तो आचार्य तुलसी जन्मे। जरुरत है आज युग चेतना के साथ अणुव्रत के माध्यम से तेरापंथ की विचारधारा को जोड़ना। आज के युग की अपेक्षा है- शारीरिक, मानसिक एवं भावात्मक समस्याओं के समाधान की। गरीबी की समस्या का समाधान धार्मिक मंच से नहीं, अपितु कृषि के विकास से होगा, किंतु मानसिक समस्या का समाधान भौतिक जगत के पास नहीं है। किसी वैभव की सत्ता में इतनी ताकत नही जो इस समस्या का समाधान दे सकते है। तेरापंथ ने इस समस्या का समाधान प्रस्तुत करने की क्षमता अर्जित की है। अपेक्षा उसी से की जा सकती है। जिसके पास शक्ति हो। स्वयं शक्तिहीन दूसरों की समस्या का समाधान नहीं दे सकता। बुझी हुई राख कभी प्रकाश नहीं दे सकती। प्रज्वलित ज्योति ही अंधकार को प्रकाश मे बदल सकती है। तेरापंथ ने स्वयं शक्ति अर्जित की है। अनुशासन, संगठन, व्यवस्था अंहकार और ममकार का विसर्जन, सत्यनिष्ठा और ब्रह्मचार्य - ये हमारी शक्ति के स्रोत है।

जो संघ अपने सयम और अनुशासन से शक्ति संपन्न हो उससे मानव जाति अपेक्षा रखती है। तेरापंथ ने उन अपेक्षाओं को पूरा करने का प्रयत्न किया है- अणुव्रत के माध्यम से, प्रेक्षा ध्यान के माध्यम से, नए विचार और सृजनात्मक दृष्टिकोण के माध्यम से। आज तक तेरापंथ की ओर से किसी भी सम्प्रदाय के विरोध मे दो पंक्तियां भी नही लिखी गई है। दो सौ पंतालिस वर्षो का इतिहास इस तथ्य का साक्षी है। जिसका इतना सृजनात्मक और रचनात्मक दृष्टिकोण रहा हो, वही देने की क्षमता में आता है। इस महान शक्तिशाली दायित्व-बोध, युगबोध, युग-चेतना के साथ चलने वाले संघ का प्रणाम

- जैन भारती से साभार

शब्द का महत्व

• आचार्य महाप्रज्ञ

चार ध्यान बतलाए गए है- पिंडस्थ, पदस्थ, रुपस्थ और रुपातीत। इनमें दूसरा ध्यान है- पदस्थ। यह शब्द ध्यान है। शब्द की साधना है। नही बोलनाव मौन रहना एक बात है और बोलना दूसरी बात है। हम केवल मौन रहें, न बोलें यह भी संभव नहीं है और केवल बोलते ही रहें, यह भी संभव नही है। जीवन मे बोलने और न बोलने का योग होना चाहिए, संतुलन होना चाहिए। नहीं बोलने की चर्चा से पूर्व हम यह समझना है कि हम बोलते है तो शब्द को साधें। शब्द के महत्व को समझें और उसकी सारी प्रक्रिया को जाने। इसका अर्थ है कि पदस्थ ध्यान करें, पद को ध्येय बनाएं, शब्द को ध्येय बनाएं, शब्द को ध्येय बनाएं और उसके आधार पर चित्त की एकाग्रता स्थापित करें -- आचार्य महाप्रज्ञ मन के जीते जीत, पृष्ठ 25

युवाचार्य के रूप मे पूज्यश्री महाश्रमणजी को पाकर प्रसन्न हो रहे हैं आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी और गुरूदेवश्री तुलसीजी महाराज।

परमपूज्य साध्वी प्रमुखा कनकप्रभाजी म.सा. के संग पूज्य युधाचार्य महाश्रमणजी और आचार्य श्री महाप्रज्ञजी महाराज।

कैसा है मेरा रूप

आचार्य श्री महाप्रज्ञ

मनुष्य एक ही प्रकार का जीवन नहीं जी सकता। जीवन में विविधता होती है तो जीने के प्रति सहज आकर्षण बना रहता है। संभव है, इसी कारण विधायक और निषेधात्मक भावों का अस्तित्व रखा गया हो। ये दोनों ही भाव मे जितने प्रभावशील हैं, अन्य प्राणियों में अपेक्षाकृत कम हैं। सभी मनुष्यों में इनकी मात्रा समान नही होती। कौन व्यक्ति इनसे कितना प्रभावित है- यह जानने के लिए सबसे बड़ा पैमाना है आत्मनिरीक्षण का। यह एक सुचिंतित प्रक्रिया है। इसके द्वारा व्यक्ति मुखौटों की दुनिया से बाहर निकल कर आत्मसाक्षात्कार कर सकता है।

स्वयंवर भावों का-मनुष्य का पूरा व्यक्तित्व भावों पर निर्भर है। फिर भी हर एक व्यक्ति यह नहीं जानता की उसमे किस प्रकार के भाव सक्रिय है। जिसके मन में यह जिज्ञासा जाग जाती है उसके लिए समाधान का रास्ता खुला रहता है। जैन आगमों मे अठारह प्रकार के पापों का उल्लेख हैं। हिंसा, असत्य,चोरी, वासना, परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष,कलह, अभ्याख्यान, पैशुन्य, पर-परिवाद, रति-अरति, मायामृषा और मिथ्या-दर्शनशल्य - ये अठारह पाप निषेधात्मक भाव है। इनमें कुछ भावों का संबंध समूह के साथ है और कुछ भाव वैयक्तित्व हे। कुछ भाव ऐसे हैं, जो व्यक्ति और समूहदोनों से जुडे हुए है। क्रोध, मान, माया और लोभ-ये भाव वैयक्तिक और सामुदायिक दोनों हैं। कलह, अभ्याख्यान,पैशु[illegible], [illegible]र-परिवाद आदि भाव पर सापेक्ष हैं। समूह मे रहने वाला व्यक्ति स्वार्थ, सुविधा, प्रतिष्ठा या प्रतिशोध की भावना से प्रेरित होकर इस प्रकार के भावों को जन्म देता है। कुछ व्यक्ति अकारण ही इन निषधात्मक भावों के शिकार हो जाते है। उनके बारे मे यही माना जा सकता है कि ऐसे लोग या तो आदत से विवश है या आत्मप्रतिष्ठ क्रोध आदि से ग्रस्त है।

जिन निषेधात्मक भावों की यहां चर्चा की गई है, उनसे विपरीत भावों का विधायक भाव के रुप में पहचाना जा सकता है। इनमें अहिंसा,सत्य,अचौर्य, ब्रह्मचर्य, असंग्रह, सहिष्णुता, कोमलता,सरलता संतोष, मैत्री, गुणग्राहकता आदि प्रशस्त भावों का समावेश होता है। प्रशस्त और अप्रशस्त भावों के स्वयंवर में कौन व्यक्ति किसका वरण करता है, यह उसकी अपनी समझ पर निर्भर करता हैं। समझ या विवेक की रोशनी में हर भाव का चेहरा साफ साफ दिखाई दे सकता है। अपेक्षा इतनी ही हैं कि उसका वरण करने से पहले व्यक्ति अपनी आंखों का आवरण उतार कर उसे अच्छी तरह से परख ले।

झांकना अपने भीतर- 'संपिक्खए अप्पगमप्पणं' -आत्मा के द्वारा आत्मा को देखने की बात

सीखी तो नहीं है,. पर महत्वपूर्ण है। सामान्यतः मनुष्य की वृत्ति है कि वह दूसरे को ही देखता है। दूसरों का जो भाव या व्यवहार उसे ठीक नहीं लगता, उसी भाव या व्यवहार में वह स्वयं बहता है और उसे कुछ भान ही नहीं रहता। संभव है, वह अपने बारे में इतना आश्वस्त हो जाता है कि उसका कोई काम गलत होता ही नहीं। यही वह बिंदु है जहां से बदलाव की दिशा बंद हो जाती है। स्वभाव परिवर्तन का सूत्र है-विनिवर्तना का अर्थ है निषेधात्मक भावो से अप्रभावित रहने का संकल्प। इस संकल्प की स्वीकृति के साथ ही ऐसा पुरुषार्थ शुरु हो जाता है, जो पहले से प्रभावी भावों को निर्वीय बना सकें, उनसे छुटकारा दिला सके। इसके लिए गंभीर पर्यायलोचन की अपेक्षा रहती हैं। अपने भीतर झांकने वाला व्यक्ति ही यह बोध पा सकता है कि उसमें कौन सा भाव अधिक सक्रिय हैं।

कैसा है मेरा रुप

भावों का दर्पण सामने रखकर अपना चेहरा देखना आवश्यक है। चेहरा भी बाहरी नहीं, भीतरी देखना है। जब तक वह नहीं दिखाई नहीं देगा, व्यक्ति अपने स्वरुप से परिचित नहीं हो सकेगा, स्वरुप बोध के लिए उसमें जिज्ञासा जगे-मैं कैसा हूं ? जिज्ञासा के बाद दूसरी बात हैं बुभुत्सा। मैं कुछ होना चाहता हूं। जब तक यह भाव नही जागता हैं, तब तक पुरुषार्थ का द्वार नहीं खुल सकता। पुरुषार्थ का दरवाजा खटखटाने के लिए चिकीर्षा-कुछ करने की इच्छा का होना आवश्यक हैं। अन्यथा व्यक्ति किसी भी दिशा मे आगे नहीं बढ़ सकता। दिशा निर्धारण केअभाव में किया गया पुरुषार्थ सार्थक नही होता। राजस्थानी में कहावत हैं- आंधो बंटे जेवडी लारै पाडो खाय। कोई अंधा व्यक्ति हरी-हरी घास की रस्सी बनाता हैं, जितनी रस्सी बनती, उसे वह पीछे की ओर सरका देता। वही भैस का पाडा खड़ा होता हैं। जितनी रस्सी पीछे सरकती, पाडा उसे चट कर जाता।

लक्खण नहि पलटै लाखां-निषेधात्मक भावों मे जीने से लाभ हैं या अलाभ ? यहभी चिंतन का एक पहलू है। क्या ये भाव शरीर को स्वस्थ रखते हैं ? मन को समाधिस्थ रखते हैं ? विचारों के द्वंद्व को समाप्त करते है ? समूह के साथ समायोजन की अभिवृति को जगाते हैं ? व्यक्ति को सहिष्णु बनना सिखाते है ? कोई भी मनुष्य निषेधात्मक भावों से न तो स्वस्थ्य मिलता है और न समाधि। इनकी गिरफ्त से मुक्त भी होना कठिन है। सब-कुछ बदल सकता है, पर मनुष्य के संस्कारों का बदलाव बहुत जटिल है। कहा भी गया है- बारे कोसां बोली पलटे,फ़ल पलटै पाकां। जरा आयां केश पलटें, लक्खम नहिं पलटै लाखां। बारह कोस के बाद भाषा बदल जाती है। परिपाक होने के बाद फल बदल जाते है। बुढ़ापा आने के बाद केसो का रंग बदल जाता है, किंतु मनुष्य का स्वभाव लाख प्रयत्न करने पर भी नही बदलता। इस जनश्रुति को एकांततः सत्य न माना जाए तो भी इतना निश्चित है कि सघन पुरुषार्थ के बिना संस्कार नही बदल सकते। संस्कारों में परिवर्तन हो ही नही सकता, यह मान्यता का अभिनिवेश है। यदि इस बात में सच्चाई होती तो साधना, तपस्या और प्रयोगों की व्यर्थता सिद्ध हो जाती। फिर न प्रशिक्षण की अपेक्षा रहती है और न प्रयोगों की मूल्यवत्ता प्रमाणित होती है।आज भी हमारी यही आस्था है कि मनुष्य बदल सकता है, बशर्ते कि वह बदलाव के लक्ष्य से प्रतिबद्ध हो। तब उसकी सोच के बिंदु निम्नानुसार होने चाहिए- मनुष्य चक्षुष्मान हैं या नही ? मनुष्य कुछ देखता हैं या नहीं ?मनुष्य में महत्वाकांक्षा

है या नहीं? मनुष्य में स्वार्थी मनोवृति है या नहीं? मनुष्य का दृष्टिकोण सुविधावादी है या नहीं? मनुष्य का विश्वास परिवर्तन में है या नहीं? मनुष्य का पुरुषार्थ परिवर्तन की दिशा में है या नहीं? मनुष्य में सहिष्णुता है या नहीं?

निषेधात्मक भावों का परिणाम-ये कुछ ऐसे सवाल है जो व्यक्ति को अपनी स्थिति के प्रति सचेत करते हैं। वह इस बात का अनुभव करें कि समाज में वही आदमी उपेक्षित या तिरस्कृत होता है, जो निषेधात्मक भावों में जीता हैं, जिसका आभामंडल मलिन होता है और जो कुछ जानने बनने तथा करने की स्थिति में नहीं रहता। गंगा नदी के तट पर बलकोष्ठ नामक चांडाल रहता था। उसकी पत्नी का नाम गौरी था। उसके एक पुत्र था। उसका नाम बल था। कुछ बड़ा होने पर वह हरिकेश नाम से प्रसिद्ध हुआ। एक दिन वह अपने साथियों के साथ खेल रहा था। वह खेल-खेल में लड़ने लगा। उसे खेल-मंडली से बहिष्कृत कर दिया गया। हरिकेश रूआसा होकर खड़ा-खड़ा खेल देखने लगा। अचानक वहां एक सांप निकला। लोगों ने उसको पत्थरों से मार डाला। थोड़ी देर बाद वहां एक अलसिया निकला। उसे किसी ने तंग नही किया। हरिकेश ने दो दृश्य देखे। उसके मन पर गहरी प्रतिक्रिया हुई। उसने सोचा-दुख और तिरस्कार का कारण प्राणी का अपना व्यवहार है। मैं सांप के समान विषैला हूं, इसी कारण मेरे साथियों ने मेरा अपमान किया। यदि में अलसिए की तरह निर्विष होता तो अपने साथियों से क्यों बिछुड़ता? चिंतन आगे बढ़ा। उसे जाति-स्मृति ज्ञान हो गया। उसने अपने निषेधात्मक भावों को समझा। उन्हें छोड़ा और साधु बन गया।

जो दिल खोजा आपना-मनोविज्ञान के अनुसार आत्मख्यापन मनुष्य की मौलिक मनोवृति है। हर व्यक्ति की यह आकांक्षा होती है कि उसका वैशिष्टय प्रकट हो। दूसरे लोग उसका मूल्यांकन करे, किंतु अन्य लोगों के प्रति उसका दृष्टिकोण सकारात्मक नहीं होता। वह उनकी विशेषताओं में भी कमी देखता है। अपनी बड़ी से बड़ी गलती उसे छोटी दिखाई देती है, जबकि दूसरों का साधारण सा दोष पहाड़ जितना बड़ा लगता है। यह दृष्टिकोण का ही अंतर है, जो व्यक्ति में अपने दोषों की अच्छाई का भ्रम पैदा कर देता है। अंतर्मुखी व्यक्ति की दृष्टि इतनी पारदर्शी होती है कि वह बाहर के सब आवरणों को चीरकर अपनी दुर्बलताओं को देख लेता है। कबीर ने इसी रहस्य का उद्घाटन करते हुए कहा है - बुरा जो देखन मे चला, बुरा न दिखा कोय। जो दिल खोजा आपना, मुझसा बुरा न कोय।। मनुष्य और कुछ देखे या नही, इतना अवश्य सोचे कि आनंदमय जीवन कैसे जीया जा सकता हैं। आनंद का स्त्रोत कही बाहर नही है। अपने ही भीतर जो स्त्रोत हैं, उसे खोजने की जरुरत है। इस खोज में खपना खुद को ही होगा। जिन खोजा तिन पाईया का सिद्धांत अनुभव की वाणी है। भगवान महावीर ने कहा- पत्तेयं सांय, पत्तेय वेयणा-सुख दुख अपना-अपना है। कोई किसी को न सुखी बना सकता है और न दुखी बना सकता है। दूसरे लोग तो मात्र बैसाखी बन सकते है। उनका सहारा उसी को मिलेगा, जो उन्हें स्वीकार करेगा। अन्यथा बैसाखियां तो जड हैं। वे किसी को जबरन चलने के लिए प्रेरित करेंगी। दूसरों के द्वारा सुख-दुःख के निमित्त उपस्थित किए जा सकते हैं, पर संवेदन तभी होगा, जब व्यक्ति उन निमितों को स्वीकार करेगा।

वर्कशॉप भावों की दुनिया में-मनुष्य अच्छा या बुरा, जो कुछ करता है, वह उसके अंतर्भावों का परिणाम हैं। जैसे भाव, वैसी अभिव्यक्ति-यह तथ्य है। इसके आधार पर प्रश्न खड़ा होता है

कि मनुष्य स्वयं ही अपने भाग्य का विधाता है तो वह अवांछनीय प्रवृति क्यो करता हैं ? उसकी हर प्रवृति का परिणाम उसी को भोगना पड़ता है तो वगलत प्रवृति के प्रेरक भावों को क्यों नही छोड़ता ? गलत संस्कारों को नहीं बदला जाता हैं तो जीवन का सुख छिन जाता हैं, इस जानकारी के बाद भी बदलाव की यात्रा की शुरु आत क्यों नहीं करता ? बदलने में क्या लाभ और न बदलने में क्या नुकसान हैं ? लाभ नुकसान के गणित को समझकर भी व्यक्ति क्यों नहीं बदलता हैं ? बदलाव की प्रक्रिया जटिल हो सकती है , पर वह असंभव नहीं है। जो व्यक्ति बदलना चाहता है, उसके लिए एक पंचसूत्री कार्यक्रम निर्धारित है। उसकी क्रियान्विति के लिए एक वर्कशाप आवश्यक है। वह वर्कशाप किसी सभागार में नही होगी। उसके लिए भावों की दुनिया में प्रवेश करना होगा। उसके पांच अंग हैं- आस्था -फैथ, आशा-होप, आत्मविश्वास-कॉन्फिडेन्स, इच्छा शक्ति-विलपावर, अनुप्रेक्षा अभ्यास-ओटो सजेशन सबसे पहले मनुष्य के मन में यह आस्था होना चाहिए कि संस्कारों में परिवर्तन हो सकता है। दूसरे बिंदु पर आशा का दीप प्रजवल्लित होता है कि परिवर्तन होगा। तीसरे बिंदु पर आत्मविश्वास इतना प्रगाढ़ हो जाता है कि वह परिवर्तन करके रहेगा। चौथा बिंदु विश्वास के अनुरुप इच्छाशक्ति या संकल्प शकि की पुष्टि पर जाकर ठहरता है। पांचवा बिंदु है अभ्यास। जब तक सफलता न मिले, तब तक निरंतर अभ्यास किया जाए। अनुप्रेक्षा के प्रयोग से भावों को बदला जाए। भाव परिवर्तन की व्यवहार में परिवर्तन की बुनियाद है। इस बुनियाद पर खड़ा होने वाला व्यक्ति ही बदलाव के चमत्कार को देख सकता है। मनुष्य का जीवन बहुरंगी है। जिदगी के बदलते रंगों से परिचित होने के लिए भावजगत से परिचित होना होगा। जीवन के रंग प्रशस्त हो, आकर्षक हो, सर्जनात्मक हों और अपनी उज्जवलता से अंधेरों को दूर करने वाले हों। यह अभिप्सा कोई जादुई डंडा नही है, जिसे घुमाकर चुटकी बजाते ही सब कुछ हासिल कर लिया जाए। यथार्थ की धरती कंटीली हो सकती है , पर भावों के गुलाब खिलाने की उर्वरता उसी मे है। मनुष्य अपने जीवन के यथार्थ को समझे और निषेधात्मक भावों की पकड़ से अपने-आप को मुक्त करे। ❖

सर्वधर्म-समभाव

• आचार्य महाप्रज्ञ

सर्वधर्म समभाव, सर्वधर्म समानत्व, सर्वधर्म सद्भाव आदि अनेकशब्द प्रचलित है। इनमें यथार्थता कम हैं, औपचारिकता अधिक है। महात्मा गांधी ने लिखा- जैसे हम अपने धर्म को आदर देते हैं, ऐसे ही दूसरे धर्म को दें- मात्र सहिष्णुता पर्याप्त नहीं है। (बापू के आर्शीवाद,पृ.8) सर्वधर्म समभाव का अर्थ क्या हैं ? तात्पर्य क्या है ? साधारण आदमी इसका अर्थ नहीं जानता। समभाव का एक अर्थ हो सकता है तटस्थ भाव। दूसरा अर्थ हो सकता है समानता का भाव। यदि सब धमी के प्रति हमारी तटस्थता हो- किसी के प्रति पक्षपात न हो, तमारी स्थिति मात्र द्रष्टा की बन जाती हैं, किसी भी धर्म के प्रति हमारा कर्तव्य प्रस्फुटित नहीहोता। हमें कम -से कम एक धर्म की प्रणाली को आचरणीय बनाना ही चाहिए। — आचार्य महाप्रज्ञ आमंत्रण आरोग्य का, पृष्ठ 73

मेरे जीवन का रहस्य

आचार्य महाप्रज्ञ

आज मैं उस सत्य को अनावृत करना चाहता हूं, उद्घाटित करना चाहता हूं, जिसके आधार पर व्यक्ति अपनी जीवन शैली का निर्माण करता है, वह स्वयं के लिए और दूसरों के लिए बहुत लाभदायी बन सकता हैं।

अनेकांत का दृष्टिकोण भाग्य मानूं या नियति ? सबसे पहली बात - 'मुझे जैन शासन मिला।' जिन शासन का अर्थ मानता हूं - अनेकांत का दृष्टिकोण मिला। मैंने अनेकांत को जिया है। यदि अनेकांत का दष्टिकोण नहीं होता तो शायद कहीं न कही दल दल में फस जाता। मुझे प्रसंग याद हैं - दिगम्बर समाज के प्रमुख विद्वान् कैलाश चंद्र शास्त्री आए। उस समय पूज्य गुरु देव कानपुर में प्रवास कर रहे थे। मेरा ग्रथ जैन दर्शन :मनन और मीमासा प्रकाशीत हो चुका था। पंडित कैलाश चंद्र शास्त्री ने कहा मुनि नथमलजी ने श्वेताम्बर - दिगमबर परंम्परा के बारे में जो लिखना था, वह लिख दिया, पर जिस समन्वय शैली से लिखा हैं, वह हमें अखरा नही, चुभा नहीं।

मुझे अनेकांत का दृष्टिकोण मिला, इसे मैं अपना सौभाग्य मानता हूं। जिस व्यक्ति को अनेकांत की दृष्टि मिल जाए, अनेकांत के आंख से दुनिया को देखना शुरु करें तो बहुत सारी समस्याओं का समाधान अपने आप हो सकता है।

अनुशासन का जीवन दूसरी बात-मुझे तेरापंथ में दीक्षित होंने का अवसर मिला। मे मानता हूं -वर्तमान में तेरापंथ में दीक्षित होना परम सौभाग्य है और इसलिए है कि आचार्य भिक्षु ने जो अनुशासन का सूत्र दिया जो अनुशासन मे रहने की कला ओर निष्ठा दी, वह देवदुर्लभ है। अन्यत्र देखने को मिलती नही है। मैंनें अनुशासन मे रहना सिखा। जो अनुशासन में रहता है, वह ओर आगे बढ़ जाता है। आत्मानुशासन की दिशा में गतिशील बन जाता है। तेरापंथ ने विनम्रता ओर आत्मानुशासन का जो विकास किया, वह साधु-संस्था के लिए ही नहीं, पूरे समाज के लिए जरुरी हैं।

विनम्रता और आत्मानुशासन - महानता के दो स्त्रोत होते हैं-स्वेच्छाकृत विनम्रता और आत्मानुशासन। जो व्यक्ति महान होना चाहता है अथवा जो महान होंने की योजना बनाता है, उसे इन दो बातों को जीना होगा। जो व्यक्ति इस दिशा में आगे बढ़ता हैं, विनम्र और आत्मानुशासी होता हैं, अपने आप महानता उसका वरण करती है।

मुझे तेरापंथ धर्मसंघ में मुनि बनने का गौरव मिला और उसके साथ मैंने विनम्रता का जीवन जीना शुरु किया। आत्मानुशासन का विकास करने का भी प्रयत्न किया। मुझे याद हैं - इस विनम्रता

ने हर जगह मुझे आगे बढ़ाया। जो बड़े साधु थे, उनका सम्मान करना मैंने कभी एकक्षण के लिए भी विस्मृत नहीं किया। सबका सम्मान किया। आचार्य तुलसी के निकट रहता था। विश्वास था कि वह जो गुरुदेव से बात करेंगे, हमारा काम हो जाएगा। जो भी समस्या आती, मैं उनके समाधान का प्रयत्न करता। मैं छोटा था, बड़े-बड़े साधु मुझे कहते, पर मैंने हमेशा उनके प्रति विनम्रता और सम्मान का भाव बनाए रखा। कभी उनके यह अहसास नहीं होने दिया कि कहीं कोई बड़प्पन का लक्षण है। मैंने आत्मानुशासन का विकास किया। शासन करना न पड़े, स्वयं अपना नियंत्रण अपने हाथ में ले ले, इसका अर्थ है कि वह व्यक्ति अपने भाग्य की चाबी अपने हाथ में ले लेता है।

गुरु का अनुग्रह मैंने आचार्य भिक्षु को पढ़ा। उनकी जो स्वयं निष्ठा थी, त्याग और व्रत की निष्ठा थी, उसे पढ़ने से जीवन को समझने का बहुत अवसर मिला। पूज्य गुरुदेवका अनुग्रह था। जब भी कोई प्रसंग आया, मुझे कहा - तुम यह पढ़ो। शायद आचार्य भिक्षु को पढ़नेका जितना मुझे अवसर दिया, मैं कह सकता हूं, - तेरापंथ के किसी भी पुराने या नए साधु को पढ़ने का उतना अवसर नही मिला। उनकी क्षमाशीलता, उनकी सत्यनिष्ठा को समझने और वैसा जीने का भी प्रयत्न किया।

मुझे आचार्य तुलसी का तो सब कुछ मिला था। उनके पास रहा। जीवन जीया। उन्होंने जो कुछ करना था, किया। इतना किया कि पंडित दलसुख भाई मालवणिया जितनी बार आते, कहते। उन्होने लिखा भी-आचार्य तुलसी और युवाचार्य महाप्रज्ञ-"गुरु और शिष्य का ऐसा संबंध पंद्रह सौ वर्षो में कही रहा है, हमे खोजना पड़ेगा।" आचार्य तुलसी से सब कुछ मिला, जीवन मिला।

नवीनताके प्रति आकर्षण अध्ययन का क्षेत्र बढ़ा। सिद्धसेन दिवाकर की जो एक उक्ति थी, उसने मुझे बहुत आकृष्ट किया। उनका जो वाक्य पढ़ा , सीखा या अपने हृदय पटल पर लिखा, वह यह है-"जो अतीत मे हो चुका है, वह सब कुछ हो चुका, ऐसा नही है। सिद्धसेन ने बहुत बड़ी बात लिख दी - मै केवल अपने अतीत का गीत गाने के लिए नहीं जन्मा हूं। मैं शायद उस भाषा में न भी बोलूं। पर मुझे यह प्रेरणा जरुर मिली-नया करने का हमेशा अवकाश है। हम सीमा न बांधें कि सब कुछ हो चुका है। अनंत पर्याय है। आज भी नया करने का अवकाश है। कुछ नया करने की रुचि प्रगाढ़ होती गई। मुझे कुछ नया भी करना चाहिए। कोरे अतीत के गीत गाने से काम नहीं होगा। वर्तमान मे भी कुछ करना है- मेरे गीत मत गाओं कोरे अतीत के गीत - केवल अतीत के गीत मत गाओ, कुछ वर्तमान को भी समझने का प्रयत्न करो।

निर्देशन निस्पृहता का - केवल जैन आचार्यों का नंहीं, आचार्य तुलसी ने ऐसे वातावरण का निर्माण किया था कि मेरा दृष्टिकोण व्यापक बन गया। किस परंपरा का है, संप्रदाय का है, यह प्रश्न गौण हो गया। मैंने वैदिक संन्यासियों को पढ़ा, देखा। उनसे मन पर जो प्रभाव हुआ उसकी लंबी चर्चा नही करता। एक संन्यासी की बात करना चाहता हूं। स्वामी विद्यारण्य, जो पहले जोधपुर युनिवर्सिटी में गणित के प्रोफेसर थे। एशिया के ग्यारह व्यक्ति चुने गए, उनमें एक थे। उन्होंने एक पुस्तक लिखी हिन्दू गणित पर। किसी दूसरे के नाम पर छपी है, पर लेखन उनका है। हमारे बहुत निकट संपर्क में रहे। उनकी जो निस्पृहता देखी, उसने मुझे बहुत प्रभावित किया है। वे जोधपुर में आए हुए थे। हम बाहर के सोच में जा रहे थे। वे भी साथ में थे। मैंने पूछ लिया - स्वामी जी! आपने प्रातराश कर लिया? दूध पिया? उन्होंने कहा-दूध कहां से आए? मैंने कहा-आपके पीछे

बड़े - बड़े प्रोफेसर घूमते रहते हैं कि आप कुछ बता दें। आप को क्या कमी है? वे बोले- मुनि नथमलजी ! (आचार्य महाप्रज्ञ) अभी जाधपुर में हूं तब तो सब पीछे-पीछे घूमते हैं। यहां से मैं पुष्कर चला जाऊँगा। भिक्षुओं की पंक्ति में जाकर भोजन करुगां। वहां दूध कहां से आएगा? वहां दूध नहीं मिलेगा तो दूध का अभ्यास मुझे सताएगा। दूध का संस्कार सताएगा कि आज दूध नहीं मिला। उनकी और भी जो अनके बातें मैंने देखी, कि एक संन्यासी कितना निस्पृह और कितना संसार से मुक्त रहना चाहता है। ऐसे सैकड़ों-सैकड़ों जैन-अजैन व्यक्ति संपर्क में आए, हिन्दू भी, मुसलमान भी। बड़े-बड़े लोग मिले। उनको देखा, कुछ नई बातो सीखी।

प्रबल रहा भाग्य-अभी अभी ज्योतिष से बात कर रहे थे। उस समय मैं छोटा था। गुरु देव आचार्य बने, पहला ही वर्ष था। कालूगणी का विक्रम संवत् तिरानवे में स्वर्गवास हो चुका था। चौरानवे का चातुर्मास महाराजा गंगासिंह जी की प्राथना पर गुरु देव को बीकानेर करना था। बीकानेर जाते हुए कुछ दिन श्रीडूगरगढ़ में रहे। एक दिन हम सहपाठी बैठे थे- मुनि बुद्धमल्लजी, मुनि जंवरीमलजी मुनि नगराजजी (संघमुक्त) आदि। मुनि नगराजजी को ज्योतिष की बहुत रुचि थी। कुछ जानते भी थे। वे खोजते रहते थे। एक श्रावण था वहां मन्नालाल नौलखा। बहुत अच्छा जानकार था। चहेरा देखे तो भेंस भी भड़क जाए और ज्ञान देखें तो उस व्यक्ति में ज्योतिष की बहुत गहरी पकड़ थी। मुनि नगराजजी बोले-आज मन्नालालजी से बात करनी है, जन्म कुंडली बनानी है। अनेक संतों की जन्म कुंडली में भाग्य इतना प्रबल है कि आप जो चाहेंगे, वह काम हो जाएगा।

मैंने इस बात को सुना। बचपन से ही एक ग्रहणशीलता का भाव था। मैंने जैसे गांठ बांध ली कि मुझे ऐसा कोई काम नहीं करना है, जिससे जो अच्छा भाग्य है,उसमें कोई कमी आए। एक संकल्प कर लिया। हमेशा सुरक्षा करने का प्रयत्न किया कि कहीं भी भाग्य बिगड़े नहीं। जैन दर्शन के अनुसार संक्रमण भी होता है। बुरा भाग्य अच्छा और अच्छा भाग्य बुरा बन जाता है। मेंने दृढ़ता के साथ यह संकल्प किया - भाग्य मे कमी न आए। वह प्रमाद के द्वारा आती है। मुझे अधिक से अधिक अप्रमत्त रहने की साधना करती है।

मैं मानता हूं कि वह ज्योतिष का एक संकेत मेरे लिए पथ को प्रशस्त करने का हेतु बन गया।

योग का संस्कार - दूसरी बात यह थी -जब मैं छोटा था तब गांव में रहा। टमकोर छोटा सा गांव है। पांच-सात हजार की आबादी वाला गांव। यहा कई बच्चे खेल रहे थे। गांव में कोई ज्यादा काम होता तो नही। पढ़ाई करते नही थे। विद्यालय भी नहीं था। सारा दिन खेल कूद करते रहना, रोटी खाना और सो जाना -बस यही क्रम था। एक दिन खेल रहे थे। एक डकैत जैसा अज्ञात व्यक्ति आया। कई बच्चों को उसने देखा। मेरे बारे में उसने कहा- यह बड़ा योगी होगा। योगी क्या होता है, यह तो मैं नहीं जानता था। एक बच्चे के बारे में कहा - यह सात दिन बाद मर जाएगा। उसने दो तीन बाते और बतलाई। किसी ने विश्वास नही किया। जब सात दिन बाद हमारा साथी मर गया तब लोगों ने खोजना शुरु किया कि वह कौन था? फिर कहां पता लगता? वह भी मेरे मन में संस्कार था कि यह योगी बनेगा। योग का संस्कार भी हो गया।

जरुरी है महानंती और सफलता इस संस्कार एक-एक संस्कार सामने आते गए और कुछ बातें जमती गई। मैंने उनको अपने लिए जैसे कहते हैं कि गांठ -सी बांध ली । संकल्प भी ले लिया कि मुझे ऐसा कुछ करना है।
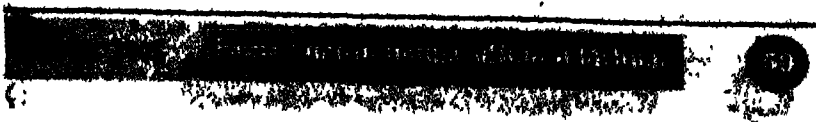
मैं सबसे यह कहना चाहता हूं - महानता और सफलता -ये दोनों हर व्यक्ति के लिए जरुरी हैं। हमारी दिशा तुच्छता, अल्पता, की ओर न हो। हमारी गति भी उधर न हो। हर व्यक्ति के मन में संकल्प जागे कि मुझे महानता की दिशा में प्रस्थान करना है, महान् बनना है। आकांक्षा की बात नहीं, किन्तु महान होना बहुत अच्छी बात, अच्छा संकल्प मानता हूं।

आशावादी दृष्टिकोण दूसरी बात है सफलता। सफलता के लिए मैंने जो अनुभव किया, जैसे जीवन जिया, दूसरों को भी उस दिशा में चिन्तन करना है। सफलता के लिए जो बाधा है, जो विकास के मार्ग में बाधा है, वह है निराशा। नहीं हो सकता-यह सफलता का सबसे बड़ा विघ्न है। गुरुदेव ने अनेक बार कहा था 'मैंने इनको कुछ भी कहा इन्होंने आज तक नहीं कहा की यह नहीं हो सकता।' आगम संपादन का इतना कठिनतम काम था। गुरुदेव ने कहा करना है। मैंने कहा हो जाएगा। कभी यह नही कहा कि यह काम नहीं हो सकता। मेरा यह सूत्र था कि निराशा कभी न आए। नहीं हो सकता - ऐसा हम क्यों सोचें। हम जब विश्वास करते है कि आत्मा में अनंत शक्ति है, तो नही हो सकता, यह क्यों सोचें। सफलता मे एक बड़ा विघ्न है-निराशा। नहीं हो सकता का भाव।

पुरुषार्थ का जीवन - सफलता का दूसरा जीवन विघ्न है-पुरुषार्थहीनता। हो सकता है, पर आदमी करता नहीं। मेरे साथी भी कुछ ऐसे हुए है, जिनमे काफी क्षमता है, पर क्षमता का उपयोग कम करते हैं तो सफलता उतनी नहीं मिलती। कर सकते है, पर नहीं करते, यह बहुत बड़ी बाधा है। मैने हमेशा श्रम का जीवन जीया, हमेशा पुरुषार्थ किया और मैने कुछ दिन पूर्व कहा था- आचार्य तुलसी के पास मै इसलिए रह सका कि मैने पुरुषार्थ का जीवन जीया। अगर पुरुषार्थ नहीं होता, आलस्य और प्रमाद होता, जो कहा, वह नही करता मूनि नथमलजी की तीसरे दिन की छुट्टी हो जाती। उनके पास नही रह सकते। आचार्य तुलसी केइतने कड़े अनुशासन में रहा। कोई सामान्य बात नहीं थी। बहुत कठिन बात थी। जो भी काम आया, मैंने सारा काम यथावत् विधिवत् किया। पुरुषार्थ हमेशा आगे रहा। मैने भाग्य को आगे नहीं रखा। भाग्यको पीछे रखा। पुरुषार्थ उसके आगे-आगे चला।

सतत जागरुकता - सफलता का तीसरा विघ्न है-प्रमाद, लापरवाही। ठीक है, हो जाएगा, कुछ नही-यह चिन्तन सफलता मे विघ्न उपस्थित करता है। आदमी बहुत काम करता है, पर उसकी सुरक्षा नही कर पाता। उसका भाग्य भी साथ नही देता और सफलता भी नहीं मिलती।

सफलता के तीन विघ्न है-निराशा, पुरुषार्थहीनता और प्रमाद। मैं सदा इनसे बचता रहा दूर रहा। यह सोचता रहा - अगर ऐसा हुआ मे जहा जाना चाहता हूं, जो करना चाहता हूं, वह नही हो सकता। इसलिए न कभी निरास बना, न कभी आलसी बना और न कभी उपेक्षावान बना, न लापरवाह बना। कुछ भी न बना। मुझे बहुत साधु कहते थे, गृहस्थ भी बहुत कहते थे कि आप इतना श्रम करते हैं, आपको मिला क्या? सैकड़ों बार कानों मे यह आवाज आती थी कि अमुक साधुको यह मिल गया, अमुक को यह मिल गया, सबसे ज्यादा श्रम और पुरुषार्थ आप कर रहे हैं। आखिर आपको मिला क्या? मैंने कहा-कुछ भी नहीं मिला, मुझे कुछ पाना ही नहीं है। मुझे तो करना है। मिलने की बात क्यों सोचते हो? बड़ा मुश्किल था। कभी-कभी समझाने के लिए कितना समय लगा होगा। ऐसे प्रश्न पूछने वालों में मुनि ताराचंदजी थे, मुनि मीठालालजी भी थे।

हमारे आसपास और न्याय में रहने वाले, दूरदराज विचरने वाले कुछ साधु और गृहस्थ भी थे। उनका प्रश्न होता-आपको क्या मिला?

धैर्य और प्रतिक्षा - मैंने एक संकल्प लिया था - काम धैर्य के साथ होता है, जल्दबाजी में नहीं होता। कोई भी काम निष्फल नहीं होता। सफलता अवश्य मिलेगी, यदि तुम्हारे भीतर धैर्य है। धैर्य नहीं है, उतावली करते हो तो कच्चा फल अवश्य ही खट्टा रह जाएगा। फल तो तब तोड़ो, जब वह पूरा पक जाए। पके आम में जो मिठास होती है, वह कच्चा तोड़ने में नहीं. । भले फिर उसे कृत्रिम संशोधनों,से पकाओ, उसमें वह रस नही आ सकता।

जीवन की सफलता का बहुत बड़ा सूत्र हैं -धैर्य। तुम अपना धैर्य मत खाओ। धैर्य रखो। टॉलस्टाय से एक युवक ने पुछा - धैर्य कब तक रखें ? क्या चलनी मे पानी टिक जाएगा ? टॉलस्टाय ने कहा टिक जाएगा। धैर्य रखो। जब पानी बर्फ बन जाएगा तो चलनी में भी टिक जाएगा।

बहुत लोग जल्दी उतावले हो जाते हैं। थोड़ा-सा काम करते हैं और कहते है कि मुझे कुछ मिलना चाहिए। अरे! अभी तो तुम कच्चे हो, अभी मिलने की बात करते हो ? यह मिलना चाहिए, वह मिलना चाहिए, कुछ आकांक्षाएं जग जाती हैं, पर कब मिलना चाहिए? जब पक जाओगे तब मिलना चाहिए। पहले मीला तो तुम्हारे भीतर खटास और रह जाएगी, केरी ही मिलेगी, आम नहीं मिलेगा। धैर्य सफलता का बहुत महत्वपूर्ण सूत्र हैं। मैंने देखा जिन जिन व्यक्तियो ने धैर्य रखा, बहुत आगे बढ़ गए। जिन्होने उतावलापन किया, वे पिछड़ गए, पीछे चले गए। तुम्हें मिलेगा पर प्रतिक्षा करो। देखो, क्या होता हैं ? जल्दबाजी कभी मतकरो।

व्यवहार कौशल इसके साथ सफलता के लिए एक सूत्र पर विचार करें, जिसको मेन जिया हैं और वह है व्यवहार कौशल। हमेशा व्यवहार के प्रति जागरु क रहा। यद्यपी मेरी रूचि प्रारंभ से ही ध्यान में, एकांत मे ज्यादा थी। गुरु देव ने लिखा भी इनकी रु चि निरंतर ध्यान मे, एकांत मे जा रही है। फिर भी व्यवहार मे कभी भी अप्रियता का भाव नहीं आने दिया। चाहे मेरा कितना ही मनोभाव था पर गुरु देव ने जो कह दिया, वहहो गया। दूसरे साधूओं ने जो कहा, वह हो गया। व्यवहार कौशल सफलता का एक बड़ा सूत्र है। व्यक्ति कितना ही जानकार है, तत्वज्ञ है, यदि व्यवहार कुशल नही है, तो वह कुछ नही कर पाता। व्यवहार कौशल, जिसको आज की भाषा में कहते है -इमोशनल इंटेलीजंसी। यह हमारा व्यवहार कौशल हैं।

अनिष्ट न करने का संकल्प - मुझे याद है कि इसके लिए मैंने जो अपने मन में संकल्प किए थे, उनमें एक तो यह था मैं वैसा कोई काम नही करु गा, जो काम आचार्य तुलसी को कष्ट दे, उनका इष्ट न हो। उन्हें यह न सोचना पड़े कि मैने इस व्यक्ति पर इतना श्रम किया, आज यह इधर-किधर जा रहा है ? एक प्रारंभ का संकल्प था। इस संकल्प ने मेरा रास्ता हमेशा प्रशस्त रखा। रास्तो में कभी रु कावट नहीं आने दी। दूसरा संकल्प यह था दूसरो का अनिष्ट चिन्तन नही करुंगा। आदमी का भाग्य कब खराब होता है? जब वह दुसरों के बारे में अनिष्ट चिंतन करता है, दूसरों के बारे में खराब बाते सोचता हैं, तब उसका भाग्य बिगड़ता हैं। जिसके बारे में सोचता हैं, उसका तो कुछ बिगड़ता ही नहीं है और जो सोचता हैं, उसका भाग्य खराब हो जाता है। किसी का भी अनिष्ट न सोचने का संकल्प था। मुझे याद ही नही है कि मैंने कभी दूसरो के अनिष्ट की कल्पना की हो। नौंवे दशक के जीवन तक भी मुझे याद नहीं है कि मैंने किसी के बारे में कुछ अनिष्ट किया

हो अथवा सोचा हो। यह जरूर है कि मैं दूसरों के लिए कुछ ईर्ष्या का पात्र रहा हूं। पर मैंने कभी किसी के बारे में अनिष्ट चिन्तन नहीं किया। इसके सबसे ज्यादा कोई साक्ष्य है तो मेरे गुरु आचार्य तुलसी थे। उन्होंने एक बार कहा था - "इनका (आचार्य महाप्रज्ञ) इसीलिए विकास हो रहा है कि ये दूसरों के भले की बात सोचते हैं, कभी दूसरों के भले की बात सोचते हैं, कभी दूसरों के अनिष्ट की बात नहीं सोचते। आपको अगर सफल होना है तो जीवन शैली में इस बात को अपनाना होगा।

उपशांत कषाय - अपने भावों पर, इमोशन पर नियंत्रण रखना भी आवश्यक माना और किया। आठ दशकों का जीवन पूरा हो गया। तेरासीवां वर्ष चल रहा है। मुझे कोई पूछे कि कितनी बार क्रोध किया तो याद करना पड़ेगा कि कब किया? अहंकार अभी हुआ नहीं। लोग कहते हैं - ऋजु हैं। माया कपट का प्रश्न नहीं था। लोभ कभी नहीं रहा। इन भौतिक वस्तुओं के प्रति आकर्षण नहीं रहा। मैं मानता हूं कि जो व्यक्ति इस क्षेत्र में सफल होना चाहता है, उसके लिए अपने सपने संवेगों पर, भावों पर नियंत्रण रखना बहुत आवश्यक है, अन्यथा वे फिसलन पैदा कर देते हैं।

प्रखर तर्क : प्रगाढ़ श्रद्धा - मैंने श्रद्धाका जीवन जीया। श्रद्धा और तर्क - हमारे जीवन रथ की दो पहिए हैं, दो चक्के हैं। मैं तर्क को बहुत महत्वपूर्ण मानता हूं। तर्क के बिना आगे सत्य को खोजने का रास्ता नहीं मिलता। किन्तु श्रद्धाहीन तर्क को खतरनाक भी मानता हूं, मानता रहा हूं। मैंने एक सूत्र बनाया - व्यवहार के क्षेत्र में कभी तर्क का प्रयोग नहीं करना है। जहां सिद्धांत का क्षेत्र है। वहां तो तर्क में किसी से पीछे रहना मुझे पसंद भी नहीं था। मेरा सौभाग्य है कि मैं पीछे नहीं रहा। जहां व्यवहार को क्षेत्र है, वहा तर्क का प्रवेश द्वार बंद रहे, दरवाजा भी बंद रहे कि वहां तर्क नहीं हो सकता। वहां तो विनम्रता और श्रद्धा होनी चाहिए। विकास के दो बड़े आधार हैं दिशा और दृष्टि । दिशा सही हो और दृष्टि भी सही हो, तब लक्ष्य की प्राप्ति होती है।

वैदिक सूक्त मे प्रार्थना की गई - मुझे अंधकार से प्रकाश की ओर, मृत्यु से अमरत्व की ओर ले चलो। लेकिन आज तो उल्टा हो रहा है और इसका प्रमुख कारण है - जीवन में मर्यादा और व्रत की कमी । जहां मर्यादा नहीं होती, वहां हिंसा को टाला नहीं जा सकता।

श्रद्धा की बात मैं कहूं, पता नहीं कैसी लगेगी पर हमारे आसपास के लोग भी कहते थे-मुनि नथमलजी का क्या? आचार्य तुलसी दिन को रात समर्थन कर देगे। आचार्य तुलसी रात को दिन कह दें तो मुनि नथमलजी उसका समर्थन कर देगे। यह एक बोलचाल की भाषा जैसी बन गई थी।

मैं सौभाग्य मानता हूं कि श्रद्धा में भी मेरा स्थान किसी से नीचे नहीं रहा। तर्क में भी पीछे नहीं रहा। लोगों को आश्चर्य तो होता था कि इतना प्रखर तर्क और फिर इतनी प्रगाढ़ श्रद्धा। अगर जीवन में सफल होना है तो आप एकांगी न बनें, श्रद्धा और तर्क का ऐसा समन्वय करें, क्षेत्रों का विभाग कर लें। वहां तत्वचर्चा का प्रश्न है वहां आपका प्रबल हों, तर्क का प्रश्न है वहां श्रद्धा आपकी प्रधान रहे, वह चक्षु उद्घाटित रहे।

केन्द्रीय लक्ष्य बनाएं - एक बात की ओर आकृष्ट करना चाहता हूं, हर व्यक्ति, विशेषतः हमारे साधु साध्वीयां और समणियां एक लक्ष्य निर्धारित करें। केन्द्रीय लक्ष्य एक रहे। सामाजिक लक्ष्य जीवन में बहुत होते हैं। किन्तु एक लक्ष्य केन्द्र में रहे, जो हमारे जीवन का न्यूक्लीयर रहे, परिधि

नहीं। केन्द्र में एक लक्ष्य बना लें। उतार-चढ़ाव जीवन में आते है। चाहे साधना क्षेत्र हो या व्यापार हो या राजनिती का क्षेत्र-उतार-चढ़ाव से कोई मुक्त नहीं होता। पर लक्ष्य के प्रति हमारा दृढ मनोभाव हो, लक्ष्य के प्रति हम समर्पित रहें, तो सारे उतार-चढ़ाव पार कर हम अपनी मंजिल तक पहुंच सकते हैं। लक्ष्य का स्पष्ट निर्धारण करें-मुझे किस दिशा मे आगे जाना है।

निश्चित रहा लक्ष्य - मैंने लक्ष्य बनाया था-मुझे अच्छा साधु बनना है और मुझे जिन शासन की, भिक्षु शासन की और मानवता की सेवा मे लगना है, काम करना है। आज भी वही लक्ष्य है। लक्ष्य में कोई अंतर नही आया। समस्या आती रहती है, बाधाएं आती हैं, उतार-चढ़ाव आते रहते हैं, पर एक लक्ष्य का आपको निश्चित है तो आप पहुंच जाएगे। लक्ष्य नही बनाया है तो भटक जाएंगे। लक्ष्यहीन जीवन कही नही पहुंचता। हर व्यक्ति के लिए जरुरी हैं को जीवन के केन्द्रीय लक्ष्य का निर्धारण करे, सामयिक लक्ष्य का नहीं। वे तो बदलते रहते है। मेने जिस केन्द्रीय लक्ष्य का निर्धारित किया, मुझे संतोष है कि उस लक्ष्य से कही ईधर-उधर सूई नही जा सको। जिसका लक्ष्य निश्चित है, वह ईधर उधर भटकता नही हे। जिसका निश्चित नहीं होता, वह ईधर उधर भटकता रहता है। सोचता है - यह करु ? वह करु ? क्या करुं ?

प्रलोभन से अविचलित मेरे सामने भी कितने प्रलोभन आएं। कभी कभी कुछ विरोध चिन्तन करने वालो ने कहा बस हमे और कुछ नहीं चाहिए, एक मुनि नथमलजी झुक जाए तो काम हो जाए। ऐसा लगा कि बड़ा प्रलोभन है सामने। पर लक्ष्य निश्चित था, कभी ईधर-उधर झुकने का अवसर ही नहीं आया। मेरे सामने मुबई का श्रावक रमणीक भाई आया। उसने कहा आचार्य रजनीस ने कहा है कि मुनि नथमलजी जो काम कर रहे हे, वे अलग न कर, वे मेरे मिलकर काम करें। उसने बडे ऊंचे सपने दिखाएं-मैने कहा यह हमारा कोई प्रश्न नही है। हम जिस लक्ष्य से चल रहे है। हमारा काम हो रहा है। और भी पता नही , कितने लोग आते हैं। कहते है उनके साथ यह हो सकता है, वह हो सकता है। कितने प्रलोभन और बड़े बडे सपने दिखाते हे। मेने कहा मे अपना सपना भी नहीं जानता। रात को भी कम आते है। हमे तो सपना लेना ही नहीं हे, लक्ष्य के साथ चलना हैं। इसीलिए हम ठीक चल सके। यदि लक्ष्य निश्चित नही होता तो कही ईधर उधर गति हो जाती।

सफलता के साथ जीए - मैने अपने जीवन के कुछ रहस्य आज बतलाए हे। बहुत कम लोग जानते है इन बातों को पास रहने वाले भी कम जानते हे। यह जीवन के रहस्य हे। आदमी अपनी जीवन शैली इन रहस्यो के आधार पर बनाएं। किस प्रकार वह सफल हो सकता है, उन सूत्रों को पकडे तो उनके सहारे वह आगे बढ़ सकता है। महा श्रमण ने एक प्रश्न कर दिया इसलिए यह सारा बताना पड़ा। अन्यथा कोई उपेक्षा नही थी। मै मानता हूं जीना और मरना यह तो नियम है। इसमें कोई कठिनाई वाली बात नही है। आचार्य भिक्षु के बारे में लिखा - मौत से डरता नहीं मै मौत मुझसे डर चुकी है। मौत से मरना नहीं मै, मौत मुझसे मर चुकी है। आचार्य भिक्षु की ईच्छा मृत्यु हुए थी। मैं मानता हूं-आचार्य तुलसी की भी इच्छा मृत्यु हुई। कोई बिमारी से मृत्यु नहीं हुई। मेरे लिए भी कुंडलिया देखने वाले लोग लिखते हैं। इच्छा मृत्यु का वरण करेंगे। जीना मरना खास बात नहीं है। किन्तु हम जब तक जीएं, इन सफलता के सूत्रों को, लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए जीएं तो हमारा जीना स्वयं के लिए, दूसरों के लिए भी यत्किञ्चित् लाभकर बन सकता हे।

शक्ति है सत्यनिष्ठा में - मुझे लोग बहुत पूछते है-आपके पास इतने बड़े बड़े लोग आते हैं? मैं कहता हूं -मैं तो किसी को बुलाता नहीं हूं। मैंने किसी को बुलाया नहीं। उनको लगता हैं कि कुछ मिल सकता हैं, कुछ मार्गदर्शन मिल सकता हैं। मैंने राष्ट्रपतिजी से कहा यह बात आगे चलेगी इसलिए संपर्क -सूत्र निश्चित करना होगा। उन्होंने कहा इसमे क्या हैं? मैं कम से कम वर्ष म तीन बार तो आपके पास आना ही चाहता हूं। क्यों आते हैं? अगर आप स्वयं एक सत्य की सबका जरुरत हैं। आप भी झूठ के साथ चल रहे है तो कोई [illegible] नहीं। एक बार आ गया तो दूसरी बार नहीं आएगा। राजस्थान की प्रसिद्ध कथा है-एक सुआ (तोता) राजस्थान के मरुस्थल मे चला गया। खेजड़ी का फल लटक रहा था। उसने चोच से खाना चाहा। फल भीतर से कठोर था। चोंच टूट गई। सुआ वहा से [illegible] उन्होंने अपने कथन को इन शब्दों मे प्रस्तुत किया- हुआ सो तो हुआ, फिर इस वन नहीं आएगा सुआ। भूला चूका आएगा तो लटकन फल नही खाएगा।

सत्यनिष्ठा हो तो सब कुछ होता है। मुझे यह सत्यनिष्ठा आचार्य भिक्षु, श्रीमज्जायाचार्य, आचार्य तुलसी तथा और भी अनेक आचार्यों द्वारा मिली। आदमी अपनी सत्यनिष्ठा पर रहे, फिर उसे कुछ भी सोचने का जरुरत नहीं है। कौन आता है? कौन नहीं आता? कौन क्या करता है? इसकी कोई आवश्यकता नही है। बस इसके लिए सत्यनिष्ठा पर्याप्त है। उस सत्यनिष्ठा मे इतनी शक्ति है कि जिसको अपेक्षा है, वह स्वत. आएगा।

रहस्य तेरापंथ की शक्ति का - मेरा यह सौभाग्य है कि तेरापंथ जैसा प्रबुद्ध और अनुशासित साधु साध्वी समाज मिला। दो चार होने पर भी गर्व हो सकता है। यहां तो चारो ओर प्रबुद्धता ही प्रबुद्धता झलकती है। राजा भोज के राज्य की यह व्यवस्था थी कि जो संस्कृत का वक्ता नहीं है, वह मेरे राज्य मे न रहे। यदि संस्कृत का वक्ता कुम्हार है तो उसका भी राज्य मे बड़ा स्थान है। यह सौभाग्य मानता हू कि मुझे ऐसा धर्मसघ मिला है, जिसमे प्रबुद्धता, विचारशीलता और चिन्तनशीलता हैं। इतने प्रबुद्ध होते हुए भी इतने अनुशासित और विनम्र। यह आचार्य भिक्षु का कोई वरदान है कि ऐसे सस्कार पीढ़ी दर पीढ़ी संक्रांत होते गए। जहां एक नेतृत्व है, वहां साधुपन भी शुद्ध पलेगा, विकास होगा, प्रबुद्धता बढ़ेगी, शक्ति बढ़ेगी। जहां बिखराव होता है, वहां सारी बाते समाप्त हो जाती है। तेरापंथ की शक्ति का रहस्य है कि उसे एक नेतृत्व मिला हैं, विनीत, समर्पित, और अनुशासित साधु साध्वी और श्रावक-श्राविका समाज मिला हैं। कितना अच्छा हो आज के धर्म के लोग भी इस सूत्र को पकड सके, अपनी शक्ति का संवर्धन कर सके।❖

प्रकाश तले अंधेरा

• आचार्य महाप्रज्ञ

कौन व्यक्ति होगा जो प्रकाश के साथ अंधकार को नही पालता? केवल दीए के तले ही अंधेरा नहीं होता, हर प्रकार के तले अंधेरा होता है। हमारी दोनों आंखों के नीचे अंधेरा है। ये दोनों आंखे अंधेरे को पालती है, पोसती है। इधर देखा, उधर देखा और देखे को अनदेखा कर डाला, यह अंधेरे को पालना है। अनेक लोग सचाई को जानते हुए भी उस पर आवरण डाल देता है और असत्य को सामने ला रखते हैं - आचार्य महाप्रज्ञ जीवन की पोथी, पृष्ठ 115

इच्छा परिमाण जन आन्दोलन बने

"हिन्दुस्तान टाइम्स" के साथ विशेष साक्षात्कार

आज मध्याह्न में प्रतिष्ठित दैनिक हिन्दुस्तान टाइम्स की संवाददाता श्रीमती गीता एब्राहम ने आचार्य प्रवर से विशेष साक्षात्कार लिया। उल्लेखनीय हैं हिन्दुस्तान टाइम्स के इनरवॉइस स्तम्भ में प्राय: प्रति सप्ताह आचार्यवर के आलेख प्रकाशित करते हैं। साक्षात्कार की शुरु आत इसी बिन्दु से हुई

गीता अब्राहम : आचार्यश्री! आपके आलेख इनर वॉइस स्तम्भ में निरन्तर प्रकाशित हो रहे है। वे अध्यात्म रस से परिपूर्ण होते है।

आचार्यश्री : हां।

गीता अब्राहम : आचार्यश्री! उनका बहुत अच्छा रिस्पॉन्स मिलता है। पाठको के बहुत पत्र आते हैं।

मुनि धनंजय : क्या वे पत्र देख सकते है?

गीता अब्राहम : हां, मैं, वे पत्र आचार्यश्री तक पहुंचा दूंगी। (मूल विषय पर आते हुए) आचार्यश्री! भगवान महावीर ने अपरिग्रह का सूत्र दिया। एक गृहस्थ अपरिग्रही कैसे हो सकता है?

आचार्यश्री : महावीर ने गृहस्थ के लिए अपरिग्रह का विधान किया, यह कथन सही नहीं है। महावीर ने मुनि या साधु के लिए विधान किया। एक गृहस्थ अपरिग्रही नहीं हो सकता। महावीर ने उसके लिए इच्छा परिमाण का विधान किया। उन्होंने कहा इच्छा का परिणाम करो।

गीता एब्राहम : हम इस सन्देश को कैसे फैलाएं?

आचार्यश्री : इस सन्देश में युग की समस्या का समाधान हैं। इसलिए फैलाए बिना न आर्थिक अपराध कम होंगे, न गरीबी मिटेगी।

गीता एब्राहम : आप बिल्कुल सही कह रहे है।

आचार्यश्री : असीम व्यक्तित्व स्वामित्व अपराधों की जड़ है।

युवाचार्यजी : आचार्य तुलसी ने इसके लिए विसर्जन का सूत्र दिया। वह एक समाधान है।

गीता एब्राहम : वह प्रायोगिक कैसे बने?

आचार्यश्री : हम समस्या को समझने का प्रयत्न करें। यह बताएं कि अधिक संग्रह करने वाले के लिए भी वह हितकर नहीं हैं। हम एक संकल्प का प्रयोग कराते है। व्यक्ति यह संकल्प करता हैं मैं इतने से अधिक व्यक्तित्व सम्पत्ति नहीं रखूंगा। आज भी हजारो व्यक्ति हैं, जिन्होंने संकल्प स्वीकार किये हैं।

गीता एब्राहम : क्या यह व्यापक हो सकता हैं? क्या कोई और नहीं चाहेगा?

आचार्यश्री : प्रयत्न चलता रहे तो पचास प्रतिशत लोग ऐसा संकल्प कर सकते हैं। शत प्रतिशत की बात हम न सोचें। यदि पचास प्रतिशत लोग भी यह संकल्प कर लें तो समाज में निश्चित रुप से परिवर्तन आ सकता हैं। किन्तु जैसा मैंने कहा इसके लिए प्रयत्न बहुत जरुरी हैं।

गीता एब्राहम : आप जो कर रहे हैं, वह कुछ व्यक्तियों अथवा आपके संघ तक सीमित हैं। क्या वह अन्य देशों में, समग्र विश्व में मास मूवमेंट बन सकता हैं?

आचार्यश्री : यदि ठीक प्रसार किया जाए तो मास मूवमेंट (जन आन्दोलन) बन सकता हैं, प्रत्येक व्यक्ति के हृदय को छू सकता हैं। उसे यह बतलाया जाए कि यदि तुम स्वस्थ रहना चाहते हो, यदि तुम तनाव मुक्त रहना चाहते हो, यदि तुम भययुक्त रहना चाहते हो और यदि तुम शांति का जीवन जीना चाहते हो तो उसका यह एक मार्ग हैं। तुम इच्छा का परिणाम करो, परिग्रह की सीमा करो, तुम्हें सुख और शांति का अनुभव होगा।

गीता एब्राहम : यह बहुत महत्वपूर्ण हैं मानव के लिए।

आचार्यश्री : इसके साथ दो सूत्र हैं, 1. उपभोग का परिणाम में इतने से ज्यादा का उपभोग नहीं करुंगा। स्वस्थ व्यक्ति और स्वस्थ समाज का निर्माण हो सकता हैं। इन तीनों में भी यह तीसरा सूत्र बहुत महत्वपूर्ण हैं कि धम का अर्जन अन्यायपूर्ण तरीके से न हो।

गीता एब्राहम : इसका तात्पर्य?

युवाचार्यश्री : वंचना नहीं, झूठ तोलमाप नहीं आदि।

आचार्यश्री : धनार्जन में अनैतिकता न हो।

गीता एब्राहम : आचार्यश्री! जो चोर, डाकू हैं, वे जितनी प्रार्थना करते हैं, न्याय नीति से चलने वाले उतने नहीं। क्या वे ज्यादा भगवान के करीब है?

युवाचार्यश्री : वह प्रार्थना स्वार्थ के लिए गलत कामों में सफल होने के लिए की जाती हैं।

आचार्यश्री : सही अर्थ में वह प्रार्थना है ही नहीं।

गीता एब्राहम : ओह!

आचार्यश्री : प्रार्थना वह हैं जो मन और आत्मा की पवि ता के लिए की जाए।

गीता एब्राहम : आचार्यश्री! यह सीमाकरण की बात [illegible]पक कैसे बने?

आचार्यश्री : इसमें मीडिया भी बहुत कार्य कर सकता है।

गीता एब्राहम : हां, क्यों नही।

आचार्यश्री : जैसे सामाचारपत्रो मे धनी लोगों की सूचि प्रकाशित करते हैं। पहले नम्बर का धनी कौन? जिसके पास है सबसे ज्यादा सम्पत्ति? यह सूचि आती हैं। इसकेविपरीत यह सूचि भी आनी चाहिए कि सबसे अधिक विसर्जन करने वाला कौन? मीडिया भी बहुत कार्य कर सकता हैं।

गीता एब्राहम : यह बहुत डिफिकल्ट वर्क हैं। आज पैसा इतना हावी हो गया हैं कि आदमी उससे परे कुछ सोच ही नही पा रहा हैं।

आचार्यश्री : इसीलिए समस्याएं जटिल बन रही हैं। समस्याओं का समाधान संग्रह में नहीं हैं। सीमाकरण और विसर्जन में हैं।

गीता एब्राहम : आचार्यश्री! आज की एक बड़ी समस्या हैं आतंकवाद। हम वजह लोग आतंकवाद से त्रस्त हैं। अपने अहिंसा यात्रा की। उसका कुछ निष्कर्ष अथवा असर आया है। आपको लगता हैं कि आपने कुछ किया हैं और कुछ बदला हैं?

आचार्यश्री : कुछ बदला है ?

गीता एब्राहम : हां।

आचार्यश्री : आतंकवाद या उग्रवाद हमेशा एक प्रकार का नहीं होता। एक आतंकवाद है भूखण्ड को लेकर। कश्मीर में जो उग्रवाद पनपा है, उसका कारण भूखण्ड है। एक आतंकवाद होता है। धार्मिक मुद्दों को लेकर। आतंकवाद का एक बड़ा कारण है साम्प्रदायिक कट्टरता। भूख भी आतंकवाद का एक बड़ा हेतु है। इसलिए यह कहा जा सकता है आतंकवाद एक प्रकार का नहीं है। सब प्रकार का आतंकवाद कम हुआ है, यह हम नहीं कह सकते। जहां तक साम्प्रदायिक कट्टरता और भूख का प्रश्न है, वहां उसमें अन्तर देखा है। अनुभव किया है, अहिंसा प्रशिक्षण के साथ रोजगार का प्रशिक्षण चला, इसलिए गांवों के लोग हिंसा को छोड़ शांति का जीवन जीने लगे।

गीता एब्राहम : इसका प्रशिक्षण कहां दिया गया ?

आचार्यश्री : झारखण्ड, बिहार के उन गांवों मे प्रशिक्षण का क्रम चला, जहां भूख के कारण लोग अपराधी बन रहे थे। अहिंसा और रोजगार प्रशिक्षण का परिणाम यह आया जो अपराधी थे, वे अच्छे मनुष्य बन गए।

गीता एब्राहम : साम्प्रदायिक कट्टरता...

आचार्यश्री : उसका प्रयोग गुजरात और महाराष्ट्र मे किया। ईसाई, मुसलमान आदि सभी साम्प्रदायिकों के लोग बहुत निकट आ गए। हमने कहा धर्म की बात मन्दिर, मस्जिद और चर्च मे करते हो, बाजार मे क्यों नही ? धर्म आपके जीवन व्यवहार म आना चाहिए। यदि आप साम्प्रदायिक अभिनिवेश के कारण लड़ते रहेगे तो विकास नही होगा। प्रगति का सूत्र है शांति और शांति का सूत्र हे अहिंसा, सौहार्द और सद्भाव। इस बात ने सबको प्रभावित किया।

गीता एब्राहम : आपने जो किया, क्या आप इससे संतुष्ट हे ?

आचार्यश्री : प्रारंभ अच्छा हुआ है, संतोष है। यह सबने स्वीकार किया कि समस्या को सुलझाने का यही सबसे अच्छा रास्ता है। जो कार्य हुआ है, वह क्वांटिटी की दृष्टि स थोड़ा ह। स्माल इज ब्यूटीफुल थोड़ा हुआ है वह सुन्दर हुआ है।

गीता एब्राहम : मेरी एक जिज्ञासा आपकी पदयात्रा से जुड़ी हुई है। मेरे मन म एक प्रश्न उठता है आप पैदल क्यो चलते है।

युवाचार्यश्री : हम जैन मुनि है।

गीता एब्राहम : यह मैं जानती हूं।

युवाचार्यश्री : यह व्रत अहिंसा के लिए है। वाहन यात्रा मे जीव हिंसा से बचा नही जा सकता।

आचार्यश्री : (मुस्कराते हुए) वायुयान से चलने वालों को भी नीचे आना चाहिए, धरती पर चलना चाहिए, पदयात्रा करना चाहिए। कहां क्या हो रहा है ? जनता की क्या स्थिति है, क्या समस्याए है, और क्यों है ? इस सचाई का पता चलता है।

गीता एब्राहम : इससे परमतल टच होता है।

आचार्यश्री : हां, जनता की समस्याओं को समझने और सुलझाने का अवसर मिलता है।

गीता एब्राहम : बस, एक अंतिम प्रश्न और आपको पदयात्रा में नेगेटिव सपोर्ट मिलता है या पोजिटिव ?

आचार्यश्री : दोनों। ज्यादा पोजिटिव रिपोर्ट मिलता है। नेगेटिव सपोर्ट कम मिलता है।
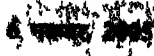
अतीन्द्रिय ज्ञान के धनी

वी. मांगीलाल छाजेड़, सिरियारी

तेरापंथ धर्मसंघ के दशम् आचार्य, असाधारण एवं अलौकिक व्यक्तित्व के धनी जो कि 85 वर्ष की जीवन यात्रा पूर्ण कर 86वें वर्ष में प्रवेश कर रहे हैं। उस महामानव का नाम है-आचार्य महाप्रज्ञ, प्रज्ञा और पुरुषार्थ, नेतृत्व और वात्सल्य, करुणा और प्यार, शासन और अनुशासन जैसे सर्व गुणों की खान का नाम है- आचार्य महाप्रज्ञ, जिनका समग्र जीवन स्वयं एक प्रयोगशाला है, उस जीवन का नाम है- आचार्य महाप्रज्ञ।

एक परम् दिव्य पुरुष जिसका वरण कर सम्मान खुद सम्मानित हो गए। समस्त अलंकरण उनके कर्तृत्व के समक्ष बौने लगते हैं, निःसंदेह आचार्य महाप्रज्ञ, आचार्य श्री तुलसी के सुयोग्य उत्तराधिकारी हैं और हमें आचार्य श्री तुलसी की सबसे बड़ी देन लोक महर्षि, अतीषय धारी आचार्य महाप्रज्ञ हैं, कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी।

जीवन की जटिल युगीन समस्याओं का समुचित समाधान उनके प्रवचनों में तैरता हुआ-नजर आता है, वे जिधर से भी गुजरते हैं, उजालों को बांटते हुए आगे बढ़ते हैं। जब गुजरात हिंसा की ज्वाला में धधक रहा था तब गंगा-सी शीतल धारा बन कर वहां पर शांति एवं अमन-चैन स्थापित करने में आपने अहम भूमिका निभाई, जो काम कोई राजनेता नही कर पाये, वह काम आपने अपनी अहिंसा यात्रा से कर दिया। सूरत के अधिवेशन के माध्यम से राष्ट्रपति डा. ए. पी. जे. अब्दुल कलाम जैसे देश के प्रथम नार्गरिक भी आपकी विद्वता एवं गुणों के कायल हो गए और आज दोनों साथ मिलकर देश की ज्वलंत समस्याओं के समाधान खोजने की दिशा में प्रयत्नरत हैं। महासूर्य, महाप्राण, जन-जन की अनन्त आस्था के केन्द्र, लोक महर्षि, पूज्य गुरुदेव आचार्य श्री महाप्रज्ञजी के पावन चरणों में उनके 86वें जन्म दिवस पर मेरा शत्-शत् वंदन-अभिनन्दन। संपर्क सूत्र-वी. मागीलाल छाजेड़, शासन सेबी.. अध्यक्ष श्री जैन श्वेताम्बर तेरापंथी सभा, सिरियारी-(पाली)। ❖

अनुप्रेक्षा

-आचार्य महाप्रज्ञ

अनुप्रेक्षा आदतों को बदलने का एक महत्त्वपूर्ण प्रयोग है। इसके द्वारा पुरानी आदतों में कांट-छांट और नई आदतों का निर्माण किया जा सकता हैं। इसका प्रमुख साधन है आत्म सूचन। निद्रा या हिप्नोटिक अवस्था में दिए जाने वाले सुझावों की अपेक्षा जागरुक अवस्था में दिए जाने वाले सुझाव शक्तिशाली होते है। शरीर के किसी भी अवयव में रोग है उसका संवादी मस्तिष्क का अवयव रोग ग्रस्त हो जाता है। यदि हम मस्तिष्क को प्रभावित करते है तो रोग नष्ट हो जाता है। ऑटो-सजेशन इसका सबसे उत्तम उपाय है। आचार्य महाप्रज्ञ तुम स्वस्थ रह सकते हो, पृष्ठ 6

धर्म को आचरण में धारण करें

✍ युवाचार्य श्री महाश्रमण

धर्म शब्द अनेक अर्थों में व्यवहृत होता है, जैसे कर्तव्य, सांप्रदाय, स्वभाव आदि। इस समय धर्म शब्द का प्रयोग आत्मशुद्धि अथवा चित्तशुद्धि के साधन के संदर्भ में किया जा रहा है। आत्मा का त्रैकालिक अस्तित्व है। वह सदा थी, है और सदा रहेगी। किसी शस्त्र के द्वारा उसका छेदन नहीं किया जा सकता, अग्नि के द्वारा उसे जलाया नहीं जा सकता। वह अविनाशी, अमर और शाश्वत है। आत्मा की शुद्धि, परमात्म स्थिति की प्राप्ति और मोक्ष के लिए जो अभ्यास और साधन की जाती है, वह धर्म है। जिसमें धर्म होता है, वह धार्मिक होता है। प्रश्न किया जा सकता है कि धार्मिक किसे कहा जा सकता?

एक आदमी रोज घंटाभर भगवान के नाम का जप करता है किन्तु व्यवसाय में बेईमानीपूर्ण व्यवहार भी करता है। क्या उसे धार्मिक कहा जाए? एक आदमी सत्यवादी है, जप में भी कुछ समय नियमित लगाता है, किन्तु कभी-कभी वेश्यागमन अथवा परस्त्रीगमन करता है। क्या उसे धार्मिक कहा जाए? एक आदमी नशामुक्त जीवन जी रहा है। ईमानदार भी हैं, किन्तु उसे क्रोध बहुत आता है। बहुत जल्दी क्रोधाविष्ट बन जाता है। क्या उसे धार्मिक कहा जाए? एक आदमी सत्य, ब्रह्मचर्य आदि संन्यास के नियमों का पालन करता है, किन्तु मांसभक्षण भी करता है। क्या उसे धार्मिक कहा जाए? एक आदमी ध्यान का अभ्यास करता है। ध्यान के शिविरों में भी भाग लेता है, किन्तु अपने व्यवसाय में धोखाधड़ी भी उसे करनी पड़ती है। क्या उसे धार्मिक कहा जाए? एक आदमी धार्मिक साहित्य के स्वाध्याय में काफी समय लगाता है किन्तु धूम्रपान भी करताहै। क्या उसे धार्मिक कहा जाए?

ये सभी प्रश्न एक विचारशील और खुले आकाश मे जीनेवाले व्यक्ति के मस्तिष्क मे पैदा हो रहे है। वह कौन सा मानदण्ड है, जिसके आधार पर हम किसी व्यक्ति को धार्मिक और किसी को अधार्मिक घोषित कर सकते हैं। पूर्णतया राग-द्वेष से मुक्त तो कोई वीतरागता तक पहुंचा हुआ व्यक्ति ही हो सकता है। यदि पूर्ण वीरतागता ही धर्म की कसौटी है, तब तो भगवान महावीर जैसे कुछ व्यक्ति ही इस दुनिया मे धार्मिक कहला सकते हैं। मैं इस समस्या को सुधी पाठकों के विचार के लिए असमाहित अवस्था में ही छोड़ रहा हूं। धर्म के अनेक वर्गीकरण प्राप्त होते है। धर्मग्रंथो मे इन वर्गीकरणो को पढ़ा जा सकता है। यहा हम धर्म के मात्र दो भेदों पर विचार करें- 1. समय सापेक्ष धर्म, 2. समय निरपेक्ष धर्म।

जिस धर्म की साधना के लिए समय लगाना पड़े, वह समय सापेक्ष धर्म है। जैसे पूजा करना, जप करना, स्वाध्याय करना, ध्यान का प्रयोग करना, धार्मिक प्रवचन सुनना आदि। इसी तरह जिस धर्म के लिए अलग से समय निकालने की अपेक्षा न हो, क्रियमाण कार्यों के साथ जो सहज हो जाय, वह समय निरपेक्ष धर्म है। जैसे-ईमानदारी के प्रति निष्ठा, मैत्री भाव, ऋजुता, क्षमाशीलता, संतोष आदि। एक शब्द में समता को समयकिनरपेक्ष धर्म कहा जा सकता है। प्रश्न हो सकता है कि दोनों में कौन सा धर्म किया जाए? समय

सापेक्ष धर्म अथवा समय निरपेक्ष धर्म? समय निरपेक्ष धर्म तो आचरणीय है। उसमें कोई विकल्प है ही नहीं। समय सापेक्ष धर्म समय निरपेक्ष धर्म की पुष्टि के लिए अपेक्षित होता है। ऐसा भी कहा जा सकता है कि समय सापेक्ष धर्म साधन है और समय निरपेक्ष धर्म उसका साध्य है।

गुरुदेव तुलसी के पास एक मंत्री आया और बोला-आचार्यजी! धर्म में मेरी रुचि तो है, किन्तु मुझे इसके लिए समय नहीं मिलता। यह मेरी समस्या है। गुरुदेव ने कहा..मंत्री जी! मैं ऐसा धर्म बताऊं, जिसके लिए अलग से समय निकालने की जरुरत ही नही पड़ेगी। वह धर्म है प्रामाणिकता। आप जो भी काम करें, उसके साथ नैतिकता, ईमानदारी को जोड़ दें। प्रामाणिकता का संकल्प धर्म ही है। यह समय निरपेक्ष धर्म है।

धर्माचार के द्वारा वर्तमान जीवन भी शांतिमय बन सकता है और परलोक में भी सद्गति हो सकती है। आदमी को वर्तमान के बारे में भी सोचना चाहिए और अपने भविष्य की भी चिन्ता करनी चाहिए। जो आदमी केवल वर्तमान को ही देखता है, भविष्य के बारे में दूरदृष्टि से नहीं सोचता है, वह व्यक्ति बहुत समझदार नहीं है। यदि कोई व्यक्ति प्रगाढ़ नास्तिक है, पुनर्जन्म को मानता ही नहीं है, उसको भी यह विचार करना चाहिए कि परलोक नही ही है, इस मान्यता का पुष्ट आधार उसके पास क्या है? हां, ठीक है कि पुनर्जन्म और परलोक है ही, इस बात को कोई आदमी स्वीकार न भी करे पर परलोक नहीं ही है, इस सिद्धांत को को किस आधार पर स्वीकार किया जा सकता है? इस स्थिति में परलोक का अस्तित्व अथवा पुनर्जन्म की अवधारा संदेह के घेरे में आ खड़ी हो जाती है, यानी परलोक हो भी सकता है और नही भी हो सकता। जब परलोक हो भी सकता है तो आदमी को इस अवधारणा के अनुसार अपना जीवन जीना चाहिए।

परलोक के विषय मेंसंदेह होने पर भी आदमी को पापकर्मों का परित्याग तो कर ही देना चाहिए, क्योंकि यदि परलोक नही है तो भी अशुभ को छोड़ने में कोई खास नुकसान की बात नहीं है और अगर परलोक है तो अशुभ को छोड़ने से यहां और वहां दोनों जगह लाभ है।

पुनर्जन्म को नहीं माननेवाले व्यक्ति को भी समाज की व्यवस्था को स्वस्थ रखने के लिए सदाचार धर्म का अनुसरण करना ही चाहिए। एक नास्तिक आदमी समय सापेक्ष धर्म-पूजा, उपासना, जप आदि न भी करें तो कोई खास बात नहीं, क्योंकि उसका इसमें विश्वास नहीं है, किन्तु समय निरपेक्ष धर्म-मानसिक संतुलन, खाद्य संयम, ईमानदारी, नशामुक्ति और भाईचारा रुप सदाचार का अनुसरण तो उसे करना ही चाहिए।

एक मंत्री एक बार बीमारी से ग्रस्त हो गया। उस समय उसने सोचा-मैं यदि स्वस्थ हो जाऊं तो भगवान का स्मरण करना शुरु कर दूंगा। संयोग बनना और वह स्वस्थ हो गया। स्वस्थ होने के बाद वह एक महात्मा के पास गया और प्रणाम करके बोला-महात्मन्! अब मैं कुछ समय अपनी आत्मा के कल्याण के लिए लगाना चाहता हूं। आप के कृपया मुझे कोई मंत्र बता दें ताकि उसके माध्यम से मैं भगवान् का स्मरण कर सकूं। महात्मा जी मंत्री जी को अच्छी तरह जानते थे। उनके कारनामों से बखूबी परिचित थे। वे बोले-मंत्रीजी! और मंत्र तो मैं फिर कभी बताऊंगा, एक मंत्र मैं अभी बता रहा हूं, वह है खूब नींद लेना। मंत्रीजी ने पूछा-महाराज! नींद लेना कौन सा मंत्र हुआ? महात्माजी ने मुस्कान के साथ कहा-भैया तुम्हारे लिए नींद लेना ही लाभदायी है क्योंकि जागते रहोगे तो घोटाले करोगे। इसलिए जितना सोये रहोगे, उतने घोटाले कम होंगे।

एक आदमी झूठ न बोलने का संकल्प कर लेता है, झूठ नहीं बोलता है। वह अनेक पापों से बच जाता है। इसलिए धर्म का प्रथम सूत्र-यथार्थ दृष्टिकोण और यथार्थ अभिव्यक्ति आदमी भय, हास्य, मजाक, क्रोध, लोभ आदि कारणों से मृषावाद का प्रयोग करता है और मृषावाद आदमी के चित्त को अशांत बनाता है। समाज की व्यवस्था को भी अस्वस्थ बनाता है। आदमी वर्तमान जीवन की शांति और स्वस्थ समाज की व्यवस्था के लिए यदि मृषावाद को छोड़ सके तो यह महनीय कार्य होगा, भले फिर वह पुनर्जन्म को न माननेवाला भी क्यों न हो। ◆

महात्मा महाप्रज्ञः व्यक्ति त्व और कर्तृत्व

✍ युवाचार्य श्री महाश्रमण

हर प्राणी जीवन जीता है, पर जीने-जीने में अंतर होता है- कहा गया है कि हिमालय पर्वत से नीचे की ओर लुढ़कने वाले पत्थरों में से कुछ पत्थर पूर्व की ओर चले जाते हैं और कुछ पश्चिम की ओर। पूर्व दिशा की ओर जाने वाले पत्थर गंगा आदि नदियों मे जा गिरते हैं। वे इतने चिकने, सुंदर और सौम्य रुप प्राप्त कर लेते है कि पूजा की तरह प्रतिष्ठित हो जाते हैं। जो पत्थर पश्चिम की ओर लुढ़कते हैं, वे चूर-चूर होकर रेत बन जाते हैं। मनुष्य की भी दो श्रेणियां कही जा सकती है। एक श्रेणी के मनुष्य रेत बनने वाले पत्थरों की भांति अपने जीवन की निरर्थकता हेतु अभिशप्त होते है ओर दूसरी श्रेणी के मनुष्य की गरिमामय व्यक्तित्व के धनी कहला कर अनेक जनों केआदर और आदर्श रुप बन जाते हैं। न मालूम कितनों को उनके जीवन से बोधपाठ मिलता है। आचार्य श्री महाप्रज्ञजी का जीवन इसी तरह के व्यक्तित्वों में से एक आदर्श जीवन है। आपके गरिमामय व्यक्तित्व के अनेक फलक है, पर प्रमुखतः दो पर यहां संक्षिप्त दृष्टिपात किया जा रहा है, ये हैं-वक्तृव्य और कर्तृत्व।

वक्तृत्व- कुछ साधु संत जन संपर्क से प्रायः मुक्त रहते हैं। अपनी व्यक्तिगत साधना मे ही वे लीन रहते हैं। कुछ मुनि अपनी साधना और जनसंपर्क, दोनों मे अद्‌भूत संतुलन बिठाकर अग्रसर होते हे। आचार्य श्री महाप्रज्ञजी दैनदिन प्रवचन से यद्यपि लंबे काल तक प्रायः मुक्त रहे हे। तब यह दायित्व परमपूज्य गुरुदेव तुलसी संभाला करते थे, परंतु विशिष्ट कार्यक्रमों, संगोष्ठियो आदि मे आपकी सहभागिता अवश्य हुआ करती थी। तब आपकी वक्तृत्व क्षमता से संभागीगण अभिभूत हो जाया करते थे। सस्कृत और प्राकृत भाषा पर समान अधिकार और अविराम संवाद हर किसी को आकर्षित करता रहा है। सन् 1954 में गुरुदेव तुलसी मुंबई मे चातुर्मासिक प्रवास कर रहे थे। वहां अमेरिका स्थित पेनीसल्वानिया विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग के प्रोफेसर डॉ ब्राउन आए हुए थे। भारतीय संस्कृति और इतिहास मे उनकी विशेष अभिरुचि थी। तभी गुरुदेव तुलसी के सान्निध्य में एक संस्कृत संगोष्ठी का आयोजन हुआ और डॉ. ब्राउन उसमें उपस्थित थे। श्री छगनलाल जी शास्त्री ने तब तेरापंथ धर्मसंघ में चल रही संस्कृत अध्ययन की गतिविधियों का परिचय दिया। उसी समय मुनि श्री चोथमल जी ने नव-रचित संस्कृत व्याकरम भिक्षुशब्दानुशासनम का परिचय दिया। आचार्य श्री महाप्रज्ञजी तब मुनिश्री नथमलजी थे और प्राकृत व्याकरण तुलसी मंजरी के बारे मे उन्होंने जानकारी दी। प्राकृत भाषा में अपनी रूचि प्रकट करते हुए डॉ. ब्राउन ने प्राकृत भाषा में भाषण प्रस्तुत करने का अनुरोध कि था। मुनिश्री नथमलजी ने इस अनुरोध को स्वीकार किया और प्राकृत भाषा में धारा प्रवाह वक्तव्य दिया। डॉ. ब्राउन द्वारा प्रदत्त कल्प सूत्र का रहस्य विषय पर आपने इंद्रव्रज, उपेंद्रवज्रा, उपजाति और

शार्दूलविक्रीडत छंदों में आशु कविताएं भी की। आचार्य श्री महाप्रज्ञजी के धारा प्रवाह भाषण और आशुकविता को सुनकर सभी मंत्रमुग्ध हो गए। डॉ. ब्राउन ने तो कहा- मेरे जीवन का यह पहला प्रसंग है, जब मैने प्राकृत में धाराप्रवाह भाषण सुना। जो आशुकविता मुनिश्री ने कही है, मुझे यदि अंग्रेजी में ऐसा करने के लिए कहा जाय तो मैं नहीं कर सकता। मै इस अनुकरणीय विद्याराधना से प्रभावित हुआ हूं। दर्शन में आपका गंभीर अध्ययन किससे छिपा है उसका प्रभाव भी आपके वक्तृत्व पर सांगोपांग पड़ा है। एक समय में गूढ़ दार्शनिक भाषा आपके वृकतत्व की पहचान बन गई थी। जब आपका वैदुष्यपूर्ण गूढ़ वक्तव्य होता तो आम जनता की उसमें अल्पांश रुचि ही रहती थी। अनेक बार लोग उठने की मुद्रा में हो जाते अथवा नींद लेत नजर आते। यह सब देख गुरुदेव तुलसी ने एक दिन कहा- तुम दर्शन की अपनी भाषा को कुछ सरसता और सामान्य स्तर पर लाओं ताकि आम जनता भी उसे समझ सके। इस इंगित अथवा निर्देश के पश्चात की स्थिति का चित्रण करते हुए स्वयं आचार्य श्री महाप्रज्ञजी लिखते हैं -मेरी नई यात्रा शुरु हुई। मैंने गूढ़ दर्शन की भाषा के साथ विधा ही नहीं, दर्शन की भाषा को भी कहानी की भाषा में कहना शुरु कर दिया। थोड़े समय बाद ही कुछ ऐसे हुआ कि लोग मुझे सुनने की मुद्रा में बैंठने लगे। फिर तो दर्शन की गंभीर चर्चा भी कहानी के रुप में सुनने लगे। पहले मैं कुछेक विचारकों के काम आता था, अब जनसाधारण के काम का हो गया हूं, ऐसा मे सोचता हूं। आचार्यप्रवर के प्रवचन से अनेकशः लोग लाभान्वित हुए हैं। दूरदर्शन पर आपके प्रवचनों का प्रसारण होने से के साथ दूरस्थ लोगों के लिए भी वह सलुलभ हो गया है। मेरी दृष्टि मे आपकी प्रवचन शैली में भाषा स्पष्ट और शुद्ध हैं, भाषा में सहज माधुर्य हैं, भाषा मे आरोह अवरोह प्रायः नही होता है। आपकी वक्तृत्व शैली प्रायः लयबद्ध चलती है। इसी तरह छोटी-छोटी कहानियों, घटनाओं का प्रयोग प्रचुरता से होता है। कभी-कभी कुछ कहानियों को कुछ दगगिनों के अंतराल से ही पुनरावृत होने का अवसर मिल जाता है। उपस्थित परिषद के अनुरुप विचार सामग्री प्रदान की जाती है। वर्तमान युग की समस्याओं पर भी श्रोताओं का ध्यान प्रमुखतः आकृष्ट किया जाता है। साथ ही साथ समस्याओ के संदर्भ मे धर्म की उपयोगिता की विवेचना तार्किक रुप में की जाती है जो हर वर्ग के लिए सर्वग्राह्य सिद्ध होती है। इसी के साथ बौद्धिक लोगों को भी आपका प्रवचन सारगर्भित खुराक देने वाला होता है। साधारण जन को भी पूरा पोषण प्राप्त होता है। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि आचार्यप्रवर का प्रवचन प्रायः हर एक जन मन को आकृष्ट एवं प्रभावित करने वाला होता है।

कृतत्व

आचार्य श्री महाप्रज्ञजी ने तीन उपासनाओं के द्वारा अपने कृतत्त्व को मुखर बनाया है। ज्ञानोपासना, आनंदोपासना और शक्ति उपासना। आपने ज्ञान की उपासना से ज्ञानावरकरणीय कर्म का विलय किया है और शक्ति की उपासना से अंतराय कर्म का विलय किया है। हम इन तीनो पर एक दृष्टि डालें।

ज्ञानोपसना

आपने ज्ञान की अविराम आराधना की है। आगमों, विभिन्न शास्त्रों का अनेक बार स्वाध्यायन किया है और अनेक रत्नों को प्राप्त किया है। श्री मद् जयाचार्य आगम स्वाध्याय करते और जब कभी उन्हें कोई बात नही मिलती तो वे अपने उत्तराधिकारी मुनिश्री मघराजजी से कहते - मघजी! आज एक नया रत्न मिला है। आचार्य श्री महाप्रज्ञजी ने विरासत में प्राप्त रत्नों और स्वयं द्वारा हासिल किए गए रत्नों को सहेजकर ही नही रखा, उन्हें भरपूर बंटवाने का निरंतर यत्न भी करते जा रहे हैं। आपने सैकड़ों पुस्तकों का निर्माण किया है आप के साहित्य ने प्रबुद्ध जनमानस को गहराई तक प्रभावित किया है।

ऐसे अनेक प्रसंग स्मरण हो रहे हैं।

आनंदोपासना

स्वाध्याय और ध्यान के द्वारा आपने जिस आनंद को प्राप्त किया है अथवा आनंद की उपासना की है। वह दुर्लभ है। गुरुदेव श्री तुलसी की प्रेरणा से आपने जैन योग पर वर्षों अनुसंधान किया। आधुनिक ज्ञान विज्ञान की अनेक महत्वपूर्ण शाखा-प्रशाखाओं से अनुस्यूत कर प्रेक्षाध्यान पद्धति के नाम से उसे प्रस्तुत किया। आपके इस अनुसंधान से धर्म का प्रायोगिक स्वरु प प्रकट हुआ हैं। आज के तनावग्रस्त और अशांत मानव समाज के लिए यह पद्धति उपयोगी सिद्ध हो रही है। शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक शांति, भाव शुद्धि, आध्यात्मिक विकास आदि विभिन्न स्तरों पर हजारों-हजारों लोग इस साधना पद्धति को अपनाकर लाभान्वित हो रहे हैं। आपने सिद्धांत और प्रयोग, दोनों पर बल दिया। प्रयोगहीन सिद्धांत या सिद्धांतहीन प्रयोग लक्ष्य तक नहीं पहुंचाता। प्रयोगों के माध्यम से आपने अध्यात्म के बीजोंको अंकुरित होने का अवसर दिया है और मानवीय चेतना को जाग्रत किया है। आपकी दिनचर्या में स्वाध्याय और ध्यान को प्रमुख रु प से देखा जा सकता है।

शक्ति उपासना

आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी ने शक्ति की उपासना और साधना के लिए दीर्घकाल तक अनेक मंत्रों की साधना की और अभी भी कर रहे है। जीवन में शक्ति का बहुत महत्व होता है। शक्तिशाली व्यक्ति ही दुनिया को कुछ दे सकता है, उसका भला कर सकता है और जनता से अपनत्व प्राप्त कर सकता है। शक्ति की उपासना सर्वत्र और सबको काम्य होती है। आचार्यश्री महाप्रज्ञजी के बहुमुखी कर्तव्य का गुरुदेव श्री तुलसी ने समय-समय पर मूल्यांकन किया है। इस श्रृखंला में सन् 1940 में आपका अग्रगण्य नियुक्त किया। सन्न 1944 में आपको साझपति बनाया। सन् 1966 मे निकाय सचिव के महत्वपूर्ण पद पर नियुक्त किया। सन् 1978 मे आपको 'महाप्रज्ञ' अंलकरण से सम्मानित किया। सन् 1979 में आपको अपना उत्तराधिकार मनोनीत किया। सन् 1986 में आपको जैनयाग क पुनरु द्धारक संबोधन से संबोधित किया गया। इस अवसर पर गुरुदेव श्री तुलसी ने कहा- 'मेरे जीवन की अनेक उपलब्धियों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण उपलब्धि हैं कि मैने एक योग्य और योग्यतर ही नही, योग्यतम उत्तराधिकारी को पाया है।' सन् 1994 में तेरापंथ की प्रचलित परंपरा से हटकर गुरुदेव श्री तुलसी ने अप्रत्याशित रु प से अपने आचार्य पदका विसर्जन करते हुए आपको आचार्य पद पर प्रतिष्ठित कर सबको हतप्रद कर दिया। आपकी यह अविराम यात्रा आपके कर्तत्व में उत्तरोत्तर विकास और निखार के मूल्यांकन की यात्रा भी है। सयंम पर्याय के पचहत्तर वर्ष तथा जीवनकाल के 86वे वर्ष मे प्रवेश के उपलक्ष्य में यह मंगल कामना स्वाभाविक ही है कि आपके वकृत्तव और कृतंत्व से जन-जन को दिशाबोध मिलता रहे- जैन भारती से सांभार ◆

विसर्जन

-आचार्य महाप्रज्ञ

ममत्व को छोड़ना विसर्जन हो गया। चाहे वह नदी के तीर पर डाल दें, चाहें जगंल में डाले, विसर्जन तो हो जाता है। अब दूसरा क्रम होता है वितरण का या व्यवस्था का। प्रश्न यहां आता है कि व्यवस्था किस प्रकार करू ? यह उसकी रु चि का मामला है। कोई चाहे किसी संस्था को दे, कोई चाहे अपने गांव में लगाएं, हास्पिटल में लगाए, शिक्षा क्षेत्र में लगाए। कहां देना है, यह वितरण और व्यवस्था का प्रश्न अपनी-अपनी रु चि पर है। विसर्जन में तो एक ही है, ममत्व को छोड़ देना– आचार्य महाप्रज्ञ संभव है समाधान, पृष्ठ 116

सृजनचेता क्रांतिकारी युगपुरुष

युवाचार्य महाश्रमण

तेरापंथ के नवमाधिशास्ता आचार्य तुलसी ने गाया है - प्रभो ! यह तेरापंथ महान। तेरापंथ धर्मसंघ आचार्य भिक्षु द्वारा संस्थापित है। आचार्य भिक्षु एक उच्च कोटि के आत्मार्थी साधक, कुशल संघ - संगठनकार एवं सृजनचेता क्रांतिकारी युगपुरुष थे। उद्भव से अब तक का लगभग ढाई सताब्दी का तेरापंथ का इतिहास शुद्धाचार और उच्चाचार की जन जन मे प्रतिष्ठा के अभियान का इतिहास है, धर्म के असाम्प्रदायिक स्वरुप को व्यावहारिक धरातल प्रदान करने का इतिहास है, अनुशासन को बहुमान देने का इतिहास है, मर्यादा को सम्मान देने का इतिहास है, सुव्यवस्था और संगठन शक्ति के संधान का इतिहास हैं। इस गौरवशाली और प्रेरक इतिहास के सृजन मे या तो आचार्य भिक्षु तथा उनकी उत्तरवर्ती का आज तक की नेतृत्व परंपरा से सभी आचार्यो का उनकी अपनी अपनी दृष्टि सोच, क्षमता एव रुचि के अनुसार महत्वपूर्ण योगदान रहा ही है। फिर भी उनमें से कुछ आचार्यों योगदान विशेष महत्वपूर्ण है, ऐसा कहने में कोई कठिनाई नहीं है।

धर्मसंघ के नवामाचार्य तुलसी अनेक दुर्लभ विशेषताओ से संपन्न व्यक्तित्व के धनी थे। धर्मसंघ के विविधमुखी विकास के उद्देश्य से उन्होने साधना, शिक्षा, साहित्य, कला, वक्तृत्व, प्रचार - प्रसार आदि क्षेत्रों में नए नए आयामो का उद्घाटन किया। सार्वजनिक व सार्वभौम संघ के व्यापक प्रसार, मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा तथा नैतिक जागरण के लिए उन्होंने आणुव्रत आंदोलन का प्रवर्तन किया। इस महत्त्वाकांक्षी कार्यक्रम के माध्यम से युग चिंतन व जन जीवन को सही दिशा में मोड़ने के लिए उन्होने भारतवर्ष के लगभग प्रान्तों की पदयात्रा की। उनके इस प्रयत्न से तेरापंथ धर्मसंघ को एक नई पहचान मिली। इस क्रम में उनके और भी अनेक अवदान तेरापंथ के नाम हैं। एक वाक्य मे कहा जाए तो उनका नेतृत्व - काल तेरापंथ धर्मसंघ के लिए विकास पर्व था। उनसे प्राप्त अवदानो और सेवाओं के प्रति उनकी कृतज्ञता ज्ञापित करते हुए धर्मसंघ ने उन्हें युगप्रधान आचार्य के विशिष्ट पद पर अभिषिक्त कर अहोभाव का अनुभव किया था। तेरापंथ के परम सौभाग्य को प्रकट करनेवाला वह एक अपूर्व पुण्य प्रसंग था। आचार्य श्री महाप्रज्ञ युगप्रधान आचार्य श्री तुलसी के सुयोग्य उत्तराधिकारी हैं। पर योग्यता सुयोग्यता पद और सत्ता की तरह उत्तराधिकार में प्राप्त नही होती। वह या तो निसर्गज होती हैं अथवा व्यक्ति को तप खप कर स्वयं ही उसे अर्जित करना होता हैं। आचार्य श्री महाप्रज्ञ ने अपने प्रभावी व्यक्तित्व, प्रखर कर्तृत्व एवं कुशल नेतृत्व से अपनी सुयोग्यता को सत्यापित किया हैं। न केवल तेरापंथ और जैन समाज में, अपितु पूरे भारतीय प्रबुद्ध समाज में आचार्य श्री महाप्रज्ञ का नाम एक मौलिक चिंतक, मूर्धन्य साहित्यकार, महान दार्शनिक एवं मनीषी संतपुरुष के रुप में बहुत सम्मान के साथ लिया जाता है। अपने महान अवदानों से तेरापंथ की तथा उसके माध्यम से दर्शन, धर्म, अध्यात्म, योग और भारतीय वाङ्मय की जो सेवा उन्होंने की है और कर रहे हैं, वह अद्वितीय

महत्वपूर्ण हैं। तेरापंथ, जैन-शासन, भारतीय समाज और इनसे भी आगे मानव जाति उनकी उपकृत है। आचार्य श्री महाप्रज्ञ सरस्वती के वरदपुत्र हैं। अपनी सधी हुई लेखनी से साहित्य की विभिन्न विधाओं में शताधिक ग्रंथो का निर्माण कर उन्होंने सरस्वती के भंडार को खूब भरा हैं। उनके बहुत से ग्रंथ जहाँ जन सामान्य की सोच, रुचि, आचार और व्यवहार को परिष्कृत कर स्वस्थ जीवन शैली का मार्ग प्रशस्त करने वाले हैं, तो अनेक ग्रंथ विद्वद् वर्ग के लिए पौष्टिक खुराक प्रदान करने वाले है। जैन और जैनेतर दोनों ही समाजों में उनके साहित्य पाठको की एक अच्छी खासी संख्या हैं। अनेक पाठक तो आतुरता से उनकी नई कृति की प्रतिक्षा करते ही रहते हैं। चौरासी वर्ष की उम्र में आचार्य पद के गुरुतर दायित्व का निर्वहन करते हुए और विभिन्न सार्वजनिक प्रवृतियों में संलग्न रहकर भी उनकी साहित्य साधना आज भी अपनी गति से चल रही हैं। कहना नहीं होगा की तेरापंथ धर्मसंघ की साहित्यिक प्रतिमा को तराशने में उनकी एक उल्लेखनीय भूमिका हैं।

आचार्य श्री महाप्रज्ञ एक प्रभावशाली प्रवचनकार हैं। यद्यपि प्रवचन करना उनकी जीवनचर्या क 'क सामान्य अंग तो आचार्य पद के दायित्व को संभालने के बाद बना है, पर विशेष कार्यक्रमों ,वचन वे एक सुदीर्घ अवधि से करते रहे है। सरस और सुबोध शैली में गहन तत्वों की प्रभावी ' 'ने उनके प्रवचन - कौशल की विशिष्टता है। जीवन की जटिल समस्याओं का समुचित समाधान उनके प्रवचनों में तैरता हुआ नजर आता है। इस माध्यम से उन्होंने प्रत्यक्ष - परोक्ष रुप से समाज की बहुत बड़ी सेवा की हैं, कर रहे हैं।

प्रेक्षाध्यान योग के क्षेत्र में आचार्य श्री महाप्रज्ञ का एक महत्वपूर्ण अवदान है। धर्म के प्रायोगिक धरातल देने का यह एक सफल उपक्रम हैं। आचार्य तुलसी के निदशानुसार वर्षो तक प्राचीन ग्रंथों पर आधृत होकर भी आधुनिकज्ञान-विज्ञान की अनेक शाखा ओं प्रशाखाओं से अनुस्यूत ह। आधुनिक शरीर विज्ञान चिकित्सा विज्ञान आदि की बहुत सी बातों का इसमे सुंदर समाहार हु आ हे। यही कारण है कि जन साम्यान्य की तरह ही, डॉक्टर, वैज्ञानिक, आदि बौद्धिक वर्ग को भी यह ध्यान प्रद्धति समान रुप से आकाषत कर रही हैं। भारत में तथा विदेशो में भी प्रति हजारों-हजारों लाग शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक शांति, भाव-शुद्धि, आवेग - नियंत्रण, वृत्ति परिस्कार, संस्कार शोधन आदि क रु प म इसक द्वारा लाभान्वित हो रहे है। शिक्षा जगत को आचार्य श्री महाप्रज्ञ ने जीवन विज्ञान क रु प म विद्यार्थीया के संतुलित/सर्वागीण व्यक्तित्व निर्माण का उपक्रम प्रदान किया है। इस उपक्रम क व्यापक प्रसार के गर्भ में इस उपक्रम ने शिक्षा जगत के अधिकृत ओर विशिष्ट लोगो को जिस ढंग स प्रभावित आर आकर्षित किया हैं, उससे समाज विकास की अनेक नई नई संभावनाएं प्रकट हुई ह। इस अवदान के लिए शिक्षा जगत आचार्य श्री महाप्रज्ञ का अत्यंत उपकृत हे।

अहिंसा समवाय की संकल्पना अहिंसक शक्ति के विधेयात्मक एवं क्रियात्मक प्रयोग क उनके अभिनव चिंतन को प्रस्तुत कर रही है। अहिंसा यात्रा के माध्यम से अहिंसा को राष्ट्रीय नीति क रु प मे अपनाने की सलाह दी। अहिंसा यात्रा के दौरान अनेक सफलताएँ मिली। आचार्य महाप्रज्ञ के लिए अहिसा राजनीतिक नारा नहीं है, जीवन व्रत है, ध्येय है, मिशन है। इस श्रृंखला मे कुछ और भी महत्वपूर्ण अवदानो की चर्चा की जा सकती हैं, जिनके माध्यम से आचार्य श्री महाप्रज्ञ ने तेरापंथ धर्मसंघ, जैन समाज, भारत राष्ट्र और मानव जाति की हितगवेषणा की हैं। यों तो ऐसे पुरुष पुंडरीक का पथ दर्शन प्राप्त होना पूरी मानव जाति, धार्मिक समाज, भारत राष्ट्र और जैन शासन सभी के लिए सौभाग्य एवं गौरव की बात है, पर तेरापंथ धर्मसंघ के लिए तो स्वयं को सौभाग्यशाली एवं गौरवान्वित अनुभव करने से भी अधिक महत्वपूर्ण उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करना है।

नई शताब्दी को बोधपाठ देने वाले आचार्य

साध्वीप्रमुखा कनकप्रभा

संसार मे तीन प्रकार के व्यक्ति होते है- आत्मद्रष्टा, युगद्रष्टा और भविष्यद्रष्टा। आत्मद्रष्टा व्यक्ति केवल अपने आपको देखते है, अपने बारे में सोचते है और उनकी समग्र गतिविधियाँ आत्मकेन्द्रित होती है। युगद्रष्टा व्यक्तियों की ऑखो के सामने एक पूरा युग रहता है। वे युग की स्थितियो का आकलन करते हैं, समस्याओं को देखते है और उनका समाधान भी प्रस्तुत करते है। भविष्यद्रष्टा व्यक्ति दूरगामी सोच रखते है, दूर दृष्टि से देखते है और आने वाले समय की पदचात को पहचान कर पहले ही सावधान हो जाते है। आध्यात्म के क्षेत्र मे आत्मदर्शन का सर्वाधिक महत्व है। भारत के ख्यातनामा ऋषि महर्षि आत्मसाक्षात्कार के लिए बड़ी बड़ी तपस्याएँ करते रहे है और उत्कृष्ट कोटि की साधना मे लीन रहे है। जो 'एग जाणइ से सव्व जाणइ' जो एक आत्मा को समग्र रुप से जान लेना है वह पूरे ब्रह्माण्ड को जान लेता है, इस सूक्त की प्रेरणा भी आत्मा पर केंद्रित है। आत्मा की पहचान अथवा आत्मोपलब्धि के बाद व्यक्ति पर होने वाली युगदर्शन की क्षमता सहज ही पुष्ट हो जाती है। इस दृष्टि से उसी युगद्रष्टा को प्रशस्त माना जा सकता है, जो परमार्थ की वेदिका पर खड़ा होकर युगबोध देता है।

युगबोध का सीधा संबध वर्तमान की गतिविधियो से है। जैन दर्शन का वर्तमान एक समय का होता है। समय काल की सबसे छोटी ईकाई है। उसको पकड़ पाना आम आदमी के लिए संभव नहीं है। इसलिए युग को परिभाषित करते समय सापेक्ष दृष्टकोण का उपयोग आवश्यक प्रतीत होता है। युगदृष्टा शब्द को सदर्भ मे युग का संबध एक विशेष कालखंड के साथ है, वैसा अवबोध हर एक के पास नही होता। युग को देखने व परखने वाली ऑख ही अलग तरह की होती है। उस ऑख का उपयोग करने वाला व्यक्ति ही युगद्रष्टा कहलाता हैं। भविष्यद्रष्टा के सामने कोई इयत्ता नही होती। वह आज के बारे में दिशाबोध दे सकता हैं, पाच वर्ष बाद घटित होने वाली घटनाओं की सूचना दे सकता हैं, पचास वर्ष पश्चात पैदा होने वाली समस्याओं का समाधान सुझा सकता है। और पांच सो वर्ष बाद मडराने वाले खतरो के बारे मे भी आग्रह कर सकता है। भावी को देखने और समझने के अनेक साधन हो सकते है। सब साधनों की अपनी सीमाएँ है। भविष्य का यथार्थ दर्शन तो आत्मज्ञान के सहारे ही सभव हैं।

आत्मद्रष्टा ऋषि - कुछ व्यक्ति आत्मद्रष्टा होते हैं, युगद्रष्टा और भविष्यद्रष्टा नहीं होते। कुछ व्यक्ति युगद्रष्टा होते है, आत्मद्रष्टा और भविष्य द्रष्टा नहीं होते हैं। कुछ व्यकि भविष्यद्रष्टा होते हैं, युगद्रष्टा और आत्मद्रष्टा नही होते। कुछ व्यक्ति आत्मद्रष्टा और युगद्रष्टा होते है, पर भविष्य दर्शन की क्षमता नही रखते। कुछ व्यक्ति युगद्रष्टा और भविष्यद्रष्टा बन जाते हैं, पर आत्मा को विस्मृत कर देते है। ऐसे व्यक्ति विरल ही होते हैं, जिनमे युगपत तीनों दर्शन समाहित रहते है। आज ऐसे व्यक्तियों की अपेक्षा है जो आत्मद्रष्टा,

युगद्रष्टा और भविष्यद्रष्टा एक साथ हो। तेरापंथ धर्मसंघ के दसम अधिशास्ता आचार्य श्री महाप्रज्ञ ने बचपन में अंतर्द्रष्टा बनने का सपना देखा और वे अष्टमाचार्य श्री कालूगणी की सन्निधि में पहुंचे। पूज्य कालूगणी ने बालक को देखा, परखा और योग्य समझकर अपनी शरण में ले लिया। उनके इकहरी शरण की व्यक्ति को सर्वथा निश्चिन्त बनने वाली थी। वैसी स्थिति में दोहरी शरण पानेवाला व्यक्ति कितना सौभाग्यशाली होता है, यह कल्पना ही सुखद और रोमांचक है। महामनस्वी आचार्य श्री कालू और मुनि तुलसी के अनुशासन संवलित स्नेहिल संरक्षण में महाप्रज्ञजी के मुनि जीवन की यात्रा प्रारंभ हुई। उस समय उनकी पहचान मुनि नथमलजी नाम से होती थी। छह सात वर्ष का वह समय उनके व्यक्ति विकास के लिए बुनियादी समय था। तब तक उन्होने एक मेधावी छात्र के रुप में अपनी पहचान बना ली थी। कालूगणी का महाप्रयाण और मुनि तुलसी का आचार्यपद पर आरोहण ये दो घटनाएँ एक साथ घटित हुई। महाप्रज्ञजी को अकेलापन महसूस हुआ। वे कुछ मायूस हो गए। आचार्य तुलसी की पारदर्शी आँखो ने उस मायुसी को देखा और उनके टूटते हुए दिल को थाम लिया। अपने विद्यागुरु में दीक्षागुरु की छवि पाकर मुनि नथमल जी का मन आश्वस्त हुआ। उन्होने बिखरते हुए उत्साह को सहेजकर फिर एक यात्रा शुरु की और सात वर्षो में मध्यवर्ती मंजिल तक पहुंच गए। संसार को उनकी प्रतिभा से परिचित होने का मौका मिला।

युगद्रष्टा मनीषी आचार्य श्री तुलसी महान युगद्रष्टा थे। उन्होंनें उपनी इस अर्हता को उन व्यक्तिओं मे संप्रेषित करने का प्रयास किया, जो उन्हें उपयुक्त पात्र प्रतित हुए। मुनि नथमल जी जबसे उनके पास आए, दोनो मे अकल्पित अद्वैत स्थापित हो गया। उस अद्वैत का लाभ अनायास ही मुनि नथमलजी को मिल गया। आचार्य श्री अपने हर चिंतन और विशे, क्रियाकलापो के साथ उन्हें जोड़ते चले गए। उनकी प्रतिभा का स्फुरण पहले ही हो चुका था। नई संभावनाओ के आकाश मे कर्तृत्व के सतरंगे इंद्रधनुष खिलाने का अवसर पाकर मुनि नथमलजी के जीवन की दिशा बदल गई। उनके वैयक्तिक जीवन मे संघीय गतिविधियों को प्रवेश हो गया। संघ के लिए सोचने और सुचिंतित योजनाओं को क्रियान्वित करने में उनकी शक्ति और श्रम का नियोजन होने लगा। जीवन में उसी पड़ाव पर युगीन सदर्भो से आमना सामना हुआ। समसामयिक विषयो को पढ़ने और युगभाषा में लिखने की भावना ने अंगड़ाई ली। एक और नई यात्रा का प्रारभ हो गया। उस समय मुनि नथमलजी की प्रवृतियों पर प्रश्नचिन्ह भी लगे, किंतु गुरु के अगाध विश्वास ने वहां पूर्णविराम लगा दिया। उस विकास यात्रा मे उनका युगबोध परिपक्व हो गया। आगे से आगे उनकी क्षमताएँ उजागर होने लगी और वे अपने युग के प्रतिनिधि चिंतक एवं दार्शनिक के रुप में प्रतिष्ठित हो गए। एक युगद्रष्टा मुनि संत का मार्गदर्शन पाने की प्रतिस्पर्द्धा खड़ी हो गई।

भविष्यद्रष्टा संत - आचार्य श्री तुलसी कई बार कह ते थे कि हमारे महाप्रज्ञजी अतीन्द्रिय ज्ञानी हैं। इनकी अंतर्दृष्टि जागृत है। अतीन्द्रियज्ञानी या अंर्तदृष्टि संपन्न व्यक्ति ही भविष्यद्रष्टा हो सकता है। ज्योतिषी लोग भविष्यवाणियां करते हैं। उनके भविष्यज्ञान का आधार हस्तरेखाएं हो सकता है। कुछ व्यक्ति आकृति विज्ञान के आधार पर भी व्यक्ति के भविष्य संबंधी सुचनाएँ दे देते हैं। मौसम विज्ञानी मौसम के बारे मे भविष्यवाणियाँ करते रहते हैं। उक्त श्रेणी के विशेषज्ञ व्यक्तियों द्वारा संकेतित बातें सत्य हो सकती हैं, किन्तु उनकी सत्यता असंदिग्ध नही होती। यही कारण है कि ज्योतिर्विदो और मौसम वैज्ञानिकों की सूचनाओं पर पूरा भरोसा नहीं किया जा सकता। जैन शास्त्रों में ज्ञान के दो प्रकार बताए गए हैं- प्रत्यक्ष और परोक्ष। केवल ज्ञान, मनःपर्यवज्ञान और अवधि ज्ञान को प्रत्यक्ष ज्ञान माना गया हैं। प्रत्यक्ष ज्ञानी द्वारा दृष्ट और ज्ञात तत्व में किसी प्रकार का संदेह नहीं रहता। मतिज्ञान और श्रुतज्ञान परोक्ष ज्ञान हैं। प्रत्यक्ष ज्ञान के साथ इनकी कोई तुलना नहीं हैं। फिर भी ज्ञान की निर्मलता-निर्मलतम में बहुत अंतर रह सकता है। इसी दृष्टि से श्रुतज्ञानी

को श्रुतकेवली कहा जाता है। अतिशय ज्ञान, विशिष्ट श्रुतज्ञान [illegible] ध्यान की शक्ति से भविष्य दर्शन की संभावना को अस्वीकार नहीं किया जा सकता। आचार्य श्री [illegible] एक मनीषी संत [illegible] आध्यात्मिक योगी हैं। चमत्कारों या भविष्यवाणियों में उलझना उनका उद्देश्य [illegible]। [illegible] आगम [illegible] रहस्यों की खोज और व्यक्तित्व निर्माण की नई दृष्टियों का साक्षात्कार [illegible] प्रमाण हैं। साइंस और टेक्नोलॉजी की यह शताब्दी ऐसे महान आचार्य को पाकर [illegible]

व्यक्ति एक रुप अनेक आचार्य श्री महाप्रज्ञ एक व्यक्ति हैं, पर उनके [illegible]। कभी वे आचार्य भिक्षु के विचारों को युगीन भाषा में प्रस्तुति देते नजर आते हैं तो कभी आचार्य तुलसी [illegible] मुखर होते हैं। कभी उनका दार्शनिक रुप सामने आता है तो वे कभी वे महान [illegible] के रुप में उभरते हैं। कभी संस्कृत भाषा में उनका आशुकवित्व मुखरित होता है तो कभी वे हिंदी [illegible] संत बन जाते हैं। कभी वे कुशल अध्यात्म की भूमिका का निर्वाह करते हैं तो कभी आगम संपादन की गहराइयों में पैठते हुए दिखाई देते है। कभी वे युगीन समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करते हैं तो कभी जीने की कला का बोध देते हैं। कभी वे ध्यान के प्रयोग सिखाते हैं तो कभी अहिंसा का प्रशिक्षण देते हैं। कभी वे उच्च कोटि के विद्वानों से घिरे रहता है तो कभी आम आदमी के सुख दुख की बातें सुनते हैं। कभी वे उच्च कोटि के शिक्षाविदों से मंत्रणा करते हैं तो कभी विद्यार्थीयों को प्रतिबोध देते हैं। कभी वे प्रशासनिक कार्यों में व्यस्त रहते हैं तो कभी आँखे मूँदकर अंतर्जगत में झाकतें हैं और भी न जाने उनके कितने रुप हैं, उन सबको देखना और समझना किसी के वश की बात नहीं हैं। समय की मांग जैन आचार्यों की एक लंबी परंपरा है। भगवान महावीर के बाद अब तक हजारों वर्षो की उस परंपरा में ऐसे देदीप्यमान नक्षत्र चमक रहे हैं, जिन्हों ने अपने विशिष्ट अवदानों से युग को उपकृत किया हैं और जैनशासन की प्रभावना की हैं। युगप्रधान एवं प्रभाकर आचार्यों की पट्टावलियों का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि उन महान् आचार्यों ने अपनी साधना, विद्या एवं अन्य विशेषताओं से अपना विशिष्ट इतिहास बनाया हैं। जैन परंपरा में तेरापंथ धर्मसंघ का अपना महत्वपूर्ण स्थान हैं। आचार्य भिक्षु तेरापंथ के प्रथम आचार्य हुए। उनकी आत्माभिमुखता, कष्टसहिष्णुता, धृति और अनूठी सूझबूझने जो इतिहास रचा हैं, उसे पढ़नेवाले चमत्कृत हुए बिना नहीं रह पाते। आचार्य जय ने संगठन के सुदृढ़ीकरण, व्यवस्थाओं के क्रियान्वयन और बहुआयामी साहित्य सृजन में अपनी विलक्षण मेधा का भरपूर उपयोग किया हैं। आचार्य तुलसी के युग को तेरापंथ का स्वर्णिम युग कहा जा सकता हैं। उन्होनें संघ में अनेक नए क्षितिज खोले। उनका युग विशिष्ट उपलब्धियों का युग रहा हैं। जिस धर्मसंघ के सैद्धांतिक मान्यताओं का दो सौ वर्षो तक जमकर विरोध किया गया, उसकी जुड़ो को काटकर आचार्य श्री ने तेरापंथ को उस ऊंचाई तक पहुंचा दिया, जहा वह जैन धर्म की पहचान बनकर लोक चेतना को प्रभावित कर रहा है। तेरापंथ के धर्मसंघ के नौ आचार्यों की समृद्ध विरासत में स्वामी आचार्य महाप्रज्ञ आज के वैज्ञानिक युग में धर्म की वैज्ञानिकता प्रमाणित कर रहे हैं। उनके पास लोककल्याणकारी कार्यों की एक लंबी सूची हैं। अणुव्रत, प्रेक्षाध्यान और जीवन विज्ञान की त्रिपदी युगीन समस्याओं के समाधान की अमोघ प्रक्रिया हैं। आध्यात्मिक एवं धार्मिक सिद्धांतों के अन्वेषण, प्रशिक्षण और प्रयोग के माध्यम से वे धर्म की तेजस्विता और व्यावहारिकता का प्रमाण प्रस्तुत कर रहे हैं। जैन आगमों के संपादन और विवेचन का जो महान अनुष्ठान वे कर रहे हैं यह कार्य ही उनको युगप्रधान आचार्यों की श्रेणी में लाकर प्रतिष्ठित करने वाला हैं। आगम संपादन कार्य में उनकी प्रज्ञा जिस गहराई में उतरकर दिव्य रत्नों को बटोर रही हैं, ऐसा कार्य शताब्दियों सहस्राब्दियों के अंतराल में कभी कभार हो पाता हैं। पवित्र प्रज्ञा के प्रयोक्ता युग प्रधान आचार्य श्री महाप्रज्ञ आनेवाली नई सदी को अध्यात्म का बोधपाठ पढ़ाएँ, यह समय की मांग हैं।

मुझे महाप्रज्ञ से मिलकर नया प्रकाश और नई दृष्टि मिली : डॉ. कलाम

मुनि धनंजयकुमार

दिनाक 14 फरवरी को महामहिम राष्ट्रपति श्री ए पी जे अब्दुल कलाम न आचार्य महाप्रज्ञ के दर्शन किए। राष्ट्रपलि महोदय मुंबई हवाई अडडे से सीधे पूज्यवर क दर्शनार्थ आए। रात्रि म लगभग नौ बजे राष्ट्रपति ने तेरापंथ भवन मे प्रवेश किया और वहां से सीधे आचार्य श्री महाप्रज्ञ क चरणा को श्रद्धा एव भक्ति भरे ह्रदय से स्पर्श किया। राष्ट्रपति के साथ हुए इस वार्तालाप म युवाचाय महाश्रमण, मुनि सुखलाल, मुनि किशनलाल, मुनि महन्द्र कुमार, मुनि धनंजयकुमार, मुनिकुमारश्रमण सभागी बन। इस वार्तालाभ में राष्ट्रीय एवं आंतरराष्ट्रीय समस्याओं के साथ साथ अध्यात्म, विज्ञान, पर्यावरण, शिक्षा, अहिंसा, शांति आदि विषयों पर गभीर मत्रणा हुई। वार्तालाप की संपन्नता क बाद राष्ट्रपति जैसे ही खड़े हुए, अनेक बल मुनि कक्ष मे आ गए। राष्ट्रपति महोदय बाल मुनियो क बीच चले गए। मुनि मुदित, मुनि महावीर, मुनि मनन आदि के प्रसन्न चहेरों पर दृष्टिपात करते हुए राष्ट्रपति न पूछा कि आप बहुत प्रसन्न रहेते है। आपकी प्रसन्नता का रहस्य क्या है ? बालकुमार मुदित कुमार न कहा कि मे साधु हूं, इसलिए प्रसन्न हूं। बालमुनि मननकुमार ने कहा कि यह आचार्यवर के आशीर्वाद का फल है। बालमुनियो के इस उत्तर से प्रभावित राष्ट्रपति ने एक अंग्रेजी कविता भी सिखाई। राष्ट्रपति का मुख प्रसन्नता से दमक रहा है। राष्ट्रपति आचार्यवर के कक्ष से बाहर हॉल मे आए। समग्र साधु समुदाय को प्रणाम किया। वहां से निकलते ही मीडियां के लोगों ने घेर लिया, पत्र कारों का सवाल था-आपको यहा क्या मिला ? राष्ट्रपति ने एक शब्द में उत्तर दिया Enlightement and New Energy नया प्रकाश और नई ऊर्जा।

देश के प्रथम नागरिक की विनम्रता ने सबके दिल को छू लिया। [illegible] श्री महाप्रज्ञ के सामने विभिन्न समस्याओं पर केन्द्रित रहा। उसे महत्वपूर्ण एवं [illegible] वार्तालाप को अविकल रूप से प्रस्तुत किया जा सकता है। राष्ट्रपति श्री ए.पी.जे. अब्दुल कलाम [illegible] दर्शन कर बहुत प्रसन्नता हुई। आपका स्वास्थ्य कैसा है?

आचार्यश्री अच्छा है। राष्ट्रपति आपका श्रम और संयम निरंतर चल रहा है। आचार्य श्री जी, पैर तो थक गए हैं। राष्ट्रपति आचार्य श्री! मैंने आपकी पांच पुस्तकें पढ़ी "द मिरर ऑफ [illegible]", 'इकोनोमिक्स ऑफ महावीर', 'आई एण्ड माइन' इसमें बहुत वैज्ञानिक विश्लेषण है। आचार्य श्री विज्ञान तो आपका विषय है। राष्ट्रपति आपने इनमें सोलह मूल्यों की चर्चा की है। नैतिक, व्यक्तिगत, सामाजिक और राष्ट्रीय मूल्यों के विकास पर बल दिया है।

आचार्यश्री हां एक, नागरिक में उन मूल्यों का विकास होना अपेक्षित है। राष्ट्रपति (विस्मय से) आचार्यजी! आप इतना कब लिखते हैं?

आचार्यश्री (मुस्कराते हुए) मैं सोचता नही हूं। अचिन्तन की भूमिका में रहता हूं। उससे जो विचार प्रस्फुटित होते हैं, वह लिखा देता हूं। मेरा विश्वास है यदि एकाग्रता हो तो आठ घंटे का काम तीन घंटे में किया जा सकता है। राष्ट्रपति मैं इससे पूर्ण सहमत हूं। (एक नया प्रश्न प्रस्तुत करते हुए) आचार्यश्री! आपके साहित्य में एकांत बनाम अनेकांत का विशद विवेचन है। अनेकांत को जैसा मैंने समझा है। अनेक लोग एक साथ कार्य करते है, टीम वर्क करते हैं। एकांत व्यक्तित्व दृष्टि है। क्या मैं सही सोच रहा हूं। आचार्यश्री भिन्न विचार और भिन्न चिन्तन हो सकता है, किन्तु उनमें विरोध न होकर सह-अस्तित्व होना चाहिए। दो विरोधी चिन्तन धाराओं मे भी सामंजस्य का सूत्र खोला जा सकता है। राष्ट्रपति लोग एकांतवादी बन रहे हैं। एकांत दृष्टिकोण को कैसे मिटाया जाए? अनेकांत की ओर कैसे मोड़ा जाए? महावीर का महत्वपूर्ण दर्शन है अनेकांत। इसको कैसे आगे बढ़ाएं? आचार्य श्री सबसे बड़ी समस्या है भाव (इमोशनल प्रोब्लेम) की। राष्ट्रपति क्या अमेकांत दृष्टिकोण में इमोशन्स बाधा है? आचार्यश्री हां, नकारात्मक भाव समस्या की जड़ है। उससे एकांत दृष्टि पैदा होती है और वही झगड़े का कारण है। अमेकांत दृष्टिकोण के विकास के लिए इस पर ध्यान देना अपेक्षित है कि व्यक्ति अपने इमोशन (भाव) पर नियंत्रण कैसे करें? इसका अभ्यास जरुरी है। हमारे मस्तिष्क का जो राईट हेमिस्फियर है, उसको हम जागृत कर सकें तो ये झगडे समाप्त हो सकते हैं। राष्ट्रपति आप जो कह रहे हैं, वह सही है, लेकिन हम करे कैसे? क्या ये बौद्धिक विकास से ही हो सकता हैं? आचार्यश्री बुद्धि से लेफ्ट हेमिस्फियर (बायां पटल) जागृत होता है। मस्तिष्क के राइट हेमिस्फियर को जागृत करने के लिए ध्यान का प्रयोग, नाड़ीतंत्रीय संतुलन का प्रयोग जरुरी हैं। राष्ट्रपति क्या ध्यान के संबंध से यह संभव है? आचार्यश्री हां, यह नियम है कि शरीर के जिस भाग पर ध्यान करते हैं, वह विकसीत हो जाता है। जहां प्राणधारा का प्रवाह जाता है, वह भाग सक्रिय हो जाता हैं। अभी तक मेडिकल साइंस शरीर की सीमा तक, मस्तिष्क की सीमा तक पहुंचा है। प्राण तक नहीं पहुंच पाया है।

राष्ट्रपति हां, प्राण तक नहीं पहुंचे हैं। आचार्यजी! विद्यार्थीयों में बहुत सारी समस्याएं जन्म ले रही हैं। तनाव और डिप्रेशन (मानसिक अवसाद) से ग्रस्त है आज का विद्यार्थी। अनेक छात्रों का दिमाग भी विकसित नही है। मेरे पास एक शोध छात्र शोध कार्य कर रहा हैं। शोध का विषय है- अविकसीत मस्तिष्क वाले बच्चे एक चुनौती है। उन्हें कैसे ठीक करें? इस संदर्भ में हमने कुछ प्रयोग किए। विकसित और अविकसित बच्चों के दो ग्रुप बनाए। उन सबकी एम. आर. आई. कराई। हमने जानने का प्रयत्न किया कि उनकी शरीर रचना में क्या कोई अंतर है? शरीर रचना में कोई अंतर नहीं मिला, न्यूरोन कनेक्शन में भी अंतर मिला। अविकसित बच्चों के लेफ्ट हेमिस्फियर में न्यूरोन की संख्या कम पाई गई। न्यूरोन

[illegible] भी साथ थे। क्या हम [illegible] की कमी को पूरा कर सकते हैं? शरीर, मन, बुद्धि और चेतना इन चारों को कैसे जगाएं? इस विषय में आपका क्या निर्देश है। आचार्य श्री इसके साथ प्राण और भाव को और जोड़ दें। राष्ट्रपति आप ठीक कह रहे हैं। आचार्यजी! विदेह जनक और महर्षि अष्टावक्र अध्यात्म की उच्च भूमिका पर पहुंचे थे। मैं चेतना हूं और चेतना मैं उनके इस कथन का तात्पर्य क्या है?

आचार्य श्री हमारे मस्तिष्क के तीन विभाग हैं (1) हायर कान्शियस माइंड (2) अनकॉशियस माइंड (3) कॉशियस माइंड। महर्षि अष्टावक्र और विदेह जनक हायर कॉशियस की भूमिका पर थे। राष्ट्रपति क्या इससे उनका संपर्क हो गया? आचार्यजी प्रज्ञा प्रतिभ ज्ञान अथवा अंतर्दृष्टि का जागरण हो गया। राष्ट्रपति हम इस कैसे पहुंचे? क्या महावीर सुपर कॉशियस कर पहुंचे? आचार्य श्री जैन साधना पद्धति का एक प्रचलित शब्द हैं, वितराग। राष्ट्रपति (अपनी डायरी में इस शब्द को नोट कर) वीतराग का तात्पर्य...? आचार्य श्री राग और द्वेष से परे जो हैं वह वीतराग हैं। वीतराग की साधना हायर कॉशियस पर ले जाती हैं। राष्ट्रपति सबसे बड़ी समस्या ईगो की हैं। मैं और मेरा इसको आदमी के दिमाग से कैसे निकालें?

आचार्य श्री मस्तिष्क का एक जो आगे का हिस्सा (फ्रंटल लॉब) हैं, वह इमोशन का क्षेत्र है। यहां ध्यान का प्रयोग करने से ईगो कम होते चले जाते हैं और पोजिटिव इमोशन (सकारात्मक भाव) सक्रिय हो जाते हैं। मस्तिष्क का एक भाग हैं लिम्बिक सिस्टम, उसका एक भाग हैं, हाईपोथेलमस। हमारे हायर कॉशियस माइंड से जो वाईब्रेशन (प्रकंपन्न) आते हैं, वे हाईपोथेलेमस को प्रभावित करते है। एक विद्यार्थी या बड़ा आदमी, उसको बदलना चाहते हैं तो हाईपोथेलेमस पर ध्यान कराएं। बदलाव निश्चित आएगा। (आचार्य ने ज्योति केन्द्र पर अंगुली रखते हुए कहा) मस्तिष्क के उस केन्द्र पर सफेद रंग का ध्यान कराते हैं, इससे क्रोध आदि आवेश शांत हो जाते हैं।

राष्ट्रपति - आचार्यश्री! आज की समस्या यह हैं इतना बड़ा राष्ट्र हैं, उस पर अहंकार और ममकार ही राज कर रहा हैं। आचार्य श्री जो ट्रेनिंग आए हुए हैं इसलिए यह समस्या नहीं आएगी। राष्ट्रपति बच्चों से ही ट्रेनिंग को शुरु करना होगा। आचार्य श्री हां, आपका और हमारा विचार एक है। यदि वर्तमान पीढ़ी पर प्रयत्न करें तो भावी पीढ़ी अच्छी बन सकती हैं। (आचार्यवर ने झाबुआ जिले में चल रहे प्रयोगों का उल्लेख करते हुए कहा) झाबुआ जिले के आदिवासी अंचल में जीवन विज्ञान के प्रयोग शुरु हुए हैं। उस प्रशिक्षण के उत्साहवर्द्धक परिणाम आए है। राष्ट्रपति झाबुआ जिला, जो मध्य प्रदेश में है और बहुत सुन्दर हैं? आचार्य श्री हां सर्वोदयी विचारक बालविजयी ने वहां चल रहे प्रयोगों को निकटता से देखा। उन्होंने कहा यदि पांच वर्ष तक लगातार ये प्रयोग चलते रहे तो कायाकल्प हो जाएगा। देश का यह प्रथम जिला बन जाएगा। बच्चों में जो सकारात्मक बदलाव आया है, वह आश्चर्यकारी हैं।

राष्ट्रपति आप क्या प्रयोग कराते हैं? आचार्य श्री ध्यान का प्रयोग कराते है, जिससे इमोशन पर कंट्रोल करना सीख जाएं। आसन-प्राणायाम, प्रेक्षा, अनुप्रेक्षा और संकल्प के प्रयोग कराए जाते है। इनसे पिच्यूटरी और पीनियल ग्लैण्ड का जागरण होता है, और एड्रीनल ग्लैन्ड पर नियंत्रण होता है। केवल सैद्धांतिक नहीं, प्रायोगिक प्रशिक्षण दिया जाता हैं। प्रशिक्षण का सारा वैज्ञानिक दृष्टि से हो रहा है। राष्ट्रपति (मुस्कराते हुए) और वह अध्यात्म के द्वारा हो रहे है। आचार्यश्री हमारे गुरु तुलसी कहते थे कि आध्यात्मिक वैज्ञानिक व्यक्तित्व का निर्माण आज की सबसे बड़ी अपेक्षा है। कोरा अध्यात्म बहुत उपयोगी नहीं होता और कोरा विज्ञान खतरनाक हो सकता हैं। इसलिए ऐसे व्यक्ति का निर्माण जरुरी है, जो आध्यात्मिक और वैज्ञानिक दोनों हो। राष्ट्रपति अध्यात्म और विज्ञान दोनों जुड़े हुए है।

आचार्यश्री - वस्तुतः विज्ञान और अध्यात्म दो नहीं है। राष्ट्रपति हां आचार्यश्री विज्ञान भी सत्य की खोज के लिए है और अध्यात्म भी सत्य की खोज के लिए है। राष्ट्रपति एक आध्यात्मिक वैज्ञानिक हो सकता है और एक वैज्ञानिक आध्यात्मिक हो सकता है। आज समस्या दूसरी है और वह यह है कि एक धार्मिक आध्यात्मिक कैसे बने? आज व्यक्ति धार्मिक है पर आध्यात्मिक नहीं है। आचार्यश्री आप ठीक कह रहे हैं। एक समय था जब धर्म साधकों के हाथ में था। आज वह धर्माधिकारियों के हाथ में आ गया है। महावीर, बुद्ध, ईसा, नानक, जरथुस्त आदी सब साधक थे। आज उनके नाम पर केवल धर्म बन सत्ता प्रमुख हो गई। राष्ट्रपति भारत में हजारों लाखों लोग धर्म को मानते हैं। उनमें परिवर्तन कैसे करें? उन्हें आध्यात्मिक कैसे बनाएं?

आचार्य श्री यह बहुत कठिन हैं। यदि विद्यार्थीयों से प्रारंभ करें, उनकी धारणा को बदलें तो कुछ सफलता मिल सकती हैं। हम इस दिशा में काम कर रहे हैं, आपके दो चार प्रतिनिधि साथ रहें तो काम काफी आगे बढ़ सकता हैं। राष्ट्रपति मैं इन दो वर्षो में दो हजार बच्चों से मिला हूं। मैं क्यों मिलता हू? आचार्यजी ! यह मेरा मिशन है। मेरे मन में लगन है कि राष्ट्र का आध्यात्मिक विकास कैसे हो? यह हमारी भारत की विरासत हैं। महावीर, बुद्ध आदि ने अध्यात्म का जो विकास किया, जो सूत्र दिए, उनका व्यापक बनना जरुरी हैं। आचार्यजी ! मैं नागालैण्ड गया। आठवीं कक्षा तक के बच्चों से मिला। एक बच्चे ने कहा मैं शांतिपूर्ण जीवन जीना चाहता हूं। आप हमें बताएं सुखी, सुरक्षित और समृद्ध जीवन जीना चाहता हूं। आप हमें बताएं कि यह कब होगा? कब हमारा भारत देश सुन्दर होगा, सुरक्षित और समृद्ध होगा? इसमें चारों और शांति का वातावरण होगा। मैंने उनसे कहा मै आचार्यजी ! गुरु जी से पूछूंगा और तुम्हें बताऊंगा। आचार्यजी ! भारत का आर्थिक विकास कैसे हो सकता हैं? वह आर्थिक दृष्टि से कैसे समृद्ध हो सकता है, यह मै जानता हूं। ऐसा भारत हम बना सकते हैं। किन्तु भारत के लोग आध्यात्मिक चिन्तन चले। एक योजना बनाएं और इस दिशा में सघन कार्य करें। राष्ट्रपति कांजीवरम् के शंकराचार्य, ब्रह्मकुमारी, स्वामिनारायण आर्यविशप आदि सभी धर्म सम्प्रदायो के प्रमुख लोग मिलकर एक सेतु बना सकते हैं।

आचार्यश्री हां हमने अहिसा - समवाय मंच का निर्माण किया हैं। उसका उद्देश्य भी यही हैं। अहिंसा एवं विश्व शांति के क्षेत्र में कार्य क रने वाले व्यक्ति एवं सं ाएं मिलकर इस विषय पर यह चिन्तन करें। सबकी समन्वित शक्ति से इस कार्य को बहुत बल मि गा। राष्ट्रपति हां। आचार्यश्री अभी हम गुजरात में थे। वहां सांप्रदायिक दंगे हुए। हमने हिंदु और मुसलमान दोनों समुदाय के प्रमुख व्यक्तिओं को याद किया। हमें यह समझता कि हिंसा किसी समस्या का समाधान नहीं है। अनेक गोष्ठीयां हुई। हमारे चिन्तन का सबने सम्मान किया। शांतिपूर्ण वातावरण का निर्माण हो गया। यदि धार्मिक नेता बदल जाएं तो सांप्रदायिक कट्टरता से उपजने वाली हिंसा समाप्त हो जाएं। राष्ट्रपति (मुस्कराते हुए) आप आपको पटेल लॉब पर ध्यान करा दें। आचार्यश्री अहिंसा को भी ठीक समझा नहीं गया। आडवाणीजी आए थे। मैंने प्रवचन में कहा अहिंसा एक धर्म हैं एक मुनि के लिए। अहिंसा नीति है समाज के प्रमुख व्यक्तियो और शासको के लिए। जो विभिन्न विचारधाराओं, विभिन्न जातियों और सांप्रदाय के लोगों में सामंजस्य करता हैं, वह दीर्घकालीन नीति से सफल हो सकता हैं। जहां सामंजस्य होता हैं, वहां सद्भावना का वातावरण बना रहता हैं। यदि विद्यार्थी में प्रारंभ से ही सामंजस्य, सहिष्णुता, मैत्री, अहिंसा, के संस्कार भरे जाएं तो राष्ट्र की अनेक समास्याएं सुलझ सकती हैं। आपके पास जो शोध छात्र रिसर्च क र रहा हैं, यदि वह परिवर्तन के इन प्रयोगों का अध्ययन करें तो शोध के कुछ सार्थक परिणाम आ सकते हैं। राष्ट्रपति मैं उसे हमारे बीच चिन्तन की यह प्रक्रिया चलती हैं, यह आवश्यकता हैं। आप सब जगह नहीं आ सकते, लेकिन आपके प्रतिनिधि संवाद का सेतु बन सकते हैं। आचार्यश्री

आपके और हमारे बीच चिन्तन की यह प्रक्रिया चलती रहे, यह आवश्यक है। आप सब जगह नहीं आ सकते, लेकिन आपके प्रतिनिधि संवाद का सेतु बन सकते हैं। राष्ट्रपति मेरे मित्र वैज्ञानिक डॉ. वाई.एस. राजन आपसे मेरे प्रतिनिधि के रूप में मिलते रहेंगे। आचार्य आपका वैज्ञानिक चिन्तन राष्ट्र के लिए सर्वाधिक कल्याणकारी हो सकता है। सुकरात कहा था एक शासक को दार्शनिक होना चाहिए। आज हम इस भाषा में कहना चाहते हैं - एक शासक को वैज्ञानिक होना चाहिए। यदि शासक वैज्ञानिक होगा तो समस्या की जड़ तक पहुंचने का प्रयत्न करेगा। उसमें ईगो भी कम होना चाहिए।

राष्ट्रपति (मुस्कुराते हुए यह वाक्य पुनः दोहराया) और यदि होगा तो पटेल लॉब पर पॉस्टेशन कम दीजिएगा। (एक नई जिज्ञासा प्रस्तुत करते हुए) क्या इसमें श्वास का भी कोई संबंध है? आचार्य श्री श्वास का गहरा संबंध है। इमोशन पर कंट्रोल करने में दीर्घश्वास प्रेक्षा बहुत महत्वपूर्ण है। एक व्यक्ति सामान्यतः एक मिनट में पंद्रह सोलह श्वास लेता है। जब आवेश प्रबल होता है, क्रोध, भय, वासना, आदि का आवेग तीव्र होता है, तब यह संख्या तीस चालीस हो जाती है। तीव्रतम आवेश में उससे भी अधिक हो जाती है। रूपक की भाषा में कहें तो इमोशन राजा है। वह वायुयान के बिना नहीं आएगा। छोटा श्वास उसका वाहन है। श्वास की संख्या कम होगी तो इमोशन शांत रहेंगे। दीर्घश्वास से राइट हेमिस्फियर जागृत होता है। (राष्ट्रपति महोदय को अंग्रेजी में प्रकाशित प्रेक्षाध्यान : श्वास प्रेक्षा तथा प्रेक्षाध्यान के सभी पुष्प उपहृत किए गए। आचार्यवर की अनेक सद्य: प्रकाशित अंग्रेजी पुस्तकें दी गईं। राष्ट्रपति ने एक एक पुस्तक का अवलोकन किया। उनकी दृष्टि थॉट एट सनराईज पुस्तक पर अटक गई।

राष्ट्रपति इसमें क्या है?

आचार्यश्री मैंने इसमें प्रतिदिन का एक विचार लिखा है। हिन्दी में इस पुस्तक का नाम है सुबह का चिन्तन।

राष्ट्रपति मे आज का विचार पढ़ता हूं। (यह कहते हुए राष्ट्रपति ने 14 फरवरी का पूरा विचार पढ़ कर सुनाया।) आचार्यश्री आज आपका काफी समय हो गया है। राष्ट्रपति आप यहां कब तक है? आचार्यश्री मार्च, अप्रैल दो महीने यहां रहेंगे। उसके बाद सूरत की ओर जाना है। राष्ट्रपति आप अपना पूरा प्रोग्राम मुझे दे दीजिए। मैं देखता हूं मैं पुनः कहां आ सकता हूं। (यह कहते हुए राष्ट्रपति का ध्यान अपनी डायरी में अंकित नोट्स पर केन्द्रित हुआ।) आचार्यश्री क्या यह इंगो एंगर (अहं और क्रोध) कम हो सकता है? आचार्य श्री अवश्य हो सकता है। प्रेक्षाध्यान शिविर में ऐसे अनेक लोग आए, जिन्होने अभ्यास किया और इन पर स्थापित किया। मुंबई की घटना है, इनके (मुनि महेन्द्रकुमारजी) संसारपक्षीय भाई को भयंकर गुस्सा आता था। पूरा परिवार अशांत हो गया। उन्होंने ध्यान का अभ्यास किया। क्रोध उपशांत हो गया। पत्नी ने देखा पतिदेव सचमुच बदल गए है। उन्होंने अपने ससुर को यह बात बताई। ससुर ने कहा थोड़े दिन ठहरो। आखिर उन्होंने यह स्वीकार किया कि सचमुच बदलाव आया है। जो प्रत्यक्ष है, उसे कैसे नकारा जा सकता है। (आचार्यश्री ने एक नया प्रस्ताव रखा) आप पांच ऐसे विद्यार्थीयो को भेजे, जो बहुत एंग्री है। हम उन्हें पांच सप्ताह प्रेक्षाध्यान के प्रयोग कराएंगे। उसका क्या परिणाम आता है। राष्ट्रपति (मुस्कुराते हुए) तब तो मुझे अपने नेताओं को भेजना पड़ेगा। आचार्यश्री यह प्रयोग भी किया जा सकता है। राष्ट्रपति मैं बहुत प्रसन्न हूं। मुझे आज नया प्रकाश और नई दृष्टि मिली है। किस प्रकार हम जनता को आध्यात्मिक बना सकते हैं। इस दिशा में कैसे सफल हो सकता है? इस दिशा में कैसे सफल हो सकते हैं? इसका सुन्दर पथदर्शक मिला है। आचार्यश्री चिन्तन का क्रम लंबे समय तक चले तो हम अनेक समस्याओं के समाधान में सफल हो सकते हैं।

राष्ट्रपति मै एक साल में दो तीन बार तो आना ही चाहता हूं। अब आपसे निरंतर संपर्क बना रहेगा। आपका मार्गदर्शन न केवल मेरे लिए, बल्कि पूरे देश के लिए कल्याणकारी है। ❖

प्रेक्षा के शिखर पुरुष

मुनि बुद्धमल्ल

लेपन का नामकरण - आचार्य महाप्रज्ञ जी एक ऐसे व्यक्ति का नाम हैं जो शिखरों से कम की यात्रा पसंद नहीं करते। यों तो हर शिखरयात्री को यात्रा का प्रारंभ तो उपत्यका से ही करना होता हैं, उन्होंने भी ऐसा ही किया था, परंतु उन्हे तलहटी में खोजने वाले को वे अनेक घटनाएँ मेरे इस कथन को प्रमाणित करती हैं। बाल्यावस्था में जब उन्होंने साधना के क्षेत्र में प्रवेश किया और वहाँ की कंकरीली तलहटी पर सहमते से टेढे मेढे चरणन्यास करने लगे, तब आचार्य कालूगणी ने उनके उस बाल सुलभ निपट लोभेपन का नामकरण किया था-बंगू। परंतु जब कोई बंगू की खोज करने गया, उसने पाया कि वे प्रथम कोटि की छात्रता पर साधिकार आसन जमाए हुए बैठे हैं।

समाधान के शिखर पर - एक समय था जब उन्होंने मुनि तुलसी के उपपात में षट्लिंग के शब्द रुपों की साधना प्रारंभ की थी। सर्वप्रथम इस विभक्ति पर भी गाड़ी अटक गई। उनका जिज्ञासा भरा तर्क था कि सि ही क्यों आएगी, ति क्यो नहीं ? मुनि तुलसी ने उनको समझाने का भरपूर प्रयास किया कि शब्द सिद्धि के लिए यही विभक्ति मान्य है, अत: यहां यही आएगी, दूसरी नहीं। बालमुनि काफी देर तक अपने तर्क पर अड़े रहे। फिर उन्होंने उसे आग्रह का रुप दिया कि हम ति ही लाएँगे तब वह क्यों नहीं आएगी ? शायद उन्हें लग रहा होगा कि मुनि तुलसी उसे आने देना नहीं चाहते, अत: वह नहीं आ पा रही, अन्यथा उसे आने में क्या देर लग सकती है ?

गुरुदेव तुलसी समय-समय पर आज भी उस बाल हठको बताते हुए बड़ा आनन्द लेते हैं। बालमुनि को उस समय यह नहीं समझाया गया कि जरा प्रतिक्षा करो। पूर्वाध पूरा होने दो। उत्तरार्ध का प्रारंभ होते ही ति भी आ जाएगी। शब्द सिद्धि में सि की अनिवार्यता होती हैं तो क्रिया सिद्ध में ति की।

उस समय यदि ऐसा भी समझाया भी जाता तो वह समझ में नहीं आता, क्योंकि वह समझ की तलहटी में चलने का प्रथम प्रयास में ही पैर पूरे नहीं जमा करते। कालान्तर में सभी ने देखा परखा कि वे ही अधजमे पैर समझ के शिखर पर पहुँचकर आज अंगद के पैरों की तरह अपने स्थान पर ऐसे जम गए कि कोई उन्हे हिला सके। उन्हे तर्क बहुत पहले ही समाहित हो चुके हैं। आज वे समाधान के शिखर पर हैं। व्यष्टि से लेकर समष्टि, शरीर से लेकर आत्मा और इसी तरह आवरण से लेकर पर्यावरण तक के लिए उठने वाली समस्याओं, जिज्ञासाओं एवं तर्कणाओं के समाथान की कुंजी उनके पास हैं।

नाम यात्रा - नाम केवल सामान्य परिचय के लिए ही होता हैं। उसका उससे अधिक कोई मूल्य नहीं उक्त कथन कुछ अंशो में ही सही हैं, सर्वांश में नहीं क्योंकि नाम के साथ व्यक्ति परिचय के

अतिरिक्त उसके पूरे कर्तृत्व का परिचय भी जुड़ा होता है। इतना होने पर भी आचार्य महाप्रज्ञ जी के नाम की दृष्टि से भी एक यात्रा की है। उसे यात्रा न कहकर एक छलांग कहना ही अधिक उपयुक्त होगा। आचार्य श्री का परिवार प्रदत्त नाम नथमल है।

मुनि जीवन में भी वही नाम रहा। उनके कर्तृत्व की सैकड़ों घटनाएं उसी नाम के साथ जुड़ी है। लंबे समय के पश्चात् इस नाम ने अचानक अंगड़ाई ली तो ऐसी कि नथमल से सीधे महाप्रज्ञ बन गए। कहाँ महाप्रज्ञ। नाम की इस अप्रत्याशित तरक्की को एक शेर बहुत सुंदर ढंग से प्रस्तुत करता है। "यूंतो शाबाश है तुमको, तरक्की इसको कहते हैं, अगर नातराशे तो पत्थर थे, तराशे तो खुदा ठहरे।।"

शीर्षस्थ व्याख्यानदाता मुनि नथमलजी अपने मुनि काल मे धर्मसंघ के उतकृष्ट चितक आंर दार्शनिक संत गिने जाते है। समय समय पर उन्हें जनसभा में बोलने का अवसर मिलता ही रहता था। भाषण का उनका अपना एक प्रकार बन गया था। भाषा और भावों को वे इतना बोझिल बना दिया करत कि खुद समझे को खुदा समझे की उक्ति लागू होने लगती। आचार्य महाप्रज्ञजी उस स्थिति प्रकाश डालत हुए स्वयं भी कई बार फरमाते हैं "जब मे बोलने खड़ा होता तो लोग उठ उठकर जाने लगन कि अब कुछ भी समझ मे आने का नहीं। "गुरु देव तुलसी ने उस स्थिति पर ध्यान दिया तो

एक दिन मार्ग दर्शन करते हुए फरमाया तुम अपने भाषण की शैली बदलो। जिस जनता क लिए बोलते हो यदि वही नहीं समझ पाएगी तो बोलने का कोई अर्थ नही रह जाएगा। मुनि नथमल ने तभी से शैली को ऐसा बदला किया कि धीरे धीरे लोग जमने लगे। अब तो स्थिति यह है कि अन्य किसी के व्याख्यान मे अवश्य उपस्थित होते है। आज वे उच्च से उच्च दार्शनिक तत्व का भी इस सरलता से व्याख्यायित कर देते हैं कि उसकी दार्शनिक गरिष्टता का पता ही नहीं लग पाता। वस्तुत: वह सहज सुपाच्य भोजन की तरह गले उतर जाता है। कहना चाहिए कि आचार्य महाप्रज्ञजी वर्तमान युग क एक शीर्षस्थ व्याख्यानदाता बन गए है।

प्रेक्षा के शिखर पुरुष आचार्य महाप्रज्ञजी को आज प्रेक्षा-पुरुष या प्रेक्षा प्रणेता कहा जाता ह, परतु कुछ वर्ष पूर्व ऐसा नहीं था। जैनों की अपनी कोई ध्यान पद्धति व्यस्थित रुप से चालू नही होन के कारण गुरुदेव श्री तुलसी चाहते थे कि विस्मृत जैन ध्यान पद्धति के तत्वों की खोज कर उन्हें व्यस्थित रुप दिया जाए। उन्होने मुनि नथमलजी को यह कार्य सौंपा तो वे तन मन मे उसमे लग गए। आगमो म विकीर्ण ध्यान विषयक विचार बिजो का उन्होने संयोजन किया। नई भूमिका, नई खाद, और पर्याप्त श्रम जल से सीचकर उन बीजो को अंकुरित ही नही, पल्लवित, पुष्पित और फलित भी किया। विस्मृत पद्धति आज प्रेक्षा ध्यान पद्धति के नाम से पुनर्जीवित हो उठी। आज उसके सैकड़ों प्रशिक्षक कार्यरत है। सहस्रो-सहस्रो व्यक्ति प्रतिवर्ष शिविरों में भाग लेकर लाभ उठाते है।

उक्त पद्धति किसी रूढ परंपरा का निर्वाह मात्र नही है, वह वैज्ञानिक कसौटियों पर कसी जाकर खरी और लाभदायक सिद्ध हुई, इसलिए सहज मान्य हुई है। अनेकानेक वैज्ञानिक, साहित्यकार, वकील, डॉक्टर, व्यापारी आदि प्रबुद्ध व्यक्तियो से लेकर हर वर्ग के तनाव ग्रस्त मनुष्य ने उसे एक सहज सुलभ औषध के रुप मे पाया है। महाप्रज्ञजी की मानव समाज को यह एक उच्चकोटि की देन ह। स्वय उन्होंने इसकी साधना मे अपनी प्राणशक्ति लगाई है। जीया गया अनुभव सबके बीच बाटा गया ह। आज वे साधना के क्षेत्र में शिखर पुरुष है।

आगम संपादन गुरु देव के विचारो को क्रियान्वित करने के लिए महाप्रज्ञजी सदैव सबसे आगे रहते

है। गुरुदेव के मन में जैन आगमों के संपादन का कल्पना जागी। मुनि नथमल जी को उसमें मुख्य रूप से नियोजित किया। गुरुदेव के वाचना प्रमुखत्व में वे स्वयं जुटे, साधन जुटाए, बीसियों साधु साध्वीयों के श्रम को एक लक्ष्य और एकक पता प्रदान की। फलस्वरूप महाप्रज्ञजी द्वारा संपादित अनेक आगम ग्रंथ जनता के समक्ष आ चुके हैं। वे विद्वज्जनों द्वारा बहुमान्य हो चुके हैं। इस प्रकार उनकी संपादन क्षमता आज देशी और विदेशी अनेक विद्वानों की मुखर प्रशंसा पा चुकी है। कार्य बहुत बड़ा है, बड़े स्तर पर किया गया हैं। फिर भी उनमें अनेक वर्ष खप जाने वाले हैं। धैर्य और संकल्प का बल उनके पास भरपूर हैं। वही उनको कार्य सिद्धि का सूत्र है।

नवीन भाष्यकार आगम व्याख्याकारों का स्थान बहुत प्राचीन और सम्मानार्थ माना जाता हैं। आचार्य महाप्रज्ञ ने भाष्य कारों में भी अपना एक नवीन उच्च स्थान बना लिया है। आचारों जैनागमों में सर्वाधीक प्राचीन और अत्यंत महत्वपूर्ण माना जाता हैं। द्वादशांगी में वह प्रथम अंग के रुप में विराजमान है। भाषा और भाव के रुप में भी वह अन्य अंग सूत्रो से भीन्न है। अत्यंत संक्षेप मे अत्यंत गंभीर उक्तियों का वह एक भंडार कहा जा सकता हैं। किसी भी प्राचीन भाष्यकार ने उसे अपनी लेखनी का विषय नहीं बनाया। जो अन्य किसी ने नहीं किया, वो अर्वाचीन भाष्यकार महाप्रज्ञजी ने किया। प्रांजल संस्कृत भाषा मे विषय का वैज्ञानिक पद्धति से विशद विवेचन उस भीष्यकी अपनी विषेषता हैं। विद्वद् गोष्ठी में समक्षार्थ जब उनका सामूहिक पाठ किया गया तो सभी ने हर्षाप्लावित नेत्रों से उनको अभिनंदनीय ग्रंत माना।

बहुआयामी व्यक्तित्व आचार्य महाप्रज्ञजी का व्यक्तित्व बहुआयामी हैं। कहा जा सकता हैं कि वे हर आयाम के उच्चशिखर पर विराजमान है। उनकी साधारणता भी अपने में असाधारणता समाए हुए हैं। दिगंबरा चार्य विद्यानंदजी उमके विषय में कहते हैं मे उनहे जैन न्याय के क्षेत्र का राधाकृषणन् मानता हूं। राष्ट्र कवि रामधारी सिंह दिनकर कहते हैं-वे आज के विवेकानंद है। अन्य अनेक विद्वानों की महाप्रज्ञजी के विषय मे ऐसी ही उच्च धारणाऍं है। वस्तुतः वे उनके धारणओं के उपयुक्त पात्र हैं। एक लेख में आचार्य महाप्रज्ञजी की महत्ताओं का दिग्दर्शन मात्र ही करवाया जा सकता है, मुझे लगता ही नहीं वह भी ढग से नही हो पाया है। खैर जितना हुआ उतने को ही प्रयाप्त मान लेने की मेरी नियत हैं। में आचार्य महाप्रज्ञजी का बाल्यकालीन साथी, सहयोगी और समवयस्क हूं, इसलिए समझता रहता हूं कि मे उन्हे बहुत अच्छी तरह से जानता हूँ, परंतु धीरे धीरे मुझे आभास होने लगा कि मैं उन्हें कुछ सीमा तक ही समझता हूं। युवाचार्य बन जाने के पश्चात् स्पष्ट हो गया कि मै उन्हें बहुत कम जानता हूँ। अब जबकि वे आचार्यत्व का भार संभाल चुके हैं, तब मुझे यह कहने को बाध्य होना पड़ रहा हैं। अब उनको जानने के लिएं पहले वाली समझ काम नहीं देगी। अब तो कोई नई तकनीक चाहिए। पर यही तो समस्या हैं कि मई तकनीक का उद्भव कैसे हो? ◆

अनुशासन

-आचार्य महाप्रज्ञ

अनुशासन एक कला है। उसका शिल्पी यह जानता है कि कब कसा जाए और कब सहा जाए। सर्वत्र कसा ही जाए तो धागा टूट जाता है और सर्वत्र सहा ही जाए तो वह हाथ से छूट जाता है। हर आदमी चाहता है मेरा अनुशासन चले पर वह नहीं चाहता कि मैं अनुशासन में चलूं। उसे अनुशासन करने का कोई अधिकार नहीं है, जो अनुशासन में नहीं रह चुका है। अनुशासन जीवन की सर्वोच्च उपलब्धि है। उसमें रहना कठिन है तो उसमें दूसरों को रखना कठिनतर है। — आचार्य महाप्रज्ञ अनुभव का उत्पल पृष्ठ 157

आचार्य महाप्रज्ञ का व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व

मुनि किशनलाल

मेरुपर्वत को कोई सेंटीमीटरों से मापने की कोशिश करे, क्या यह सभव है ? क्षीर समुद्र को कोई कटोरी से खाली करने की कोशिश करें, क्या यह सभव है ? मेरु पर्वत का कोई मापन चले, उसे मापकर सेंटीमीटर मे फलित कर दे यह सभव है, वह सफल हो जाए। कोई कटोरी लेकर क्षीर समुद्र को खाली करने का प्रयास करे, यह संभव हो जाए। मेरु पर्वत को मापा जा सकता है। क्षीर संमुद्र को खाली किया जा सकता है। आकाश को हाथों मे बॉधा जा सकता है किंतु महापुरुष के व्यक्तित्व और कर्तृत्व को न मापा जा सकता है न खाली किया जा सकता है और न ही बॉधा जा सकता है।

शास्ता या शांत सागर

आचार्य महाप्रज्ञ का व्यक्तित्व बहुमुखी, बहुविध, बहु रुपा में अभिव्यक्त हुआ है। जिस ओर से उन्हे की कोशिश करते है, उसे अभिव्यक्ति देने की कोशिश करते है कि इतने विराट रुप मे अवशेष रह जाता है। उसे देखकर मति चकराती रह जाती है। चल थे व्यक्तित्व का मापन, एक कण की भी पूर्ण व्याख्या नही हो पाई। देखते है, वे शास्ता है। तेरापथ शासन कुशलता से संचालित कर रहे है। उनके सचालन कौशल में दायित्व का बोध है, अध्यात्म की ऊंचाइ का छूने वाली अनुशासन शैली, मैत्री और करुणा से आपूरित व्यवहार है। अनुशासित होनेवाला किस तरह उनके प्रति सहज समर्पित हो जाता है। अनुशासन की अवहेलना का प्रसग भी जब कभी उपस्थित होता है-महाप्रज्ञ की भृटुकियो में कोई तनाव नही, भावों में कोई उदवेलन नहीं, कितनी सहजता से समझाते है, वह स्वयं उनके कथन से सहमत हो जाता है। जहाँ अनुशासन प्रताडना का प्रताडना होना चाहिए, वहाँ प्यार और स्नेह से सिक्त भावो में व्यक्ति को ऐसा बहा ले जाते है कि उसको पता ही नहीं चलता कि उसने कोई अपराध क्या हो। स्वय पश्चाताप के पवित्र पानी से अपने आपको पवित्र कर लेता है।

सत्य के सूर्य

सत्य के विराट स्वरुप को अनुभव करना उसकी चमकती हुई रोशनी में अपने आपका सतुलित बनाए रखना। यह किसी स्वस्थ चेतना का कार्य हो सकता है। सत्य का साथ करना, उसे आत्मसात् करना अनेकांत की दृष्टि से उसे अभिव्यक्त करना यह किसी साधारण व्यक्तित्व के वश की बात नही है। यह तो कोई असाधारण व्यक्तित्व का धनी, अनेकांत की आँख वाला ही कर सकता है।

आचार्य श्री महाप्रज्ञ सत्य के संबंध में अपनी धारणा को काव्य की भाषा में प्रस्तुति देते है। जिसने अपनी धारणा की खिड़की से सत्य को देखा वह सत्य से दूर भागा। जिसने सत्यों की खिड़की से सत्य को प्रत्यक्ष किया, वह सत्य के निकट पहुँचा। यदि संसार में सत्य का आग्रह नहीं होता तो सत्य का मुँह आवरण से ढका नहीं होता। सत्य को समझने और उसे अनेकांत से अभिव्यक्ति देने में आचार्य श्री महाप्रज्ञ का कौशल विलक्षण है, वह अन्यत्र देखने में दुर्लभ है। मैं तो हैरान हूं, उनकी अभिव्यक्ति के कौशल को जिसे बाल, स्त्री एवं पुरुष सहजता से आत्मसात कर लेते हैं। वे स्वयं अपने वक्तव्य के संदर्भ में लिखने हैं कि मैं जब बोलने खड़ा होता हूँ तो लोग समझते हैं कि अब कुछ समझ में आने वाला तो है नहीं, नींद लेने का अच्छा अवसर है। दार्शनिक तथ्य और संस्कृत निष्ठ कठिन भाषा कौन समझे, ये क्या कह रहे हैं? राजनगर में मुनि श्री वक्तव्य दे रहे थे। श्री जिनेंद्रकुमार सामने बैठे थे। आचार्य श्री तुलसी जी मुनि जी के वक्तव्य को सुनकर प्रसन्न मन से गर्दन हिला रहे थे, मुस्कुरा रहे थे। एक बुद्ध राजधानी भाई आचार्य श्री तुलसी को निवेदन कर रहा था। आज तो मुनि श्री मथमलजी बहुत अच्छे बोले। तुम कुछ समझे, उन्होंने क्या बोला? महाराजा। समझा तो कुछ नही, लेकिन आप की गर्दन स्वीकृत मे हिल रही थी, मुस्कुरा रहे थे तब मैंने समझा वे अच्छा बोले। आचार्य तुलसी ने मुनि नथमल को बुलाया और उसे भी यह वार्ता सुनाई। आचार्य श्री ने कि‌ अब तुम अपने दार्शनिक वक्तव्य को सरला दृष्टांत और कथा के माध्यम से प्रस्तुत करो। उस दिन से मुनि नथमल जी ने अपनी शैली को बदल दिया। आज तो उनके प्रवचन इतने सरल और सहज होते है, गभीर से गभीर प्रश्न के उत्तर को सब समझ जाते है।

साहित्य आगम अनुसंधान

मुनि श्री नथमलजी का दार्शनिक और साहित्यकार के रुप में अधिक पहचानते है। उनको किसी ने पढ़ा, चाहे वो परिचित हो अथवा अपरिचित उनके मुख से अनायास ही श्रद्धा भरे स्वर उभर आते है। श्री यशपाल जैन लिखते है कि आचार्य महाप्रज्ञजी विलक्षण पुरुष है, उन्होंने मौलिक साहित्य का सृजन किया है। श्रमण महावीर उनकी लिखी भगवान की जीवनी एक अभूतपूर्व कृति हैं। गुजरात के प्रसिद्ध साहित्यकार कुमारपाल देसाई लिखते है, श्री महाप्रज्ञ जी महामानव है। उनके अतर मे आत्म भाव की अमृतवाणी है और परपरा का गौरव है। डॉ नागर मल सहल लिखते है कि मुनि श्री नथमल जी स्थितप्रज्ञ है। उनकी पुस्तके अग्रेजी भाषा में अनूदित की। उनकी विद्वता, चितन की प्रखरता और विषय की प्रतिबद्धता मृदु भाषण को मिठास देती है। डॉ वैद्य नाथन लिखते है- महाप्रज्ञ मे पार्थिव प्रतिष्ठा एव सन्मान के प्रति किसी प्रकार के गर्व का बोध नहीं है। वे तो एक ऐसे स्थितप्रज्ञ हैं, जिसकी व्याख्या भगवान श्री कृष्ण ने गीता के द्वितीय अध्याय मे की है। संघनिर्देशका साध्वीप्रमुखा लिखती है कि आचार्य महाप्रज्ञ के साहित्य ने निहित शाश्वत सत्यो सो उसे युगीन साहिय के रुप में प्रतिष्ठित कर दिया है।

डॉ. नेमचंद्रजी जैन लिखते है महाप्रज्ञ जी की सबसे बड़ी खूबी है उनका रुढ़ि मुक्त बने रहना। अपने लेख में लिखते है लेखक के मन में को पक्षपात नही है लेखक के मन में कोई पक्षपात नहीं है, इसलिए पूरी निष्पक्षता और वस्तुनिष्ठा के साथ अपने प्रतिपादन को सफलतापूर्वक प्रस्तुत किया है, जैन न्याय का विकास के विद्वान लेखक विषय प्रतिपादन में न अधिक निर्मम है, न अधिक

उदार बल्कि अनेकांत की भाँति वैज्ञानिक और सापेक्ष हैं। उसकी उपमा - प्रमेय कालिका के तेजस्वी रचयिता नरेंद्र सैन से ही किया जा सकता हैं। डो. प्रभाकर माचवे ने आचार्य महाप्रज्ञ की पुस्तक मन के जीते जीत को पढ़ा ही नही बल्कि उन्होंने एक एक लाईन की समीक्षा की है। पुस्तक की सबसे आकर्षक बात है कि यह सूक्तियो और सूभाषितों से भरी है। बुलगारिया के होटल मे किसी लड़की ने उनसे पूछा पश्चिम की ग्रंथियों और पूर्वक योग के चक्रों का अध्ययन हुआ है। उन्होंने बताया कि आचर्य महाप्रज्ञ के मन के जीते जीत मे विस्तृत वर्णन हैं। मन के जीते जीत में वह मन की चंचलता का वर्णन करते हैं, और उसके समाधान का मार्ग प्रशस्त करते है। डां. विजेन्द्र नारायण सिंह, डॉ. दामोदर शास्त्री आदि असंख्य हस्ताक्षर है जिन्होंने आचार्य महाप्रज्ञ का साहित्य पढ़ा हैं। उनकी पुस्तकों की समीक्षा की है चाहे वे हिंदी विभागाध्यक्ष है अथवा संस्कृत विभागाध्यक्ष। सबसे मुक से एक ही स्वर उभरा हैं कि उनकी लेखिनी ने मुक्तता से अभिवर्यक्ति दी ह।

डॉ. विजेद्र नारायण सिह चेतना का ऊर्ध्वरोहण की समीक्षा करते हुए लिखते हें-महाप्रज्ञजी समस्या की तह में जाते है। जब तक चंचलता है तब तक चेतना की उर्ध्वमुखी यात्रा का आरंभ नही हो सकता। महाप्रज्ञजी श्रेष्ठ साधक हें, पुन: विचारक और श्रेष्ठ वक्ता हैं। डॉ दामादर शास्त्री ने जैन योग पर तात्विक और वैज्ञानिक ढग से विश्लेषण किया हे, जैन। यागा साधना पद्धति का सुस्पष्ट सुव्यवस्थित स्वरुप उपस्थित करती हैं। आचार्य श्री महाप्रज्ञ क साहित्य एव कृतित्व का सांगोपाग अध्ययन और विश्लेषण के लिए मित्र परिषद कलकत्ता द्वारा प्रकाशित और श्री कन्हैयालाल फूलफगर द्वारा संपादित महाप्रज्ञ व्यक्तित्व एवं कृतित्व का अवलोकन करना चाहिए, जिससे उनके विराट व्यक्तित्व और कृतित्व का आह्वान हो सक। यह ग्रंथ उनके व्यक्तित्व और कृतत्व का अहवाहन हो सके। यह ग्रंथ उसके व्यक्तित्व और कृतित्व की प्रस्तुति देनवाला अलभ्य ग्रंथ है।

आचार्य महाप्रज्ञ के व्यक्तित्व और कर्तृत्व का मापन मेरी जैसी तुच्छ बुद्धि कभी नहीं कर सकती। मै तो उनके चरणो मे अपना भाव भरा वंदन अर्पित कर सकता हूं। जिसका मुझ अधिकार ह।

सर्वधर्म समभाव

-आचार्य महाप्रज्ञ

सर्वधर्म समभाव, सर्वधर्म समानत्व, सर्वधर्म सद्भाव आदि अनेक शब्द प्रचलित है। इनमें यथार्थता कम है, औपचारिकता अधिक है। महात्मा गांधी ने लिखा- जैसे हम अपने धर्म को आदर देते है, ऐसे ही दूसरे धर्म को दे- मात्र सहिष्णुता पर्याप्त नही हैं। (बापू के आशीर्वाद, पृ.8)

सर्वधर्म समभाव का अर्थ क्या हैं? साधारण आदमी इसका अर्थ नही जानता। समभाव का एक अर्थ हो सकता है तटस्थ भाव। दूसरा अर्थ हो सकता है समानता का भाव। यदि सब धर्मों के प्रति हमारी तटस्थता हो- किसी के प्रति पक्षपात न हों तो हमारी स्थिति साक्ष द्रष्टा की बन जाती है, किसी भी धर्म के प्रति हमारा कर्तव्य प्रस्फुटित नही होता। हमे कम-से-कम एक धर्म की प्रणाली को आचरणीय बनाना ही चाहिए

— आचार्य महाप्रज्ञ आमंत्रण आरोग्य का, पृष्ठ 73

प्रदीप्त पौरुष की पुंजी

मुनि लोकप्रकाश लोकेश

आचार्य महाप्रज्ञ नाम है अंतप्रज्ञा से जागृत उस महान चैतन्य पुरुष का जिसने वैचारिक जगत को नए अवदान दिए है, बौद्धिक जगता को उपकृत किया हैं और आध्यात्म के क्षेत्र में नए आयाम उद्घाटित किए हैं। आचार्य महाप्रज्ञ उन कालजयी विचारकों की श्रृंखला में अवस्थित है, जिनके चितन एवं पाथेय ने जगत को एक सही दिशा दी हैं। जाति, सप्रदाय, रंग, वर्ण, धर्म आदि के भेद-भावों से सर्वथा निर्लप्त उन्के विचार सदियों तक दुनिया का मार्गदर्शन करते रहेगे। आचार्य महाप्रज्ञ की प्रज्ञा दृष्टि के पीछे उनकी गहन आध्यात्म साधना प्रतिभाषित होनी है। एकांतवासमें कई बार रहकर उन्होंने आत्मकल्याण के उदेश्य से नहीं किए बल्कि साधना की निषपत्ति स्वरु प्राप्त परिणामों से जन समाज को रभान्वित तकने का प्रयास किया गया है। एक ध्यानी योगी साधक जब समाज की हित चिता के लिए साधना की अतल गहराई में पैठकर जीवन की अनमोल मोती प्रसतृत करता है तो उसे संपूर्ण मानवता लाभान्वित होती है। प्रेक्षाध्यान, लेशयाध्यान, जीवन -विज्ञान आदि कई अवदान उनकी अंतर्दृष्टि से स्वत:प्रसूत हुए है। अलबर्ट आइंस्टीन से पूछा गया सापेक्षता के सिंद्धांत का प्रतिपादन आपने कैसे किया? उन्होने कहा इट्स सो हैपेन्ड यानी कैसे हुआ, उन्हें ज्ञात नही। उत्तर नियति के अंचल में हैं। आध्यात्म और विज्ञान के समन्वय की आवश्यकता विवेकानंद तो महसूस की। आचार्य विनोबा भावे ने इसके समन्वय पर बल दिया। आचार्य महाप्रज्ञ ने साधना और प्रतिभा के बल पर इसे संभव करने का प्रयास किया। उन्होने अपने चिंतन प्रवण दार्शनिक साहित्य में अध्यात्म और विज्ञान का जो समन्वंय प्रस्तुत किया हैं, वह एक दूसरे के पूरक के रुप में प्रतिष्ठित हैं। आचार्य महाप्रज्ञ यह मानते है कि विज्ञान ने दर्म का नाश नहीं किया अपितु उसे पुनर्जीवन प्रदान किया है। धार्मिक क्षेत्र में उनकी यह धारणा सर्वथा एक नया विचार प्रस्तुत करती हैं। उनके वे चिंतन दर्शन से वे लोग धर्म और अध्यात्म के प्रति जिनकी आकृष्ट हुए हैं, जो धर्म को ढकोसला, रुढ़ि या आडंबर मात्र मानकर उनसे दूर हो गए थे और अध्यात्म के प्रति जिनका आस्था

और रुचि नहीं रह गई थी। विज्ञान और धर्म के बीच की दूरी को आचार्य महाप्रज्ञ की मान्यताओं और अवधारणाओं ने पूरी करह पाट दिया। उनका स्पष्ट मंतव्य हैं विज्ञान धर्म के बिना अधूरा हैं। अध्यात्म की चेतना जागृत हुए बिना विज्ञान सही दिशा में आगे नहीं बढ़ सकता।'

आचार्य महाप्रज्ञ ने सदियों से लुप्त होती जा रही ध्यान की छिन्न-भिन्न परंपरा को पुनर्जीवित किया है। वांग्मय में छिपे ध्यान-योग के आधार भूत टापुओं को खोजकर उन्होंने दुनियो को सामने उसे प्रस्तृत किया है। दुनिया के विद्वान चिंतकों एवं समीक्षकों ने आचार्य महाप्रज्ञ के 'योग पुनरुद्धान '

और 'जैन ध्यान का कोलंबस 'माना हैं।

आचार्य महाप्रज्ञ ने आधुनिक शिक्षा प्रणाली पर सोद्देश्य चिंतन किया। शिक्षा का उद्देश्य इतना ही नहीं कि साक्षात हों, बुद्धिमान हो बल्कि यह भी होना चाहिए की वह व्यक्ति का चरित्र निर्माण करे और सर्वांगीण व्यक्तित्व का विकास करें। प्राय: यह देख गया कि शिक्षी प्राप्त करके व्यक्ति बौद्धिक विकास कर अच्छे दायित्वपूर्ण पदों पर पहुँच जाता लेकिन भावनात्मक एवं नैतिक विकास के अभाव में अपराध, हिंसा , रिश्वत, घोटाले आदि कुप्रवृत्तिमे लिप्त पाया जाता हैं। अशिक्षित व्यक्ति जितना दुष्कर्म नहीं करते, उससे अधिक शिक्षित शिक्षित व्यक्ति इन अशोभनीय कर्मों में सहभागी होतो है। शिक्षा की निष्पित के रुप में इस प्रकार के परिणामों की अपेक्षा नही की जा सकती। वर्तमान शिक्षा प्रणाली इसी वजह से प्रश्नो के घेरे में हे। आचार्य महाप्रज्ञ का मंतव्य है कि वर्तमान शिक्षा पद्धति गलत नही है। अपर्याप्त है। इसमे कुछ तत्त्वों की कमी है जिसे जोड़कर शिक्षा प्रणाली को सर्वांगीण बनाया जा सकता हे। जिन तत्वो की कमी है, उसकी पूर्ति करने मे जीवन विज्ञान पूरि तरह समर्थ हैं। जीवन विज्ञान आचार्य महाप्रज्ञ द्वारा प्रस्तुत क नया प्रकल्प है, जिससे भविष्य में शिक्षा जगत ऐसे व्यक्तित्व का निर्माण कर सकता है जो आध्यात्मिक और वैज्ञानिक दौनो तत्त्वों के समयक् सतुलित याग से अभिषिक्त हो। जीवन विज्ञान मूल्यपरक शिक्षा है जो बौद्धिक जगाता के लिए एक अनुपैम उपलब्धि हे, स्वस्थ समाज की संरचना मे सहायक है ओर संस्कृति की समस्या की सुरक्षा कर उसे अक्षुण्ण रखने मे महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकती है।

आचार्य महाप्रज्ञ ने एक लंबी साहित्यिक यात्रा की है। शताधिक उत्कृष्ट कोटि की पुस्तकें और इससे भी शतगुणिक अधिक महत्वपूर्ण कार्य आगम ग्रंथ संपादन इसका प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। उनके साहित्य में ज्ञान दर्सन का वह अखूट खजाना निबद्ध हैं जो अन्यत्र दुर्लभ हे। गहन गंभीर विषय परभी

उनके साहित्य का लालित्य और माधुर्य पाठक को बांधे रहता हैं। उनके साहित्य मे सरसता सर्वत्र तैल बिंदु की गहल फैली हुई है। वे एक संवेदनशील कवि भी है। हिदी और संस्कृत में उनका काव्य साहित्य हमें उनके अंदर बैठे कवित्व के दर्शन कराता है। काव्य उनके जीवन में समाया हुआ हैं। काव्य यात्रा करते करते उनका चितन कहाँ से कहाँ पहुँच जाता है, यह बता पाना कठिन हैं। इतना बताया जा सकता है कि चिंतन के देहलीज पर जहाँ कोइ नहीं पहुँचता, वहाँ महाप्रज्ञ नजर आते है। उनकी बौद्धिक तेजस्विता की बौछारों की अविरल रसधारा ने मानव जीवन के मरुस्थलों तक को अप्लावित किया है।

आचार्य से भेट करता सनातन भारत से भेंट करने का रोमांच देता हैं। उनके पढ़ते समय ऐसा लगता है कि हम किसी नदी के प्रवाह में बहने का आनंद ले रहे है। वह नदी जो प्रारंभ में हमें बहुत छोटी लगती हैं, देखते ही देखते विपुल हो जाती हैं। नदी का मनोरम प्रवाह कभी हमारे हाथ चमकीले मोती पकड़ा देता है, और कभी अनिर्वचनीय खुसबु वाले कुसुम जिन्हें

सदा हृदयसे संजोकर रखने का मन करता हैं। उनकी साहित्यिक यात्रा में जीवन का दर्शन समाया हुआ हैं। आचार्य महाप्रज्ञ विकास के उत्तुंग शिखर पर पहुंचकर अनेकांत की विक श्वेत शिला पर आरुढ़ हैं, उनकी पृष्ठभूमि में

उनकेतिरासी वसंतो का संयमी जीवन, अथक श्रम, गहन तप, स्वस्थ चिंतन, दृढ़ निष्ठा, एवं प्रदिप्त पौरुष फूट फूटकर समाया हुआ हैं। जैन , आगम, इतिहास, दर्शन, न्याय, तर्क, व्याकरण, ज्योतिष, आयुर्वेद, नीति, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र,आदि का तलस्पर्शी अध्ययन उनकी चिंतन प्रवणता को पुष्ट बनाता हैं। परिचर्या, प्रवचन, संपादन, लेखन, उनकी अभिव्यक्ति का व्यापक स्वरुप पसंद करता हैं। कच्छ से कलकत्ता से पंजाब से कन्याकुमारी तक की उनकी जीवन पर्यन्त गतिमान पदयात्रा जन जन में मानवीय एकता, भाईचारा, सौहार्द, मैत्री, राष्ट्रीयता एवं उदारल दृष्टिकोण के भाव भरने की एक अमरगाथा हैं। हजारों हजार लोगों की प्रतिदिन के प्रवचन के लिए उमड़ने वाली भीड़ मानवता वादी चिंतन से उपकृत होने का प्रमाण प्रस्तुत करती हैं।

आचार्य महाप्रज्ञ उच्च कोटि के मनीषी हैं। उनके चिंतन का दायरा बहुत व्यापक हैं। सामाजिक, राष्ट्रीय और वैश्विक समस्याओं से वे पूरा सरोकार रखते हैं। समस्याओं पर उनका चिंतन गहरा होता हैं। समस्याओं के मूल कारण को पकड़ने का वे प्रयास करते हैं। निष्पक्ष एवं निर्भीक समादान की प्रस्तृति उनका स्वाभाविक गुण हैं। उनकी सोच सदा सकारात्मक होती है।

आचार्य महाप्रज्ञ की गहरी सूझ बूझ उन्हें समय के पार देखने की दष्टि देता हैं। आने वालें समय में युग की अपेक्षा और किस उपयोगिता किस चीज का रहेगी, यह उनकी दृष्टि में पहले से अंकित हो जाता हैं। समस्याओं से वे कभीं उलझते नहीं बल्कि उसके निदान एवं समाधान के प्रयासों पर उनकी नजर टिकी रहती हैं। वे नवोन्मेषों के अनूठे सृजनहार हैं। वे हृदय और बुद्धि, विचार और कर्म के समन्वय शिलपी हैं। आदर्श को कर्म के रुप में व्यवहृत करना उनकी निष्ठा कार्य को क्रियान्वित कर निष्पत्ति के बिंदु तक पहुँचना उनकी स्वाभाविक पसंद हैं। उनके अवदानों का आकलन करना गागर में सागर भरने के समान हैं। कबीर के शब्दों के कुछ क्षण के लिए उदार लूँ तो - 'धरती सब कागद करौ, गुरु गुन लिखा न जाय।' प्रदीप्त पौरुष के पुंज, प्रज्ञा पुरुष को नमन! वर्धापना की सत्कामना।❖

धर्म और संप्रदाय

-आचार्य महाप्रज्ञ

दुनिया में अनेक धर्म है, अनेक नाम है। नाम तो संप्रदाय का होता है, धर्म का कोई नाम होता ही नहीं है। धर्म होता है- अनाम। हम अनाम को भी नाम दे देते हैं। धर्म कोई शब्द नहीं होता। वह अशब्द होता है। हम उसे शब्द दे देते हैं। सब धर्म इस बात को स्वीकार करते हैं कि अहंकार और ममकार से बड़ा दुनिया में कोई अंधकार नहीं है।

– आचार्य महाप्रज्ञ मैं हूं अपने भाग्य का निर्माता, पृष्ठ 73

अहिंसा यात्रा-नये इतिहास की सर्जना

साध्वी निर्वाणश्री

इक्कीसवीं सदी के महान यायावर आचार्य महाप्रज्ञ साधारण वेशभूषा मे एक असाधारण पुरुष हैं। बाहरी परिवेश मे जनता उन्हें जैनमुनि के रुप में पहचानती है पर विचारो, व्यवहारों एवं क्रियाकलापों से वे पूरी तरह मानवता से ओतप्रोत हैं। जन-जन को धर्म की पयोगिता आत्मसात् करवाने के लिए वे ससंघ कृतसंकल्प हैं। शोध, प्रयोग एवं प्रशिक्षण की त्रिवेणी सतत उनके साथ प्रवाहित है। लोकचेतना जागृत करने के लक्ष्य से उन्होंने 81 वर्ष की उम्र में बीड़ा उठाया। अहिंसा यात्रा के नाम से उद्घोषित इस अभियान का सर्वत्र स्वागत हुआ। हिंदु-मुस्लिम तहे दिल से सब इसके साथ जुड़े। उम्र के नवें दशक मे 4000 कि.मी की यह पदयात्रा जन सामान्य के लिए आश्चर्य से कम नही है। परियोजना एवं उसके निष्कर्षों के आधार पर इसे सफलतम यात्रा कहना अत्युक्ति नही होगा।

शुभारंभ यात्रा का

5 दिसबंर 2001 को राजस्थान के सुजानगढ़ के कस्बे से इस यात्रा का शुभारंभ हुआ। जोधपुर, बाड़मेर आदि संभागो का स्पर्श करते हुए यात्रा ने गुजरात प्रांत में प्रवेश किया। गोधरा कांड की प्रतिक्रिया स्वरुप पूरे गुजरात में स्थान-स्थान पर तनावपूर्ण माहौल था। हिंदु और मुसलमान एक दूसरे की जान के दुश्मन बनने को उतारु थे। सर्वत्र नफरत और अविश्वास का विष व्याप रहा था। ऐसे समय मे आचार्य श्री के पास यह निवेदन पहुंचा कि वे अपने आगामी कार्यक्रम के सबंध मे पुनर्विचार करे। इस समय गुजरात मे आगे बढ़ना किसी भी तरह खतरे से खाली नहीं है।यात्रा का स्थगन समयज्ञता का परिचायक होगा।

साहसी उद्घोषणा

देश-काल का सूक्ष्मता के साथ आकलन करते हुए उन्होंने निर्भीकता से उद्घोषणा की हिंसा के चरमोत्कर्ष का समय ही अहिंसा के प्रसार का उपयुक्त समय है। इस साहसी निर्णय के साथ वे अपने गंतव्य पथ की ओर अविराम गति से बढ चले। गांव-गांव में हिंदु एवं मुस्लिम प्रतिनिधियों से सलक्ष्य संपर्क साधा। उनकी प्रेरमा का ही सुफल था कि नफरत को भूल लोग एक दूसरे से गले मिले। उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा- दुनिया का कोई धर्म लड़ना नही सिखाता हैं। कुछ लोग अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिये धर्म का भी राजनीतिकरण कर देते हैं। उनकी सीख लोगों के गले उतरी। उन्माद की आग से वे बाहर आए। हिंसा, कर्फ्यू आदि के कारण जो जनजीवन अस्त व्यस्त हो रहा था वह तेजी से सामान्य हुआ। सांप्रदायिकता की बेकाबू होती आग चंद दिनों मे ही प्रशांत हो गई। सबका यह विश्वास बन गया कि हिंसा में विकास के लिए कहीं कोई अवकाश नहीं है। उसमें न हिंदु का भला है और ना ही मुसलमान का।

नए इतिहास की सर्जना

सांप्रदायिकता के उस माहौल में जगन्नाथ रथयात्रा का प्रस्थान प्रशासन एवं धर्मगुरु ओं के लि एक चुनौतीपूर्ण कार्य था। अहमदाबाद का प्रशासन उनके स्थगन का आदेश जारी करने के सबंध में सोच रहा था। आचार्य श्री केपास भी ऐसी सुचनाएं पहुंची संप्रदाय निरपेक्ष राज्य के लिए ऐसी शुरु आत उनकी दृष्टि में उपयुक्त नहीं थी। इससे भविष्य में धार्मिक उत्सव के समय सद्भाव के स्थान पर दूरियां बढ़ने की संभावना अधिक थी। स्वेच्छा से इस चुनौती पूर्ण कार्य को परिसंपन्न करने का दायित्व उन्होंने अपने आपर पो ओढ़ा। हृदय की पवित्रता और करुणा ने असंभवन को सभंव बना दिया। गौरवशाली रथयात्रा की सानंद सफलता ने सौहार्द के नाम नया इतिहास लिखा। आचार्य महाप्रज्ञ सबके लिए बधाई के पात्र बन गए है।

कायराना हमला : अहिंसा की जीत

गुजरात के विश्व प्रसिद्ध अक्षरधाम को निशाना बना आतंकवादियो ने एक बार फिर धर्म प्रेमियों पर कहर बरपाया। उस समय आचार्य श्री का प्रवास अक्षरधाम के ही निकटवर्ती क्षेत्र कोबा में था। आपने देशवासियों एवं विशेष कर गुजरात की शांतिप्रिय जनता से शांति की अपील की। उस अपील का ही प्रभाव था कि पूरा वातावरण प्रतिक्रिया मुक्त रहा। आचार्य महाप्रज्ञ का सान्निध्य सबके लिए राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की स्मृति करवाने वाला था। भारत के दूसरे गांधी की वाणी में जनता मनों यह भलीभांति समझ लिया कि आतंकवादियों की कोई जाति और संप्रदाय नहीं होता है। येन केन प्रकारेण अशांति और दहशत फैलाना ही उनका मुख्य ध्येय होता है। उनके द्वारा लगाई गई आग में इंधन न डालना ही समझदारी का तकाजा है। शांति की स्थापना में आचार्य मे आचार्य श्री भूमिका उस समय आधार स्तंभ के रुप में रही।

अहिंसा: सामाजिक समरसता का सेतु

गुजरात से आगे बढ़ती हुई यह यात्रा महाराष्ट्र की धरती पहुंची। भारत की आर्थिक राजधानी बंबई में उसने अपनी प्रतिबद्धता व्यक्त करते हुए उसका भावपूर्ण स्वागत किया। यात्रा का एक दीर्घकालीन पड़ाव पुन- गुजरात के चलने वाली इस यात्रा ने जनमानस को उद्देश्यपूर्ण जीवन जीने की दिशा में काफी आगे बढ़ाया। श्रद्धालु और अश्रद्धालु सभी की जुबान पर आचार्य महाप्रज्ञ का नाम आता रहा।

सूरत से जलगांव की ओर प्रस्थित इस यात्रा का एक महत्वपूर्ण पड़ाव जलगांव होगा। अनुशासन पर्व के रुप मे तेरापंथ धर्मसँघ के पारंपिक महोत्सव मर्यादा महोत्सव की भव्य आयोजन होगी। महाराष्ट्र से मध्यप्रदेश को पावन करते हुए यह त्रिपथगा मई-जून तक राजस्थान के सिरीयारी गांव (पाली) में पहुंचेगी।

इस यात्रा के अंतर्गत स्थान-स्थान पर एकता सम्मेलन, दलित सम्मेलन आदि के द्वारा भावात्मक एकता का सशक्त वातावरण निर्मित हुआ है। अहिसा समवाय एवं अहिसा प्रशिक्षण के द्वारा शांति प्रिय लोग सहचिंतन, सहनिर्णय एवं सहक्रियान्वित के मुकाम तक पहुंचे है।

यात्रा के उद्देशय के अनुरुप मुखर होता रहा है। आचार्य श्री ने राष्ट्र के राजनेताओ, धर्मगुरु ओ एवं स्वयं सेवी संस्थाओ केपदाधिकारियों को प्रेरणा दी कि वे अहिसा और नैतिकता को केन्द्र में रख राष्ट्रीय विकास की दीर्घकालीन नीति तय करें। अहिसा को उन्होंने सामाजिक समरसता के सुदृढ सेतु कें रुप में प्रस्तुत किया है। अहिंसा के वैचारिक विस्तार के साथ - साथ हिंसा के कारणो का गहन अनुसंधान भी उन्होंने किया। अनैतिकता, तनाव, प्रदूषण बेरोजगारी जैसी समस्याओं के समाधान के लिए प्रेक्षाध्यान एवं जीवन विज्ञान का प्रायोगिक प्रकल्प प्रस्तुत किया। हजारों-हजारों लोगों ने एक साथ बैठ इनका अभ्यास किया। आचार्य श्री को शांति के राजदूत, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय एकता पुरस्कार जैसे सम्मानों से वर्धापित किया जाना सफलता की महान कड़ीया है। यात्रा ने भारतीय जनमानस को ही नहीं विश्व मानस को आंदोलित किया है एवं कर रही है। सर्वत्र अहिंसा का बिगुल बज रहा है। अहिंसक समाज की स्थापना और शस्त्रीकरण के इस दौर में मानवता के उज्जवल भविष्य की स्थापना है। ❖

त्याग-तपस्या की प्रतिमूर्ति आचार्य महाप्रज्ञ का साक्षात्कार

राष्ट्र चिंतन से ही समर्थ भारत

गोपाल शर्मा

वे सचमुच राष्ट्रीय संत है। पोप जॉन पाल द्वितीय को मृत्यु के बाद विश्व सम्मान मिला तो सो करोड़ भारतीयों के समक्ष यक्ष प्रश्न गुंज रहा था कि क्या हमारे यहां कोई ऐसा संत नही जिनके समक्ष श्रद्धा से सबका मस्तक झुक जाए, वाणी विराम ले ले, जगदगुरु शंकराचार्य जयेन्द्र सरस्वती के कथित कलक से यह सोच अधिक गहरा गया था। लेकिन यह प्रशन उत्तरविहिन नही है। इसका जवाब है आचार्य महाप्रज्ञ। श्वेत वस्त्रों से आच्छादित ये शान्ताकार आचार्य महाप्रज्ञ ज्ञान और विवेक के जीवत प्रतीक है। प्रक्षा शब्द प्र+ईक्ष धातु से मिलकर बना है। यह गहराई से देखने का समानार्थी है। प्रेक्षाध्यान का अर्थ है चित्त की निर्मलता, आधि, व्याधि, और उपाधि से परे समाधि की अवस्था का वरण।. जब आप आचार्य महाप्रज्ञ से प्रत्यक्ष होते हैं तो सहजता से वार्तालाप कर रहे ये महामुनि अतश मे उसी गहराई मे डूबे महामानव नजर आते है जो स्थिति दुर्लभ है.. संपूर्ण है. श्रेष्ठतम है। प्रेक्षा और प्रज्ञा का अद्भुत संगम। सोभाग्य स आचार्य महाप्रज्ञ अहिसा यात्रा के साथ जयपुर विहार पर है और मालवीय नगर के अणुविभा भवन मे विराज हुए है। अणुविभा भवन मे आदर्श मंदिर का सा- सुखद माहौल है। अद्भुत शांति और गुरु कुल क से शैक्षणिक माहाल म आचार्य महाप्रज्ञ ऋषि परम्परा का निर्वाह कर रहे है।

इंदिरा गांधी के बाद से देश के कितने ही प्रमुख व्यक्तियों से मिलने का अवसर मिला, जिनमे कुछ प्रधानमंत्री भी बने और कुछ विभिन्न वर्गों में शीर्ष पर विराजमान रहे थे, लेकिन आचार्य महाप्रज्ञ उन सबसे अलग है। गणाधिपति तुलसी को भी निकट से देखने का अवसर मिला, आचार्य महाप्रज्ञ मे गणाधिपति तुलसी की झलक भी पा सकते है। 14 जून 1920 को झुंझुंनु जिले के छोटे से टमकोर गांव के चोरडिया परिवार मे जन्मे इन महामुनि की माता और बड़ी बहन भी साध्वी परम्परा मे दीक्षित हुई। 85 वर्षीय आचार्य महाप्रज्ञ पिछले 75 वर्षों से निरन्तर साधनारत है, एक बालमुनि स लेकर तेरापंथ जैसे सशक्त संप्रदाय के प्रमुख आचार्य की यात्रा मे वे लाखो लोगो के लिये सर्वोच्च श्रद्धा के पात्र है.. आचार्य महाप्रज्ञ करुणा की मूर्ति है, उनसे आंखे मिलती है तो लगता है जेस उनक नेत्रों से स्नेहसलिला प्रवाहित हो रही है। ढाई माह में ही जिस नवजात के सिर स पिता का सया छिन गया हो . उस बालक नथमल ने 10 वर्ष की कच्ची उम्र में तेरापंथ के आठवे आचार्य कालूगणी स दीक्षित होकर जो स्नेह पाया था, शायद वही स्नेह तीन चौथाई सदी बाद भी आचार्य महाप्रज्ञ के रुप में अपन स्नेहित जनों में लूटा रहे हैं। जैसे गुरु देव तुलसी ने अपने उत्तराधिकारी के रुप में युवाचार्य महाप्रज्ञ

को तेरापंथ के यशस्वी आचार्य की भूमिका के लिए तैयार किया, उसी उदार भूमिका का निर्वाह आचार्य महाप्रज्ञ अपने उत्तराधिकारी युवाचार्य महाश्रमण के लिए कर रहे हैं। उनसे हुई वार्ता:

इस सांसारिक माहौल में कोई व्यक्ति अच्छे मार्ग पर कैसे चले?

अच्छे मार्ग पर चलने के लिये बुद्धि और विवेक की आवश्यकता है। प्रेक्षा ध्यान इसी के लिए है। अभ्यास और प्रशिक्षण की जरुरत होती है। व्यक्ति को अनावश्यक वस्तुओं के प्रति मोह कम करना चाहिए। यदि वैराग्य के मार्ग पर चलेंगे तो सांसारिकता में रहते हुए भी अच्छे मार्ग पर चला जा सकता है। दुर्गुणों को छोड़ना होगा।

लेकिन इस मोह-माया युग में वैराग्य कैसे आए?

ध्यान से चिंतन से वैराग्य आएगा। आज जिस संदर्भ में कह रहे हैं उसमें साधना से अच्छे बुरे का ध्यान करने से वैराग्य आ सकता है।

संघ सरसंघचालक सुदर्शनजी भी आपसे मिलने आए थे। राममंदिर मुद्दे पर आपकी वार्ता हुई होगी। उस विषय मे आप क्या सोचते है?

हां, सुदर्शनजी से वार्ता हुई थी। महंत नृत्यगोपालदासजी से भी मुलाकात हुई थी। मैंने कहा कि इस मुद्दे से राजनीतिज्ञों को अलग करके समाधान निकलने की कोशिश करनी चाहिए। राजनीति को इस विषय से अलग कर दिया जाए। फिर दोनों पक्षो के लोग आपस में मिलजुलकर बैठे और राष्ट्रहित मे फैसला करे, निश्चय ही, उनका फैसला सबको मान्य होगा।

आप क्या सोचते हैं अयोध्या मे क्या होना चाहिए?

यह दोनों वर्गों पर छोड देना चाहिए। वे मिलजुल कर आपस में विचार विमर्श करके तय करें।

'जैन समाज मे अल्पसंख्यक घोषित होने की भावना बलवती हो रही है। आप इस विषय में क्या सोचते है?

आचार्य तुलसी ने पहले ही स्पष्ट कर दिया था हम आरक्षण के पक्ष में नही है। यह राजनीतिक विषय है.. लेकिन समाज मे अल्पसंख्यक वगैरह की मांग चलती है तो हम उसका विरोध नहीं करते.. न' हम पक्ष मे जाते है और न विरोध करना पसंद करते है।

क्या आप हिन्दु समाज को भारतीय समाज के समानार्थी देखते हैं?

जब गुरु गोलवकर थे तो आचार्य तुलसी की इस संदर्भ में काफी बातें हुई है। चारों शंकराचार्य भी थे। हिन्दु कोई धर्म नहीं है। हिन्दु तो समाज है, बाहर वालों ने भारत वालों को हिन्दुस्तान का नाम दे दिया। इसलिए कोई संप्रदाय किसी भी उपासना पद्धति को मानने वाला क्यों न हो, वह हिन्दु समाज के अन्तर्गत ही आता है। हम भी उसी रुप में इस विषय को देखते हैं।

आपसे राष्ट्रपति से लेकर प्रधानमंत्री तक और विभिन्न राजनीतिक दलों के प्रमुख मिलते है, आपसे उनकी बातें भी खूब होती होगी, लेकिन व्यवहार में वह सब लागू होता क्यों नही दिखता? देखिए राष्ट्रपति एपीजे अब्दुल कलाम तो राजनीतिक व्यक्ति हैं नही। वे राष्ट्र के बारे में चिंतन करते हैं, लगातार सोचते रहते हैं। शेष राजनेताओं के समक्ष राजनीतिक दृष्टिकोण होता है,. वे चिंतन करें, देश के बारे में सोचें तो देश में काफी कुछ किया जा सकता है। देश को आगे बढ़ाया जा सकता है। देश की इस समय क्या प्राथमिकता होनी चाहिए?

इस समय हिन्दुस्तान की अर्थव्यवस्था पर ध्यान देने की जरुरत है। लोगों के बीच काफी आर्थिक असमानता है वह दूर होनी ही चाहिए।

महानगर टाईम्स जयपुर से साभार

'मैंने आंतरिक आनन्द का स्पर्श किया है'

डी डी न्यूज पर आचार्यश्री महाप्रज्ञ का विशेष साक्षात्कार

6 अगस्त को दिल्ली दूरदर्शन ने आचार्य प्रवर का विशेष साक्षात्कार लिया। दूरदशन की ओर से श्रीमती नीलम शर्मा ने सवाल पूछे। उनका समाधान आचार्यवर न किया। डी डी न्यूज चैनल पर इस साक्षात्कार का प्रसारण दो दिन मे तीन बार हुआ। दूरदर्शन न अत्यत प्रमुखता से राष्ट्रीय स्तर पर इसे प्रसारित किया। डी डी न्यूज चैनल पर प्रसारित वह महत्वपूर्ण साक्षात्कार अविकल रुप से यहां प्रस्तुत किया जा रहा है

नीलम शर्मा-नमस्कार 'संवाद मे आप सभी का स्वागत है। कहत है-जीवन एक सिक्क की तरह है और उसका मूल्य तभी पता चलता है, जब वह खर्च हा जाता है। इसलिए ज्ञाण मुनि कहते है कि-सब धीरे-धीरे खर्च करो। निश्चित रुप से इसके लिए जरुरत पड़ती ह छोट छोटे सकल्पो की। इसके लिए जरुरत पड़ती है एक विचारक, एक ज्ञानी, एक सत एक महाऋषि की, एक आध्यात्मिक गुरु की, जो हम रास्ता दिखा सक, दिशा दिखा सक। एस ही एक महान सत है तेरापथ जैन धम के आचार्य महाप्रज्ञजी, जिन्ह हाल ही म राष्ट्रीय साप्रदायिक सद्भाव पुरस्कार से सम्मानित किया गया। आइये, सवाद म उन्हा स बात करत है-

बहुत-बहुत स्वागत है आचार्य महाप्रज्ञजी आज हमार खास कार्यक्रम म। दस साल की उम्र मे आपने अपना घर छोड़ दिया। दस वर्ष की उम्र मे बच्चे खेलते है, कूदत ह आपन संसार को त्याग दिया, उसकी मोह-माया से अलग हो गए और एक कठिन रास्ता पकड़ लिया। कैसा रहा आपका यह सफर?

आचार्यश्री महाप्रज्ञ मै इसे नियति मानता हू। इसकी व्याख्या नही की जा सकती कि मन घर क्यो छोड़ा? यह आवश्य हुआ कि जब मै आठ-दस वर्ष का था, तब एक योगी आया। उसने कहा कि यह बच्चा बड़ा योगी बनेगा। मै उस समय न योगी शब्द को जानता था और न योग को। छोटे गाव मे रहता था। वहा कोई स्कूल भी नही था। कभी स्कूल म गया भी नही, पर एक अत प्रेरणा जागृत हुई, किसी मुनि के द्वारा कोई सकेत मिला और मन मुनि बनने का संकल्प कर लिया। अपनी माताजी के साथ मैने सकल्प लिया और मै दस वर्ष की अवस्था मे तेरापंथ के आठवे आचार्य पूज्य कालूगणी के पास दीक्षित हो गया।

नीलम शर्मा-आपने अपने ही मन मे सोचा और चल दिये तो घरवालो ने कहीं कोई विरोध नहीं किया?

आचार्यश्री-घरवालों ने विरोध थोड़ा-बहुत किया, पर संकल्प मजबूत होता है तो घरवाले भी झुक जाते हैं। संकल्प मजबूत बन गया। अब कैसे बना? उसकी व्याख्या करने के कारण भी मेरे पास नहीं हैं, किन्तु मैं नियति में बहुत विश्वास करता हूं कि कुछ ऐसी नियति, नियम होते हैं, कुछ प्राकृतिक सार्वभौम नियम होते हैं, उनकी वाख्या नहीं की जा सकती, पर घटना हो जाती है, इतना मैं जानता हूं।

नीलम शर्मा-जब आप आ गए, मुनि दीक्षा स्वीकार कर ली, कैसा रहा वह आपका अनुभव?

आचार्यश्री-अनुभव बहुत अच्छा रहा। प्रारंभ से ही आचार्य तुलसी के पास रहा। उनसे शिक्षा-दीक्षा प्राप्त की और अध्यात्म के प्रति एक गहन रुचि जागृत हो गयी। मैं उसमें काम करता रहा। *अध्ययन भी चला। संस्कृत प्राकृत का गंभीर अध्ययन चला* और भाषाओं का भी चला। *अध्ययन भी चलता गया,* साथ-साथ *अध्यात्म* के प्रयोग और साधना भी करता रहा। मैं यह कह सकता हूं कि मैने आंतरिक आनंद का स्पर्श किया है। इसका मुझे बड़ा संतोष है।

नीलम शर्मा-उस वक्त हजारों श्लोक आपने कंठस्थ कर लिये। *अगर* हम यह कहें कि साधारण बच्चो से निश्चित रुप से तुलना नहीं की जा सकती, लेकिन यह जो मन का संकल्प होता है, क्या इसकी कोई परिभाषा दे सकते है?

आचार्यश्री-मन का संकल्प और उससे भी आगे है हमारी भावधारा, भाव जगत। भावतंत्र हमें संचालित करता है। भावतंत्र का संबंध सूक्ष्म जगत के साथ बहुत है। हमारा एक सूक्ष्म जगत भी है। यह हमारी स्थूल शरीर की रचना है। इसके भीतर एक सूक्ष्म रचना है, जिसे बहुत कम लोग समझ पा रहे है, वहां से संचालित होता है। मैं मानता हूं कि उसकी प्रेरणा व्यक्ति को एकदम विकास की ओर ले जाती है। मन भी उतना समर्थ नही है, जितना समर्थ है हमारा भाव। भाव पर हमने बहुत काम किया है, भाव को सममझने का प्रयत्न किया है। मुझे लगता है कि मै शायद भाव को लेकर ही जन्मा था।

नीलम शर्मा-हम जानते है कि गणाधिपति तुलसी आपके गुरु रहे। आपका और उनका जो संबंध है, ऐसा संबंध गुरु और शिष्य का विरल देखने में आता है। कैसे याद करते हैं आप?

आचार्यश्री-यह भी कोई एक संयोग की बात थी कि आचार्य तुलसी का मेरे प्रति पूर्ण विश्वास था और मेरी उनके प्रति अगाध श्रद्धा थी। श्रद्धा और विश्वास जहां दोनो का योग होता है, वहां एक तीसरी बात पैदा हो जाती है। वह एक अज्ञात जगत को जानने की संभावना और प्रेरणा बन जाती है। मुझे लगा कि मै ज्ञात जगत में रह रहा हूं किन्तु मेरी अंतरयात्रा अज्ञात जगत की हो रही है। उससे मुझे बहुत कुछ जानने को मिला। लोग आश्चर्य भी करते हैं कि जो बच्चा कभी स्कूल मे गया नहीं, पढ़ा-लिखा नही, यहां तक कैसे पहुंच सकता है? यह प्रश्न तभी होता है जब हम अज्ञात जगत को नकार रहे हो। अगर अज्ञात जगत को स्वीकार करें तो बहुत कुछ हो सकता है। जो अकल्पित असंभावितहै, वह कल्पित और संभावित बन सकता है।

नीलम शर्मा-किसी से दीक्षा लेते हैं, शिक्षा लेते हैं, किसी को गुरु मान लेते हैं। गुरु जो कहता है वह हम करते है, किन्तु कई बार उसमें गलतियां हो जाती हैं। कभी-कभी गुरु से

डांट भी पड़ती है। कभी आपके साथ भी ऐसा हुआ कि कुछ ऐसे पुल गुजरे हों जो डांट के क्षण रहे हों ?

आचार्यश्री-हां ! जब हम छोटे थे तब कभी-कभी ऐसा होता था। डांट पड़ती थी, उसका कारण था कि पढ़ने में मन नही लगता था। दस वर्ष तक खेल-कूद में रहा, कुछ काम नही था। गांव के दस-बीस बच्चों के साथ हम खेलते रहते। न पढ़ना, न और कुछ काम। आज तो छोटे बच्चे को नियोजित कर दिया जाता है ?

नीलम शर्मा-ट्यूशन लगा देते हैं ?

आचार्यश्री-हां ! लगा देते है। हमारे कोई काम नही था। हम खेल-कूद मे ही रहे। यकायक पढ़ने मे मन लगना मुश्किल था। दो-चार वर्ष ऐसे ही चले। बाद में यह सब समाप्त हो गया। न कोई डांट, न कुछ और। कार्य आगे बढ़ता चला गया।

नीलम शर्मा-अणुव्रत आंदोलन जो कि आचार्य तुलसी ने शुरु किया, उस आंदोलन को आपने आगे बढ़ाया, उसको लेकर कई पदयात्राएं की। यह जो अणुव्रत आंदोलन है, इसका सार क्या है ? और आज की दुनिया के परिप्रेक्ष्य मे देखे तो आप इसका रिलेवेन्स कैसे देखते है ?

आचार्यश्री-मैं मानता हूं कि अणुव्रत की सदा प्रासंगिकता रही है। वह कभी अप्रासंगिक नही बनता। आज तो और अधिक प्रासंगिक है। जब चारो तरफ अनैतिकता और भ्रष्टाचार है, तब अणुव्रत की और प्रासंगिकता बढ़ जाती है। अणुव्रत का मतलब है नैतिकता की आचार संहिता। उसकी सदा अपेक्षा थी, है और रहेगी। समाज रहेगा तो नैतिक आचार संहिता आवश्यक रहेगी, इसलिए अणुव्रत प्रासंगिक है। हमने अणुव्रत को और कई नये आयाम दिये हैं, जिससे उसकी व्यापक पृष्ठभूमि बन जाए।

नीलम शर्मा-हम जानना चाहें कि इसका मूल मंत्र क्या है, तो आप क्या कहेंगे ?

आचार्यश्री-अणुव्रत का मूल मंत्र है व्यक्ति-व्यक्ति मे एक नयी चेतना और नैतिकता के प्रति निष्ठा जागे, प्रामाणिकता जागे। अप्रामाणिक कार्य कोई व्यक्ति न करे। आचार्य तुलसी ने इसेबहुत स्पष्ट किया कि जो धर्म पंथों मे है, ग्रथों मे है, धर्मस्थानों मे है, किन्तु जीवन व्यवहार मे नही है, बाजार मे अधर्म चलता है, कार्यालयों मे नैतिकता नही चलती, अधर्म चलता है। यह ग्रंथो का, पंथो का और धर्मस्थानों का धर्म हमारे काम नहीं आयगा, जब तक कि जीवन व्यवहार मे धर्म न आए। एक बहुत महत्वपूर्ण सवाल है कि धार्मिक के दो चेहरे बन गए। धर्मस्थान मे एकदम पवित्र हो जाता है और कर्मस्थान मे आता है, वहां किसी का गला काटने मे भी संकोच नही करता। यह जो दोहरा व्यक्तित्व बन गया, इसको समाप्त करना और मनुष्य मे नैतिकता, प्रामाणिकता और ईमानदारी की चेतना को जागृत करना इसका मूल मंत्र है।

नीलम शर्मा-महाप्रज्ञजी ! आप सही कह रहे है। यही वजह है कि शायद आज हम अच्छे डॉक्टर, इंजीनियर, वैज्ञानिक तो पैदा करते है, लेकिन अच्छे इंसान नहीं। अच्छे इंसान होने की शिक्षा नही मिल पा रही है। यही वजह है कि जो पढ़े लिखे लोग है, वे अपराध करते है, घोटाले करते है और दस तरह के खराब काम करते हैं। कहां कमी आती है ? और क्या इसका समाधान समझते है ?

आचार्यश्री-आचार्य तुलसी ने बंगाल और बिहार की यात्रा की थी, हम लोग पटना गए। पटना यूनिवर्सिटी में स्वागत का कार्यक्रम था। उस समय राज्यपाल थे-जाकिर हुसैन, वे कार्यक्रम के मुख्य अतिथि थे और प्रमुख वक्ता थे रामधारीसिंह दिनकर। जाकिर हुसैन ने एक बात कही-`आचार्य जी ! हमारा देश विकास कर रहा है, बड़े-बड़े कारखाने स्थापित हो रहे हैं। पंडित नेहरु का इस पर बहुत बल है, सबकुछ हो रहा है, किन्तु 'अच्छा आदमी पैदा नहीं हो रहा है। मैं आपका इसलिए स्वागत करता हूं कि आपने अणुव्रत के माध्यम से मनुष्य के निर्माण का कारखाना खोला है।

मैं मानता हूं कि जब तक हम शिक्षा पर गंभीर चिंतन नहीं करेंगे, अच्छे आदमी पैदा नहीं हो सकते। अच्छे आदमी के निर्माण के दो ही कारण हो सकते हैं-धर्मस्थान और शिक्षा। धर्मस्थान में भी यह काम नही हो रहा है। यह कहने में मुझे संकोच नहीं कि धर्म जितना बाहरी क्रियाकांडों में उलझा हुआ है, जितना सांप्रदायिक आग्रहों मे उलझा हुआ है, उतना अच्छे आदमी के निर्माण की ओर कोई ध्यान नही दिया जा रहा है। उसको तो हम नकार दें।

दूसरा है शिक्षा। शिक्षा मे भी अच्छा आदमी बनने का कोई प्रावधान नही है। अच्छा व्यापारी आदि बन सकता है। कुछ कर सकता है। जीविका के लिए और धन कमाने के लिए अच्छी क्षमता चल सकती है। आज स्कील और एफिसिएंसी इन दो पर सारा अटका हुआ है। शिक्षा भी उसी दिशा में जा रही है। इसीलिए हमने शिक्षा के साथ जीवन विज्ञान की कल्पना की। उसका मूलमंत्र यह है कि जब तक हमारा भावात्मक विकास नही होगा, तब तक चरित्र का विकास नहीं हो सकता। बड़े-बड़े पढ़े-लिखे लोग अपराध में चले जाते हैं, इसका कारण है कि वे बुद्धिमान है, उनका बौद्धिक विकास हुआ है, किन्तु भाव की दृष्टि से बहुत कमजोर है। उसका विकास नही हुआ है, इसीलिए अपराध करते है। जिनका भावात्मक विकास होता है, सारे भाव सकारात्मक बन जाते है, विधायक बन जाते हैं वे लोग समस्या आने पर भी गलत आचरण नहीं करे।

नीलम शर्मा-लेकिन आचार्यश्री ! भाव का विकास कैसे होगा ? आजकल की जो जिन्दगी है, वह इतनी तेज भाग रही है, उसकी इतनी जरुरतें हो गयी कि आदमी उसी में उलझा रहता है। वह समझता है कि शायद उसी मे उसको जीवन का सब मिल जाएगा, जो कि सच नहीं है।

आचार्यश्री-यह भावात्मक विकास शिक्षा के साथ होना चाहिए। उस समय कोई व्यापार में लगा नही रहता। शिक्षा मे ही लगा रहता है। विद्यार्थी पढता है तो केवल बौद्धिक विकास न हो, भावात्मक विकास भी हो। वह एक पूरी हमारी प्रायोगिक पद्धति है कि आंतरिक जो जैव रसायन है और अंतःस्रावी ग्रंथियो के स्राव, नाड़ी तंत्र, मस्तिष्क और मस्तिष्क के बहुत सारे न्यूरोट्रांसमीटर, प्रोटीन इन सबको मिलाकर तथा अध्यात्म और योग सबका समन्वय कर हमने पद्धति तैयार की है, जिसका नाम दिया है जीवन विज्ञान। यह प्रमाणित हो चुका है कि जहां जीवन विज्ञान की शिक्षा चलती है, वहां चरित्र का विकास होता है।

अभी आज संवाद मिला कि कर्नाटक राज्य में जीवन विज्ञान का बहुत व्यापक काम हो रहा है। वहां सरकार ने भी और यहां तक कि मुस्लिम समाज ने भी जीवन विज्ञान को अपने मदरसों में पढाने का संकल्प किया है। चरित्र विकास का तंत्र दूसरा है। मुझे आश्चर्य होता

है कि हमारी शिक्षा शास्त्रियों ने बायोलोजिकल आस्पेक्ट से विचार कम किया है। कैसे जैविक परिवर्तन से चरित्र का विकास हो सकता है? केवल बौद्धिक स्तर पर सारा चिंतन हुआ है और निश्चित मानता हूं कि बौद्धिक स्तर पर चरित्र का विकास लगभग असंभव है। वह हो सकता है भाव परिवर्तन के द्वारा और उसका कोई प्रयोग नहीं है।

हमने देखा-जहां जीवन विज्ञान का प्रयोग चला, वहां अभिभावकों की ओर से आया कि परिवर्तन आ रहा है। झाबुआ जिले के सौ आदिवासी विद्यार्थी हमारे पास आए। हमने उनसे बात की। साथ में शिक्षक थे। बातचीत में पूछा कि क्या परिवर्तन आया है? तो सबसे पहले शिक्षक बोले-हमारा विद्यालय शुरु होता और आधा घंटा में खाली हो जाता। कोई टिकता नहीं, सब भाग जाते। जीवन विज्ञान के प्रयोग के बाद हमारा विद्यालय पूरे समय चलता है। विद्यार्थियों से पूछा तो एक बोला कि मेरा क्रोध कम हो गया, एक बोला कि मै लड़ाई झगड़ा बहुत करता था, अब कम हो गया, मै हिंसा करता था, कम हो गयी। यह प्रत्यक्ष है और इसके प्रयोग भी हुए हैं।

नीलम शर्मा-आचार्यश्री। क्या वजह है कि आज जो धर्म को, द्वेष और वैमनस्य के लिए इस्तेमाल किया जा रहा है, लोगों की भावनाएं भड़काने के लिए के लिए इस्तेमाल किया जा रहा है। इसका नतीजा क्या निकल रहा है, यह हम देख रहे हैं। इसका समाधान क्या है?

आचार्यश्री-हमने इस बारे में जो अध्ययन किया और इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि अनुयायियों की संख्या बढ़ गयी, धार्मिकों की संख्या घट गयी। धार्मिक कभी लड़ाई-झगड़ा नहीं करते। मेरे पास कुछ वर्ष पहले लंदन से एक पत्रकार का प्रश्न आया था कि इतने धर्म हैं, फिर लड़ाई क्यों होती है? इतने धार्मिक हैं फिर लड़ाई क्यों होती है? मैंने उत्तर में बताया कि आप धार्मिक शाब्द का प्रयोग न करें। आप यह पूछें-इतने अनुयायी हैं, फिर लड़ाई क्यों होती है? अनुयायी तो लड़ेंगे ही। वे धर्म तक पहुंचे ही नही हैं। वह तो भीड़ है। धार्मिक लोग अगर हिन्दुस्तान में एक करोड़ हों तो भी शायद स्थिति बदल जाए। इतने धार्मिक नही है। यह संख्या है धर्म के अनुयायियों की। उनका काम क्या होता है? वे न धर्म को खुद जानते हैं, न धर्म का आचरण करते हैं, न उनमे नैतिकता है, तो फिर बात-बात पर लड़ाई होती है। लड़ाई करने का भी एक कारण है। जो लड़ाई में अग्रणी होता है उसे कुर्सी भी प्राप्त हो जाती है, वह मखिया बन जाता है। इसे मै एक तरह का व्यवसाय मानता हूं। यह भी व्यवसाय बन गया।

नीलम शर्मा-महाप्रज्ञजी! क्या यही वजह है कि आज विश्व म हम शांति नजर नहीं आती आतंकवाद नजर आता है, लड़ाई-झगड़े नजर आते है, बम, गोले, विस्फोट नजर आते हैं। इस विश्व शांति की जो परिकल्पना है आखिर इसका होगा क्या?

आचार्यश्री-देखिए, उसके कई कारण हैं। सांप्रदायिक कट्टरता का कारण है ही। दूसरा कारण गरीबी भी है, अभाव भी है। बहुत सारे कारण हैं। आज ही हमने समाचार पत्र मे पढ़ा कि मैक्सको अपहरण के मामले मे सबसे आगे है। क्योंकि बेरोजगार युवक है उनको काम नहीं मिलता। अपहरण करके फिरौती में लाख, करोड़ रुपया ले लेते हैं और आराम से रहते हैं। यह पूरा व्यवसाय बन गया। आतंकवाद भी एक व्यवसाय हो गया। इसलिए हमने कहा कि जब तक हम भूख की सममस्या पर विचार नही करेंगे, आतंकवाद, उग्रवाद, हिंसा की समस्याओं को नही रोका जा सकता। हमें इसे अनेक कोणों से देखना होगा। एक कारण नहीं

है। भूख भी एक कारण है, गरीबी भी एक कारण है, धार्मिक कट्टरता भी एक कारण है और आवेश की प्रबलता, इमोशन बहुत प्रबल होते है, वह भी एक कारण है। हमें सब कारणों पर विचार करना चाहिए। अहिंसा यात्रा में हमने इन सब कारणों को पकड़ा, इन सबके आधार पर काम किया तो काफी सफलता भी मिली।

नीलम शर्मा-महाप्रज्ञजी। आजकल की जो जिन्दगी है, लोगों को बड़े तनाव है। लोग दबावो मे काम करते हैं। ऐसे मे ध्यान शायद एक रास्ता हो सकता है। आपने प्रेक्षाध्यान पर काम किया है, लेकिन आजकल लोग यह कहते है कि ध्यान लगाने के लिए कहां जाएं? अब तो जगल और पर्वत भी नही रहे।

आचार्यश्री-जाने की कही जरुरत नही। टेशन का एक ही कारण नही है। कुछ तनाव के काल्पनिक कारण है। कुछ वास्तविक कारण है, यथार्थ मे होते है। कल्पना से भी बड़ा तनाव हो जाता है। एक पति अपनी पत्नी के प्रति संदेह करता है तो तनाव से भर जाता है।

पत्नि पति के प्रति सदेह करती है तो तनाव से भर जाती है। ऐसे ही भाई-भाई का संबंध है, औरो का सबध है। तो एक काल्पनिक तनाव शायद बहुत ज्यादा चल रहा है और कुछ यथार्थ की समस्याए है। उसके आधार पर भी तानाव है। लेकिन सबसे बड़ा तनाव आज धनी बनने, उस होड़ मे अग्रणी बनने और धन की सुरक्षा करने मे है कि काले धन को कैसे बचा सके? दो नबर का कैसे रख सके? इसमे सबसे ज्यादा तनाव है और वही तनाव आज हृदय रोग को बढ़ा रहा है, और भी बीमारियो को बढ़ा रहा है, मानसिक उलझने भी पैदा कर रहा है।

नीलम शर्मा-महाप्रज्ञजी। हम जानते है कि आपका एक प्रवचन लोगो की जिन्दगी बदल डालता है। एक मूल मत्र सवाद मे दीजिये, जिसको लेकर लोग यह सोचे कि हा, अब जिन्दगी का अर्थ हमे मिल सकता है?

आचार्यश्री-एक बात को मै बहुत महत्त्व देता हू। प्रेक्षाध्यान का एक मत्र है-रहे भीतर जियें बाहर। बाहर तो हमे जीना पड़ेगा। दुनिया है, उसमे जीना है, रोटी-पानी वहा मिलेगा, किन्तु भीतर रहें, इसका अर्थ है कि हम अपनी चेतना के साथ रहे। पदार्थ का हम उपयोग करेंगे किन्तु पदार्थ के प्रति हमारी आसक्ति नही होगी। प्रेक्षाध्यान का दूसरा सूत्र है, जिसका बहुत सफल प्रयोग हमने किया है समस्या और दुःख को एक न माने।

जीवन मे समस्या तो आएगी। जहा द्वद्वात्मक जगत है, समस्या तो आएगी। समस्या का समाधान करे, सुलझाए, पर दुःखी न बने। समस्या प्राकृतिक है और दुःखी बनना अपनी मूर्खता है, अपना अज्ञान है। अगर हम इतनी चेतना को स्पष्ट कर सके कि समस्या आने पर भी दुःख न हो, सुलझाने का प्रयत्न करे तो हमारी शक्ति भी अच्छी रहेगी, पुरुषार्थ भी अच्छा होगा और हम समस्या को सुलझा पायेगे। दुःखी बन जाएंगे तो पचास प्रतिशत शक्ति वहीं कम हो जाएगी।

नीलम शर्मा-बहुत-बहुत धन्यवाद। आचार्यश्री! हमारे दर्शक इस मूल मंत्र से जरुर लाभ उठाएँगे-रहें भीतर जिये बाहर।' ◆

विरल व्यक्तित्व के धनी

✍ साध्वी कनकश्री

गणाधिपति गुरुदेव ने मन मोहक लेखिनी से आचार्य महाप्रज्ञ के प्रति आशीर्दान की भविष्यवाणी मे लिखा मैं महाप्रज्ञ को आत्मस्थ देखना चाहता हूं। इसके लिए इन्हें कुछ करना नहीं होगा, आज इनके भीतर से जो ऊर्जा निकल रही है, उससे हजार गुना अधिक ऊर्जा नीकलेगी। और वह विश्व के लिए बहुत हितकारी बनेगी। आज आचार्य श्री महाप्रज्ञजी ने उस बात को सिद्ध कर दिया हैं। लगता है आचार्य श्री तुलसी की अतीन्द्रिय चेतना मे पहले ही सब कुछ निर्धारीत हो चुका था। विश्व व्यापी आंतक युद्ध व दिन दहाड़े हिसा के क्रूर कांण्डो के सघन बादलों की घटाओं मे भी साहसपूर्ण अहिसा यात्रा का संकल्प, आचार्य श्री तुलसी की अन्त:प्रेरणा का ही परिणाम हैं, वरना इस 83-84वें वर्ष मे ऐसे संघर्षो का सामना कोई कैसे कर सकता है। आपकी उदीयमान प्रज्ञा का प्रबलतम धरातल तो एक शक्ति स्रोत गुरुदेव के सपनो को साकार करने मे तीव्र शक्ति स्रोत बने। नव सृजन के अगणित उदाहरण भी दुनिया के सामने आ चुके थे। आपके प्रवचन, साहित्य तथा अध्यात्म वैज्ञानिक आविष्कारजन्य प्रेक्षाध्यान, जीवन तथा आगम संशोधन आदि प्रगतिशील उपक्रमों के लिए जो सुदीर्घ तप तपा उससे सहज सघन पुरुषार्थ फलित होता है।

ज्योतिष के फल के अनुसार त्रयोदशी तिथि मे जन्मने वाला जातक महासिद्धियों का भण्डार, महाबुद्धिमान, शास्त्रज्ञाता, इंद्रिय विजेता व सतत परोपकाररत रहता हैं। आप हिन्दु मुस्लिम तथा देश विदेश के प्राय: मनीषी मूर्धन्यो व नेताओं के दिल आसन पर यों विराजमान हो गये, मानो आचार्य महाप्रज्ञ रब, अल्ला, नानक, श्री कृष्ण, श्रीराम व महावीर के रुप में उनके मान्य इष्ट देव ही हो। आपका साहित्य, संस्कृत, प्राकृत, इंग्लिश, आदि भाषाओं का पांडित्य सबको आश्चर्यचकित बनाए बिना नही रहता। शैशव से सारल्य मे प्रवचन पटुता, लेखन दार्शनिकता, असांम्प्रदायिक-सत्य श्रुतधारा, जन समस्याओं के चक्रव्यूह में नव सृजन चेतना आदि से वीतराग काव्य का स्वत:सिद्ध रुप परिलक्षीत हुआ। संस्कार चैनल पर प्रतिदिन के प्रवचन व आपके साहित्य हर जबान की वाह वाही में मुखरित हुए। आप जितने विनत हैं, उतने ही अगाध श्रुत शिखरस्थ हैं।

लोकमान्य महर्षि सम्मान सचमुच आपके विश्व विजय के अशोक स्तंभ-सा पूर्णत: शुद्ध अध्यात्म का प्रमाण प्रस्तुत करता हैं। आपके पास मौन बैठकर भी दर्शन ज्ञान चरित्र की सरस त्रिवेणी में मन को सरोबार किया जा सकता हैं। आपके भीतर वह ऐश्वर्य है, जो ईश्वर का साक्षात् करवाता हैं। सदियों सहस्राब्दियों में ऐसे विरल व्यक्तित्व के दर्शन होना, आज के रोग, तनाव, आंतक व युद्ध के वातावरण में जीने वालों के लिए सतयुग के नव प्रभात का प्रयास हैं।

महाप्रज्ञ का अभिनव आलोक: कर्मवाद

नंदलाल जैन, जैन सेंटर, रीवा

मैं विज्ञान का विद्यार्थी रहा हूं। फलतः मेरी विचार सरणी मे जिज्ञासुवृत्ति एवं विश्लषन वृत्ति महाप्रज्ञजी का प्रमुख स्थान हैं। आचार्य श्री की जीवनयात्रा के तीन रुप मैंने देखें हैं-मुनि नथमल, युवाचार्य महाप्रज्ञ और आचार्य महाप्रज्ञ। मुनि के रुप में आपने जो सटिप्पण आगम-अनुवाद और विचार प्रधान साहित्य सर्जना की है, उस आधार पर तत्कालीन सभी विद्वान उन्हे 'विश्वकाष का जीवंत रुपों' कहने लगे थे। युवाचार्य एवं आचार्य के रुप में आप संघ के संगठन और मार्गदर्शन मे भी लग गय ह फलतः साहित्य सर्जना किंचित् मंथर हुई होगी, पर विचार एवं योजनाओं का प्रसार व्यापक हुआ ह। उनक प्रवचनों में प्रस्तुत लघुकथानक गहन विषयो को भी रोचकता एवं बोधगम्यता प्रदान करते हं। पर हम सामान्य लोगो के लिये उनके संपूर्ण साहित्य का पठन और मनन संभव नहीं ह, फिर भी जो कुछ म पढ़ पाया हूं उससे मुझे आगमिक ज्ञान तथा जैन विद्या की अनेक शाखाओं के अभ्यन्तर आलाक को झांकी मिली है।

महाप्रज्ञ जी (M) एक बहु-आयामी व्यक्तित्व हे। वे पदयात्री (F), आगमज्ञ ह (C), विवचक एवं लोकप्रिय प्रवाचक है (D), वैज्ञानिक हैं (S) साधक ह (O), प्रेक्षाध्यानी हं (P) जीवन विज्ञानी है (L), मौलिक चिन्तक एवं दार्शनिक (T), तथा संघ संवर्धक है (A)। वैज्ञानिक होन के नाते मै इन सभी तथा अन्य विशेषताओं (E) को निम्न समाकलित रुप मे व्यक्त कर सकता हूं।

$$M = \{A\,C\,D\,F\,L\,O\,P\,S\,T\,E$$

उनकी ये विशेषताएं गणित के रुप में परिणात्मकतः व्यक्त नही की जा सकती, क्योंकि ये सभी भावात्मक है। यदि इनका कोई गणितीय मान हो सकता है, तो वह वर्तमान मे उच्चतम कोटि का होगा। साथ ही, यह सभी मानते हैं कि उनकी ये विशेषताएं योगात्मक नही है, अपितु गुणनात्मक है। अतः इनका उच्चतम गुणनफल जैनों के असंख्यात और अनन्त की सीमाओं के बीच आयेगा। फलतः यद्यपि वे वृहत् कल्पभाष्य, 402 के अनुसार बहुश्रुत की तृतीय कोटि में आते है, पर वर्तमान में तो वे प्रथम कोटि के बहुश्रुत ही है। यह हम सभी का अहोभाग्य है कि हम उनके जीवनकाल मे उनसे प्रेरणा और मार्गदर्शन पा रहे है। उन्होंने दार्शनिक, चिन्तक एवं विवेचक तथा वैज्ञानिक-अनुप्रयोजी के रुप में अपनी अप्रतिम प्रज्ञा के दर्शन कराये हैं।

वैज्ञानिक दृष्टि

जैनतंत्र ने सदैव वैज्ञानिक दृष्टि को प्रेरित किया है। 'पण्णा संमिक्खये धम्म' पुब्बा पर विरोधां ज़दि, अवरणीय मूरयंतु समयसमयगा, चुक्किज्ज छलंग न घेतत्व.. और ..शास्त्रस्य लक्ष्ंपरीक्षा की उक्तियां

यही तो कहती है। हां, इतनी बात जरुर है कि दार्शनिक भौतिक या भावात्मक परीक्षा/समीक्षा करता है और वैज्ञानिक प्रायोगिक या भौतिक परीक्षा के साथ भौतिक परीक्षा भी करता है। यही कारण है कि वर्तमान में वैज्ञानिकों को सूक्ष्मतर घटनाओं के परीक्षणों एवं निष्कर्षों के लिये दार्शनिक ही कहा जाने लगा है। जैन पद्धति में 'अवग्रहेहावायधारणा, सूत्र के माध्यम से ज्ञान-प्राप्ति की चतुश्चरणी प्रक्रिया निरुपित की है जो वैज्ञानिक प्रक्रियाओं के समकक्ष ही है। दोनों प्रक्रियाओं में अंतर केवल सामान्य भौतिक एवं यांत्रिक विधियों से प्रयोग करने का है। आचार्य महाप्रज्ञ ने कर्मवाद पुस्तक में इन विधियों का उल्लेख करते हुए उन्हें भौतिक से भावात्मक तथा कर्मवाद की व्याख्या तक बहिर्वेशित किया है। उन्होंने अपनी वैज्ञानिकता की सीमा में दृश्य से अदृश्य और अमूर्त तक को समाहित कर लिया है। उन्होंने अदृश्य और अमूर्त जगत को भी, सिद्धसेन के विपर्यास में, तर्कवाद के जाल में गूंथ दिया है। जिससे उसकी विश्वसनीयता और प्रभावकता बढ़ी है। फलतः जैसे धर्मशास्त्र को ' सुपर साइंस कहते हैं, वैसे ही महाप्रज्ञ भी ..सुपर्व विज्ञानी.. कहे जा सकते है।

सामान्य जैन जगत अपने मूल या सहचरित आगमिक साहित्य की आध्यात्मिक एवं भौतिक विषय वस्तु को न केवल श्रद्धा एवं आदर की दृष्टि से देखता है। अपितु उसे त्रैकलिक सत्यता का गौरव भी देता है। उसमें अवग्रह, ईहा और अवाय के रुप प्रमुखता से पाये जाते है। उनमें प्रयोग और परिणाम मात्र पाये जाते है। प्रायः ये दोनों स्थूल रुप से भी दृष्टिगोचर होते है जैसा सारणी-1 से स्पष्ट है:

सारणी 1 : शास्त्रीय प्रयोग और परिणाम

क्रं.	अवग्रह	ईहा, अवाय
01.	आहार	जीवन संचरण, धर्म साधना की क्षमता
02.	ध्यान	आंतरिक उर्जा, तेजस्विता की वृद्धि, मन का एकदिशीकरण, शांति
03.	कर्म-आचरण	पुण्य, पाप, सुख-दुख की अनुभूति
04	अहिंसा	प्रेम, करुणा, कलह समाधान, धर्म-सम्भाव
05	संयम/तप	स्वास्थ्य लाभ, संवेग शांति, धर्म रुचि
06	नयवाद	विशिष्ट दृष्टिकोण
07	औषधि सेवन	स्वास्थ्य लाभ
08	अभक्ष्य भक्षण	उत्तेजक/हिंसक प्रवृत्ति

इसके विपर्यास में, जार्ज पीमेन्टेल के अनुसार, वैज्ञानिक पद्धति में प्रयोग (अवग्रह), निरीक्षण-संकलन (ईहा), परीक्षण और क्रियाविधि तथा निष्कर्ष (परिणाम, अवाय) के चरण होते हैं। इसमें प्रयोग एवं परिणामों के साथ क्यों ऐसा होता है.. के प्रश्न का समाधान भी होता है। महाप्रज्ञ जी ने अपने साहित्य, विचारणा एवं व्याख्याओं में इस मध्यवर्ती चरण को समाहित कर अनेक शास्त्रीय विवरणों की प्रामाणिकता एवं सत्यता को स्थापित करने का प्रयास किया है। उन्होंने शास्त्रार्थी, मत [illegible] एवं स्वयं के अभिप्रायों को भी प्रस्तुत किया है।

मुझे उनकी आगम ग्रंथों के टिप्पणों, कर्मवाद, आभामंडल, प्रेक्षाध्यान साहित्य [illegible] विज्ञान से संबंधित पुस्तकों में विशेषतः प्रभावित किया है। इनमें प्रक्रियाओं की क्रियाविधि को वर्तमान [illegible], रसायन, शरीर विज्ञान, तांत्रिका विज्ञान, मनोविज्ञान तथा परामनोविज्ञान जैसी अनेक [illegible] पर व्याख्यायित करते हुए इन सिद्धांतों को ज्ञान वर्धक, रोचक एवं अनुकरणीय बना दिया है। [illegible] मान्यता है कि विज्ञान ने धर्म को हानि नहीं, अपितु उसकी सत्य-स्पर्शिता को बढ़ाया है और [illegible]

अनेक अव्याख्यात सूक्ष्म तत्वों का उद्घाटन किया है। अतः हमें दार्शनिक के साथ वैज्ञानिक ज्ञान की आवश्यकता है। यद्यपि उन्होंने आगम या आगमकल्प ग्रंथों के मन्तव्यों की त्रैकालिक मान्यता के विषय में कोई विचार व्यक्त नहीं किये है, फिर भी उनके वर्णनों से संबंधित टिप्पणों में उन्होंने पूरी वैज्ञानिक दृष्टि अपनाते हुए ऐतिहासिक, तुलनात्मक एवं स्वदेशी एवं विदेशी प्रतिसंदर्भों के आधार पर समीक्षा की है तथा अन्वेषणीय, यथार्थ नहीं लगता, आदि शब्दों द्वारा अपना मन्तव्य भी प्रकट किया है। हम यहां उनके कुछ संदर्भों को व्यक्त कर रहे हैं:

अ. विद्वत्तापूर्वक वैज्ञानिक टिप्पण

1. दशवेकालिक सूत्र 4.16 पर रात्रिभोजन व्रत की मान्यता का ऐतिहासिक विवेचन

2. उत्तराध्ययन 3.1 में मनुष्यत्व की दुर्लभता तथा ठाणं (10.15) में प्रव्रज्या के साधारण दस आधार

3. उत्तराध्ययन के ही 3.4 मे जाति के अर्थों से संबंधित वैदिक, बौद्ध एवं हिन्दी मान्यताओं की समीक्षा।

4. उत्तराध्ययन 6.2 में प्रायः उच्चारित पुरुषार्थवादी वाक्य 'अप्पणा सच्चमेसेज्जा' की तुलनात्मक व्याख्या में ईश्वरवाद का खंडन तथा सत्यान्वेषण में परमुखापेक्षी चार अंगों की अनुपयोगिता।

5. .आमिष., .माहण. तथा .पाखण्ड.. आदि शब्दों की व्याख्याएं और लोकमूढ़ता का परिहार

6. .सहिए. शब्द के (सहिष्णुता के रुप में) उपयुक्त अर्थ का प्रतिपादन (डा. कांट ने लिखा है कि सहिष्णुता शब्द जैनों मे नहीं था। यह सत्रहवी शताब्दी में यूरोप मे प्रारंभ हुआ है, टालरेंस

7. ठाणं 8.56 में प्रणीत-रस-भोजन संबंधी विरोधी मान्यताओं का समन्वय।

8. संज्ञाओं के 4, 10, 16 प्रकारों में शरीर और मन का प्रभाव।

9. विभिन्न प्रकरणों में अर्थ भेद, विभिन्न परम्पराओं में क्रम भेद, नाम भेद, अनेक विद्वानों के मत और उन पर अपना स्वयं का मत

10. प्रश्न व्याकरण और विपाक सूत्र संबंधी मौलिकता एवं पाठ भेद की विवेचना।

महाप्रज्ञ जी ने अपने टिप्पणियों में अनेक नये तथ्यों का समाहरण भी किया है। उदाहरणार्थ, उन्होंने हृदय रोग को आतंकी रोगों में, जाति ज्ञान को मति ज्ञान के रुप में आधुनिक वैज्ञानिकता संभवनीय बताया है। साथ ही विकृति, निर्विकृति एवं विकृतिगत की शास्त्रीय धारणा में परिवर्तन की सूचना भी दी है (ठाणं 9.23)। उन्होंने केशलोंच की प्रक्रिया के शास्त्रीय हेतु देकर तर्कसंगत समाधान एवं अन्वेषणीयता का संकेत भी दिया है।

उन्होंने महावीर के गर्भ-संहरण की घटना को चमत्कारिक बताते हुए उसे विचारणीय कोटि में रखा है। महावीर की जन्मभूमि से संबंधित विवादित परम्पराओं का उल्लेख भी किया है। उन्होंने आत्मा और जीव को पर्यायवाची मानकर भी उसे प्रत्येक आत्मा एवं विश्वात्मा की समकक्षता का संकेत दिया है।

उनके टिप्पणों में कुछ अपूर्णतायें भी है। उदाहरणार्थ, ठाणं 9.22 में 100 शिल्पों का उल्लेख है, पर उनका विवरण संभवतः प्राप्त नहीं हो सका होगा। इसी प्रकार, संमूर्छन जन्म की अगदभंज के रुप में मान्यता अस्पष्ट सी लगती है। क्या इसे अजीव से जीव की उत्पत्ति माना जाय?

ये विवरण मुख्यतः भौतिक जगत के विवरणों से संबंधित है। इनमें टिप्पणकार के अध्ययन गांभीर्य,

तुलनात्मक विवेचन एवं सूक्ष्म विचार एवं तर्कणाशक्ति के दर्शन होते है।

कर्मवाद

अब हम एक परा-भौतिक चिंतन की झांकी देखें। महाप्रज्ञ जी ने ..कर्मवाद . जैसे दार्शनिक विषय को वैज्ञानिक रुप देकर उसकी बोधगम्यता एवं रुचिकरता बढ़ाई है एवं इस संबंध मे अनेक रुढ़ धारणाओं को प्रबल तर्कों एवं नवीन अन्वेषणों के आधार पर निरस्त किया है। इस संबंध में उनका एक लेख 1980 मे पं. कैलाशचन्द्र शास्त्री ग्रंथ मे प्रकाशित हुआ था जो 'कर्मवाद' पुस्तक का एक अध्याय बना है। इसमे वैयक्तिक विलक्षणताओं की मूलाधार मोहनीय कर्म की प्रकृतियों को मनोवैज्ञानिकतः ममान्य मूल प्रवृत्तियो एवं संवेगो से तुलना करते हुए यह बताया गया है कि वर्तमान जीवन (आनुवंशिकता और परिवेश) मनोविज्ञान का विषय है, जबकि जीव (अनादि परम्परा) करकर्मा का विषय है। हमारे संवेगो के उद्दीपन से या मोहनीयकर्म के विपाक से हमारे व्यवहार संचालित होते है। इनकी व्याख्या मे वर्तमान भौतिक विज्ञान की अनेक शाखाओं ने विकास में सहायता की है। हम उनसे पर्याप्त लाभान्वित भी हुए है। यह तथ्य विभिन्न कर्मों के विज्ञान की विभिन्न शाखाओं से प्रकट संबंध से व्यक्त होता है।

1-2	ज्ञानावरण-दर्शनावरण	मनोविज्ञान, तंत्रिका विज्ञान
3	वेदनीय	मनोविज्ञान
4	मोहनीय	मनोविज्ञान
5	अंतराय	मनोविज्ञान
6	आयुकर्म	शरीर क्रिया और स्वासथ्य विज्ञान
7	नामकर्म	शरीर रचना, शरीर क्रिया एवं मनोविज्ञान
8	गोत्रकर्म	समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र और मनोविज्ञान

विज्ञान की ये शाखाएं भौतिक जीवन से अधिक संबंधित है, पर कर्मवाद हमारे आध्यात्मिक विकास का भी प्रेरक है। लेकिन उसका मूल सूत्र मोहनीय कर्म ही है।

उनका कथन है कि किसी भी जीव के परिणाम (व्यवाहार) के दो कारण होते है" (1) वर्तमान कारण ओर (2) अतीत कारण। पुनर्जन्म की मान्यता के कारण कर्मवाद अतीत की ओर अधिक झांकता है, यद्यपि वर्तमान कर्म भी वर्तमान और भावी जीवन के निर्णायक होते है। फिर भी, अतीत से विच्छिन्न होकर वर्तमान की व्याख्या नहीं की जा सकती है। हमारे वर्तमान व्यवहारो के मूल स्रोत के रुप मे निम्न श्रृंखला संभावित है।

अतीत कर्म → वर्तमान प्रवृत्ति/कर्म → भविष्य कर्म (1)

कर्मवाद को उन्होने अनेक रुपो से वैज्ञानिकता प्रदान की है, जिन्हें निम्न प्रकार से व्यक्त किया जा सकता है"

जीव → जीवन → स्थूल शरीर → ग्रंथि स्राव → जीन → तैजसशरीर → कर्म शरीर → आत्मा (2)

कर्मवाद हमे स्थूल से सूक्ष्म जगत की ओर ले जाता है। कर्म जीन के अणुओं (प्राय: 10^{8} सेमी सेमी) से सूक्ष्मतर होते हैं। पर कितने, यह स्पष्ट नहीं है। शास्त्रों के अनुसार,

1 कर्म यूनिट = अनंतानत परमाणु x अनंतानंत वर्गना

यह तेजस शरीर से भी सूक्ष्मतर होता है। यदि अनंत का व्यवहारिक मान उत्कृष्ट असंख्यात + 1 माना जाय, और असंख्यात का मान महासंख + 1 माना जाय, तो यह मान 10/20 सेमी और इनका भार 10^{45} ग्राम माना जा सकता है। अतः कर्म यूनिट.चतुस्पर्शी ऊर्जा की समकक्षता प्राप्त

करते हैं। यही शास्त्रीय एवं आचार्य श्री का भी मत है। कर्मवाद हमें क्रियात्मकता से ज्ञाता दृष्टा भाव की ओर प्रेरित करता है। यह जीव से निम्न प्रक्रम के आधार पर बंधता है।

जीव→शरीर→क्रियात्मकता→योग→प्रमाद→कर्मबंध (3)

हमारे आचरण (व्यक्तिगत) और व्यवहार (सामुदायिक) के विभिन्न कारक-वंशानुक्रम, परिस्थिति, पर्यावरण, रासायनिक परिवर्तन-कर्मसिद्धांत के ही साक्षात् या परम्परा या रुप है।

कर्मवाद उत्परिवर्तनीय कार्य-कारण वाद का प्राचीन सिद्धांत है। यह भौतिकत: यंत्रवादी या नियतिवादी नहीं है। वीबर और फ्रेशनर ने भौतिक अवस्थाओं का अध्ययन कर पाया कि विभिन्न प्रकार के प्रेरक या कर्म (प्रवृत्ति,) के प्रभावों रुद्ध को निम्न समीकरण द्वारा व्यक्त किया जा सकता है।

$$S = k \ln R$$

इस समीकरण में कुछ संशोधन भी हुए है। इसके प्रायोगिक रुप में इंद्रिय तंत्र में होने वले परिवर्तनों जैसे-त्वचावरोध, अक्षि-लालिमा आदि से मापा गया है। उदाहरणार्थ, इन परिवर्तनों से क्रोध की तीव्रता/मंदता मापी जा सकती है। इंद्रिय-विषयों के लिए गंध मापी, रसमापी, रंगमापी यंत्र है, उसी प्रकार, आवेग-उप-आवेग-मापी यंत्रों के विकास से कर्मवाद की भावात्मकता द्रव्यात्मकता में परिणत होगी और उसे उक्त समीकरण से परिमाणात्मक अतएव और भी प्रभावी रुप दिया जा सकेगा।

कर्म सिद्धांत नियति या सार्वभौम नियम (नियति) है जिसका अपवाद दुर्लभ ही है। नियति शब्द की यह नवीन व्याख्या देकर उन्होंनें अनेक भ्रांतियां दूर की है। उनका कथन है यह सिद्धांत वैज्ञानिक होने के साथ ही एक आध्यात्मिक प्रणाली भी है।

हमारे आचार-व्यवहार तथा आवेग-उपआवेग अनेक कारकों के अतिरिक्त, मोहनीय कर्म तथा अन्य कर्मों के उदय पर आधारित हैं जिनके लिये निम्न सूत्र दिये गये है।

ज्ञान के साधन→धारणा→स्मृति→रागद्वेष→कर्म→आचरण (5)

कर्म और रागद्वेष का वलय: कर्म↔राग-द्वेष (6)

हमारे जीवन में द्रव्यकर्म और भावकर्म या प्रवृत्ति और परिणाम का आयत-चक्र सदैव चलता है:

(अ) वर्तमान प्रवत्ति →परिणाम (ब) द्रव्य कर्म→ भाव कर्म (7)

↑ ↓ ↑ ↓

परिणाम ← प्रवृत्ति भाव कर्म ← द्रव्य कर्म

भावकर्म को जैविक रासायनिक प्रक्रिया तथा दव्य कर्म को सामान्य अभिक्रिया के समकक्ष माना गया है। हमारे जीवन में अनेक समस्याओं के उद्भव को निम्न रुप मे समझाया गया है:

घटना-मस्तिष्क केन्द्रों का उद्दीपन–विभिन्न तरंगो की उत्पत्ति–आवेग–मानसिक अशांति–रोग–समस्याएं (8)

उद्दीपक→आंतरिक वातावरण→नाड़ी संस्थान→बाह्य वातावरण→व्यवहार (9)

यद्यपि कर्म की सार्वभौमसत्ता नहीं है, फिर भी, वर्तमान में कर्मो की प्रभावकता (अधर्मी समृद्ध, धर्मी असमृद्ध) के विषय में भी एक. के. जैन ने एक समीकरण प्रस्तुत किया है:

(भूत+ वर्तमान) अनुकूल कर्म >/< (भूत+वर्तमान) प्रतिकूल कर्म (समृद्धि/अ-समृद्धि (10) [illegible] विचारणीय है। इसके अतिरिक्त अनेक कारक भी कार्यकारी होते है। यह संवेदनात्मक अधिक [illegible] क्रम है। कर्म के अध्ययन के बिना धर्म और विवेक को नहीं समझा जा सकता।

कर्म का परिवर्तन

कर्मवाद परिवर्तन का प्रतीक है। यह रुढ़िवादी, पराजयवादी, पलायनवादी, निराशावादी नहीं है। यह पुरुषार्थ वादी है, परिवर्तन का सूत्र है। यह अर्जित मनोवृत्ति में परिवर्तन करता है और मौलिक मनोवृत्ति में रुपातरण करता है। मस्तिष्क के रेटिकुलर फोर्मेशन को औदयिक और क्षायोपशमिक व्यक्तित्व के रुप में व्याख्यायित किया जा सकता है। वर्तमान में ज्ञान-विज्ञान के विकास से कर्मों के क्षयोपशम में वृद्धि हुई है और हम भौतिक रुप से समृद्ध हुए है तथा हमारी धार्मिकता में वृद्धि भी हुई है। यही नहीं, विज्ञान की अनेक शाखाओं के विकास ने कर्म की तथाकथित सार्वभौमिकता में सेंध भी लगायी है। चिकित्सा विज्ञान का क्षेत्र इस दिशा में अधिक प्रभावी बना है।

कर्म का परिवर्तन या जात्यंतरण जीनों के परिवर्तन के समान मानना चाहिये। भाव परिवर्तन से ज्यात्यंतर होता है। जीन के समान कर्म-स्कंध में भी अनंत आदेश लिखे रहते हैं। वे कर्म परिवर्तन को तो मानते हैं, पर जीन परिवर्तन को नहीं, क्योंकि इसका दुरुपयोग हो सकता है।

कर्मों की वैयक्तिकता एवं सामुदायिकता

- कर्म उपादान दृष्टि से वैयक्तिक है, पर निमित्त की दृष्टि से सामुदायिक है।

कर्मवाद की प्रक्रिया

कर्म सिद्धांत की समस्त प्रक्रिया निम्न रुप में प्रदर्शित की गयी है:

योग/प्रवृत्ति→कर्म अर्जन→कर्मबंध→सत्ताकाल→विपाक→ 11

स्थितिकाल→उदयकाल→क्षयकाल→अकर्मता

कर्मशास्त्र की सीमा

यह सिद्धांत अनेक भावात्मक समस्याओं का समाधान नहीं देता, यह तो आध्यात्मिक शास्त्र से ही मिल सकता है।

कर्म के उपमान

जैन शास्त्रों में कर्म के मुख्यतः ग्यारह उपमान पाये गये हैं जो सभी कर्म की नकारात्मक या पुण्य विरोधी प्रकृति को निरुपित करते हैं। उत्तराध्ययन 12.46 में 'दोष' शब्द का अर्थ पाप या कर्म (संभवतः समानार्थी) बताया गया है। शास्त्रों में आठ कर्मों की अनेक प्रकृतियां बताई गई है। इनमें पाप प्रकृतियां 82 और पुण्य प्रकृतियां मात्र 42 ही हैं। इस आधार पर भी कर्म दो तिहाई नकारात्मक एवं एक तिहाई सकारात्मक है। इसके विपर्यास में, आचार्य श्री ने कर्म को महत्वपूर्ण सकारात्मक एवं पुण्य-मुखी प्रेरक उपमानों के माध्यम से निम्न रुप में निरुपित किया है।

सारणी 2 : कर्म के उपमान

स.कं.	शास्त्रीय उपमान	महाप्रज्ञ उपमान
01.	कीट	प्रकाश स्तंभ
02.	विष	अभिनेता
03.	चक्र	पुरुषार्थ प्रेरक
04.	बीज	भोगप्रेरक
05.	शत्रु	श्रमिक (मुफ्तखोर नहीं)
06.	मल	रुपांतर कारी

07.	वज्र	संघर्षकारी
08.	ईंधन	सार्वभौम नियम/नियति
09.	रज	संवादी
10.	जंजीर	ज्योतिषी (त्रिकालदर्शी)
11.	सजा	आध्यात्मिक प्रेरक

इनके माध्यम से उन्होंने इसके सकारात्मक रुप को सशक्त भाषा में अभिव्यक्त किया है। यह उनकी एक बड़ी सूझबूझ भरी देन है। इस आधार पर संभवतः यह भी सिद्ध होता है कि एक पुण्य प्रकृति दो पाप प्रकृतियों या हिंसक वृत्तियों का समन करती है। पुण्य-पाप के हल्के-भारी पन के आधार पर भी हाइड्रोजन-लीथियम के समान एक पुण्य प्रकृति औसतन पांच-सात पाप-प्रकृतियों का समन करती है। इसीलिये उनकी प्रेरणा है कि पुण्य कर्मों का अर्जन अधिक करना चाहिये। इस परिकलन में कर्म-घनत्व एवं प्रबलतांक की धारणा का भी उपयोग किया जा सकता है।

विभिन्न जीवों मे चैतन्य का विकास रागद्वेष की तरतमता के कारण होता है। एकेन्द्रिय जीवों में यह सर्वाधिक प्रचण्ड है, अतः उनका चैतन्य अल्पतम है। यह तथ्य जीव के पंचगुणी रुप (ज्ञान, दर्शन, सुख, वीर्य, पश्चत्ता) के आधार पर भी स्पष्ट होता है। यदि हम इन गुणों को आनुभविक मानों का रुप दे सके, तो एकेन्द्रियों की तुलना में पंचेन्द्रिय मनुष्यों की कोटि प्रायः एक लाख गुनी आती हे। इसलिए इनमें कर्मों का अर्जन एवं निःसरण अधिकतम बताया गया है।

कर्मवाद के अगणित और अनंत रुप है। उनमें से यहां हमने कुछ का ही निरुपण किया है। इससे ही स्पष्ट हे कि कर्म से संबंधित शास्त्रीय अधकारमीय धारणाओं को आचार्य श्री ने अभिनव प्रज्ञा-प्रकाश-किरणों से आलोकित कर नवीनता एवं प्रशस्तता प्रदान की है।

संपर्क सूत्रः-डॉ. नन्दलाल जैन, 12/644 बंजरंगनगर, इरीगेशन वर्सनगर के पीछे, (रीवा (म. प्र.) ❖

जैन एकता

-आचार्य महाप्रज्ञ

भगवान महावीर के समय तथा निर्वाण की दो तीन शताब्दियों तक जैन शासन एक था। व्यवस्था की दृष्टि से आचार्य अनेक थे फिर भी सैद्धांतिक, आचार सबंधी और वैचारिक मतभेद नहीं थे। एक दूसरे को साधु मानते थे और एक ही शासन के अखंड अंग मानते थे। सक्षम नेतृत्व के अभाव में शासन भेद शुरु हुआ। आचारभेद और विचारभेद प्रमुख बनता गया। वर्तमान में जैन शासन की एकता का आधार खोजना सरल नही है। इस समय जैन शासन की व्यवहारिक एकता भी निश्चित की जा सके तो बहुत बड़ी उपलब्धि होगी।

- आचार्य महाप्रज्ञ इक्कीसवीं शताब्दी और जैन धर्म, पृष्ठ 336

युग प्रभावक आचार्य

-पुरुषोत्तम जैन एवं रविन्द्र जैन, मालेरकोटला

जैन धर्म मे प्रभावक आचार्यों की लंबी श्रृंखला रही है। इन प्रभावक आचार्यों ने अपने 36 शास्त्रीय गुणो के माध्यम से जैन धर्म की हर तरह से, हर क्षेत्र मे प्रभावना करके जैन धर्म को झोपड़ी से राजमहल तक पहुंचाया है। जैन आचार्यों ने श्रावकों को दान की प्रेरणा देकर साहित्य, कला के क्षेत्र मे अपना अभूतपूर्व योगदान दिया है। इन आचार्यों में जैनो के सभी संप्रदायों के आचार्यों का संयुक्त योगदान रहा है। जब हम जैन इतिहास पर दृष्टि डालते है तो हमारे सामने कई प्रमुख नाम आते है जैसे आर्य सुधर्मा, आर्य जम्मबू, आचार्य भद्रबाबु, आचार्य स्थूलीभद्र, आचार्य हरिभद्र, आचार्य वृद्धवादी, आचार्य सिद्धसेन दिवाकर, आचार्य नेमिचन्द आचार्य सिद्धांत चक्रवर्ती आचार्य कुन्दकुन्द, आचार्य समन्तभद्र, आचार्य कलिकाल सर्वज्ञ हेम चन्द्र, आचार्य जिनचन्द्र, आचार्य जिनकुशल सूरी , आचार्य लव जी ऋषि, आचार्य यशो विजय, आचार्य अमोलक ऋषि, आचार्य आत्माराम, आचार्य विजय नन्द, आचार्य विजय वल्लभसूरि, आचार्य देशभूषण, आचार्य विद्यासागर, आचार्य विद्या नन्द, आचार्य देवेन्द्र मुनि, आचार्य तुलसी व आचार्य सुशील कुमार जी के नाम उल्लेखनीय है। इन आचार्यों ने जहां अपनी आत्मा को सम्यक्त्व से अलंकृत किया, वहां उन्होंने जैन साहित्य, कला, समाज, शिक्षा के क्षेत्र मे अपना महत्वपूर्ण योगदान देकर संसार मे जैन धर्म को जन धर्म बनाया है।

हमारा सौभाग्य है कि हमे 20वी सदी म पैदा हुए अधिकाश आचार्यों के दर्शन, वन्दन व प्रवचन सुनने का हमे सौभाग्य प्राप्त हुआ है। इन्ही प्रभावक आचार्यो की मणिमय रत्न माला के एक रत्न है आचार्य श्री महाप्रज्ञ। जिन्होंने इन पंक्तिया के लिखने तक अपने सयम के 75 वर्ष पूर्ण किए है। आप आचार्य भीषण जी द्वारा स्थापित आचार्य परम्परा के 10वे पट्टधर है। जैन धर्म की परम्परा मे तेरापथ सब से नवीन पथ है। इस परम्परा मे जहा आचार्य भीषण एक क्रातिकारी भिक्षु, राजस्थानी भाषा के साहित्यकार थे वहा आचार्य जयाचार्य का नाम उल्लेखनीय है जिन्होंने राजस्थानी भाषा के माध्यम से जैन आगमो का अनुवाद किया। यह धर्म संघ अपने आप मे अनुशासित संघ है। इसका आधार आचार्य भीषण द्वारा स्थापित अभूतपूर्व मर्यादा पत्र हैं, जो तेरापंथ का विधान है। इस की प्रमुखता है कि सभी साधु-साध्वियां एक ही आचार्य को गुरू मानते है। आचार्य की आज्ञा, निर्देश सभी साधुसाध्वियो को मान्य होते है। आचार्य कोई भी फैसला संघ हित में ले सकता है।

आचार्य श्री की आज्ञा गुरु आज्ञा व भगवान की आज्ञा मानकर तेरापंथी साधु-साध्वी, साधु समाचारी से जीवन यापन करते हैं।

बहु-आयामी व्यक्तित्व के स्वामी आचार्य श्री तुलसी:

जब-जब तेरापंथ के आचार्यों का नाम आता है तो आचार्य तुलसी जी का नाम सब से प्रमुखता से आता है। आचार्य तुलसी पूज्य कालुगणि के शिष्य थे। आप का सारा जीवन युग प्रधान आचार्य के रुप में बीता। तेरापंथ संप्रदाय जो मात्र राजस्थान, हरियाणा, मध्य प्रदेश के कुछ भागों तक ही सीमित था। आप के कारण संसार के कोने-कोने तक फैला। आप ने भगवान महावीर अणुव्रतों को लेकर एक नैतिक आंदोलन का संचालन किया है। इस के लिए आप ने समस्त भारत की लंबी-लंबी पद यात्राएं की। संसार के धर्म नेता, राजनेता आप से जुड़े। तेरापंथ के साधु-साध्वियों को शिक्षा के प्रचार के लिए आपने हिन्दी, अंग्रेजी के प्रसार के लिए आपने हिन्दी अंग्रेजी आदि भाषाओं का ज्ञान साधु-साध्वियों को कराने की प्रेरणा दी। अणुव्रत की चर्चा भारत के राष्ट्रपति भवन, लोकसभा, राज्यों की विधानसभाओं में हुई। हर धर्म, जाति, संप्रदाय के लोग अणुव्रत से जुड़े। आपने आगम साहित्य का विस्तृत कार्य शुरु किया। अणुव्रत अभियान के बाद आप श्री ने प्रेक्षा, ध्यान व जीवन विज्ञान का कार्य शुरु किया। जैन धर्म का साहित्य विभिन्न भाषाओं में देश-विदेश तक पहुंचा। संसार में जैन धर्म का प्रचार-प्रसार करने के लिए समण-समणी वर्ग की स्थापना आप की विशाल सोच का कार्य है।

जैन विद्या को जन-जन तक पहुंचाने के लिए आप की प्रेरणा से जैन विश्व भारती की स्थापना लाडनूं में हुई जो मानयता प्राप्त विश्वविद्यालय के रुप में सभी संप्रदाय के साधु-साध्वियो के स्नातक, स्नातकोत्तर, पी.एच.डी. तक की शिक्षा निःशुल्क प्रदान करता है। यह जैन समाज का विश्व मे एकमात्र संस्थान है जिसे यू.जी.सी. ने मान्यता प्रदान की है।

आचार्य श्री महाप्रज्ञ:

हमने ऊपर जिन कार्यों का वर्णन किया है, इन सब कार्यों के साथ एक नाम हमेशा जुड़ा रहा है वह है मुनि नथ मल्ल जी महाराज। मुनि नथ मल्ल जी को आचार्य तुलसी ने ..महाप्रज्ञ नाम उस समय प्रदान किया। जब आपको आचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया गया। आचार्य श्री तुलसी का जीवन संघर्ष से भरा रहा। सभी संघर्षों में आचार्य श्री महाप्रज्ञ सभी संघर्षो मे आचार्य श्री महाप्रज्ञ साथ खड़े रहे है। आचार्य तुलसी ने एक समय आचार्य पद का विसर्जन स्वेच्छा से 1994 में कर आचार्य महाप्रज्ञ को धर्म संघ का नेतृत्व संभाला। दुनिया के इतिहास में शायद ही पहले किसी धर्माचार्य ने स्वेच्छा से इतना महान पद छोड़ा हो। महान गुरु के महान शिष्य मुनि नथ मल्ल हैं जिनका संक्षिप्त परिचय हम दे रहे हैं। महापुरुषों का चरित्र नही उनकी तो लीला होती है, जो अद्भुत व अणुकरणीय होती है।

महाप्रज्ञ का जन्म:

आचार्य महाप्रज्ञ का जन्म राजस्थान के एक साधारण गांव में पिता तोला राम तथा माता बालु जी के यहां हुआ। आप को बचपन में पढ़ने में रुचि कम थी। पर मात्र 9 वर्ष की आयु में आप अष्टम आचार्य पूज्य कालुगणि के पास दीक्षित हुए। आप को पढ़ाने के जिम्मा मुनि तुलसी राम

(आचार्य तुलसी) को सौंपा गया।

आप की दीक्षा सरदार शहर में आचार्य श्री कालुगणि के हाथों संपन्न हुई। कौन जानता था कि बालक नथ मल्ल एक मुनि से संसार को महान दार्शनिक, चिंतक, तत्ववेता, शासण प्रभावक, कवि, साहित्यकार, उपन्यासकार, टीकाकार, व बहुभाषा विद् युग प्रधान आचार्य बनेगा। पर यह नीति थी या आचार्य तुलसी की कुशल कार्यगिरि जिन्होंने मुनि नथ मल्ल को आचार्य महाप्रज्ञ के रुप में संसार को समर्पित किया। आप ने आचार्य श्री तुलसी से आगम, कोष, दर्शन, काव्य, व्याकरण, तर्क शास्त्र का अध्ययन किया। आप की कुशल बुद्धि का फल आप के कार्य है जो आपने आचार्य तुलसी के साथ मिल कर किए हैं। आप आचार्य कालुगणि व आचार्य तुलसी के समय हुए हर घटना क्रम के आप साक्षी हैं। आप ने साहित्य को इस प्रकार बांटा जा सकता है (1) ध्यान साहित्य (2) कविता (3) महाकाव्य (4) आगम का शोधकार्य (5) अनेकों विषयों पर लिखे आप के शोध लेख (6) प्राकृत साहित्य (7) व्याकरण (8) कोष। सभी कार्यों में आपका महत्वपूर्ण योगदान है। आप सरस्वती पुत्र हैं। आप ने अनेकों जीवों को जीने की कला सिखाई है। आप ने सैकड़ों ग्रंथों का निर्माण किया है आप का जीवन एक चलता फिरता विश्वविद्यालय है। आप की महानता से प्रभावित होकर अनेकों अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं ने आप को विभिन्न अलंकरणों से अलंकृत कर अपनी श्रद्धा अर्पित की है। आप की लेखनी सतत जारी है। संस्कार चैनल माध्यम से विश्व के कोने-कोने में आप भगवान महावीर का संदेश जन-जन तक पहुंचा रहे है।

आप से हमारा प्रथम परिचयः

हमारा आप से परिचय तब हुआ जब हमने श्री उत्तराध्ययन सूत्र का प्रथम पंजाबी (गुरु मुखी) अनुवाद किया था। जिसे स्थानकवासी उपप्रवर्तनी जैन साध्वी श्री स्वर्णकांता जी महाराज की प्रेरणा से प्रकाशित करवाया गया। उनकी भावना थी कि चारों संप्रदायों के आचार्यों के आशीर्वाद इस में प्रकाशित होने चाहिए। हमने आचार्य श्री तुलसी से उनके विद्वान शिष्य पूज्य श्री जय चन्द जी महाराज स्वः वर्धमान जी व श्री रावल मल्ल के माध्यम से संपर्क किया। यह 1975 की बात थी। उस समय आचार्य श्री तुलसी व मुनि नथ मल्ल (वर्तमान महाप्रज्ञ) जयपुर में विराजमान थे। आप ने कृपा कर आचार्य तुलसी के संदेश के साथ अपना संदेश भिजवाया। यह हमारी आप से अप्रत्यक्ष भेंट थी। इस इतिहासक संदेश को शस्त्र के शुरु में स्थान दिया गया।

फिर आप का पंजाब भ्रमण हुआ। आप मालेरकोटला पधारे। उस समय आप का ध्यान साहित्य जैन जगत में प्रेक्षा ध्यान के माध्यम से छाया हुआ था। हमें भी पढ़ने का सौभाग्य मिला। मालेरकोटला प्रवास के समय आप से प्रेक्षा ध्यान संबंधी प्रश्नोत्तर हुए। उन्हे रिकार्ड भी किया। यह हमारी विधि है। उस के बाद तो दिल्ली, लुधियाना, जयपुर, लाडनूं व गंगाशहर में आप का आशीर्वाद हमें प्राप्त होता रहा है। आप को लुधियाना में आगम वाचना करते देखने का हमें सौभाग्य मिला। आप कितना श्रम करते है इसे साक्षात् आंखों से देखा। आचार्य श्री को दो आचार्य को देखने का अवसर मिला। उनके अनुभवों से आप ने बहुत कुछ सीखा। उनके आशीर्वाद से आप उनके धर्म प्रचार को आगे ही नहीं बढ़ा रहे। बल्कि अपने स्वतंत्र धार्मिक चिन्तन से संसार के लोगों को भगवान महावीर का संदेश दे रहे है। 1995 में आप विधिवत्, आचार्य बने और आचार्य तुलसी गणाधिपति।

आपने भगवान महावीर के 2600 साल जन्म कल्याणक पर दो वर्ष का अहिंसा यात्रा का आयोजन किया। यह अहिंसा यात्रा राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश के क्षेत्रों से होकर 20.05 में देहली में संपन्न होगी। इस यात्रा में अनेकों राजनेता, धर्मनेता आप के इस आंदोलन से जुड़े। हजारों हिन्दु, मुस्लिम, पारसी, सिक्ख, आप की इस यात्रा से जुड़े। गुजरात के संप्रदायक दंगों के शांति प्रयास अहिंसा की महानता दर्शाता है। आप के इस प्रयास से सब से ज्यादा प्रभावित हुए भारत के वर्तमान राष्ट्रपति व वैज्ञानिक डॉ. ए.पी.जे. अब्दुलकलाम। वह आप के प्रयास से प्रभावित हो कर सूरत पधारे। उन्होंने आप की अहिंसा यात्रा के प्रयासों को आगे बढ़ाने के लिए धार्मिक समन्वय का रुप सूरत घोषणा तैयार की। राष्ट्रपति का उनके सचिव के माध्यम से संपर्क बना रहता है। महामहिम राष्ट्रपति की प्रार्थना पर आप ने सन 2005 का चातुर्मास दिल्ली में करने की घोषणा की। आशा है कि यह चातुर्मास अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ख्याति प्राप्त करेगा। प्रेक्षा ध्यान पद्धति संसार के लोगों को शारीरिक व्याधि व तनाव से मुक्ति दिलायेगी।

आपके दीक्षा के 75 वर्ष पूर्ण होने पर जैन जगत की एकता के प्रतीक श्री जिनेन्द्र कुमार जैन मुख्य संपादक दैनिक यंगलीडर व जिनेन्दु एक विशेषांक निकाल रहे है। हम इस लेख के माध्यम से जहां गुरु देव को उनकी दीक्षा जयंती पर वन्दना करते है वहां श्री जैन के इस विशेषांक निकालने पर आभार प्रकट करते है। उनका यह विशेषांक आचार्य श्री की गुणगाथा गाने में सक्षम हो, यह शासण देव से प्रार्थना है।

शासणेश प्रभु महावीर जी आचार्य महाप्रज्ञ को दीर्घायु व सुन्दर स्वास्थ्य प्रदान करें, ताकि यह युगों-युगों तक समाज व मानव जाति व जैन धर्म का मार्ग दर्शन करते रहे। इस मंगलवेला पर यही प्रार्थना है।

संपर्क सूत्र-रविन्द्र जैन, पंजाबी भाषा के एक मात्र जैन लेखक, विमल काल दीप्त, भगवान महावीर मार्ग, पुराना बस स्टेण्ड के समीप, मां. मालेरकोटला (पंजाब)❖

सामायिक की पद्धति

-आचार्य महाप्रज्ञ

शरीर का मूलभूत वस्तु है। शरीर की चंचलता छूटती है तो सब कुछ ठीक हो जाता है, प्रकंपन भी कम हो जाते है। सामायिक समाधि का मूल कारण है शरीर की स्थिरता। सामायिक के बत्तीष दोष माने जाते हैं। शरीर का हिलाना डुलाना, सहारा लेना, चंचल करना आदि आदि सामायिक के दोष है। सामायिक में शरीर स्थिर होना चाहिए। शरीर जितना स्थिर ओर शांत होगा, उतनी ही नहीं सामायिक समाझि प्राप्त होगी, सिद्ध होगी। शरीर चंचल रहेगा तो कुछ भी नहीं बनेगा। सामायिक में शरीर स्थित और मन खाली होना चाहिए। तीनों बातें साथ में होती हैं तब सामायिक समाधि निष्पन्न होती है।

— आचार्य महाप्रज्ञ अध्यातम का प्रथम सोपान : सामायिक पृष्ठ 24

आओ जाने इतिहास के झरोखे से

माणिकचंद पुगलिया

1. महाप्रज्ञ ने गहन अन्वेषण के पश्चात सन् 1975 संवत् 2032 को जयपुर में ध्यान की विकसित पद्धति का नाम प्रेक्षाध्यान नियोजित किया।

2. महाप्रज्ञजी के सान्निध्य में प्रेक्षा ध्यान का पहला विधिवत शिविर 3 मार्च, 1977 को जैन विश्व भारती, लाडनूं के प्रागण मे हुआ।

3. आचार्य तुलसी की प्रेरणा से महाप्रज्ञ जी ने मूल्यपरक शिक्षा एवं नैतिक शिक्षा को रुपायित करने के लिए 28 दिसंबर, 1979 को जीवन विज्ञान का उद्भव किया।

4. माघ महीना और महाप्रज्ञ का सुखद संयोग हैं, क्योंकि आचार्य महाप्रज्ञ कि दीक्षा, अग्रगण्य पद, निकाय सचिव, युवाचार्य पद, आचार्य पद प्रतिष्ठा और आचार्य पदाभिषेक समारोह आदि समस्त शुभ घटनाएं माघ महिने केशुकक्ल पक्ष में ही घटित हुए हुई।

5. तेरापंथ धर्मसंघ में हिंदी भाषा मे लिखित पहला महाकाव्य ऋषभायण आचार्य महाप्रज्ञ द्वारा सृजित हैं।

6. आचार्य तुलसी ने 18 फरवरी, 1994 को सुजानगढ़ म अपने आचार्य पद का विसर्जन कर युवाचार्य महाप्रज्ञ को आचार्य महाप्रज्ञ बना दिया। इस प्रकार मुनि नथमलजी बिंदु से सिंधु और शिष्य स सबसे सरताज बन गए।

7. आचार्य महाप्रज्ञजी न तेरापंथ धर्मसंध के तीन महोत्सव को जोडते हुए इसका शुभारंभ किया।

8. भारत सरकार के विश्व विद्यालय अनुदान आयोग ने 22 फरवरी, 1989 को प्राकृत भाषा के पंडित के रु प में तीन विद्वानों को चयनीत किया जिसमें से एक आचार्य महाप्रज्ञ हैं।

9. विश्व के शीर्षस्थ दार्शनीकों की संस्था इंटरनेशनल सोसायटी फॉर इंडीयन फलॉसफी ने आचार्य महाप्रज्ञ को अपनी कार्यकारिणी सदस्यों में सम्मिलित किया।

10. आचार्य महाप्रज्ञजी ने 18 फरवरी, 1994 को सुजानगढ़ में आचार्य तुलसी को गणाधिपति पूज्य गुरुदेव पद से विभूषित किया। ◆

गम्भीर चिन्तक

— अगरचन्द नाहटा

जैन धर्म में स्वाध्याय और ध्यान को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। उत्तराध्ययन सूत्र के समाचारी नामक अध्ययन में साधु-साध्वी की समाचारी में तो यहां तक कह दिया गया है कि प्रथम प्रहर में स्वाध्याय, द्वितीय प्रहर में ध्यान, तृतीय प्रहर में गोचरी आदि शारिरीक क्रियाएं, चतुर्थ प्रहर में फिर स्वाध्याय। इसी तरह रात्रि मे एक पहर की निद्रा, बाकी प्रहरों में स्वाध्याय और ध्यान का क्रम चालू रखने का विधान है। अर्थात दिन और रात के आठ प्रहरों में साधु साध्वी चार प्रहर का स्वाध्याय, दो प्रहर का ध्यान, एक प्रहर गोचरी आदि और रात्रि का एक प्रहर निद्रा, यह मुनिचर्या है। पर देश और काल की स्थिति में इतना अन्तर आया कि आज उस क्रिया का पालन बहुत कठिन हो गया है। मध्यकाल में ध्यान की पद्धति साधारणतया लुप्त सी हो गई थी। अतः मेरे मन में यह बार-बार आया रहता था कि ध्यान की पद्धति साधु-साध्वियों में फिर से चालू हो। यद्यपि बीच-बीच में कुछ ऐसे जैन-मुनि हुए हैं, जिन्होंने लंबे समय तक ध्यान की साधना की है।

जब आचार्य श्री तुलसी का कलकत्ते में चातुर्मास था, तो एक दिन रात को जब उनसे मिलने गया, तब अपना मनोभाव व्यक्त किया कि आपने साधु-साध्वियों में पढ़ाई तो बहुत अच्छी चालू कर दी है। थोड़े वर्षों में ही काफी विद्वान लेखक-लेखिकाएं तैयार कर दीं, पर आगमोक्त ध्यान की परम्परा चालू करने की बड़ी कमी नजर आती है, तो आचार्यश्री ने कहा कि आपकी बात बहुत ठीक है, हम भी चाहते हैं, आपकी जानकारी में कोई ध्यानयोगी या साधक जैनों में हो, तो उसका तथा जैन-योग-संबंध ग्रन्थों का नाम बतलाईयें। तो मैंने अपने पूज्य गुरु सहजानन्दजी का नाम बतलाया, जो वर्तमान में बहुत अच्छे ध्यान योगी हैं साथ ही कुछ ध्यान संबंधी ग्रन्थों की भी सूचना दी।

मुझे यह देखकरऔर जानकर बहुत ही प्रसन्नता होती है कि आचार्य श्री तुलसीजी, मुनि श्रीनथमल जी, मुनि श्री किशनलाल जी आदि के प्रयत्नों से, तेरापंथी साधु साध्वियों में, ध्यान की अच्छी प्रगति हुई है। मुनि श्री नथमलजी के गंभीर और ठोस चिन्तन ने ध्यान कीजैन-पद्धति, जिसे प्रेक्षा ध्यान नाम दिया गया है, सबके लिए सुलभ कर दी है। सैकड़ों श्रावक श्राविकाएं ही नहीं, जैनेतर भी इससे लाभ उठा रहे हैं। यह युग की मैं इसे बहुत बड़ी उपलब्धि मानता हूं।

दार्शनिक और विचारक के रुप में मुनि श्री नथमलजी बहुत समय से प्रसिद्ध रहे हैं, उन्होंने अपने चिन्तन को और आगे बढ़ाया। अध्ययन भी बहुत अच्छा किया। इन दोनों विशिष्टताओं के कारण प्राचीन जैन आगमों के सम्पादन अनुवाद और टिप्पणियां लिखने में बहुत अच्छी सफलता मिली है। इधर चिन्तन की गहराई में ध्यान में भी बहुत अच्छी प्रगति हो सकी और उनकी मौलिक चिन्तन प्रवृत्ति

से अनुभव के द्वार खुले।

मुनि श्री नथमलजी ने 'मैंने कहा' नामक पुस्तक की प्रस्तुति में स्वयं लिखा है कि मैंने दर्शन की भाषा को समझा, पर कहानी की भाषा को नहीं [illegible] था। मैं दर्शन की सच्चाई को दर्शन की भाषा में ही प्रस्तुत करता, [illegible] सुनने से पहले [illegible] आशंका से भर जाते, भयभीत हो जाते। उनकी आशंका इस निर्णय तक पहुंच जाती कि मुनि नथमल बोल रहे हैं, अब कुछ समझ में आने वाला नहीं है, वे सुनने की मुद्रा में ही नहीं रहते, [illegible] उनकी समझ में नहीं आता और उनकी आशंका [illegible] में बदल जाती। [illegible] तक यह क्रम चलता रहा। मैंने नयी यात्रा शुरु की। आचार्य श्री तुलसी ने एक दिन कहा- "तुम दर्शन की भाषा को कुछ सरसता में बदलो जिससे जनता उसे समझ सके।" मेरी नयी यात्रा [illegible] दर्शन की भाषा भी कहानी की भाषा को जोड़ दिया। केवल कहानी की भाषा को ही नहीं जोड़ दिया। केवल कहानी की भाषा को नहीं जोड़ा, किन्तु दर्शन की भाषा को भी कहानी की भाषा में कहना शुरु कर दिया। थोड़े समय बाद ही कुछ ऐसा हुआ कि लोग मुझे सुनने की ही मुद्रा में बैठते हैं औरदर्शन को गंभीर चर्चा प्रस्तुत करता हूं। तो उसे भी कहानी के रुप में सुन लेते हैं।

वास्तव में उनके जीवन में नये-नये उन्मेष खेलते रहे हैं, पहले वे साधारण थे, बढ़ते-बढ़ते असाधारण बन गये। पहले वे कुछ ही लोगों के समझने योग्य थे अब सबके लिये उपयोगी बन गये। पहले साम्प्रदायिक दृष्टि में आबद्ध थे, अब उससे उपर उठ गये। हर व्यक्ति को उनके अनुभव ज्ञान से कुछ न कुछ नयी जानकारी और प्रेरणा मिलती है। आगमों का कार्य और ध्यान पद्धति का विस्तार विशेष रुप से उल्लेखनीय है। उनके साथ रहने और काम करने वाले कई मुनि भी काफी कार्यक्षम और योग्य बन सकते हैं।

यह भी बहुत महत्व की बात है कि उनके भाषण टेप कर लिये जाते हैं, जिससे सहज ही में अनेकों ग्रन्थ तैयार होकर प्रकाशित भी हो गये। सहयोगी मुनि श्री दुलहराज जी आदि ने उनके अनेक ग्रन्थो का सम्पादन कर दिया, अन्यथा वे इतने जल्दी प्रकाश में नहीं आ पाते।

जैन मुनियों मे वे अपने ढंग के एक ही है। आचार्य तुलसी के साथ लम्बे समय तक रहने से उनकी प्रसिद्धि और योग्यता भी इतनी अधिक बढ़ सकी। गुरु के प्रति समर्पण भाव, श्रद्धा, निष्ठा और विनय उनकी योग्यता के विकास में बहुत बड़े कारण है। जिस विषय पर गुरु प्रसन्न हो जाये और गुरु का अन्तर हृदय से आशीर्वाद मिले, उसकी महिमा का क्या कहना। एक तो स्वयं ही योग्य एवं प्रतिभा सम्पन्न दूसरे अनुकूल वातावरण एवं सहयोग" फिर तो, दिन दूनी रात चौगुनी, प्रगति होते देर नहीं लगती। आचार्य तुलसी ने पहले 'महाप्रज्ञ' का पद दिया और अब युवाचार्य का। वास्तव में यह सर्वथा उपयुक्त और सूझबूझ वाला निर्णय है। वे जैन-शासन की खूब सेवा एवं प्रभावना कर, तथा आत्मोन्नति के चरम शिखर पर पहुंचे- यही शुभकामना है।

वर्तमान में जीना

शरीर-प्रेक्षा का एक महत्वपूर्ण सूत्र है- वर्तमान मे जीना। यह वर्तमान को देखना सिखाता है। यानी वर्तमान मे शरीर में क्या-क्या हो रहा है, उसे देखो, कौन-सा पर्याय चल रहा है? कौन-सा पर्याय नष्ट हो रहा है? कौन-सा पर्याय उत्पन्न हो रहा है? क्या-क्या जैविक और रासायनिक परिवर्तन घटित हो रहा है? हृदय का संचालन कैसे हो रहा है? शरीर के रसायन और विद्युत प्रवाह किस प्रकार से हो रहे है? इन सारी घटनाओं को देखना, वर्तमान को देखना है। शरीर-प्रेक्षा का अभ्यास वर्तमान को देखने का अभ्यास है- न अतीत मे जीना और न भविष्य मे जीना केवल वर्तमान में जीना। —— आचार्य महाप्रज्ञ, प्रेक्षा ध्यान : शरीर प्रेक्षा, पृष्ठ 6

महाप्रज्ञ ने कहा...

हमारे क्रियात्मक और व्यवसायिक क्षेत्र में मानसिक एकाग्रता बहुत मूल्यवान है। किसी भी कार्यक्षमता का आधार मानसिक एकाग्रता है। डॉक्टर, वकील, प्रोफेसर, कर्मचारी हो या किसी बड़े संस्थान का प्रबध निदेशक (मैनेजिग डायरेक्टर) हो या सामान्य गृह कार्य मे रत गृहिणी हो सबको अपन अपने कार्य मे मानसिक एकाग्रता अत्यंत अपेक्षित है। किसी भी कार्य मे जब तक चित्त एकाग्र नही होगा- तन्मय नहीं होगा, तब तक उत्पादन क्षमता (ऑपरेशन एफिसियेन्सी) का स्तर अत्यंत निम्न होगा। क्षमता 20 प्रतिशत और शक्ति का अनावश्यक व्यय 80 प्रतिशत होगा। किंतु जब किसी भी कार्य मे चित्त की तन्मयता होगी तब क्षमता 80 प्रतिशत व अनावश्यक व्यय 20 प्रतिशत हो जाएगा अथवा ठीक पहले के विपरीत।

•••

हमारी चेतना ब्रह्म जगत के पदार्थों से जुड़ी हुई हे, उसमे आसक्त है इसलिए वह बार-बार बाहर की ओर दौड़ती है। उसका आकर्षण है बाहर क प्रति। भीतर रहना या अपने स्थान से रहना उसे पसंद नही है। इस स्थिति को बदलने, पदार्थ के प्रति मूर्च्छा या आसक्ति को कम करने का अर्थ है- चेतना का भीतर मे प्रवेश। इसका माध्यम है- अतर्यात्रा का प्रयोग। — आचार्य महाप्रज्ञ अध्यात्म की वर्णमाल, पृष्ठ 17

•••

आनुवंशिकता, परिस्थिति और पर्यावरण-ये तीन कारण मनुष्य के स्वभाव को और व्यवहार का असंतुलित तथा असमान्य बनाते है। इसी कारण की श्रृंखला मे एक महत्वपूर्ण कारण है 'जीन'। यह माना जाता है कि जब शिशु का निर्माण होता है, तब क्रोमोसोस की श्रृंखला मे जो 'जीन' होते है, उनमे कोई गड़बड़ी हो जाती है तो बच्चा प्रारभ से ही अपराधी मनोवृत्ति वाला हो जाता है, वह आसामान्य आचरण करने लग जाता है। 'जीन' का सूत्र है- एक्स, वाई, वाई। यदि एक वाई अधिक हो जाती है तो असंतुलन पैदा हो जाता है और बच्चा अपराधी बन जाता है।

•••

स्मृति की उधेड़बुन, कल्पना का तानाबाना और विचार की श्रृंखला, इसका नाम है चंचलता। चंचलता कहिए, चाहे मन की क्रियाशीलता कहिए। चाहे संस्कारों की क्रियाशीलता कहिए, एक ही बात है। यह तो स्वाभाविक प्रक्रिया है मन की। मन के लिए कोई बुरी बात नहीं है। मन का काम है गतिशीलता। मन का काम रु कना नही है। मन का काम है गतिशील होना और गतिशील रहना। जब हम मन को उत्पन्न करेंगे, मन को रखेगे तो मन का यह निश्चित काम है, और उसी काम से मन चलता है।

भगवान बाहुबली महामस्तकाभिषेक

महाविशेषांक का प्रकाशन

पाठकों को यह जान कर अति हर्ष होगा कि आगामी वर्ष श्रवणबेलगोला में शुरू होने वाले 'भगवान बाहुबली महामस्तकाभिषेक 'महोत्सव के अवसर पर 'जिनेन्दु' एक अतिशानदार, पठनीय और संग्रहणीय महाविशेषांक प्रकाशित करने जा रहा है। रूपये एक सौ का यह महाविशेषांक हम 'जिनेन्दु' के सभी वार्षिक अथवा अधिक अवधि के सदस्यों को (सिर्फ डाक व्यय देने पर) मुफ्त उपहार में देंगे। विशेषांक की एक लाख प्रतियां प्रकाशित की जाएगी, जो अपने आप में एक रिकार्ड होगा, क्योंकि आजतक किसी भी जैन पत्र-पत्रिका ने इतनी बड़ी संख्या में विशेषांक प्रकाशित नहीं किया है।

- लेखक मित्रों से प्रार्थना है कि भगवान बाहुबली से संबंधित अपनी रचनाएं यथाशीघ्र प्रेषित कर दें। सभी प्रकाशन योग्य स्वीकृत रचनाओं पर उचित पारिश्रमिक दिया जायेगा।
- जैन उद्योगपतियों एवं व्यवसायियों से हार्दिक अनुरोध है कि वे इस विशेषांक को अपने प्रचार का माध्यम अवश्य बनावें।
- विशेषांक में रियायती दरों पर शुभेच्छा विज्ञापन भी प्रकाशित किये जायेंगे।

विशेषांक की विज्ञापन दरें:-
पूरा पेज रंगीन रू.5000/-
सादा- 3000/-, आधा-2500/-
पैनल- रू. 1100/-.
हमारा पता नोट कर लें :-
जिनेन्दु कार्यालय, बंगलीवार ऑफिस
पो.बा. नं. 271, खानपुर, अहमदाबाद-380 001

मौलिक चिन्तक

✍ जैनेन्द्र कुमार

युगाचार्य तुलसी श्वेताम्बर- तेरापंथ संघ के नवम आचार्य है, किन्तु अणुव्रत का नैतिक आन्दोलन चलाकर उन्होंने सम्प्रदाय से बाहर भी अपने यश का विस्तार किया है। आये दिन- उन्हें सहस्त्रों व्यक्तियों से मिलना होता है, इनमें सभी स्तरो, मतों और वर्गों के लोग हुआ करते है। इधर उन्होंने अपने उत्तराधिकारी के रुप में मुनि नथमलजी को महाप्रज्ञ का विरुद्ध दे कर युवाचार्य घोषित किया है। इस निर्वाचन मे उनकी सूझ और परख प्रशंसनीय मानी जायेगी। महाप्रज्ञ जो अपने प्रकार के एक अनुपम व्यक्तित्व है, स्वभाव से विनम्र, चरित्र के निर्मल-पारदर्शी, जैनतत्व-विद्या के गहन अभ्यासी और मौलिक चिन्तन है। सम्प्रदाय का अभिनिवेष उन्हें छू नहीं किया गया है और अपनी तत्व जिज्ञासा मे वे हर तरह के पूर्वाग्रह से मुक्त है। मुझे एक लम्बी अवधि तक उनके साथ होने का अवसर मिला है और मैने पाया है कि ये खुले है और मताग्रह से ग्रस्त नहीं है। जैन-आगम के शोध और व्याख्या का उनका कार्य विलक्षण है और उनकी अध्वसायशीलता तथा सूक्ष्मग्राहिता का परिचायक है।

आज सबके पास अपने-अपने मत है और उसके आग्रह में हर-दूसरे मत से टकराव में आ सकता है। ऐसे ताप और उत्ताप उपजता है और उसमें से फिर अनेक अनिष्ट उत्पन्न हो सकते है। यहां से एक संकीर्ण प्रकार की राजनीति खड़ी होती है जहां प्रतिस्पर्धा और संघर्ष का बोलबाला दीखता है। मनो मे कषाय पैदा होता है और वैमनस्य के बीज पड़ जाते हैं भेद तब मत तक ही नहीं रहता, मन के भीतर तक उतर कर सामाजिक स्वास्थ्य के लिये खतरा पैदा कर देता है। इसको साम्प्रदायिकता का नाम दिया जाता है और समझा जाता है और समझा जाता है कि यह साम्प्रदायिकता धर्म क्षेत्र का अनिवार्य लक्षण है, किन्तु मेरी सम्मति में मताग्रह के विष का उपचार यदि कहीं है, तो वह धर्म के पास। धर्म मत मे बन्द नहीं होता। मत केवल धर्म के लिये पात्र का काम देता है।धर्म को जीवन में उतारना चाहने वाला मुमुक्ष सहज ही अनुभव कर पाता है, किन्तु धर्म से निरपेक्ष चिन्तन अपने मत को अन्तिम आधार मान उठता है और वह जिस हठोली मतवादिता को जन्म देता है, उसका ईलाज कहीं नहीं दिख पड़ता। लौकिक मतवादों के साथ यह संकीर्ण हठ अनिवार्य रुप से चलता देखा जाता है। नाना 'इज्म' हैं और सब दुनिया को अपने अनुरुप ढला देखना चाहते हैं किन्तु धर्म से निरपेक्ष रहने का आग्रह उन्हें संकीर्णता से उबरने नहीं देता और परिणामतः नाना प्रकार के हठ चल पड़ते है। आधार उन्हें किसी भी प्रकार के हठ चल पड़ते हैं।

आधार उन्हें किसी भी प्रकार का मिले जाता है।, मूल में यह सब 'इज्म' अहवाद के रुप होते हैं। आधार भाषा का, जाति का, वर्ण का, वर्ग का, वंश का, मत का- किसी का भी पकड़ लिया जाता है। यह तो भी समझ में आ सकते हैं लेकिन धन, जन,साम्य और समाज को लेकर जब 'वाद' चलाये जाते हैं और सब अपनी-अपनी ठान ठानने लगे हैं, तो चकित रह जाना पड़ता है। जिस पर यह है कि इन वादों में प्रगति और धर्म में प्रतिगामिता तक देख ली जाती है।

आजकल की बौद्धिक विचारना लगभग इस चक्र में पड़ गई है। बुद्धि अहम का अस्त्र है। और अपने निर्मित वादों का सहारा लेकर सामुदायिक अहम् की प्रतिष्ठा में कृतार्थता देने लग जाता है। यह खेल राजनीति के क्षेत्र में रंग बिरंग रुप में खेला जाता हुआ देखा जा सकता है।

जो प्रश्न आज सब चिन्तकों के समक्ष है वह यही कि अनेक चिन्तनधाराओं की अनेकता ओं को सुरक्षित रखकर भी कैसे एकता उपलब्धता की जाय? इतिहास चलता आ रहा है हशत् हमें मानव एकता की दिशा में लिये जा रहा है, किन्तु इतिहास स्वयं तो काम नही करता, काम करता है मानवो के माध्यम से। इसलिये आवश्यक है कि वह उपाय खोजा जाय, जो किसी को खण्डित न करे प्रत्युत उस अनेकता मे समन्वय और सामञ्जस्य साझे।

यहां हम अहिसा की आवश्यकता के तट पर आ जाते है। जैनधर्म यह है जो अहिंसा का परम धर्म मानता है अर्थात वह सब स्थितियों में संगत है और सब समस्याओं के उपचार में उपयुक्त होना चाहिये। लेकिन दिख पड़ता है कि अहिसा निर्बलता का लक्षण है और शक्ति से सामना करने का उसके पास कोई उपाय नहीं है। ऐसे अध्यात्म धर्म लोक कर्म के अधीन आ जाता है और उसे दिशा देने की क्षमता खो बैठता है।

युगाचार्य तुलसीजी से और उनसे अधिक युवाचार्य महाप्रज्ञजी से मेरी लम्बी बात हुई है। माना गया कि अहिंसा मेसे शक्ति का उदय केसे हो। प्रतिरोध और प्रतिवाद की आवश्यकता समाज में अनिवार्य दिखेगी। अन्याय है, अनाचार है, अत्याचार है। क्या धर्म इन सबसे अनदेखी कर जाने के लिये हैं? या कि उसका काम मात्र उपदेश से समाप्त हो जाता है? देखते है कि धर्म की यह वृति उसके प्रति लोगों मे अनास्था उत्पन्न कर रही है। लोग जो समाज परिवर्तन की अपेक्षा रखते और तात्कालिक आवश्यकता अनुभव करते है, वे धर्म से विमुख होकर क्रांति की उपासना में त्राण देखते है। वह क्रांति जो क्रांति हिंसा के अवलम्बन की अनुमति से आगे उत्तेजना भी दे सकती है। स्पष्ट है कि अभीष्ट परिवर्तन यदि अहिसा की ओर से नहीं आयेगा तो लोग अथवा इतिहास अमुक सिद्धांत पर रुके रह जाने वाला नहीं है। आपसी सम्बन्धों में पड़े हुए विष को दूर होना है और वहां स्वस्थता को लाना है, इसके लिए सामाजिक परिस्थितियों में, समाज की सरचना में संशोधन लाना होगा। आदमी खुशी से कुकर्म नही करता, करता है मजबूरी से। ऐसी विविशताय हमारी रुग्ण समाज व्यवस्था उत्पन्न करती है। दुष्ट दोष को स्वेच्छा से चिपटाये नहीं रखना चाहता, पर यदि यह पाता है कि चारों ओर दे दबावों के बीच उसके पास और कुछ बनने का उपाय नहीं है, तो दुष्ट के दोष दर्शन और दोष दण्डन से क्या बन जाने वाला है?

यह बड़ा सवाल मैं समझता हूं हर धर्म गुरु के समक्ष है और होना चाहिए। हो सकता है कि अनेक धर्म पुरुष इस चुनौती के प्रति असावधान हों, किन्तु महाप्रज्ञजी इसके प्रति पूरी तरह जागृत हैं। मुझे विश्वास है कि तेरापंथ आचार्य तुलसी के आशीर्वाद के नीचे महाप्रज्ञ के नेतृत्व में इस

बड़ी चुनौती का उत्तर पाने और देनें की दिशा में सोचेगा और उठेगा। पिछले तीस चालीस वर्षों काम मे थोड़ा बहुत साक्षी रहा हूं और कह सकता हूं कि यह पंथ पांथिकता से और साम्प्रदायिकता से क्रमशः उत्तीर्ण होने की चेष्टा में रहा है व विस्मयजनक उसकी प्रगति इन वर्षो में हुई।

महाप्रज्ञ युवाचार्य जबकि इस प्रगति से अवगत है, तब उसकी न्यूनताओं के प्रति भी उतने ही सजग है। भारत की राजनीति मानो अपना दिवाला निकाल बैठी हैं। किन्तु भारत के लिये राजनीति कभी प्रमुख बन कर रही नही,न वह सर्वथा स्वाधीन हो सकी है। उसे धर्म का निर्देश रहा है और इसी कारण सहस्त्रों वर्षों के इतिहास में भारत कभी आक्रामक नहो बना। वह निर्देश अब गायब है और राजनीति इसीलिये सहज भाव से निरकुंश हो सकती है आशा नही की जा सकती थी। जिनके लिये लौकिकता ही सर्वप्रधान है और जहां राजनीति सर्व शक्तिमान है, उन उन्नत और विकसित समझे जाने वाले देशों की ओर कुछ इष्ट-दिशा-दर्शन आयेगा।आशा एक मात्र भारत से इसलिये हैं कि यह धर्म प्राण देश रहा हे और अब भी है। आवश्यकता है कि धर्म पुरुष अपने दायित्वों के प्रति जागे और जन मानस पर वह प्रभुता प्राप्त करे जो उनका हक हे। प्रत्येक व्यक्ति मे आत्मा हे चाहे फिर वह कितनी भी सुप्त और लुप्त क्यों न दिखे, इसलिये वह जिसे अध्यात्म कहा जाता है उसे सर्वशक्तिमान शक्ति होना चाहिये। यदि ऐसा नही है, तो क्या कहना होगा कि उसकी समग्रता में कही त्रुटि है।

महाप्रज्ञजी के समक्ष यह प्रश्न बार-बार मैने रखा है और इन पंक्तियों द्वारा फिर उसे उपस्थित करने की धृष्टता के लिये क्षमाप्राथीं हूं। ❖

अहंकार से दूर

प्रो. महावीर सिंह मुर्डिया (उदयपुर विश्वविद्यालय)

हर व्यक्ति में हर विशेषता नही पाई जाती, पर महाप्रज्ञजी में एक से एक बढ़कर विशेषताएं मौजूद हैं। मुझे अनेक बार जैन विश्व भारती द्वारा समायोजित जैन-विद्या परिषद में भाग लेने के अवसर उपलब्ध हुए हैं। उस समय मैंने देखा है महाप्रज्ञजी की विद्वत्ता को वे किस प्रकार से हर विषय की व्याख्या प्रस्तुत करते थे। जब भी समस्या का समाधान नही होता, तब सब विद्वानों का ध्यान महाप्रज्ञजी की ओर चला जाता। महाप्रज्ञ हर प्रश्न को समाहित कर विद्वानों को प्रभावित करते। सन् 75 में राजस्थान विश्वविद्यालय मे महाप्रज्ञजी के जैन न्याय पर आठ प्रवचन हुए। महाप्रज्ञजी के इन प्रवचनों से बौद्धिक जनता बहुत प्रभावित हुई और सभी ने मुक्त कंठ से महाप्रज्ञजी के वक्तव्य एवं विद्वता की भूरि-भूरि प्रशंसा की। आपके निर्वाचन से धर्मसंघ की ही प्रतिष्ठा नही बढ़ी है बल्कि यों कहना चाहिए विद्वानों की प्रतिष्ठा बढ़ी हैं। महाप्रज्ञजी अहंकार से दूर रहकर साधना की ज्योति को प्रज्जवलित क रते रहे हैं।

अनुपमेय व्यक्तित्व के धनी

✍ साध्वी कनकरेखा

जीवन उसी का सार्थक होता है जो पुष्प बन दुनिया को मुक्त हाथों पराग लुटाता है। सहस्रांशु बन विश्व का अंधकार हरता है। अनमोल मोती बन जीवन की सुंदरता बढ़ाता है। एक ऐसा ही महापुरूष जो मोहनीय मणिकाओं के मंथन से मुद्रित मनमोहक है वह है-आचार्य श्री महाप्रज्ञ। वर्तमान में वे तेरापंथ धर्मसंघ के सर्वोच्च पद 10वें अधिशास्ता के रूप मे आसीन है। आपको अध्यात्म के सुमेरू व प्रज्ञा के शिखर पुरूष कहें तो कोई अतिशयोक्ति नही होती।

विलक्षण व्यक्तित्व

आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी अनुपमेय व्यक्तित्व के धनी है। आपका बाह्य व्यक्तित्व जितना आकर्षक है उससे भी कई गुना अधिक आकर्षक है। आतंरिक व्यक्तित्व। आपकी नैसर्गिक विनम्रता, सहज सरलता, चारित्रिक निर्मलता, व्यवहार मे मानवता, चिंतन में उदारता आदि गुण सहज ही ने वाले को आकर्षित कर लेती है। आपके जीवन व्यवहार को देखकर किसी विद्वान ने कहा है कि आप में बाणभट्ट-सी विद्वता, भृगुऋषि जेसी चारित्रिक निर्मलता तथा युगप्रधान जैसी कर्मठता है। आपका आभामंडल अतर्दृष्टि व अतींद्रिय चेतना से संपन्न होने की सूचना देता है। भारत के सुप्रसिद्ध आभामंडल विशेषज्ञ सुंदर राजन ने आपके आभामंडल का विश्लेषण करते हुए कहा कि ऐसा आभामंडल महान पुरूषों का ही होता है। आपका जन्म 14 जून, 1920 को राजस्थान के छोटा-से कस्बे टमकोर में हुआ था। विराट आकाश व असीम धरा पर जन्म होना आपकी विराटता का परिसूचक बना। वहां पर शिक्षा जगत की सुविधाएं नही के बराबर थी। मात्र 10 वर्ष की लघुवय मे माता बालुजी के साथ अष्टमाचार्य पूज्य कालूगणी के कर कमलों से दीक्षित होकर नत्थू से मुनि नथमल बन गए। पुज्य कालूगणी कुशल पारखी थे। उन्होंने अपनी पैनी-स्नेहिल नजरो से आपको परख लिया। असाधारण क्षमता एवं विलक्षण कार्यों की संभावना को देख कुशल जीवन शिल्पी आचार्य तुलसी को आपकी सिक्षाकादायितव सौप दिया। मानो हीरे को श्रेष्ठ जौहरी मिल गया। हीरे का मूल्य कांट-छांट व तराशने पर निर्भर करता है। सही ढंग से तराशने पर निर्भर करता है। सही ढंग से तराशने पर भीतर से उठने वाली चमक से उसका मूल्य शतगुणित हो जाता है। मुनि नथमलजी मुनि तुलसी के सान्निध्य में जब शिक्षा हेतु आए तब अनतराशे हीरे थे। आज वह हीरा कोहिनूर बनकर दुनिया को ज्ञान के आलोक से आलोकित कर रहा है। इस महासूर्य की तेजस्विता देख कवि की पंक्तियां मुखरित हो उठती है-

कवि की मधुर कल्पना,
जैसा सुंदर रूप तुम्हारा।
उसको सौ-सौ बार बधाई,
जिसने मुझे संवारा।।

विकास का सोपान समर्पण

आपका संपूर्ण जीवन श्रद्धा व समर्पण की बेजोड़ गाथा है। मुनि जीवन श्रद्धा व समर्पण की बेजोड़ गाथा है। मुनि जीवन स्वीकार कर गुरू कालू के पाद पंकज में अपना जीवन समर्पित कर दिया। अपनी चिंता के भार से निर्मुक्त बन संयम जीवन-यात्रा शुरू कर दी। कहा जाता है कि समर्पण एक महायज्ञ है जिसमें मैं, मेरा मन, विचार आदि सभी की आहुति दी जाती है। इससे ही व्यक्ति महानता की यात्रा पर आरहण करता है। आपका एक ही लक्ष्य रहा- 'यथा नियुक्तोऽस्मि, तथा करोमि' अर्थात आप मुझे जिस कार्य में नियोजित करेंगे मैं वैसा ही करूंगा। गुरूदेव श्री तुलसी सूत्र की भाषा में कहते, आप उसकी व्याख्या बहुत सुंदर व सरल तरीके से कर देते। इसी समर्पण की भावना ने आपको शीर्षस्थ बनाया है।

उदार चेता

आपका चिंतन और मार्गदर्शन संप्रदायातीत है। आपके प्रभावशाली व्यक्तित्व से तेरापंथ संप्रदाय और जैन समाज का मस्तक तो ऊंचा हुआ ही है बल्कि पूरी मानव जाति के लिए आप आकर्षण के केन्द्र बने हुए हैं। आप अपनी विलक्षण प्रतिभा और आध्यात्मिक व्यक्तित्व के कारण चिंतकों विचारकों में अत्यधिक प्रख्यात हैं। राष्ट्र कवि रामधारी सिंह दिनकर के शब्दो मे आप आधुनिक विवेकानंद है। दिगंबर समाज के विद्वान संत उपाध्याय विद्यानंदजी ने आपको जैन न्याय का राधाकृष्णन बताया। कविवर भवानी प्रसाद मिश्र के शबदों में आप दूसरे कबीर हैं। आपके मानव कल्याणकारी आयाम न केवल तेरापंथ व जैन समाज को बल्कि पूरे विश्व को प्रभावित करने वाले है। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है अमेरिका व इंग्लैंड के अंतर्राष्ट्रीय दो अनुष्ठानो मे 'मैन ऑफ द इयर' के सम्मान से सम्मानित करना। आप पहले भारतीय हैं जिन्हे एक साथ दो सम्मान मिले। नीदरलेंड से डी लिट की उपाधि मिली है। इन्ही सबका मूल्यांकन कर धर्मसंघ ने टुहाना में युगप्रधान अलंकरण की घोषणा की, जो दिल्ली मे विशाल रूप से मनाया गया। अध्यात्म योगी के लिए सम्मान कोई माने नहीं रखता किंत उनका सम्मान समाज व राष्ट्र का गौरव है।

अध्यात्म योगी

धर्मसंघ के बहुमुखी विकास मे आपका महत्वपूर्ण योगदान रहा है। आप नवमाचार्य श्री तुलसी के अंतरंग सलाहकार रहे हैं। संघ की अंतरंग गति-विधियों के संबंध मे आचार्य तुलसी के सम्मुख अपने विचार प्रस्तुत करते रहे है। आपने अपनी स्वप्रज्ञा से न केवल तेरापंथ संघ को विकास के नव आयाम दिए, बल्कि संपूर्ण मानव जाति को दो महत्वपूर्ण अवदान दिए हैं-प्रेक्षाध्यान और जीवन-विज्ञान। आज पूरा विश्व अशांति की ज्वाला में जल रहा है। हिंसा, आतंकवाद, गरीबी, बेरोजगारी की भावना से ग्रसित है। कुंठा, निराशा, तनाव से परेशान है। ऐसी स्थिति मे प्रेक्षा ध्यान के प्रयोगों ने जनता में विश्वास पैदा किया है कि व्यक्ति चाहे शारीरिक, मानसिक व भावनात्मक तनावों से कितना भी ग्रसित क्यों न हो उसका समाधान प्रेक्षा प्रयोगो से हो सकता है। प्रतिवर्ष देश-विदेशों के सैकड़ों हजारों नागरिक प्रेक्षाध्यान के द्वारा मानसिक त्रासदी व तनाव मुक्त होकर जीवन की नई दिशा उद्घाटित कर रहे है। प्रेक्षाध्यान चेतना के उर्ध्वारोहण की पद्धति है। तनाव मुक्ति की सरल प्रक्रिया है, जो मानव समाज के लिए उच्च कोटि की देन है। आचार्य महाप्रज्ञ जी ने पहले ध्यान के ग्रंथों का गहन अध्ययन-अन्वेषण किया और अपने शरीर को प्रयोगशाला बनाकर विलुप्त जैन ध्यान परंपरा को न केवल पुनरूज्जीवित किया अपितु पूर्ण वैज्ञानिक ध्यान पद्धति को जयपुर मे प्रेक्षाध्यान नाम से अभिहित किया। आचार्य तुलसी ने जैन योग पुनरूद्धारक अलंकरण से, इस अपूर्व उपलब्धि का मूल्यांकन किया। कुछ विद्वानो ने आपको जैन साधना पद्धति का कोलंबस कहा है।

जीवन विज्ञान प्रदाता

चारित्रिक उत्थान के लिए शिक्षा के क्षेत्र में जीवन-विज्ञान के रूप में शिक्षा का नया आयाम दिया। वर्तमान शिक्षा प्रणाली में बौद्धिक विकास पर बल दिया जा रहा है। परिणामस्वरूप अच्छे डॉक्टर, वकील, इंजीनियर बनते जा रहे हैं। बौद्धिकता जीवन विकास का एक अंग है पर संपूर्ण विकास नहीं। बौद्धिक विकास के साथ मानवीय मूल्यों का विकास हो तथा दायित्व बोध भी होना आवश्यक है। जीवन विज्ञान संपूर्ण व्यक्तित्व विकास की प्रक्रिया है। संतुलित जीवन का आधार है। स्वभाव परिवर्तन एवं आदतों के परिष्कार की प्रक्रिया है। पुस्तकीय ज्ञान के साथ आध्यात्मिक एवं वैज्ञानिक जीवन शैली का प्रशिक्षण है जीवन - विज्ञान। इससे जीवन में सहिष्णुता, अनुशासन, आत्मविश्वास, विनम्रता एवं संयम के भाव पैदा होते हैं तथा कर्तव्य के प्रनि जागरुकता बढ़ती है। शिक्षा के साथ जहां-जहां जीवन विज्ञान का पाठ्यक्रम जोड़ा गया है। वहां-वहां अच्छे परिणाम आए हैं। संवेगो के संतुलन व भावनात्मक विकास से समस्त जागतिक समस्याओं का समाधान मिलता है।

प्रखर साहित्य

प्राणवान साहित्य पाठक के मन को बांध देता है। चिंतन में स्फुरणा एवं समस्या को समाहित करता है तथा आदर्श जीवन जीने की प्रेरणा देता है। आचार्य महाप्रज्ञ जी का साहित्य इन्हीं गुणों का संवाहक है। आपकी सधी हुई लेखनी अनुभूत सत्यों को उजागर करने वाली है। यद्यपि लेखन की भाषा हिंदी है पर अनुभव की आत्मीयता है। उसमे संत, चिंतक,वक्ता, लेखक व दार्शनिकता का अद्भुत संगम है। आपके साहित्य मे जीवन की मौलिकताएं है, समस्या का समाधान है। पाठक को ऐसा लगता है मानो आप उसके अवचेतनमन की बात कर लरहे है। आपकी संबोधि पुस्तक मानो जैनदर्शन की गीता है। भिक्षु विचार दर्शन अंतरमन को छू लेने वाला दर्शन है। 'मन का कायाकल्प' बदलाव की सर्वोत्तम प्रक्रिया है। आपका साहित्य विश्व का शीर्षस्थ साहित्य है। करीब सौ से अधिक ग्रंथों की रचना कर सरस्वती के भंडार को भरने वाले आप दूसरे हेमचंद्राचार्य है। सामान्य जन से लेकर देश के सुप्रसिद्ध साहित्यकार, शिक्षाविद्, पत्रकार व राजनेता भी आफके साहित्य से अभिभूत हैं। बंगला भाषा के के प्रसिद्ध उपन्यास विमल मिश्र का कहना है कि आपका साहित्य अगर मैं पहले पढ लेता तो मेरे लेखन की धारा कुछ दूसरी होती। आपकी सृजन चेतना से प्रभावित होकर भारत के प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने जनसभा मे कहा कि मैं महाप्रज्ञ जी के साहित्य का प्रेमी पाठक हूं। आपके अपने ग्रंथों में जीवन के अनमोल रत्न जड़े है।

प्रज्ञा शिखर को नमन

एक दीपक जलता है। अंधकार को दूर कर चारों ओर प्रकाश फैला देता है। वही दीपक जब अपनी लौ से सैकड़ो दीपों को प्रज्वलित करता है, तो दीपों की पंक्ति जगमगा उठती है। आपके ज्ञान रुपी दीपक ने अनेकानेक दीपों काजलाया है। आने वाली शताब्दियां आपकी वाणी के आलोक में अपना पथ प्रशस्त करती रहेंगी। आपकी अध्यात्म से ओतःप्रोत ध्वनि तरंगे अपने कालजयी अस्तित्व से युग चेतना मे नवजीवन का संचार करती रहेगी। कालजयी महर्षि को 84वे जन्म दिन पर अनंतश नमन।

आपकी प्रज्ञा रश्मियां,
जन-जन को प्रकाशित करें।
आपका प्रत्येक चरण,
मानवता का प्रकाश स्तंभ हो।
नमन प्रज्ञा के शिखर हो,
संघ पुरु व विराट् हों।

बहुआयामी व्यक्तित्व एवं पुरूषार्थ के प्रतीक

✍ देवेन्द्रकुमार हिरण

पुरूषार्थ के प्रतीक आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी का जीवन सदैव चिरकुम अग्नि की तरह प्रज्वलित व जाज्वल्यमान बनकर दूसरों को प्रकाशित करने वाला रहा है। उन्होंने अपने पुरूषार्थ के द्वारा ऐसादीप प्रज्वलित किया, जिसमें हजारों-हजारों बुझे दीप भी प्रज्वलित होकर अराग रूपी राग को मिटाने में सक्षम व सार्थक हो रहे है।

महापुरूष पैदा नहीं होते, वे अपने व्यक्तित्व कृतित्व के बल पर बन जाते है। आचार्य महाप्रज्ञ का प्रारंभिक जीवन एक अनपढ़ पत्थर की तरह था-मगर उसमे संभावना थी भगवान बनने की। युग के दिशा दर्शन बनने की और विश्व के महान् दार्शनिक बनने की। क्षमता कलाकार से छिप नहीं सकती। आचार्य कालू एवं आचार्य तुलसी के रूप मे कला के पारखी आए और ग्रामीण परिवेश में जन्में बालक नत्थु में छिपी महाप्रज्ञता को प्रकाशित कर दिया। बालक नत्थु ने भी अनुशासन की चोटों को विनम्रता के साथ स्वीकारते हुए जीवन का संपूर्ण समर्पण गुरूचरणों में उड़ेल दिया। फलस्वरूप बालक नत्थू मुनि नथमल-महापरज्ञ-युवाचार्य महाप्रज्ञ एवं आचार्य महाप्रज्ञ बन गए।

आचार्य श्री महाप्रज्ञ अभिवन व्यक्तित्व के धनी है। वे तेरापंथ धर्मसंघ के दसवें आचार्य है। वे एक असाधारण प्रक्रिया से गुजरकर आचार्य बने हैं। आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी ने वैचारिक जगत में कुछ नए अवदान दिए हैं। जिससे न केवल बौद्धिक जगत उपकृत हुआ है, जन सामान्य के हृदय में भी वे एक दार्शनिक संत के रूप मे प्रतिष्ठित हुए। प्रेक्षाध्यान आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी का एक ऐसा ही अवदान है जो अध्यात्म और विज्ञान के समन्वय का कीर्ति स्तंभ है। प्रेक्षाध्यान के प्रयोग के अध्यात्म का नव जीवन प्राप्त हुआ है। प्रेक्षाध्यान धर्म के क्षेत्र में एक नई क्रांति सिद्ध हुई। विज्ञान से बढ़तीहुई धर्म और धार्मिको की दूरी इसमें स्वतः समाप्त हो चली। इस पद्धति के द्वारा हजारों लाखों लोगों ने मानसिक त्रासदी से मुक्त होकर जीवन विकास की नई दिशाए उद्घाटित की हैं।

वर्तमान शिक्षा की समस्या को देकते हुए आचार्य श्री महाप्रज्ञ ने इसके समाधान के तरीकों पर विचार कर जीवन-विज्ञान के रूप में एक नया अवदान प्रस्तुत किया जो शिक्षा का सर्वांगीण और समाधानकारक बनाता है। जीवन-विज्ञान का मुख्य उद्देश्य स्वस्थ व्यक्ति का निर्माण, नए समाज का निर्माण एवं नई पीढ़ी का निर्माण करना है।

आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी उच्च कोटि के चिंतक और मनीषी ही नहो हैं वे श्रेष्ठ साहित्यकार और कवि भी हैं। साहित्य की एक नई धारा प्रवाहित कर देश के प्रबुद्ध वर्ग में उन्होंने एक हलचल

पैदा कर दी। जन सामान्य से लेकर देश के सुप्रसिद्ध साहित्यकार, शिक्षाविद्, समाजशास्त्री, पत्रकार एवं राजनेता इनके साहित्य से अभिभूत हैं। इनके साहित्य में गंभीरता होते हुए भी चिंतन की मौलिकता एवं समस्याओं के समाधान के कारण जन-जन में आकर्षण का केन्द्र बना हुआ है।

आचार्य महाप्रज्ञ की प्रतिभा अद्वितीय है। वे हर समस्या पर सोचते हं, बोलते हैं और लिखते हैं। जैन आगमों का आधुनिक संपादन कर आचार्य महाप्रज्ञ ने जैन विद्या के विकास में अपूर्व योगदान किया है।

आचार्य महाप्रज्ञ अपने जीवन की प्रारंभिक यात्रा से आगे विकास के जिस शिखर पर पहुंचे हैं उनके पीछे उनका संयमी जीवन का तप, अथक परिश्रम, पुरूषार्थ और अपाने गुरू के प्रति संपूर्ण समर्पण बोल रहा है।

गुरू की असीम अनुग्रह और विश्वास को पाना शिष्य का सर्वोपरि सौभाग्य होता है। पर उसे पचाना शिष्य की सबसे बड़ी कसौटी होती है। आचार्य महाप्रज्ञ गुरू की असीम अनुकंपा एवं अनुग्रह पाने वाले विरलतम व्यक्तियों में से एक हैं। गुरू की कृपा को पचाने के कारण ही गुरु ने उन्हें गुरूत्व के आसन पर प्रतिष्ठापित कर दिया है।

आचार्य महाप्रज्ञ का अथ से इति तक का सारा जीवन पुरूषार्थ की गाथा है। उन्होंने अपने पुरूषार्थ से भाग्य की रेखाओं को मांपा है। अपने सक्रिय हाथों से जीवन में आने वाले कांटों को बुहारा है और क्रियाकलापों में पुरूषार्थ को ही उच्चरित किया है।

आचार्य श्री महाप्रज्ञ अध्यात्म के आदित्य है। आपके दुबले-पतले मगर सशक्त कंधों पर तेरापंथ जैसे विशाल धर्मसंघ का दायित्व है जिसका वे कुशलतापूर्वक निर्वहन कर रहे हैं।

आचार्य श्री महाप्रज्ञ राष्ट्र के भाग्य विधाता हैं, देश की महान धरोहर हैं, जिन पर हमें गर्व है।

विश्व के महामनीषी भारत गणराज्य के महान् दार्शनिक, प्रेक्षाध्यान एवं जीवन-विज्ञान के पुरोधा, अहिंसा समवाय के सूत्रधार, वर्तमान युग के विवेकानंद युगप्रधान आचार्य श्री महाप्रज्ञजी से एवं विश्व की जनता को बहुत बड़ी आशाएं एवं अपेक्षाएं हैं? राष्ट्र के विरल व्यक्तित्व आचार्य श्री महाप्रज्ञ चिरायु हो, दीर्घायु हों एवं एक अधिशास्ता के रूप में देश एवं विश्व की जनता को अध्यात्म का पाथेय प्रदान करते रहें। आपके 85वें जन्म दिवस पर कोटि-कोटि मंगल भावनाएं एवं ढेरों-ढेरों बधाइयां समर्पित।

संसार और मोक्ष

कहा जा सकता है- शरीर में ही संसार है और शरीर में ही मोक्ष है। यदि यह परिकल्पना स्पष्ट हों, हम मोक्ष को समझें तो जीव से अस्तित्व तक की, आत्मा से परमात्मा तक की यात्रा निर्बाध संपन्न हो जाती हैंहम इस सच्चाई को जाने। इसमें दृढ आस्था, विशुद्ध चेतना और भावक्रिया बहुत सहायक होती है। इनसे भी ज्यादा सहायक बनती है हमारी जागरुकता। जैसे-जैसे जागरुकता बढ़ेगी, परमात्मा तक पहुंचने की दिशा स्पष्ट होती चली जाएगी। यह दिशा की स्पष्टता ही आत्मा से परमात्मा तक की यात्रा को संपन्न करने में प्रमुख हेतु बनती है।

— आचार्य महाप्रज्ञ नवतत्व आधुनिक संदर्भ, पृष्ठ 57

नवीन आन्वीक्षिकी

✍ विद्यावाचस्पति डॉ. श्रीरंजन सूरिदेव

अणुव्रत के अनुशास्ता आचार्य श्री तुलसी अणुव्रत आंदोलन के प्रथम चरण में आचार्य महाप्रज्ञजी के साथ तपो विहार के क्रम मे बिहार की राजधानी पाटलिपुत्र पधारे थे, जहा बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन भवन मे आयोजित प्रवचन सभा में उन्होंने घोषणा की थी, जैन धर्म केवल जैनों का धर्म नहीं है, अपितु जनधर्म है । तभी से अपने परम गुरु की इस सास्कृतिक घोषणा को क्रियान्वित करने के लिए आचार्य महाप्रज्ञ एक व्रतबद्ध कर्मयोगी की तरह मन, वचन और शरीर से अहर्निश सलग्न है ।

आचार्य महाप्रज्ञ की लेखनी और वाणी कामदुधा है । यह परपरावादी साधुओ की तरह महता महीयान महावीर के सिद्धातों का केवल चर्वित-चर्वण या भावित-भाषाण या प्रकथित प्रकथन नही करते, वरन् उन्हे और उनके सिद्धाता को अपने आप मे जीते है, जीवन मे उतारते है और फिर इस चेतस साधना से इन्हे जो ज्ञानानुभूति या संवित् की उपलब्धि होती है, उसे जन जन के लिए हस्तामलक कर देते है । इनके वाग्मय तप की सारस्वत दीप्ति विभिन्न मूल्यवान ग्रथो के रूप मे अक्षरित हुई है, जिनमे इसकी आन्वीक्षिकी के या तर्कपुष्ट वैचारिकी के प्रभावक दर्शन पद पद होते है । इस जैसे वैशिष्ट्य से विमण्डित ग्रथो मे महावीर का स्वास्थ्यशास्त्र ग्रथ समुल्लेख्य है ।

महावीर का स्वास्थ्य शास्त्र मनोभावो की विकृति और सुकृति से संबद्ध है । यो, उन्होने प्रत्यक्षत स्वास्थ्य शास्त्र का प्रतिपादन या निर्माण नही किया है । उन्होने जिस आत्मिक स्वास्थ्य की बात कही है, उसकी समता प्राचीन आयुर्वेदाचार्य चरकमुनि की चरकसंहिता में वर्णित प्रज्ञापराध से की जा सकती है ।

चरक प्रोक्त प्रज्ञापराध के विषय मे निम्नाकित वर्णन मिलता है

उदीरणं मतिमतामुदीर्णाना च निग्रह ।
सेवन साहसाना च नारीणा चाति सेवनम् ।।
कर्मकालातिपातश्च मिथ्यारम्भश्च कर्मणाम् ।
विनयाचारलोपश्च पूज्याना चाभिधर्षणम् ।।
ज्ञातानां स्वयमर्थानामहितानां निषेवणम् ।
अकालादेश सच्चारो मैत्री संक्लिष्टकर्मभि: ।।
इंद्रियोपक्रमोत्कस्य सद्वृत्तस्य चवर्जनम् ।

इर्षा-मान-भय-क्रोध-लोभ-मोह-मद-भ्रमः।।
तज्जं वा कर्म यत्क्लिष्टं यद्वा तद्देहकर्म च।
यच्चान्यदीदृशं कर्म रजोमोहसमुत्थाथितम्।।
प्रज्ञापराधं तं शिष्टाः बुवते व्याधिकारकम्।।
(शरीर प्रकरण : १, १०३-८)
धी-धृति-स्मृतिविभ्रष्टः कर्म यत्कुरुतेऽशुभम्।
प्रज्ञापराधं तं विद्यात्सर्वदोष-प्रकोपणम्।।
(तत्रैव : १, १०१)

अर्थात्, बुद्धिकृत अपराध को ही शिष्टजन 'प्रज्ञापराध' कहते है, जो रोग उत्पन्न करते हैं। विद्वानों या बुद्धिजीवियों का उत्तेजित होना तथा उत्तेजना को बलपूर्वक रोकना, निरंतर साहस के कामों में संलग्न रहना और अतिशय स्त्री-प्रसंग करना, निर्धारित कार्यकाल का उल्लंघन करना, कामों का मिथ्याभिमान, विनय और आचार का लोप, पूज्य व्यक्तियों का अपमान, स्वयं ज्ञात अहितकर विषयो का सेवन, असमय आदेश का प्रसारण, क्लेशकारक कर्म करने वालो के साथ मैत्री, इंद्रियों को संयत रखने वाले सदाचार का त्याग, ईर्ष्या, मान, भय, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मनोभ्रांति अथवा इन सबमे संबद्ध क्लेशकारक कर्म या दैहिक कर्म या फिर इस प्रकार के अन्य कर्म, जो रजोमोह से उत्पन्न हों, ये सब कर्म 'प्रज्ञापराध' कहलाते हैं।

या फिर, धी, धृति और स्मृति से विभ्रष्ट होकर मनुष्य जो अशुभ कर्म करते है, उसे 'प्रज्ञापराध' कहते हे।

चरक के परवर्ती आयुर्वेदाचार्य वाग्भट ने अपनो प्रसिद्ध आयुवेद ग्रंथ 'अष्टांगहृदय' में मनोदोष के औषध की बात लिखी है- 'धी-धैर्य-स्म-तिविज्ञानं मनोदोषौषधं परम्।' धी, धेर्य और स्मृति का विज्ञान (विशिष्ट ज्ञान) मनोदोष की श्रेष्ठ औषधि है। महाभारत की रणभूमि में कृष्ण ने जब अर्जुन को, जो मनोदोप से ग्रस्त हो गए थे, प्रज्ञापराध के निराकरण की बात बताई, तब अर्जुन ने कहा था- 'नष्टो मोहः स्मृतिलब्धात्वत्प्रसादान्मयाच्युत!' हे अच्यत कृष्ण, आपकी कृपा से मेरा मोह नष्ट हो गया और मुझे स्मृति का लाभ हुआ, यानी मेरा ज्ञान लोट आया। मैं 'स्वस्थ' हो गया।

यों, 'स्वास्थ्य' शब्द का निर्माण 'स्वस्थ' शब्द से हुआ है- स्वे आत्मनि तिष्ठति तिष्ठति यः स स्वस्थः स्वस्थस्य भावः स्वास्थ्यम्। अपने-आपमें जो रहता है, यानी आपा नहीं खोता है, वही 'स्वस्थ' है। और 'स्वस्थ' का भाव ही 'स्वास्थ्य' है। महावीर नो जिस स्वास्थ्यशास्त्र' का प्रतिपादन किया है, वह मनुष्य को आत्मस्थ या आत्मज्ञ बनाने का शास्त्र है। उनकी दृष्टि में आत्मचिकित्सा ही स्वास्थ्य का मूलभूत कारण है। आत्मदमन ही आत्मचिकित्सा है। इसी से मनुष्य सर्वदा और सर्वत्र सुखी होता है। उत्तराध्ययन सूत्र में उल्लेख है-

अप्पा चेव दमेयव्वो,
अप्पा हु खलु दुद्दमो।
अप्पा दंतो सुही होई,
अस्सिं लोए परत्थ य।। (१.१५)

आचार्य महाप्रज्ञ ने महावीर के आध्यिसद्धांत के परिप्रेक्ष्य में उनके स्वास्थ्य शास्त्र संबंधी मान्यताओं का भाष्य उपस्थित किया है। इन्होंने लिखा है कि भगवान महावीर के सामने आत्मा प्रधान थी, शरीर गौण था। शरीर का मूल्य इसलिए है कि वह आत्मा के विकास में सहयोगी या आधार बनता है। आत्मोदय में बाधक बनने वाला शरीर मूल्यहीन है। इस दृष्टि से महावीर का स्वास्थ्य शास्त्र आत्मा की स्वस्थता से ही संदर्भित है। इसलिए, भगवान के स्वास्थ्य शास्त्र को ध्यात्म शास्त्र कहने में कोई अत्युक्ति नहीं होगी। सच पूछिए तो, अध्यात्मशास्त्र और स्वास्थ्यशास्त्र में परस्पराश्रयता है।

महावीर के चिंतन के अनुसार कतिपय तत्व ऐसे है, जो आत्मा के स्वास्थ्य को बाधित करते है या आत्मा के स्वस्थ रहने में बाधक है। ये तत्व है-राग, द्वेष, मोह, क्रोध, मान, माया, लोभ, भय, शोक, घृणा, कामवासना आदि। ये तत्व शरीर को रुग्ण तो बनाते ही है, मन को अस्वस्थ करते है।

इस संदर्भ में आचार्य महाप्रज्ञ ने अपनी चिंतन मनीषा की गम्भीरता और तात्विकता के साथ चिकित्सा की प्राचीन और अर्वाचीन पद्धतियों की वैज्ञानिक पर्यालोचना प्रस्तुत करते हुए लिखा है कि मानव-जगत शब्द, वर्ण, रस, गंध और स्पर्श से संपृक्त है। प्रत्येक पदार्थ वर्ण, रस आदि से संयुक्त है। ध्वनि-चिकित्सा, रस-चिकित्सा, गंध चिकित्सा, स्पर्श-चिकित्सा और रंग-चिकित्सा-ये चिकित्सा की प्राचीन पद्धतियां है। गंध-ध्वनि-चिकित्सा पुष्प-चिकित्सा से संबद्ध है। मधु, कषाय, तिक्त आदि रसों के माध्यम से रस-चिकित्सा की जाती है। स्पर्श-चिकित्सा के लिए हाथ की ऊर्जा और विद्युतीय संप्रेषण का सहारा लिया जाता है। वर्ण-चिकित्सा सूर्यरश्मि-चिकित्सा या रंग-चिकित्सा से संबद्ध है।

आभामंडल पर पहली बार वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत करने वाले आचार्य महाप्रज्ञ कहते है कि आभामंडल में केवल वर्ण ही नहीं होता गंध रस और स्पर्श भी होता है। इन तत्वों की उत्तमता में आभामंडल स्वास्थ्य का हेतु बनता है और तत्वों की विकृति की स्थिति में आभामंडल रोग उत्पन्न करने वाला होता है।

आचार्य महाप्रज्ञ के अनुसार, स्वास्थ्य की समस्या आत्मा की मलिनता की स्थिति में उठ खड़ी होती है। इसलिए, स्वास्थ्य के निमित्त आत्मा की पवित्रता अनिवार्य है। महावीर द्वारा प्रतिपादित 'अस्तित्व' स्वास्थ्य के संदर्भ में स्पष्टतर होता है। अर्थात सात अंगों का समुच्चय ही अस्तित्व है। ये सात अंग है-शरीर, इन्द्रिय, श्वास, प्राण, मन, भाव और भाषा। स्वास्थ्य की दृष्टि से ये सातों तत्व एक दूसरे को प्रभावित करते है और स्वास्थ्य पर विशद विचार करने पर इसकी दो मुख्य शाखाएं विकसित होती है। इनमें पहली शाखा मानसिक बीमारियों की चिकित्सा से संबद्ध है। समग्रता से इन सातों तत्वों पर विचार करने पर अस्तित्व और स्वास्थ्य, दोनों का रहस्य-गूढ़ उन्मोचन कराने वाली चिंतनधारा विकसित होती है।

चित्त, मन और स्वास्थ्य की अन्योन्याश्रयता पर विचार करते हुए आचार्य महाप्रज्ञ ने इस संदर्भ को जनसुगम्य बनाने के लिए भगवान की स्तुति से एक श्लोक उद्धृत किया है

वपुरेव तवाचष्टे भगवन्! वीतरागताम्।
न हि कोटरसंस्थेऽग्नौ तरुर्भवति शाद्वलः।।

अर्थात् हे भगवान्! आपका शरीर इस बात का साक्ष्य है कि आप वीतराग है। जिस प्रकार पेड़ के कोटर में आग लगे रहने पर वह पेड़ हरा-भरा नहीं रह सकता, उसी प्रकार यदि शरीर के भीतर मन या चित्त विभिन्न मनोविचारों से ग्रस्त रहता है, तो वह शरीर स्वस्थ और सुदृढ़ नही होता। शरीर की स्वस्थता शरीर के अंतः स्थित शक्ति का सूचक होती है। शांत शरीर इस बात का साक्षी है कि उसमें कोई उत्तेजना, क्रोध, आवेश या आवेग नहीं है। निष्कर्ष यह कि स्वास्थ्य का संबंध केवल शरीर से नहीं, अपितु चित्त और मन से भी है।

आचार्य महाप्रज्ञ के चिंतन के अनुसार, महावीर का स्वास्थ्य शास्त्र मूलतः कषाय की उपशांति से संबद्ध है। यह तो स्पष्ट है कि आंतरिक विशुद्धि पर ही बाह्य विशुद्धि निर्भर होती है। यदि बाह्य द्रोषपूर्ण है तो आंतरीरिक स्थिति भी दोषमुक्त नही हो सकती। आधुनिक चिकित्सा-विधि में बाह्य स्थिति पर बहुत अधिक ध्यान दिया जाता है। आज के चिकित्सा विज्ञानी या चिकित्सा विशेषज्ञ 'वायरस' और 'जर्म्स' को बीमारी की जड़ मानते हैं। मन को ये गौण कर देते है और मन के आगे के तत्व भाव को भी गौण कर देते हैं। किंतु मनुष्य का जो प्रिरक्षात्मक तंत्र 'इम्युनिटी सिस्टम' है, जो प्रतिरोध शक्ति है या प्रतिरोधक क्षमता रेसिस्टेंस पावर है, वह बाह्य तत्वों पर निर्भर नहीं है। इसका मूल है मन की पवित्रता, इससे भी आगे भावों की पवित्रता या 'लेश्या' की पवित्रता है। इससे भी आगे है अध्यवसाय की पवित्रता और इससे भी आगे एक मूलधारा हे-कषाय की उपशांति।

इस प्रसग मे आचार्य महाप्रज्ञ ने बहुत सूक्ष्मता के साथ व्यवहारिक विधि और विवेचना के आधार पर विषय को स्पष्ट किया हे, जिसका समानातर अध्ययन चरक-प्रोक्त प्रज्ञापराध के तत्वों के संदर्भ में भी किया जा सकता हे। अवश्य ही, दोनों में अद्भुत समता है।

आचार्य महाप्रज्ञ लिखते हे-भाव की विकृति रोग को जन्म देती है। भय उत्पन्न होते ही रोग उत्पन्न हो जाएगा। भय या भ्रांति के साथ अनेक व्याधियां जुड़ी जुई है। उत्कंठा पैदा होते ही बीमारी उभर आएगी। किसी वस्तु के प्रति उत्सुकता और अतिशय लालसा भयंकर रोग उत्पन्न कर देती है। उत्कंठा या उत्सुकता टेंटुआ अवटु ग्रंथि (थॉयराइड) को प्रभावित करती है, जिससे चयापचय की क्रिया बदल जाती हे और उदासी, स्वभावगत चिड़चिड़ापन अवसाद (डिप्रेशन) आदि कई बीमारिया पैदा हो जाती है। चूंकि ये बीमारियां किसी जीवाणु या कीटाणु से उत्पन्न नही हुई, ये तो भाव तत्व से उत्पन्न हुई है, इसलिए इनका कारण भाव-जगत् में खोजना होगा। क्रोध, उत्सुकता, भय आदि समस्त मनोभाव मनुष्य के स्वास्थ्य-तंत्र को विकृ त कर देते हैं।

ये दुर्भाव सीधा अपना असर नही करते। ये पहले नाड़ीतंत्र (नर्वस सिस्टम) को अस्त-व्यस्त करते है। तत्पश्चात् ग्रंथितंत्र को विपर्यस्त करते हैं। नाड़ीतंत्र या ग्रंथितंत्र की विकृति बीमारियों के लिए खुला निमंत्रण हो जाता है। इसलिए महावीर का स्वास्थ्य शास्त्र यह संदेश देता है कि शरीर और मन के स्तर से भी परे भाव-जगत् की पूरी प्रक्रिया समझने पर ही निर्भय और नीरोग जीवन जिया जा सकता है। इस संदर्भ में विशेष जानकारी के लिए द्रष्टव्यः आचार्य महाप्रज्ञ लिखित 'महावीर का स्वास्थ्य शास्त्र', प्र. आदर्श साहित्य संघ, चुरू।

सत्य भी, शिव भी, सुंदर भी

✍ मुमुक्षु डॉ. शांता

आचार्य महाप्रज्ञ श्रेष्ठताओं का संग्रहालय है। कहना कठिन है कि कौन सा ग्रंथ इस निग्रंथ चेतना का भाष्यकार है। इसलिए शब्दों की सीमाओं से मुक्त होकर अभिवंदना में सम्वाद करें उस विषय सूची को देखकर, जिसके पर्यानत नाम हम पढ़ सकें।

आचार्य महाप्रज्ञ जन्म से महाप्रज्ञता लेकर नहीं आए थे, उनके वैशिष्ट्य का राज है उनका प्रबल पुरुषार्थ, अटल संकल्प, अखंड विश्वास और ध्येय निष्ठा।

श्रद्धा और समर्पण की अंगूली पकड़कर गुरु की पहरेदारी में कदम दर कदम ... पर रखा हर कदम पदचिन्ह बन गया। सरस्वती के ज्ञान मंदिर में ऐसा महायज्ञ शुरु किया कि आराधना स्वयं ऋचाएँ बन गयी।

प्रज्ञा क्या जागी मानो अतीन्द्रिय ज्ञान पैदा हो गया। आत्मविश्वास के ऊंचे शिखर पर खड़े होकर सभी खतरों को चुनौती दी। न उनसे डरे, न उनके सामने कभी झुके और न ही उनसे पलायन किया। इसीलिए हर असंभव कार्य आपकी शुरुआत के साथ संभव होता चला गया। सर्वांगीण विकास के खुलते क्षितिज इसके प्रमाण हैं। आपने कभी स्वयं में कार्यक्षमता का अभाव नहीं देखा। क्यों, कैसे, कब, कहां जैसे प्रश्न कभी सामने आए ही नहीं। हर प्रयत्न परिणाम बन जाता कार्य की पूर्णता का। इसीलिए जीवन वृत्त कहता है कि गुरु तुलसी संकल्प देते गए और शिष्य महाप्रज्ञ उन्हें साधना मे डालते चले गए।

महाप्रज्ञ के पुरुषार्थ ने उन लोगों को जगाया है जो सुखवाद और सुविधावाद के आदी बन गए है और उन लोगों को संबोध दिया है जो जीवन के महत्वपूर्ण कार्यों का कल पर छोड़ देने की मानसिकता से घिरे है। क्योंकि जीवन का सच तो सिर्फ यही क्षण है। बीता कल और आने वाला कल तो सिर्फ समय की दो संज्ञाएं।

महाप्रज्ञ कोई नाम नहीं है। यह विशेषण है, उपाधि और अलंकरण है। गुरुदेव तुलसी ने इसे नामकरण बना दिया, क्योंकि उपाधियां भी ऐसे ही महान् पुरुषों को ढूंढती है जिनसे जुड़कर वे स्वयं सार्थक बनती है। महाप्रज्ञ निरुपाधिक व्यक्तित्व का परिचायक बन गया। आपके जीवन निर्माण में श्रद्धा और समर्पण सदा ध्रुव मे रहे है। दोनों के अपूर्व योग ने आपको विकास की ऊंचाई और साधना की गहराई दी। आपने सिखाया कि श्रद्धा ज्ञानपूर्वक हो और समर्पण बिना किसी मांग के हो। आपने प्रकृति के दोनों पलड़ों को संतुलित रखा। गुरु के द्वारा प्राप्त उलाहना और आशीर्वाद दोनों में अपना आत्मविकास देखा। उपालंभ कभी तर्क, संशय, विरोध, खिन्नता पैदा नहीं कर

सका और आशीर्वाद ने कभी सबसे बड़ा होने का अहं नही जन्मने दिया।

आज सबकी नजरें आचार्य महाप्रज्ञ जैसे आत्मचेता महापुरुषों पर लगी हैं, क्योंकि वैज्ञानिकों द्वारा होने वाले प्रलय की भविष्यवाणियों ने लोगों के मनों में भय पैदा कर दिया है। प्रलय की इस दहशत ने सबको भीतर से जगा दिया है। लोग उन अंधेरों को ढूंढने और मिटाने लग गए हैं जो सूरज के चले जाने के बाद उसके फिर आने की प्रतीक्षा में बैठे रहते हैं।

महाप्रज्ञ की जागृत प्रज्ञा उन लोगों के लिए प्रेरणा भरा आह्वान बनी है जो उम्र से नहीं, बल्कि मन से स्वयं को बूढ़े मानने लगे हैं। वे स्वयं आज 83 वर्ष की वृद्धावस्था में भी अहिंसा यात्रा को मिशन बनाकर हजारों किमी. की यात्रा कर रहे हैं। दिन-रात पुरुषार्थी प्रयत्नों से अध्यात्म की अलख जगा रहे हैं। आज भी वे विश्राम के नाम पर कार्य परिवर्तन को ही अपना विश्राम मानते हैं। उनके इर्द-गिर्द हजारों श्रद्धालुजनों की भीड़ रहती है, संघीय संचालन की अनेक जिम्मेदारियों से जुडे हैं फिर भी वे उस भीड में स्वयं को अकेला कर लेते है। आज भी उनका जागता पौरुष, ओजस्वी वाणी, दृढ़-संकल्प शक्ति, सतत अध्यवसाय और सूक्ष्म सत्यों की खोज में डूबा जीवन का एक-एक पल जागरुकता का साक्षी है। उनका योगी मन शिशु-सा सहज, निश्चिंत और निर्भार दीखता है।

आचार्य महाप्रज्ञ की सचेतन जागरुकता ने उन लोगों को सोए से जगाया है जो न समय का प्रबंधन करते है, न शक्ति और श्रम का संतुलन कर जीवन का मूल्यांकन करते हैं। जो निरुद्देश्य बेतहाशा दौड़ते रहते हैं मृग-मारीचिका की तरह एक साथ सब कुछ पाने, एक साथ सब कुछ होने।

आपकी अनुशासन ने मन को साधाहै। इसलिए सत्ता संतता के चरणों में आ बैठती हैं। इसीलिए यहां न स्वार्थो का चक्रव्यूह है, न अधिकारो की प्रतिस्पर्धा। न शिष्यो का व्यामोह है, न कोई गुटबंदी और न ही पद-प्रतिष्ठा की आकांक्षा। आत्मविश्वास की शर्तों से बंधी आपकी अनुशासना मे आचरण की विशुद्धि है, संविधान है, मर्यादा है, कानून और व्यवस्था है। विचारों की स्वतंत्रता है और साधना के लिए खुला अवकाशहै। वैयक्तिक विशेषताओं का मूल्यांकन है और स्खलनाओं के लिए उपालंभ, प्रायश्चित तथा परिष्कार का अवसर।

आचार्य महाप्रज्ञ एक ऐसा नाम है जिनके पास बैठकर आदमी भीतर से बदलता है हुआ स्वयं को अनुभव करता है। जहां तनावों की भीड छंटती है। चिंताएं विराम पा लेती हैं। समस्याएं बिना बताए ही समाधान पा लेती हैं। आपके साथ किया संवाद विकास के दरवाजे खोलकर व्यक्ति में ..होउकामं.. मैं कुछ होना चाहता हूं, की तीव्र प्यास जगा देता है।

आचार्य महाप्रज्ञ के मौलिक चिंतन ने, आगामिक गहन गंभीर अध्ययन ने, साधना से प्राप्त अनुभवों ने सत्य की खोज में नये रास्ते खोले हैं। बनी बनायी परंपराओं का अंधानुकरण न कर आपने जो उपयोगिता की दृष्टि सबमें जगाई, यह आपके अनाग्रही चिंतन और सत्यान्वेषी प्रज्ञा का प्रतीक है। आपने बुराइयों का प्रवेश रोकने के लिए साधना के विविध आयाम दिए। अणुव्रत, जीवन-विज्ञान, प्रेक्षाध्यान, अहिंसा समवाय जैसे नेक सैद्धांतिक और प्रायोगिक उपक्रमों से जीवन परिवर्तन का विश्वास पैदा किया। आपकी आध्यात्मिक चेतना ने धर्म से जुड़ी रुढ़ धारणाओं से जनमानस को मुक्ति दी। यही वजह है कि आज धर्म, जाति, पंथ की आग्रही पकड़ को छोड़ सर्वधर्म समन्वय की दिशा में आप सबके पथ दर्शक बन गए हैं। इसी संप्रदायातीत सोच ने धर्म का जीवंत

रुप विश्व के सामने प्रकट किया है।

आचार्य महाप्रज्ञ एक विशाल धर्मसंघ के अनुशास्ता है पर आम आदमी की उन तक पहुंच है। उनके पास जाने के लिए न सिफारिश चाहिए, न परिचय प्रमाण पत्र और न दर्शनों के लिए लंबी पंक्ति में खड़ा होने की जरुरत। न भय, न संकोच, न अपने-पराए का प्रश्न। संतो के दरवाजे सदा खुले रहते हैं। वे सबको सुनते हैं, सबको समाधान देते हैं। इसलिए जो भी इन चरणों में पहुंचता है वह स्वयं में कृतार्थता अनुभव करने लगता है।

आचार्य महाप्रज्ञ तनावों की भीड़ में शांति का संदेश है। अशांत मन के लिए समाधि का नाद हैं। चंचल चित्त के लिए एकाग्रता की प्रेरणा है। विचारो के द्वैत मे सापेक्ष दृष्टिकोण है। प्रतिकूलता में संतुलन का संदेश है। जीवन से हारे हुए मनुष्य के लिए जीत का विश्वास है। सत्य, शिव और सुन्दर की त्रिवेणी का एक नाम है आचार्य महाप्रज्ञ। आपका साध्य सत्य है, आपकी साधना शिव है, आपकी साधुता ही आपकी सुन्दरता है। इसीलिए आपकी ज्ञान, दर्शन, चारित्र की पवित्रता न संतता का गौरव बढ़ाया है। आज के परिवेश मे निस्संकोच कहा जा सकता है महाप्रज्ञ जैसे ज्ञानी, ध्यानी, योगी संत सदियों के बाद जन्म लेते है। हमारे लिए यह स्वर्णिम अवसर है कि हम इनकी पावन सान्निधि मे स्वयं की पहचान करे। इनके प्रवचन सुनकर जीवन को बदलाव दे। इनके पथ दर्शन मे अपने लक्ष्य का चयन करे और सही दिशा मे गतिशील बने। आपका जन्मदिन हमारा पुनर्जन्म बन सके, यही हमारी श्रद्धा प्रणति है। यही हमारी अभिवंदना है। यही हमारी साधना है।

-जैन विश्व भारती संस्थान, प्रो. लाडनूं (राज.)

विचारों के विश्वविद्यालय

विद्यावारिधि डॉ. प्रचंडिया

(आचार्यश्री तुलसी के बाद तेरापंथ के यशस्वी तथा तेजस्वी आचार्य के पद पर प्रतिष्ठित हुए। आचार्य महाप्रज्ञ के रुप में आपका अधिकांश समाय पूरे संघ के सफल संचालन और विविध योजनाओं का मार्गदर्शन देने में व्यतीत होने लगा तथा लोकहिताय में विविध समस्याओं और ज्वलंत विषयों पर अपने विचारों की अभिव्यक्ति देने में आचार्यश्री महाप्रज्ञ की प्रतिभा का उपयोग होने लगा। दूरदर्शन पर आपके मंगल प्रवचन सुनते ही बनता है। आपके प्रवचनों की अतिरिक्त विशेषता है कि उसेप्रत्येक धर्मावलंबी तथा विचारधारा रखने वाला व्यक्ति भी बड़े मनोयोग से सुनता और लाभान्वित होता है।)

पर्वत में ऊंचाई होती है, गहराई नही और सागर में गहराई होती है ऊँचाई नही। ऊँचाई और गहराई किसी को यदि एक साथ देखनी हो तो उसे आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी का सान्निध्य प्राप्त करना होगा। आचार्यश्री मे चारित्रिक ऊंचाई पर्वत से अधिक ऊंची और ज्ञान की गहराई सागर की गहराई से भी कहीं अधिक है।

आप जीवन और जगत को आगम की आंख से देखते है। आपके विचार और व्यवहार में अणुव्रत आंदोलन और प्रेक्षाध्यान की अनुगूंज होती है। आप मानवीय मूल्यों के उत्थान के लिए सतत जागरुक और प्रयत्नशील रहे है।

मुझे याद पड़ता है कि छठे दशक के मध्य मे आचार्यश्री तुलसी के साथ आप दीनदयाल उपाध्याय मार्ग, नयी दिल्ली में स्थित अणुव्रत भवन में वर्षावास हेतु विराजमान थे। उत्समय एक विशेष सभा का आयोजन हुआ था, मुख्य अतिथि थे तत्कालीन रक्षामंत्री माननीय श्री वाई. बी. चाह्वाण। आपने उस सभा में अणुव्रत विषयक आंदोलन का पूर्ण परिचय दिया था। मुझे आपके तब पहले-पहल दर्शन हुए थे। उस समय आप मुनिश्री नथमल के नाम से जाने-पहचाने जाते थे।

आपकी प्रेरणा पाकर मैंने अलीगढ़ में अणुव्रत समिति स्थापित कर अध्यक्ष के रुप में बारह वर्षों तक सफल संचालन किया। प्रत्येक मंगलवार की साप्ताहिक बैठकों में अणुव्रत आंदोलन के जीवंत प्रयोग और प्रायोजन को उजागर किया जाता। फलस्वरुप पूरा नगर अणुव्रत आंदोलन से अभिभूत हो उटा। इतना ही नहीं अणुव्रत विद्यापीठ की भी स्थापना का संचालन के रुप में अणुव्रत विज्ञ.. और ..अणुव्रत विशारद.. परीक्षाओं का सफल संचालन किया।

एक बार मुझे लाडनूं जाना हुआ। आचार्य श्री तुलसी के दर्शन करने के बाद युवाचार्य श्री महाप्रज्ञ के रुप में आपका सान्निध्य प्राप्त हुआ। एक सुदीर्घ अंतराल के उपरांत आपने मुझे देखकर मेरा

नाम ..प्रचंडियाजी.. संबंधित कर बैठने को कहा। कुछ क्षण बाद मेरी ओर अपनी पैनी दृष्टि डाल हुए आप बोले-प्रचंडियाजी ! आपने अलीगढ़ में अणुव्रत आंदोलन की खूब अलख जगाई है, अ आप प्रेक्षाध्यान मे भी अपना सहयोग दीजिए। आपने तब विस्तार से प्रेक्षाध्यान के रुप-स्वरु और उसकी जीवंत उपयोगिता पर प्रकाश डाला। सत्साहित्य भी भेट किया।

आचार्यश्री तुलसी के बाद तेरापंथ के यशस्वी तथा तेजस्वी आचार्य के पद पर प्रतिष्ठित हुए आचार्य महाप्रज्ञ के रुप में आपका अधिकांश समय पूरे संघ के सफल संचालन और विवि योजनाओं का मार्गदर्शन देने में व्यतीत होने लगा तथा लोकहिताय में विविध समस्या ओं अं ज्वलंत विषयों पर अपने विचारों की अभिव्यक्ति देने में आचार्यश्री महाप्रज्ञ की प्रतिभा का उपयो होने लगा। दूरदर्शन पर आपके मंगल प्रवचन सुनते ही बनता है। आपके प्रवचनों की अतिरि विशेषता है कि उसे प्रत्येक धर्मावलंबी तथा विचारधारा रखने वाला व्यक्ति भी बड़े मनोयोग सुनता और लाभान्वित होता है।

आचार्य महाप्रज्ञजी जहां एक ओर विचारो के विश्वविद्यालय है वहां दूसरी ओर वह है अभिव्यक्ति के विद्यापीठ। आपने प्रभूत साहित्य रचा है जो अध्यात्म, दर्शन और संस्कृति का जीवतता द के साथ-साथ विज्ञान के समन्वयक के रुप मे युग को नयी दृष्टि और दिशा द रहा है। नूतन शाब्दि शिल्प और प्रभावक भाषाशैली आपकी अभिव्यक्ति की विरल विशेषता है।

-मंगलकलश, 394, सर्वोदय नगर, आगरा रोड, अलीगढ़ (उप्र)

बहुआयामी व्यक्तित्व

साध्वी आनंदश्री

आज से तिरासी वर्ष पूर्व राजस्थान के जयपुर संभाग के एक छोटे से कस्बे टमकोर मे आचार्य श्री महाप्रज्ञ का जन्म हुआ। किसी संन्यासी ने बालक को देखकर कहा था कि यह बालक योगीराज बनेगा। उनकी भविष्यवाणी आज चरितार्थ हो रही है। साढ़े दस वर्ष की उम्र मे उन्होने मुनि जीवन स्वीकार किया।

सन 1943 का वर्ष आपके जीवन मे नये उन्मेष का वर्ष था। चौबीस वर्ष की अवस्था मे आपको संस्कृत, प्राकृत, आगम और दर्शन शास्त्र के अनेक ग्रंथो के अध्ययन का सहज अवसर मिला। उसी वर्ष आपने हिन्दी में लिखना प्रारंभ किया।

'जीव-अजीव' नामक प्रथम पुस्तक हिन्दी भाषा मे प्रकाशित हुई जिसकी दर्शन के क्षेत्र मे बहुत सुंदर प्रतिक्रिया हुई। दूसरी पुस्तक अहिंसा पर लिखी। उसमे तेरापंथ की अहिंसा विषयक मान्यता का स्पष्ट और सटीक प्रतिपादन किया गया। वह पुस्तक महात्मा गांधी के पास पहुंची, उन्होने उस पर अनेक टिप्पणियां लिखीं तथा आचार्य भिक्षु को जानने की जिज्ञासा व्यक्त की।

आचार्य श्री महाप्रज्ञ अपनी कलम और वाणी से मर्म का अमृत उड़ेल रहे है। साहित्य के क्षेत्र मे उन्होंने सौ से अधिक ग्रंथ अनेक कृतिया मानवता को दी है, वे समय की गति के साथ उत्तरोत्तर वंदनीय होते जा रहे है वे अणुव्रत अनुशास्ता श्री तुलसी के महान उत्तराधिकारी है। तेरापंथ के दसवे आचार्य है। आप वि[illegible] क्षणयोगी, मौलिक चिंतक, कुशल प्रशासक, शास्त्रो के मर्मज्ञ एवं भाष्यकार तथा बेजोड़ व्यक्तित्व के धनी [illegible]। उनका जीवन एक बहुआयामी यात्रा, का नाम है-अक्षर स अर्थ की यात्रा, स्थूल से सूक्ष्म की यात्रा, सीमा [illegible] असीम हो की यात्रा, विद्वान से विनम्रता की यात्रा।

आचार्य श्री महाप्रज्ञ के व्यक्तित्व एव कर्तृत्व को लेकर बौद्धिक वर्ग मे व्यापक चर्चा रही है। कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर ने महाप्रज्ञजी को आधुनिक भारत का विवेकानन्द कहा है। विवेकानन्द ने अपने समय मे साहित्य की जो धारा बहाई, उससे आज भी लोक-जीवन अनुप्राणित हो रहा है।

इसी प्रकार आचार्य महाप्रज्ञजी की साहित्य धारा भी सतत प्रवहमान रहती हुई आज जन-जीवन को अणुप्राणित कर रही है। आचार्य श्री महाप्रज्ञ का जीवन समर्पण पुरूषार्थ और निश्छल व्यक्तित्व की गाथा है। ज्ञान, ध्यान और स्वाध्याय की जीवन्त प्रतिमा है।
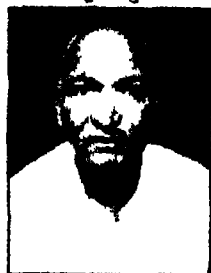
गुरू के साथ सदा अभेद अथवा तादात्म्य का जीवन जीने वाला यह व्यक्तित्व गुरूदेव श्री तुलसी के कर्तृत्व का जीवन्त विदर्शन है। गुरूदेव तुलसी और आचार्य श्री महाप्रज्ञ का संबंध श्रद्धा और वात्सल्य का संबंध है, सम्मान और अनुग्रह का अथवा अनुकंपा और समर्पण का घनिष्ठ संबंध है। आप श्रुतधर है, बहुश्रुत है, ज्ञान के अपार भण्डार है। शोध विद्वानो के लिए विश्वकोष है। आचार्य श्री महाप्रज्ञजी का मानना है कि अध्यात्म को विज्ञान से समन्वित करके ही अध्यात्म को विज्ञान से समन्वित करके ही हम सत्य के शोध में आगे बढ़ सकते है।

तनावों के आज के युग में उन्होंने प्रेक्षाध्यान का जो अवदान दिया है उससे आदमी न केवल शारीरिक व्याधियों से मुक्त हो सकता, अपितु मानसिक एवं भावनात्मक व्याधियों से भी मुक्त बन सकता है।

शिक्षा हमारी आज की सबसे बड़ी समस्या है। एक जमाना था जब 'सा विद्या या विमुक्तये' कहा जाता था, पर आज उसके स्थान पर 'सा विद्या या नियुक्तये' हो गया है।

सचमुच इस अर्थकारी शिक्षा ने मनुष्य को बहुत स्वार्थी बना दिया है। आपने जीवन विज्ञान के रूप में शिक्षण का नया आयम खोज कर शिक्षा जगत का बहुत बड़ा उपकार किया है। उनका यह कहना नहीं है कि आज की शिक्षा निरर्थक है। आपका अभिमत है कि आज की शिक्षा निरर्थक होती तो इतने डॉक्टर, इंजीनियर, वकील आदि विशिष्ट लोग कैसे निकलते? आचार्य श्री ही कथन है कि आज शिक्षा अपर्याप्त है यदि इसमें जीवन विज्ञान को जोड़ दिया जाए तो उससे बहुत लाभ उठाया जा सकता है। भगवान् महावीर, महात्मा बुद्ध, विवेकानन्द, गांधी, श्रीकृष्ण, जीसस, मोहम्मद सभी महापुरूषों ने जीवन के जो आदर्श बताए, उन्हे ही आचार्य श्री महाप्रज्ञ हम तक पहुंचा रहे है। आचार्यश्री जैसे महापुरूषों की खोज एक ही होती है, जीवन का सत्य कहां छिपा है, यथार्थ क्या है, सही राह कौन-सी है? उनका जन्म-दिवस 'प्रज्ञा-दिवस' के रूप में आयोजित किया जाता है। वर्धापन समारोह के शुभ अवसर पर मानवता की यही मंगल-कामना है कि-

तुम जीवन की दीपशिखा हो,
जिसने केवल जलना जाना।
तुम जलते जीवन की लौ हो
जिसने जलने में सुख माना।।

सम्यक अभिधानी

✍ डॉ. गौतम कोठारी

'सत्य', समय क्षेत्र व परिस्थिति की समानता में सदैव एक ही होता है किंतु इसके साथ सबसे बड़ी विडंबना है कि वह एकांतिक रूप में भाषा में अभिव्यक्त नही हो पात। भाषा की अपनी सीमा है। वह शब्दों मे अभिव्यक्त होती है। भाषा पर अधिकार रखने वाले तथ्य को बेहतर ढंग से प्रस्तुत कर सकते है। अच्छे वक्ता प्रभावी प्रस्तुति कर सकते हैं। अच्छे वक्ता प्रभावी प्रस्तुति कर सकते हैं किन्तु फिर भी श्रोता तक अभिव्यक्ति पूर्ण सत्य अथवा सत्य के बहुत निकट तक नही पहुंच पाती। यहा श्रोता की ग्रहणशीलता भी एक सीमा बनकर आई आ जाती है।

भगवान महावीर ने कदाचित भाषा, अभिव्यक्तिकर्ता तथा श्रोता की ग्राह्यता की सीमा को ध्यान मे रखते हुए संभवत: मानवीय क्षमता के इश सीमांकन को अपने कैवल्य से अनुभूत कर अनेकांत का दर्शन दिया ताकि मनुष्य जाति आग्रहो से बच सके।

मानव स्वभाव अन्वेषी होती है। सत्य शोध उसका शाश्वत गुण है। जब तक भाषा का आविष्कार नही हुआ, मनुष्य अपने अनुभवों से आगे बढ़ता रहा। उसकी अनुभूति सत्य से उसका साक्षात्कार कराती रही। जिससे वह आग्रह-विग्रह से लगभग मुक्त था। उसकी संवाद अभीप्सा ने उसे भाषा के आविष्कार की ओर प्रवृत्त किया। बाषा आविष्कृत हुई किंतु उसकी सीमाओं ने मनुष्य को आग्रह-विग्रह मे उलझा दिया।

प्रखर वक्ता बहुत मिल जाएगे, ज्ञानियो की भी इस संसार में कमी नही है। भाषाविद्, शास्त्रविद, जानकारों की भी इस धरा पर कमी नही है किंतु प्रत्येक के साथ भाषा की सीमा है और यही कारण है कि भाषा में पूर्ण सत्य को प्रकट करने की शक्ति उत्पन्न नही हो पाती।

सत्य को जानने के लिए उसकी अनुभूति एक महत्वपूर्ण माध्यम हो सकती है किंतु सत्य अनन्त है, विराट है और असख्य है। एक सामान्य व्यक्ति अपने एक नही, अनन्य जन्मों में भी समस्त सत्य को नही पा सकता। क्योंकि सत्य पल-पल व क्षण-क्षण के सूक्ष्म हिस्सों मे परिवर्तनशील भी है, ऐसे में एक ही जन्म मे बहुत कुछ पाने का एकमात्र माध्यम होता है। मनीषियो ने सद्गुरू की जो महिमा बताई है। उशका साक्षात्कार यदि करना हो तो इस धरा पर एक जीवंत उदाहरण है-प्रज्ञा पुरूष आचार्य श्री महाप्रज्ञ।

अहिसा के महान प्रवक्ता व अनेकांत दर्शन के मर्मज्ञ आचार्य महाप्रज्ञ इस वसुंधरा पर उपलब्ध एक ऐसे महान व्यक्तित्व हे जिनकी प्रज्ञा पूर्णत: जागृत है। जो हर क्षण सत्य से साक्षात्कार करते है या कहे पल-पल सत्य मं जीते हैं। आचार्यश्री साधना व ध्यान के माध्यम से चेतना की गहराई व ऊंचाइयो को छू चुके है और सत्य से साक्षात्कार के परम सत्य को भी पा चुके हे। ऐसे सद्गुरू ही किसी को कुछ देने मे सक्षम है। जो उनके पास जाता है, अल्प समय में ही वह सब कुछ पा लेता है, जो अनंत

जीवन में सामान्यतया संभव नहीं है। भाषा के जानकार तो बहुमत मिल जाते हैं, भाषा को निहित अर्थों तक पहुंचाने वाली अभिधा भी जानकारों के पास होती है किंतु ज्ञान को सम्यक् रूप में प्रदान करने की क्षमता तभी आ सकती है जब प्रज्ञा पूर्णतः जागृत हो। आचार्य श्री महाप्रज्ञ सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन व सम्यक् चरित्र के साक्षात स्वरूप है, अतः अपनी प्रज्ञा से सत्य के साक्षात्कार की ही हंता नहीं रखते, वरन् उससे आगे बढ़कर सत्य को उसके मूल स्वरूप में दूसरों को अनुभूत कराने की उनकी क्षमता ही उन्हें सद्गुरू के रूप में प्रतिष्ठित करती है।

सत्य का साक्षात्कार मात्र शब्दों से नहीं कराया जा सकता। यह आचार्य श्री महाप्रज्ञ भली भांति जानते हैं। इसीलिए प्रशिक्षण व प्रयोग उनको अधिक अभीष्ट हैं। उनकी वाणी में जो शब्द प्रकट होते हैं उनका सम्यकत्व व अभिधा अद्वितीय होती है। सत्य व ज्ञान के पिपासु उनकी वाणी वाणी से सत्य के मार्ग को न केवल जान सकते हैं वरन् प्राप्त मार्गदर्शन को अपने जीवन में प्रायोगिक कर परम सत्य से साक्षात भी कर सकते हैं।

सम्यक् अभिधानी, सत्य के साक्षात्कारकर्ता, परमज्ञानी, युगीन समस्याओं के समाधायक, अहिंसा के प्रखर प्रवक्ता, अध्यात्म जगत के नायक एवं मानव जीवन के उन्नायक, प्रेक्षाध्यान और जीवन-विज्ञान के प्रणेता, अणुव्रत अनुशास्ता, युगप्रधान, युगपुरूष आचार्य महाप्रज्ञ की 84वीं जन्म जयंती के अवसर पर कोटिशः अभिवंदन। युगपुरूष महाप्रज्ञ चिरायु हो।

-ए-16, रतलाम कोठी, इंदौर (मध्यप्रदेश)

स्वस्थ समाज संरचना के संदेशवाहक

साध्वी विद्यावती (द्वितीय)

'हजारों साल बुलबुल अपनी बेनूरी पे रोती है।
बड़ी मुश्किल से होता है चमन में दीदावर पैदा।।

निरंतर प्रवाहमान इस कालचक्र में ऐसे अनेक महापुरूष हुए हैं, जिनका नाम इतिहास के पृष्ठो पर स्वर्णाक्षरो में अंकित है। उन्ही महापूरूषों में एक विश्व विश्रुत नाम है-आचार्य महाप्रज्ञ। महापुरूषों के जीवन का हर क्षण अपना असीम महत्व लिए रहता हे, क्योंकि उनका जीवन व्यवहार उस शाश्वत सत्य की पृष्ठभूमि पर अवस्थित होता है, जिससे ज्ञात-अज्ञात रूप मे अनेक प्रकार से सत्य की ज्योति प्रज्वलित होती रहती है।

अनुपमेय व्यक्तित्व

आचार्य महाप्रज्ञ का व्यक्तित्व बहुआयामी है एवं वे हर आयाम के उच्च शिखर पर विराजमान है। साधारणतया व्यक्ति के व्यक्तित्व को परखने के लिए दो बिंदु हैं-बाह्य व्यक्तित्व एवं आंतरिक व्यक्तित्व अलंब शरीर, गेहुंआ वर्ण, कृशतनु और भव्य ललाट, ये सब जहां महाप्रज्ञजी के बाह्य व्यक्तित्व की झलक है, वही ऋजुता, मृदुता, करूणाशीलता तथा सहज साधुता आदि गुण उनके आंतरिक व्यक्तित्व की पहचान कराते हैं। महाराणा प्रताप के शौर्य एवं पराक्रम के गौरव से गौरवान्वित राजस्थान की वह धरा उस समय और अधिक कृतपुण्य हो उठी जिस समय झूंझनू जिले के एक छोटे-से ग्राम टमकोर में माता बालुजी की कुक्षि से एक ऐसे होनहार शिशु ने जन्म लिया, जिसकी जन्मकुंडली में प्रबल राजयोग था। घर मे नत्थू अभिधान से अभिहित वह दस वर्षीय बालक तेरापंथ के अष्टमाचार्य श्री कालूगणी के करकमलों से जैन भागवती दीक्षा ग्रहण करके नत्थू से मुनि नथमल बन गया। आपका जीवन समर्पण, पुरूषार्थ और निच्छल व्यक्तित्व की गाथा है। ज्ञान, ध्यान एवं स्वाध्याय योग की जीवंत प्रतिभा है। इतना ही नही गुरू के साथ अभेद अथवा तादात्म्य का जीवन जीने वाला वह व्यक्तित्व अष्टमाचार्य श्री कालूगणी एवं नवमार्चार्य गणाधिपति श्री तुलसी के कर्तृत्व का जीवंत निदर्शन है।

विरल वैशिष्टय

आचार्य तुलसी की अनुशासना मे रहकर आपने अपने संयमी जीवन को सार्थक

बनाते हुए बौद्धिक, शैक्षणिक, मानसिक एवं भावनात्मक सर्वतोभावेन विकास की सीढ़ियों पर आरोहण किया। आपकी सर्वतोमुखी प्रगति से प्रभावित होकर आचार्य श्री तुलसी ने आपको 'महाप्रज्ञ' अलंकार से अलंकृत किया। वही अलंकरण समय की गति के साथ ज्योतिर्मय प्रज्ञा का आकार पाकर नामोल्लेख के रूप में परिवर्तित हो गया। अतः अतीत के मुनि नथमलजी बन गए युवाचार्य महाप्रज्ञ, आचार्य एवं युग प्रधान आचार्य श्री महाप्रज्ञजी। इस अप्रत्याशित तरक्की का सुंदर चित्रण एक शेर में पंक्ति-

'बुतो! शाबास है तुमको, तरक्की इसको कहते हैं।
गर न तराशे तो पत्थर थे, तराशे तो खुदा ठहरे।।'

कालजयी अभिलेख

यह कोई अतिशयोक्ति नहीं, हकीकत है कि आचार्य श्री महाप्रज्ञजी को सरस्वती का वरदान प्राप्त है। ऐसा लगता है मानो आपके मस्तिष्क में कम्प्यूटर से भी बढ़ करके प्रज्ञा की कोई ज्योतिर्मयी सजीव शक्ति विराजमान है। आपका व्यापक अध्ययन एवं सूक्ष्म आध्यात्मिक चिंतन-कठिनतम गंभीर विषय के अंतस्तल को स्पर्श करता है। व्यष्टि से लेकर समष्टि, शरीर से लेकर आत्मा, आवरण से लेकर पटावरण तक की उठने वाली समस्त समस्याओं, जिज्ञासाओं एवं तर्क-वितर्कों के समाधान की कुंजी आपके पास है। आप केवल संस्कृत, प्राकृत भाषा के आशुकवि ही नहीं, आशुचिंतक भी हैं। आपने अपने उर्वर मस्तिष्क एवं सुघड़ लेखनी से जिस साहित्य संपदा का सृजन किया है, वह वर्तमान समस्या संकुल विश्व के लिए अद्वितीय देन है। आपका उच्च कोटि का साहित्य जितना विद्वत्प्रिय है, उतना ही लोकप्रिय भी है। आप देश के मूर्धन्य मनीषियों में से एक हैं एवं विश्व के शीर्षस्थ दार्शनिकों में से भी एक हैं। आगम व्याख्याकारों में भाष्यकारों का स्थान महत्वपूर्ण और सम्माननीय माना जाता है। आचार्य महाप्रज्ञजी ने भाष्यकारों में भी अपना नवीन उच्चस्थान बनाया है। आगम अनुसंधान के अतिरिक्त आपने ध्यान साधना के अनुभवों से जो कुछ पाया उसे भी विश्व के समक्ष प्रस्तुत किया है। उसी का प्रतिफल है विलुप्त ध्यान पद्धति का पुनरुज्जीवित होना। आज जो योग साधना के क्षेत्र में एक परिष्कृत पद्धति सामने आई है वह है प्रेक्षाध्यान पद्धति। यह पद्धति पूर्ण वैज्ञानिक पद्धति है एवं जीवन को तनावमुक्त बनाने में पूर्ण सफल पद्धति है। इससे मानव जाति अत्यंत उपकृत हुई है। अहिंसा, अनेकांत, अपरिग्रह, आत्मवाद एवं कर्मवाद आदि प्रमुख सिद्धांतों को युगीन परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत कर असीम संभावनाओं के क्षितिज उन्मुक्त किए हैं। इसी प्रकार शिक्षा के क्षेत्र में "जीवन-विज्ञान" का नया पाठ्यक्रम प्रदान कर व्यक्तित्व निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। आपका मानना है शिक्षा प्रणाली बुरी नहीं है, अधूरा है, बस यह समझना जरूरी है। आपके इन अवदानों से अभिभूत होकर देश-विदेश के विभिन्न संस्थानों-संगठनों ने आपको युगप्रधान, धर्मसम्राट, जैन योग के पुनरूद्धारक, डी.लिट, मैन ऑफ द इयर आदि अनेक अलंकरणों से अलंकृत किया है। ऐसा लगता है आप किसी अलंकार से अलंकृत होना पसंद नहीं

करते। परंतु ये अलंकार आप से जुड़कर अलंकृत होना पसंद करते हैं। अतः स्थान-स्थान से आकर आपके नाम के साथ जुड़ जाते हैं।

आप इस दीर्घायु में भी सुदूर प्रांतों की त्रिवर्षीय 'अहिंसा यात्रा से जातिवाद एवं संप्रदायवाद की नफरत में उलझे लोगों के दिलों में मैत्री एवं सौहार्द तथा मातृभाव को विकसित करने का भगीरथ प्रयत्न कर रहे हैं। यह आपकी विश्व समुदाय को एक अलौकिक देन है।

संघ पुरूष चिरायु हो

तेरापंथ धर्मसंघ की आचार्य परंपरा में सर्वाधिक आयुष्य का कीर्तिमान स्थापित करने वाले कालजयी महर्षि युगप्रधान आचार्य श्री महाप्रज्ञजी के 85वें वर्ष प्रवेश के मंगल अवसर पर आज देश-विदेशों में स्थान-स्थान पर वर्धापना समारोह मनाया जा रहा है। किसलिए? इसीलिए कि आचार्यप्रवर केवल तेरापंथ या जैन जगत के नहीं, संपूर्ण मानव जाति के मार्गदर्शक है। स्वस्थ समाज संरचना के संदेशवाहक हैं। हिंसा के वातावरण मे अहहिंसा का शंखनाद करने वाले हैं। इस स्वर्णिम बेला में हम सब यह शुभकामना करते है कि जिस प्रकार आप तेरापंथ धर्मसंघ के कालजयी महर्षि के रूप में प्रतिष्ठित हुए हैं, वैसे ही विश्व क्षितिज पर भी आपके अवदान कालजयी अभिलेख बनकर प्रतिष्ठित हो। वर्धापना के इस पावन अवसर पर हम आपका कोटि-कोटि अभिनंदन करते हैं, अभिवंदन करते है।

साध्य और साधन

साध्य और साधना की एकता के विचार को आचार्य भिक्षु ने जो सैद्धान्तिक रुप दिया, वह उनसे नहीं मिलता। शुद्ध साध्य के लिए साधन भी शुद्ध होने चाहिए। इस विचार को उनकी भाषा में जो अभिव्यक्ति मिली, वह उनसे पहले नहीं मिली। साध्य ः साधन की सिद्धी का सिद्धांत अब राजनीतिक चर्चा में भी उतर आया है। एम्मा गोल्डमैन ने, जिनके विचार बडे क्रांतिकारी कहे जाते हैं, हाल मे लंदन में एक भाषण में कहा गया था- 'सबसे हानिकारक विचार यह है कि यदि साध्य ठीक है और असली साध्य पर दृष्टि ही नही जाती।' स्वयं ट्राटस्की ने लिखा है। 'जिसका लक्ष्य साध्य पर रहता है वह साधनों की उपेक्षा नहीं कर सकता। किंतु शायद उसने यह नही समझा कि साधन का कितना बड़ा प्रभाव साध्य पर पड़ता है। बुरे साधनों से तो बुरा साध्य ही प्राप्त होगा, इसलिए चाहे जैसे साधन प्रयुक्त करने का सिद्धांत कभी उचित नही हो सकता।'

आचार्य महाप्रज्ञ भिक्षु विचार दर्शन, पृष्ठ 87

लोकमान्य महर्षि

✍ -साध्वी यशोधरा

सौ-सौ दिवला तप तपै, आखी-आखीरात।
वो सारो तप अवतरै, सूरत बण परभात्।।

महाप्रज्ञ का इस रत्नगर्भा वसुन्धरा पर अवतरण महासूर्य का अवतरण है। महान् तप का अवतरण है। मानवजाति के सौभागय का अवतरण है। महाप्रज्ञ का जीवन निर्मल, निश्छल, मां के दूध की तरह पवित्र एवं समुज्ज्वल है। उन्हीं के शब्दों में उनका आत्म परिचय

मैं अकिंचन हूं, इसीलिए महान हूं।
मेरी कामनाएं सीमित हैं, इसलिए मैं सुखी हूं।
इन्द्रियों पर नियंत्रण है, इसलिए मैं स्वतंत्र हूं।
कथनी-करनी में समानता है, इसलिए मैं ज्ञानी हूं।
बाहरी वस्तुएं मुझे खींच नहीं सकती, इसलिए मैं सरस हूं।
अपनी कमजोरियों को देखता हूं, इसलिए मैं पवित्र हूं।
सबको आत्मतुल्य समझता हूं, इसलिए मैं अभय हूं।
जीवन की लघु विराट यात्रा को मैं तीन भागों बांटकर चलता हूं-
प्रातः- आनन्द की उपासना।
मध्यान्ह- आगम संपादन-ज्ञान की आराधना।
सायं-शक्ति साधना

आज कॉस्मेटिक सर्जरी ने शारीरिक सौंदर्य निखारा है, पर आचार्य महाप्रज्ञ अन्तर्मार्ग की संपदा से समृद्ध है। इस साफ सुथरे दर्पण में उनका सजा-संवरा व्यक्तित्व स्पष्ट प्रतिबिम्बित हो रहा है।

उनका हर कार्यक्रम सुई से बंधा हुआ है। समय का अतिक्रमण उन्हें सह्य नहीं है। आज समय प्रबंधन (Time Management) कार्यशालाएं यत्र-तत्र आयोजित हो रही हैं पर आचार्य महाप्रज्ञ का जीवन इसका प्रायोगिक प्रशिक्षण है। उनकी सारी दिनचर्या जीवन-योग की हस्ताक्षर है। समता उनका धर्म है, समता ही उनका कर्म है। साम्ययोगी ने योग सिद्धि से प्रज्ञा के नए-नए आयामों का उद्‌घटन किया है।

महाप्रज्ञ के सांस-सांस में सत्यं शिव सुंदर का संगीत मुखर हो रहा है। जहां से सत्य की ऋचों, शांति के मंत्र और सौदर्य की कला का सारे संसार को प्रशिक्षण मिल रहा है। उनके

एक-एक उद्‌गार अपने आप में गीता जैसे रसभीगे गीत ही नहीं, जीवन संगीत हैं। अन्तःकरण से शिथिल हो चुके अर्जुन के लिए अमृत उद्‌बोधन हैं।

वे एक वाग्मीसंत हैं। उनके प्रवचन सर्वतोभद्र भावना के प्रतीक एवं सर्वोदय की प्रेरणा हैं। उनमें दिव्य चेतना की अन्तर्ध्वनि अभिव्यक्त होती है। गरिष्ठ से गरिष्ठ तत्त्व भी इस तरह सुपाच्य बनाकर परोसते हैं कि गरिष्ठता का अहसास तक नहीं होता। अध्यात्म की पहेलियों को बूझने में एवं जीवन् जगत् की समस्याओं का सटीक समाधान पाने में बेमिसाल हैं उनके प्रवचन। महाप्रज्ञ ने अध्यात्म की पहेलियो को बूझने में एवं जीवन जगत् की समस्याओं का सटीक समाधान पाने में बेमिसाल हैं उनके प्रवचन। महाप्रज्ञ ने अध्यात्म को न केवल प्रवचनों व ग्रंथों में ढाला है अपितु अध्यात्म में रमण किया है। अध्यात्म को जिया है। अध्यात्म की अतल गहराइयों में उतर कर अनमोल रत्न हस्तगत किए हैं। अध्यात्म की प्रयोगशाला में नित नए प्रयोगों से जिस सत्य का साक्षात्कार होता है, उसी अनुभूत सचाई की अभिव्यक्ति होती है उनके एक-एक प्रवचन में। इसलिए उनकी बात में वजन होता है। भीतर से जो चांदनी प्रस्फुटित होती है, उससे वे स्वयं ही प्रकाशित नही होते उसके विकिरण पूरे वातावरण को आलोक से भर देते हैं।

जीवनशिल्पी अभिनवकल्पी भाग्याकाश में परम पुरूषार्थ की अनगिन नीहारिकाओं और नक्षत्रमालाओं को चमकाने वाले परम पूज्य गुरूदेव श्री तुलसी ने अपने अन्तेवासी शिष्य का वर्दापान करते हुए कहा-तुम्हारी आत्मा में दर्शन, ज्ञान और चारित्र की त्रिवेणी हिलोरें ले रही हैं। उससे पूरा धर्मसंघ रोमांचित और उल्लसित है। इस त्रिवेणी की धाराओं से समूचे धर्मसंघ को अभिष्णात करना है। महाप्रज्ञ! तुम पर भिक्षु शासन का ही दायित्व नहीं है, आज सपूर्ण धर्म परंपरा और मानवजाति को मार्गदर्शन की अपेक्षा है। विश्व की इन जटिल परिस्थितियो में तुम्हे सबको पथदर्शन देना है। तुम मुझसे सवाीया काम करोगे।

भाग्यविधाता की इन आल्हादकारिणी पंक्तियो मे शिष्य के प्रति अगाध विश्वास झलक रहा है। गुरू वह दर्पण है, जिसमें शिष्य का यथार्थ प्रतिबिम्ब प्रतिबिम्बित होता है। गुरू अपने शि,य को अपने ही सामने गुरू पद पर आसीन कर दे, इससे बड़ी शिष्य की अर्हता का मूल्यांकन क्या हो सकता हे? गुरू का आशीर्वाद शिष्य के लिए अभेद्य सुरक्षा कवच है। पग-पग पर मंगल और सफलताओं का संसूचक हे। गुरू का आशीर्वाद जिसके के साथ है, अमंगल तो क्या अमंगल की छाया भी उसका स्पर्श नही कर सकती। यही कारण है कि वे जिस किसी क्षेत्र में पदन्यास करते हैं, विजयलक्ष्मी वरण करने मचल उठती है।

करूणा सागर

समता, क्षमता और ममता के संगम हैं आचार्य महाप्रज्ञ। करूणा की पारदर्शी बूंदों से झलमलाते ललाट पर सफेदकण मानवीय ममता के साक्षी हैं।

आचार्य अन्निकापुत्र नौका विवाह कर रहे थे। जहां बैठते वही नौका झुकने लगती। बीच में बैठे तो डूबने की नौबत आ गई। यात्री मौत के भय से घबरा उठे। भयद्रुत हो उन्हें समुद्र में फेंक दिया। उधर व्यन्तरी ने पूर्वभव के बैर का प्रतिशोध लेने उन्हें शूल मे पिरो दिया। शरीर से रिसने वाली रक्तबूंदें समुद्र में गिरने लगीं। उस मारणान्तिक वेदना के क्षणों में भी करूणार्द्रचेता आचार्य के श्रीमुख से स्वर फूट पड़े-

हा! मद्दीयरुधिरेण अप्कायजीवा ? निधनं यान्ति।
(हा! मेरी रुधिर बूंदों से पानी के जीवों की विराधना हो रही है।)

अहो! भयंकर कष्ट के क्षणों में भी आचार्य की ऐसी करूणामयी चिंतनशैली! इसी सूक्ष्म करूणा के प्रतिनिधि हैं करूणा सागर आचार्य महाप्रज्ञ! जिनके अणु-अणु में करूणा के स्पंदन स्पंदित हो रहे हैं।

गोधरा में कार सेवकों को जिंदा जला दिया गया। गोधरा काण्ड से पूरा गुजरात सम्प्रदायिक हिंसा की आग में झुलस रहा था। चुन-चुन कर बेरहमी से एक हजार व्यक्तियों को जिंदा जला दिया गया, मार डाला गया। यत्र-तत्र-सर्वत्र हिंसा की होली जल रही थी। ऐसे माहौल में लाखों श्रद्धालुओं के भारी दबाव के बावजूद अहिंसा यात्रा के प्रवर्तक ने अपने हिमालयी संकल्प को दोहराते हुए कहा कि अहिंसा यात्रा की इस समय गुजरात में सर्वाधिक आवश्यकता है। मैं अवश्य जाऊंगा और अहिंसा के स्वर को बुलंद करूंगा। साहस की दरिया ने गुजरात राज्य की सीमा में प्रवेश किया। मानव-मानव के बीच पैदा हुई दूरियों को पाटने का भगीरथ प्रयत्न किया। लोगों की ब्रेन-वाशिंग करने जुट गए।

अहिंसा प्रशिक्षण के माध्यम से मानव के मन-मस्तिष्क को मानवीय एकता, साम्प्रदायिक सद्भावना के संस्कारों से संस्कारित कर एक चमत्कार दिखा दिया।

शान्ति के अग्रदूत की तप पूतवाणी का जादुई प्रभाव था कि हिंसा के काले कजरार बादल छंटने लगे। अविश्वास का कोहरा साफ हुआ। त्राहिमाम्-त्राहिमाम की पुकार करने वाली जनता को आश्वास, विश्वास और नया उच्छ्वास मिल गया। मरुस्थल की तपती दुपहरी में जैसे मन्दार की छांह मिल गई। गुजरात की जनता के साथ पूरे देश ने राहत की सांस ली।

दुःखी जनवत्सल करूणाशील महामानव को गुजरात की जनता ने 'मानवता के मसीहा', 'शान्ति दूत' और 'गुजरात का दूसरा गांधी' के रूप में नवाजा। उन्होंने अपने नव दशक में यह सिद्ध कर दिखा दिया कि वे परिस्थिति आने पर तरलपानी बन बहना नहीं जानते, प्रत्युत बर्फ बन जीना जानते है।

अहिंसा यात्रा के पुरोधा धर्मचक्र का प्रवर्तन कर रहे हैं। अभिनव धर्मक्रांति का प्रवाह सा बह रहा है। आज के उद्भ्रान्त-दिग्भ्रान्त मानव के लिए दिशासूचक यंत्र है आचार्य महाप्रज्ञ। देशी-विदेशी विद्वान् यह मानने लगे है कि पूरे विश्व के आध्यात्मिक नेतृत्व की क्षमता किसी में है तो वह है आचार्य महाप्रज्ञ में। उन्होंने अपने कर्तृत्व और व्यक्तित्व से अध्यात्म परंपरा के आर-पार को उद्भासित किया है। यही कारण है कि आचार्य महाप्रज्ञ जैनाचार्य हैं, यह जानते हुए भी उनसे साक्षात्कार के लिए कोई एक प्रदेश या भाषा नहीं, प्रायः सारा भूगोल और संस्कृतियां उनकी मंगल सन्निधि में आत्मीयता का स्पर्श पा धन्य हो उठती है। उनका आकर्षण और ऊर्जस्वल आभावलय लोह-चुम्बर की तरह प्रथम दर्शन में ही दर्शक को सम्मोहित कर लेता है। उसके पीछे उनका पारसधर्मी व्यक्तित्व और उदार मानवतावादी दृष्टिकोण ही काम कर रहा है।

उनके सान्निध्य में जो बैठा है वह हरिजन है या महाजन, खेतिहर है या श्रमिक, व्यापक है या कुलपति, स्वयं सेवक है या राष्ट्रपति-उनकी पारगामी दृष्टि हर आदमी में बैठे आदमी

को तलाश लेती है और वहीं पहुंचकर उसे प्रभावित करती है। इसलिए आज लाखों नजरें उन्हें आशाभरी दृष्टि से निहार रही है। उनमें अनन्त-अनन्त संभावनाओं के सपने संजो रहीं हैं।

आचार्य महाप्रज्ञ का जीवन अप्रमत्तता, जागरूकता, पौरूष-पुरूषार्थ का पर्याय है। उनकी कर्मजाशक्ति के आगे वार्धक्य कभी विघ्न बनकर विकासयात्रा में अवरोधक नही बनता। जिनकी धमनियों में एकाग्रता का ग्लूकोज, इच्छाशक्ति और संकल्पशक्ति का ऑक्सीजन निरंतर प्रवाहित होता है, उनके आस-पास प्रमाद को पांव पसारने का मौका ही नहीं मिलता। उन्होंने हर श्वास को अप्रमाद के साथ जीने का प्रयास किया है, कर रहे है। संकल्प को जागृत करने वाला अजेय बन जाता है। संकल्पशक्ति के चमत्कार का जीवन्त निदर्शन है उनका जीवन। क्षण-क्षण का रस निचोड़ कर कालजयी बनने का गुर उन्हें शैशव काल में ही गुरू से उपलब्ध रहा है।

आचार्य श्री महाप्रज्ञ ने दुष्प्रवृत्तियों के दुःशासन, दुष्चक्रों के दुर्योधन, स्वार्थ के शिशुपाल और मायावी शंकुनि से निजात पाने के लिए एक सशक्त शस्त्र दिया है-प्रेक्षाध्यान। शिक्षा जगत् की समस्याओं का ज्वलंत समाधान है जीवन विज्ञान। जिससे छात्रों का आध्यात्मिक एवं वैज्ञानिक व्यक क्तित्व का निर्माण होता है।

महाप्रज्ञ की मनीषा युग का दर्पण है। उनकी वैचारिकता में युग विचार मुखर हो रहा है। युगीन चेतना का प्रतिनिधित्व कर रहा है उनका मौलिक साहित्य। अपनी जागृत प्रज्ञा से उन्होंने युग को नई दृष्टि, नया दिशाबोध और नया मोड़ दिया है। युग की भाषा को नया स्वर दिया है। नए आयाम दिए है। जो जीता है युग के साथ, देता है युगीन समस्याओं को समाधान-वही बनता है युगप्रधान। वे लोकनायक हैं, युगद्रष्टा हैं, युगस्रष्टा हैं, युग प्रचेता हैं, युगपुरूष है। उन्होंने अपने व्यक्तित्व, कर्तृत्व और कृतित्व की स्याही से जो अवदानों के आलेख लिखे हैं, उन पर समग्र विश्व चेतना को सात्विक गर्व है। 84वें जन्म दिवस के पुण्य-पुनीत प्रसंग पर आत्मअन्वेषण के तीर्थयात्री, कालजयी महर्षि को अरबों-खरबों न्यरोन्स का भाव-भरा वदन अभिवंदन, अभिवंदन।

खुदा के इश्क की तन्वीर बांचता है यही,
कदम को थामलो, तकदीर बांटता है यही।
हम हुआ करते हैं, तेरी जिंदगी के वास्ते,
तूं रहे जिन्दा हमारी, रहवरी के वास्ते।।

विद्यावान् कौन?

विद्या और अविद्या में जो अंतर है, उसे समझ लेना ही जीवन की सर्वोपरि साधना है। साधना केवल योगियों के लिए ही नहीं है, जो भी व्यक्ति अपना जीवन शांतिपूर्वक ढंग से बिताना चाहे, उन्हें साधना का अवलंबन लेना ही चाहिए। जो सब कुछ जानकर भी अपने आपको नहीं जानता, वह अविद्यावान है, विद्यावान वही है, जो दूसरो को जानने से पूर्व अपने आपको भली भांति जान लें।

— आचार्य महाप्रज्ञ चिंतन का परिमल, पृष्ठ 51

अध्यात्म जगत के महान योगी

✍ साध्वी मंजूरेखा

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में अगर कुछ देखते और सुनने को मिलता है तो, तनावग्रस्त व्यक्ति, तनाव भरी बातें, तनावग्रस्त जीवन शैली, भौतिकता के साथ उपभोक्ता के साथ उपभोक्तावाद की होड़ाहोड़ और कम्पेरीयन तथा कम्पीटीशन भरी अप-संस्कृति, ऐसे नाजुक माहौल में है, कोई स्वयं की निर्मित कमजोरियां से परेशान है। कोई दूसरो से परेशान हैं, कोई अपनो से टूटा हुआ है कोई परायों से, इस प्रकार चारों ओर से व्यथीत व्यक्ति इस लड़ाखड़ाती धरती पर आलंबन भरा सहारा ढूंढ रहा है, तो कोई अपने रिश्तों से हटकर दूसरो को अपना बनाकर जीने की कोशिश कर रहा है तो कोई लोग ऐसे भी है, जो अपनेपन के नाम से नफरत कर इस राग-द्वेष भरी दुनियां को तटस्थ सुख तथा स्थिर धर्मों का ढूंढते ढूंढते अपने आपको अध्यात्म की शरण में ही समर्पित कर देना चाहिए है।

वर्तमान में अगर आध्यात्मिक को ज्ञापित कराने वाले, बोध कराने वाले है तो हमारे महानयोगी महान दार्शनिक आचार्य श्री महाप्रज्ञजी हैं। जिन्होंने जिंदगी के हर क्षण को अध्यात्ममय बनाते हुए योग और आनंद और प्रकाश बिखेरा। आप साहित्य सर्जन करते करते उस ऊंचाई तक आरोहण कर चुके थे, जिस पर साधारण व्यक्ति का पहुंचना तो संभव है ही नहीं, अपितु सोचना भी संभव नहीं है। आप महान दार्शनिक, प्रेरणास्त्रोत, जमाने की एकमात्र निगाह हैं और अंतिम चाह हैं। आप का व्यक्तित्व व कर्तृत्व हर दिल की पुकार है। आचार्य श्री महाप्रज्ञजी की प्रज्ञा का अभिनंदन करते हुए हम सब गौरवान्वित हो रहे है। उन्होंने प्राणीमात्र को नेतृत्व देते हुए कहा कि तुम्हारे में अनन्त शक्ति है, उस स्रोत को कैसे उदघाटित व प्रवाहित करना है, यह स्वयं व्यक्ति की सोच पर निर्भर करता है। कोई प्राप्त शक्ति का अपव्यय करता है तो कोई उस प्राप्ति का नियोजन कर स्वयं दूसरा के लिए शक्ति मंच बन जाता है। आज पुनः इस जमाने को, एक शक्ति की जरुरत है जिससे स्वयं और अनुशासन की गंगा पुनः सही रुप मे प्रवाहीत हो सके। जब तक व्यक्ति का हृदय नहीं बदलेगा तब तक व्यक्ति का निर्माण की भूमिका तक पहुंचना मुश्किल होगा। मगर इस मुश्कलो को तथा दूरियां को अगर कोई पाटन वाला और समझने वाला हैं तो आचार्य श्री महाप्रज्ञजी है। वह ही इस जमाने की जरुरत को समझ रहे हैं और उसी के अनुसार दिशा बोध दे रहे हैं। जिसके हर कार्य पर जमाने की नजर टिकी हुई है। इस हिंसात्मक होली को अगर उपदेश व आपकी प्रेरणा। आपने अपनी योग साधना से हर व्यक्ति की कमजोरी को जाना, देखा, परखा तथा समाधान भी दिया। इसलिए विश्व व भारत की जनता, आपको धर्मदीप, धर्मशरण, धर्मपुरुष तथा जमाने की एक मात्र नजर के रुप मे स्वीकार कर रही है।

आचार्य महाप्रज्ञ शब्द में अध्यात्म की समाविष्ट हैं। आपका व्यक्तित्व सतयुग की पुष्टि

हैं। आपका यौगिक कार्य कलाप स्वयं सतयुग हैं। आपकी सहज सन्निधि में बैठने मात्र से बहुत सारी समस्याओं का समाधान स्वतः हो जाता हैं। जब आपका आशीर्वाद भरा हाथ ऊपर उठता है तो स्वयं भाग्य चमक उठता हैं। आपके ऊर्जा कण जब किसी भी संतप्त व्यक्ति तक पहुंचते हैं तो, वह व्यक्ति स्वयं शीतलता में परिवर्तित हो जाता हैं। आपकी दृष्टि किसी पर या कहीं पर या कहीं पर भी पड़ जाती हैं तो, वह मोटी स्वयं दौलत बन जाती हैं। आपके पधारने मात्र से जनता में एक अजब उत्साह की लहर दौड़ जाती हैं। आपने अपना संदेश केवल वर्ग विशेष तक ही नहीं पहुंचता। आपके संदेश से हर तबके के लोग प्रभावित हुए, चाहे वो किसी भी जाति का क्यों न हो - पुलिस, मिलेट्री, क्लर्क, अध्यापक, डॉक्टर, वकील, व्यापारी, जज को लेकर देश के प्रधानमंत्री व राष्ट्रपति तक पहुंचते हैं। आपका संदेश है कि राजनीति में भी धर्मनीति प्रतिष्ठित हैं। जब तक संयम व अनुशासन नहीं रहेगा तब तक कोई भी कार्य आसानी से सफल का दिन कभी भी नही बदला जाएगा।

आपने अपनी अहिंसा यात्रा से अनेक समस्याओं का समाधान किया तथा गुजरात की धरती पर यह सिद्ध कर दिया कि मैत्री, करुणा, सौहार्द से ही शान्ति संभव हैं। आपके द्वारा हम सब एक है, यह बात सुनकर हिन्दु-मुस्लिम दोनों के दिल दिमाग बदल गए। इसके साथ ही गुजरात में अहिंसा के बाज पुनःआपसी भाई चारे में खिलने लगें। दोनों साम्प्रदाय के लोगों के गले उतार दिया कि धर्म कभी लड़ना नही सिखाता, धर्म हमेशा प्रेम, आदर व सम्मान ही सिखाता हैं। जो काम कोई राजनेता नही कर पाये वह काम आपने अपनी अहिसा यात्रा से कर दिया, जिससे आप विश्व की निगाहो में एक अनंत शक्ति सपन्न व्यक्तित्व के रूप में देखा जा रहा हैं। गुजरात के इतिहास मे आपने एक नये कीर्तिमान के साथ एक आकर्षक आलेख अंकित किया।

आपकी दूरदर्शी मेधा साहित्य के भंडार को इस तरह भरा हैं कि वह किसी दुनिया के खजाने से कम नही। कुछ वर्ष पूर्व बैंकाक से भाई सज्जनजी भंसाली वहां के काफी लोगों को लेकर भारत आये, उनसे पूछा आचार्य श्री महाप्रज्ञजी कहां विराजमान हैं? मैंने पूछा आप एक साथ इतने लोग क्यों आये है? और क्या देखने आये हैं? तब उन्होने कहा ये लोग आचार्य श्री महाप्रज्ञजी को देखने आये है। आचार्यश्रीजी के साहित्य को पढ़कर उनको देखने तथा दर्शन करने आये है। पूज्य गुरुदेव की कई किताबों ने इनके दिल को छू लिया। हम सभी ने महसूस किया कि इस भौतिक दौड़ में अध्यात्म के बिना शान्ति संभव नही हैं। इस बातको इनके ही श्रीमुख से सुनाने के लिए हम भारत आये हैं। आपकी अहिंसा यात्रा से गुजरात और मुम्बई की जनता ही प्रभावित नही हुई, बल्कि पूरे विश्व मे आपके विचारों का सम्मान है। मानव मात्र की अगर कोई चाह हैं तो वह हैं आपकी सन्निधि और आपके द्वारा प्राप्त संबल। आपके दिशा दर्शन की जनता को इतनी जरुरत हैं जितनी एक प्यासे भूखे इंसान को भोजन पानी की। आपने हजारों व्यक्तियों को परिवर्तित कर जीवन विज्ञान, प्रेक्षा ध्यान, अणुव्रत तथा योग विद्या के द्वारा सुंदर जीवन शैली प्रदान की। आपकी इस कार्यजा शक्ति का सहस्राब्दियो तक अभिनंदन होता रहेगा। आप वह विश्व पुरुष हैं जो कांटोपर चलकर भी असंभव हो संभव कर रहे हैं। आपके हर कार्य पर हर जमाने की नजर टिकी हुई हैं। आपके हर कदम का जमाना सम्मान कर रहा हैं, आपके द्वारा प्रदत्त जीवनशैली आज के जन मानस की अतृप्त प्यास बन गई है। हर व्यक्ति आपके दर्शन को आतुर रहता हैं। धर्मसंघ के आचार्यों की गौरवशाली परंपरा मे आपने सर्वाधिक उम्र में कीर्तिमान रचा हैं, इससे पूरा धर्मसंघ प्रसन्न है, प्रफुल्ल है, तथा आपकी वर्धापना करता है। इन पुनित ऐसिहासीक क्षणो में आचार्य महाप्रज्ञ श्री कालूगणी एवं तुलसीगणी की सूझ बूझ का भी अभिनंदम है। वर्धापन समारोह के पावन अवसर पर अध्यात्म जगत के महान योगी आचार्य श्री महाप्रज्ञजी को कोटि कोटि वंदन।

आचार्य श्री महाप्रज्ञ का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

✍ *अनोखी लाल कोठारी*

प्रखर चिंतक आचार्य श्री महाप्रज्ञ का जन्म 4 जुलाई 1920 को राजस्थान के झुंझनू जिले के टमकोर गाँव में हुआ। मात्र दस वर्ष की उम्र में वे तमाम सांसारिक सुख सुविधाओं को छोड़कर तेरापंथ धर्म संघ के अष्टमाचार्य श्रीमद् कालूगणि के करकमलों से दीक्षित हो गए तथा दि. 12 नवम्बर 1968 को उनकी अन्तर्दृष्टि, प्रज्ञा और प्रतिभा का मूल्यांकन करते हुए आचार्य श्री तुलसी ने उन्हें महाप्रज्ञ अलंकरण से अलंकृत किया। दि. 4 फरवरी-1979 को वे युवाचार्य पद पर प्रतिष्ठित किए गए जो तेरापंथ धर्म संघ में आचार्य के बाद दूसरा सर्वोच्च पद है। उसी समय उनके अलंकरण महाप्रज्ञ को उनके नाम के रूप में परिवर्तित कर दिया गया, तब से मुनि नथमल्ल युवाचार्य महाप्रज्ञ के रूप में प्रख्यात हो गये।

सन् 1939 से वे अन्तर्राष्ट्रीय भारतीय दर्शन कांग्रेस की कार्यकारिणी के सम्मानित एवं मनोनीत सदस्य हैं। जैन योग के क्षेत्र में उनके द्वारा किये गये उल्लेखनीय कार्य एवं सेवाओं के अंकन हेतु 12 सितम्बर 1989 को उन्हें जैन योग के पुनरूद्धारक सम्मान से विभूषित किया गया। 18, फरवरी 1994 को एक विशाल जनसभा के बीच आचार्य श्री तुलसी ने उनको तेरापंथ के सर्वोच्च आचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया। सन् 1999 में उन्हें चतुर्विध धर्म सघ द्वारा युग प्रधान आचार्य पद से विभूषित किया गया। दि. 31 अक्टूबर 2003 को उन्हें कलकत्ता में इंदिरा गांधी राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित किया गया, उस वक्त साध्वी श्री कंचनप्रभाजी ने आचार्य श्री महाप्रज्ञजी को अनुशासन, समर्पण एवं पुरूषार्थ के प्रतीक होना बताया।

प्रेक्षा ध्यान एवं जीवन विज्ञान के प्रणेता आचार्य श्री महाप्रज्ञ 200 ग्रंथों के मौलिक लेखक एवं प्रखर चिंतक के रूप मे विश्व विख्यात है। उनके साहित्य की यह एक विलक्षण विशेषता है कि उसमें केवल समस्याओं को ही नहीं डकेरा गया है, बल्कि राष्ट्रीय व वैश्विक समस्याओं का समाधान प्रायोगिक व वैज्ञानिक स्तर पर प्राप्त होता है। देश विदेश में [illegible] महानुभाव उनके साहित्य के प्रशंसक रहे हैं। उनके द्वारा प्रस्तुत प्रेक्षाध्यान एवं जीवन विज्ञान के प्रयोग चिकित्सा एवं शिक्षा के क्षेत्र काफी उपयोगी सिद्ध हो रहे हैं।

राष्ट्रीय चरित्र निर्माण एवं मानवीय मूल्यों के उत्थान के उद्दीपकों को लेकरदेश व्यापी एक

लाख किलोमीटर से अधिक पदयात्रा कर करोड़ो लोगों में नैतिक व चारित्रिक मूल्यों के प्रति आस्था जगाने का आचार्य श्री महाप्रज्ञ ने भागीरथ प्रयत्न किया है, वर्तमान में वे अहिंसक जन चेतना जागरण के महान उद्देश्यों को समर्पित चार हजार किलोमीटर लम्बी अहिंसा यात्रा का नेतृत्व कर रहे हैं। गुजरात में साम्प्रदायिक हिंसा तथा उससे उत्पन्न आपसी विश्वास, दूरियां तथा कटुता पूर्ण माहोल को खत्म कर साम्प्रदायिक सौहार्द, भाई चारा व अमन चैन की स्थापना हेतु उनके द्वारा निभायी गयी ऐतिहासिक भूमिका खर्च विदित है।

भारत सरकार के राष्ट्रीय, साम्प्रदायिक सद्भाव प्रतिष्ठान के अनुसार दिल्ली में एक भव्य समारोह में आचार्य श्री महाप्रज्ञ को वर्ष 2004 के लिए यह प्रतिष्ठित पुरस्कार प्रदान किया जायेगा। साम्प्रदायिक सद्भावना पुरस्कार देश की एकता एवं सद्भावना के क्षेत्र में विशेष योगदान के लिए दिए जाना है। इस बार बड़ी संख्या में नामांकन प्राप्त हुए थ। महामहिम उपराष्ट्रपति श्री भेरूसिंह शेखावत की अध्यक्षता में पुरस्कार चयन समिति के आचार्य श्री महाप्रज्ञ के योगदान को सबसे महत्वपूर्ण माना है। उस पुरस्कार में 2.00 दो लाख रूपये एवं एक प्रशान्तिपत्र दिया जाता है। अहिंसा यात्रा के राष्ट्रीय प्रवक्ता मुनि श्री लोकप्रकाश 'लोकेश' ने पुरस्कार की घोषणा पर प्रसन्नता व्यक्त करते हुए कहा है कि यह नैतिक एवं चारित्रिक मूल्यों का सम्मान है। इससे माननीय मूल्यों के प्रति समर्पित कार्यकर्ताओं का उत्साह बढ़ेगा।

सिरियारी में 4 नवम्बर 2004 में भव्य दीक्षा समारोह का आयाजन हुए जिसमे आचार्य महाप्रज्ञ जी ने 20 दीक्षार्थियों को दीक्षा देते हुए अपने प्रवचन में बताया कि दीक्षा जीवन का कायाकल्प है। दीक्षा द्वारा व्यक्ति का दूसरा जन्म होता है। ब्राह्मण को द्विज इसलिए कहा जाता है कि यज्ञोपवतीय- संस्कार संस्कार के बाद उसका दूसरा जन्म होता है उक्त दीक्षा समारोह में करीब 20 हजार श्रावक श्राविकाओं ने भाग लिया।

अहिंसा यात्रा के महानायक आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी की विदुषी शिष्या रत्नश्री जो एवं सहयोगी साध्वी वृन्द रमावती श्री जी, हिम श्रीजी, मुक्तियशाश्रीज एवं सोम्यश्रीजी ने गुजरात विधानसभाध्यक्ष प्रो.श्री मंगलभाई पटेल ने कहा कि आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी ओर अहिंसा एक दूसरे के परिचायक है। आचार्य श्री मे अहिंसा का खजाना है। गुरुदेव का सानिध्य हम सबको बराबर मिलता है और अनेक अवसरों पर रूबरू होने का सोभाग्य प्राप्त हुआ है। अहिंसा का सन्देश गुरुदेव के द्वारा जन जन तक पहुँचाने का सर्वोत्तम कार्य सिद्ध हुआ है। गुजरात में प्रेक्षाध्यान और अणुव्रत को जन जन तक पहुँचाने का लोक महर्षि आचार्य श्री के द्वारा सर्वोत्तम कार्य हुआ है और गुजरात में शान्ति स्थापित कराने में आचार्यश्री ने अहम मार्गदर्शन प्राप्त किया है।

आचार्य श्री ' हाप्रज्ञजी की देन प्रेक्षाध्यान व जीव विज्ञान आज के युग की विशिष्ट खोज है। प्रेक्षाध्यान '१० जीवन विज्ञान के द्वारा व्यक्ति स्वयं को निरोग व सुखी रख सकता ह। प्रेक्षा विहार जीवन विज्ञान व प्रेक्षाध्यान के प्रचार प्रसार हेतु हरियाणा केन्द्र बने। मानवता के उत्थान के इस महनीय कार्य के लिए जीवन विज्ञानं योगाध्यान ट्रस्ट को हरियाणा सरकार ने भूमि

आवंटित की है जिस प्रकार ट्रस्ट ने प्रेक्षा विहार के नाम से [illegible] बनाने का चिंतन किया है। आचार्य महाप्रज्ञजी का चातुर्मास भिवानी में वर्ष 2006 में [illegible] एवं ऐतिहासिक होगा।

श्रद्धेय आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी के 75वें दीक्षा वर्ष प्रवेश के अवसर पर महामहिम राष्ट्रपति ए.पी.जे. अब्दुल कलाम के हृदयस्पर्शी उद्‌गार निम्न प्रकार है:-

'आज एक महत्वपूर्ण दिन है। मैं देश में एक ऐसे महान संत को देख रहा हूं जो पिछले 75 वर्षों से तप कर रहे है। इस गहन तप के द्वारा उन्होंने स्वयं को राग, अनुराग, क्रोध और घृणा से विरस्त कर लिया है। देश में ऐसी महान आत्माओं की उपस्थिति से शांति फैलती है और आध्यात्मिक समृद्धि बढ़ती है। ये एक ऐसे प्रकाश स्तंभ है, जो छुद्र मनुष्यों को अपनी ओर आकृष्ट करके उन्हे ज्ञान सम्पन्न आत्मा बना देते है। उनके तप की तीन विशेषताएं हैं पदयात्रा प्राप्ति और अर्पण। वे द्रढनिष्ठा और एकाग्रता पूर्वक पदयात्रा करते है। प्रत्येक व्यक्तित्व और प्रकृति से ज्ञान प्राप्त करते है और अपने लेखन कार्यों तथा व्यवहार से आशा का संचार करते है। वे ज्ञान के ऐसे भण्डार है जो सम्पर्क में आनेवाली प्रत्येक आत्मा को शुरु करते है। महामहिम राष्ट्रपति ने 18 फरवरी-2005 मे आचार्य महाप्रज्ञजी के प्रति श्रद्धा और सम्मान अर्पित करते हुए कहा है कि यदि कोई व्यक्ति तप की शक्ति से जीवन की आसक्ति और अहंकार का त्याग कर दे तो ब्रह्माण्ड के समाज प्राणी उसके समक्ष नतमस्तक हो जाएंगे।

भगवान महावीर के अहिंसा सिद्धान्त के उद्‌घोषक इस युग के महान आचार्य महात्मा महाप्रज्ञ, लोक महर्षि, वर्ष 2006 मे तेरापंथ क दशम अधिष्ठाता आचार्य के व्यक्तित्व एवं कृतित्व को द्रष्टिगत करते हुए मै (ए एल कोठारी) उन्हे कोटिश कोटिशः वन्दन, अभिन्दन करते हुए उनके उपदेश व सिद्धान्त जन साधारण के लिए उपयोगी होकर अजर अमर बना रहे।

सम्पर्क सूत्रः- अनोखीलाल कोठारी, 54, ताम्बावती मार्ग, उदयपुर (राज.) पीन-313001

आहारशुद्धि से रुपान्तरण

रुपान्तरण के लिए आहार शुद्धि का अभ्यास आवश्यक है। हित आहार, मित आहार और सात्विक आहार के अभ्यास से रुपान्तरण घटित होने लगता है। जैसे जैसे यह अभ्यास बढ़ता है, शरीर की विद्युत बदलती है, रसायन बदलते है, चैतन्य केन्द्रो की सक्रियता बढ़ती है। जो केन्द्र सोने योग्य होते हैं, वे सोते जाते है और जो जागने योग्य होते है, वे जाग जाते हैं। नीचे के केन्द्र सो जाते हैं और ऊपर के केन्द्र जाग जाते हैं। जिस दिन यह जागृति होती है, उस दिन नई दुनिया का अनुभव होता है, नये जीवन की अनुभूति होती है और तब आदमी इस स्वर में कह सकता है- जो सम्पदा आज तक नही मिली वह आज हस्तगत हो गई, जो जागृति आज तक नहीं आई, वह आज घटित हो गई।

— आचार्य महाप्रज्ञ आहार और अध्यात्म पृष्ठ 41

अनेकांत के महान् व्याख्याता

✍ कमलादेवी धनराजजी ओस्तवाल

महाप्रज्ञ विश्व की महाशक्ति है। ज्ञान के महासमंदर है। सत्य के प्रति अंतहीन आस्था है। सत्य के मार्ग की जी.टी.रोड नहीं होती। परम सत्य का अन्वेषक करते ही पुरुषार्थ से स्वयं रास्ता बनाता है।

सत्य की अनुभूति अत्यंत वैयक्तिक ओर निजी है। महाप्रज्ञ की सत्यान्वेषिता अबाध है। अपने अस्तित्व का प्रत्येक क्षण उसके लिए समर्पित किया है। अंधकार के अभेद्य कवच को छिन्न-भिन्न कर सत्यालोक को प्राप्त आ. महाप्रज्ञ के सत्य हृदय है तो अहिसा ओर अनेकांत आनपान है।

उनके हृदय मे करुणा का अजस्त्र स्रोत प्रवाहित है। अनेकांत उनकी वाणी मे है। दर्शन में है। व्यवहार में है। अहिसा की व्याख्या करने में म. महावीर का आभास है। अनेकांत की व्याख्या में सिद्धसेन, अकलेक, समन्तभद्र, हरिभद्र, मल्लिषेण आदि से साक्षात हो जाता है।

महाप्रज्ञ के शब्दो मे अहिसा, अनेकांत दो नहीं है। उन्हे अलग नही किया जा सकता। अहिंसा का प्रयोगात्मक रुप ही अनेकांत है। अनेकांत बिना अहिसा अधूरी है।

वर्तमान मे अहिंसा-अनेकात की क्या अपेक्षा? उनका प्रशिक्षण अनिवार्य क्यों? प्रशिक्षण का स्वरुप क्या हो? इन सभी प्रश्नो पर जो अर्न्चितन समाज को दिया, वह सामयिक है।

विश्व क्षितिज पर अशांत की काली छाया है। आतंकवाद की त्रासदी है। मानवीय चेतना का दम घुट रहा है। कारण राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक या धार्मिक कुछ भी रहा हो। कश्मीर का आतंकवाद हो या गुजरात का सांप्रदायिक ज्वालामुखी। गोधरा कांड की दर्दनाक घटनाएं हों या अक्षरधाम में होने वाली हिंसा का पागलपन। हिंसा की पराकाष्ठा है। आर्थिक असंतुलन, जातीय संघर्ष, मानसिक तनाव, छुआछूत आदि राष्ट्र की भयकर समस्या है। अनेकांत को व्यवहार्य बनाने के लिए सापेक्षता, संतुलन, सहअस्तित्व का विकास हो। सापेक्ष चिंतन अहिंसा-अनेकांत का आधार है। निरपेक्ष व्यक्ति, जाति, वर्ण, संप्रदाय के बीच विरोध की दीवारें खड़ी करता है।

सामाजिक जीवन संबंधो का जीवन है। संबंधों की व्याख्यान सापेक्षता से ही संभव है। आज समस्याओं का समाधान इसलिए नहीं हो रहा है। समस्या सुलझाने वालो का दृष्टिकोण सापेक्ष और समन्वय मूलक नहीं है। सह अस्तित्व का सिद्धांत जितना दार्शनिक है उतना ही व्यवहारिक है। एकांतवादी विचारधारा ने मैत्री को शत्रुता में, अहिंसा को हिंसा में, बदलने की भूमिका निभाई है। लोकतंत्र, अधिनायकवाद, पूंजीवाद, साम्यवाद, भिन्न विचार वाली राजनैतिक प्रणालियां है। इनमे सहअस्तित्व फलित हो सकता है। यदि कोई अपनी रुचि, विचार, जीवन-प्रणाली ओर अपने सिद्धांत में ही दूसरो को ढालने का प्रयत्न कर तो स्वतंत्रता अर्थहीन बन जाती है।

इकोलॉजी का सिद्धांत संतुलन का सिद्धांत है। यह विरोधी हितों, विरोधी स्वार्थों, विरोधी विचारो में सामंजस्य स्थापित करता है। संतुलन अनेकांत की निष्पत्ति है। म. महावीर की अहिंसा और अनेकांत के महान् प्रवक्ता और भाष्यकार है-आचार्य महाप्रज्ञ।

आ. महाप्रज्ञ केवल आध्यात्मिक पुरुष और ऋषि ही नही है, अपितु वे हर उस समस्या पर निगरानी रखते हैं जो मानव जीवन को प्रभावित करलती है। समाधान देते हैं।

उनका मानना है कि अनेकांत से ही सापेक्षता, सह अस्तित्व और वतंत्रता का विकास होगा। यह अहिंसा के चरम आदर्श की व्यवहारिक परिणति हो। अहिसा ओर अनेकांत को उन्होंने व्यावहारित्त ही नहीं किया बल्कि उसके अनुसार जीवन जीया है। उनका अहिंसा दर्शन व्यापक है, वह केवल मनुष्यो तक ही सीमित नहीं, पशु-पक्षी, पेड़-पौधे, पृथ्वी, पानी आदि भी इसकी सीमा में है। मानव अस्तित्व के साथ अन्य प्राणियों के अस्तित्व की स्वीकृति पारमार्थिक स्थिति मात्र नही, इस जीवन की उपयोगिता भी है।

पर्यावरण संकट के प्रश्न से अहिंसा को नया और व्यापक आधार मिला है। पर्यावरण-विशुद्ध, निःशस्त्रीकरण, मानवीय एकता पर जोर दिया जा रहा हैं। किन्तु आ. महाप्रज्ञ का मानना है-चेतना के रुपान्तरण बिना समस्या का समाधान नही।

सुविधावादी वृत्ति का परित्याग किये बिना प्रकृति के निर्मम दोहन तथा मानव के शोषण का रोका नही जा सकता। उन्मुक्त भोगवाद समाज, देश, परिवार के संगठन को क्षति पहुंचा रहा है।

महाप्रज्ञ कहते है-हिंसा एक शाश्वत समस्या नहीं है। उसका स्वरुप निश्चित नही है। एक चेहरा नही। नित नये रुप लेकर सामने आती है। हिंसा का समाधान अहिंसा से ही हो सकता है।

महाप्रज्ञ की अहिंसा यात्रा अहिंसा ओर नैतिक मूल्यो के विकास की सक्रिय भूमिका है। युग का दस्तावेज है। सफल हस्ताक्षर है। उनका व्यक्तित्व आश्चर्यों की वर्णमाला से आलोकित एक महालेख है। उस शब्दों मे बांधना आसमां को बाहों मे भरना है।

सौन्दर्यचेता ने अपने कलात्मक व्यक्तित्व को इस तरह से तराशा है कि उसका हर पहलू प्रेरणा स्रोत है। उनके हर क्रियात्मक कदम का अभिनंदन, अहिंसा और अनेकांतमयी व्यक्तित्व सदियो के आकाश पर नये-नये स्वस्तिक उकेरता रहे। ❖

साहित्याकाश के सुधांशु

✍ प्रवीण पुगलिया

राजस्थान के छोटे से गॉव टमकोर में जन्म लेने वाले आचार्य महाप्रज्ञजी ने मात्र 10 वर्ष की उम्र में ही पूज्य कालूगणी के करकमलों से दीक्षित हो, संयम जीवन की यात्रा प्रारंभ की । 24 वर्ष की युवावस्था में आप अग्रगण्य बनाए गए और 59 वर्ष की अवस्था में युवाचार्य पद पर नियुक्त किए गए। 74 वर्ष की अवस्था में आपको आचार्य तुलसी ने तेरापंथ ने दसवें आचार्य के रुप में प्रतिष्ठापित पर दिया। सन् 1995 में दिल्ली मे आपका आचार्य पदाभिषेक हुआ।

साहित्याकाश के सुधांशु - साहित्य क्षितिज पर आपके साहित्य का प्रादुर्भाव होते ही प्रबल मिघाच्छादित साहित्याकाश एक अद्‌भुत आलोक से आलोकित हो उठा। आपकी विराट बुद्धि, अखंड कर्म शक्ति, अथक अध्यवसाय, असाधारण प्रतिभा एवं अथक कार्य कुशलता ने साहित्य जगत में हलचल कर दी। आपके पिपासु जनता के शीतल काव्य प्रदान कर हिंदी साहित्य को परिपूर्ण कर दिया। आपके साहित्य उद्यान के एक एक फल का रसास्वादान कर हम अमुपम ज्ञान, बुद्धि , शिक्षा एवं सत्मार्ग प्राप्त करते है, आपके हमारे देश, हमारे समाज एवं साहित्य को उस शिखर पर पहिंचा दिया हैं जिसका सायद ही कभी किसी ने स्वप्न देखा हो। विदेशो मे आपके साहित्य की अच्छी मांग हैं। अनेकों पुस्तकों का अंग्रेजी अनुवाद होकर विदेशो मे निर्यात हो चुका हैं। आपका यह कार्य युग युगांतर तक विश्व को आलोकंकित करता रहेगा और आपको अमर बनाए रखेगा। आपकी समस्त रचनाऍ बेजोड़, अनुपम और अद्वितीय है। आगम संपादन से आपका पांडित्य पूर्ण वंदनीय हो गया है। समस्त जैन समाज आपकी रचनाऍं विभिन्न रस से ओतप्रोत हैं। चैत्य पुरुष जग जाए नामक गीतिका जहॉं परमात्मा से दर्शन साक्षात्कार करने का प्रयत्न करती है वही महाप्रज्ञ गुरुदेव नामक गीतिका समर्पण, श्रद्धा, करुणा और शांत रस से ओतप्रोत हैं। आपकी संस्कृत भाषा की रचना तुलसी अष्टकम् विद्वता का डंका बजा रही हैं। आपको "New Man New World" नामक पुस्तक की विदेशों मे निरंतर मॉंग बनी हुई हैं। आपकी अमर लेखिनी से एक एक अक्षर, प्रवचन से एक एक शब्द में अमृत धारा प्रवाहित होती हैं। तभी तो किसी ने आपको विवेकानंद तो किसी ने आइंस्टीन, किसी ने आचार्य हेमचंद्र तो किसी ने आचार्य देवद्धिगणी के साथ आपकी तुलना की हैं। आपके साहित्य में ज्ञान और परलोक का, निराकार और साकार का, जीवन और मृत्यु का, कला और सौदर्य का सुंदर समन्वय झलकता हैं।

अनन्य भक्त - अध्यात्म क्षेत्र में जैसे गौतम भगवान महावीर के अनन्य भक्त थे वैसे ही महाप्रज्ञ आचार्य तुलसी के अनन्य भक्त थे। महाप्रज्ञ श्रद्धा, समर्पण की प्रतिपूर्ति हैं। आचार्य तुलसी और आचार्य महाप्रज्ञ का योग दुर्लभतम संयोगों में एक हैं। दार्शनिक जगत में प्लेटो और सरस्तु का योग बहुचर्चित

हैं। कहा जाता हैं भक्त के लिए भगवान कुछ भी कर सकते हैं। ठीक वैसा ही आचार्य श्री तुलसी ने किया। वे प्रयोगधर्मा आचार्य थे। नई लकीरें खींचना उन्हें बहुत पसंद था। महाप्रज्ञ इतिहास के प्रथम आचार्य हैं, जिनके आचार्य पद का अभिषेक स्वयं आचार्य श्री तुलसी ने अपने करकमालो से किया।

सफल सुधारक - आचार्य श्री महाप्रज्ञ अणुव्रत की मशाल हाथ में लेकर, प्रेक्षाध्यान की कमान धरकर और जीवन विज्ञान की गदा से इस जगत मे नई क्रांति लाने का संकल्प लिए घर घर, गली गली, गाँव गाँव, जंगल ढांणी सब जगह अहिसा यात्रा कर रहे है। अशांत मानव को नैतिक मूल्यों के प्रति आस्थावान करने में लगे है। नैतिक मूल्यों की पुनर्स्थापना करने के लिए कटिबद्ध है। हम इस कार्य पर दृष्टिपात करे तो महाप्रज्ञ को नव संचालक, सफल सुधारक के रुप म पायेंगे। शैव, वैष्णव, निर्गुणोपासक, हिंदु, मुसलमान, सिक्ख, ईसाई एवं ऊंच-नीच के भयंकर संघर्ष को शांतिदायक अणुव्रत के द्वारा एक मंच पर लाने के लिए प्रयासरत हैं। अनेकानेक अलंकरणों से अलंकृत आचार्य श्री महाप्रज्ञजी की विनम्रता, निस्पृहता सबके लिए प्रेरणादायी है। आपने तेरापंथ के अब तक के आचार्यों में सर्वाधिक आयुष्य प्राप्त किया है। यह संपूर्ण मानव जाति के लिए शुभ संकेत है कि ऐसे महापुरुष का मार्गदर्शन हमे मिल गया है। आपके 84वें जन्मदिवस के मांगलिक अवसर पर मातुश्री बालुजी तथा आचार्य श्री तुलसी की आत्मा को वदन करता हूँ और महाप्रज्ञजी को कोटि कोटि वंदन। आप चिरायु, दीर्घायु हों और मानव जाति का नतृत्व करें, यही मंगलकामना।❖

क्रांतद्रष्टा आचार्य महाप्रज्ञ

✍ डा. साध्वी गवेषणाश्री

मनुष्य को महानता के शिखर पर समारुढ़ करने के लिये किसी एक क्षेत्र मे अर्जित श्रेष्ठता ही पर्याप्त होती है किन्तु कुछ बहु आयामी व्यक्तित्व इतने प्रभावशाली होते है जो प्रचलित होते है जो प्रचलित परिभाषाओं परिवर्तित कर नये जीवन मूल्यो की प्रस्थापना करते है। अपनी सर्वतोमुखी प्रतिभा से लोक चेतना के प्रेरणा दीप बन जाते हैं।

आचार्य महाप्रज्ञ का नाम विश्व क्षितिज पर चमक रहा है। महानता आरोपित नही, नैसर्गिक है। राजस्थान का झुझनु जिला छोटा सा ग्राम टमकोर.. वहां तोलारामजी चोरड़िया माता बालुजी की रत्नकुक्षि से एक बालक ने जन्म लिया। नाम रखा गया नाथमल। कौन जानता था कि इस धरती पर जन्मा व्यक्तित्व महान् दार्शनिक बनेगा। जेन दर्शन को नये रूप में प्रस्तुति देगा।

सार्थक हुई भविष्यवाणी

एक अज्ञात योगी आया। बालक नथमल के सिर पर हाथ रखकर बोला..यह महायोगी बनेगा। उस समय योगी की बात पर विश्वास हुआ या नही किन्तु आज अक्षरसः सत्य साबित हो चुकी हे। आचार्य महाप्रज्ञ कवि, वक्ता, लेखक, दार्शनिक ही नही, महायोगी भी है। योग ओर ध्यान साधना के द्वारा अपूर्व क्षमताओं को विकसित किया हे। अन्तर्दृष्टि का जागरण हुआ है। आपकी ऋतभरा प्रज्ञा के दर्पण पर भविष्य के प्रतिबिम्ब स्पष्ट हे।

शादी का प्रसंग। अतिथिया की चहल-पहल। बहन की शादी मे उल्लास भरा वातावरण। सब अपने-अपने कार्य मे व्यस्त। बालक नत्थु ने आंखो पर पट्टी बांधी ओर चलने लगा। सहसा दीवार के सिर टकराया। ज्योतिकेन्द्र के के स्थान पर गहरी चोट लगी। खून बहने लगा रोते हुए मां के पास पहुचे। मां ने उपचार किया ओर आश्वस्त करते हुए बोली-चिन्ता नही, आज तेरा भाग्य खिल गया है। वास्तव में ही भाग्य जग गया। जगाही नहीं मानव जाति के भाग्य बन गये।

आचार्य महाप्रज्ञ के उर्वर हृदय पर सतो को वाणी का अभिसंचन मिला। सुप्त संस्कार जाग उठे। वैराग्य से मन भर उठा। पारिवारिक लोगों ने निश्चय से हटाने के काफी प्रयत्न किये किन्तु निराशा ही हाथ लगी। उनका संकल्प अटूट था।

बालचन्दजी चोरड़िया ने परीक्षा लेते हुए कहा, नत्थु तुम हमेशा कंघी पास रखते हो। दिन भर बाल संवारते-सजाते रहते हो। साधु जीवन मे तुम्हें कंघी कहां प्राप्त होगी। दर्पण भी मिलना संभव नहीं है जिसमें अपना रुप देखते हो। अतः दोनों वस्तुएं तुम्हारे पास रख लो।

महाप्रज्ञ ने कहा..दीक्षा के बाद इसकी अपेक्षा ही क्या हे ? सिर पर बाल ही नही रहेंगे तो इसकी उपयोगिता स्वतः खत्म हो जाती है। दर्पण की पूर्ति पात्री में मुंह देखकर हो जायेगी।

मनोविज्ञान के आधार पर चिन्तन करें तो प्रश्न उठताहै कि ये दो वस्तु ही उन्हें प्रिय क्यों थी ? प्रकृति की यवनिका के पीछे क्या-क्या छिपा है। उठाकर देखा तो समाधान मिला।

वस्तुएं केवल प्रतीक है। कंघा उलझे हुए केशो को सुलझाता है। महाप्रज्ञ किसी को उलझन में रखना नही चाहते राजनैनिक, सामाजिक, आर्थिक, पारिवारिक, वैयक्तिक जटिल से जटिल समस्याओं को सुलझा रहे हैं। देश के राष्ट्रपिता से लेकर जन-साधारण तक समाधान की प्रतिक्षा मे आचार्य महाप्रज्ञ का सान्निध्य प्राप्त करते है।

दर्पण बाहर के प्रतिबिम्बो को पकड़ता है। दर्पण और प्रतिबिम्ब सर्व विदित ह। बिम्ब ज्ञात नही हे। बिम्ब ज्ञात नही है। बिम्ब ह चेतना। आचार्य श्री नें प्रेक्षाध्यान का ऐसा दर्पण दिया है जिसमे आत्मा का बिम्ब पकड़ा जा सकता है।

गुरु का आशीर्वाद

आचार्य महाप्रज्ञ को दीक्षित किया श्रद्धास्पद कालुगणी ने। व्यक्तित्व निर्माण क कुशल निर्माता थे गुरुदेव तुलसी। गुरुदव तुलसी के वात्सल्य ने महाप्रज्ञ के समर्पण को जगाया और महाप्रज्ञ के समर्पण ने गुरुदव तुलसी के हृदय में अगाध विश्वास पैदा किया।

विनयो नाम शिष्याणां वात्सल्यं च गुरोरपि।

यत्र योगं प्रकुर्वाते तत्र हार्द समर्पणम्।।

शिष्य की विनम्रता और गुरु का वात्सल्य हार्दिक समर्पण भाव का उत्पादक ह। सच्चे समर्पण के बल पर शिवाजी ने गुरु रामदास का वरदहस्त पाया। बीज समर्पित होकर वटवृक्ष का आकार लेता है। बूंद सागर में विलीन होकर महासागर का विरुद पाती है। आचार्य महाप्रज्ञ ने आत्मीय समर्पण ने बिन्दु से सिन्धु बना दिया। नत्थु से आचार्य महाप्रज्ञ तक की यात्रा में गुरु का आशीर्वाद ही कारण है।

विश्वास दिया नहीं जाता, स्वतः जमता है। गुरु की प्ररणा और प्रोत्साहन न महाप्रज्ञ के अध्ययन की दिशाओं का खोला। साहित्य की नयी-नयी विधाओं मे चरण न्यास किया। तुलनात्मक अध्ययन का पथ प्रशस्त हुआ। साम्यवाद, समाजवाद, मार्क्स, लनिन का पढ़ा। गुरुदेव के पास शिकायत पहुंची। मुनि नथमल मार्क्स को पढ़ रहा है। गुरुदेव तुलसी न कहा कोई खतरा नहीं, मूल सुदृढ़ है।

विश्वास से विश्वास की वृद्धि होती है। गुरु जब अपने शिष्य पर इतना भरोसा कर सकता है तो शिष्य भी प्राणार्पण से उस विश्वास की सुरक्षा में सजग रहता है। गुरुदेव का विश्वास न

अध्ययन के नये-नये आयामों का उद्घाटन किया।

किसी भी पुरुष के आंतरिक जीवन की पवित्रता का मापदंड क्या हो सकता है ? ऐसा कोई पैमाना नहीं है ?जो अंतर की गवाह दे सके। आचार्य महाप्रज्ञ विराट् प्रज्ञा के धनी है। आपके अंतर में प्रज्ञा कस्तूरी की तरह व्याप्त है। आपकी प्रज्ञा-रश्मियों से जनमानस आलोकित है। आपकी वाणी मे मधुरता, ओजस्विता और प्रभावोत्पादकता है। आपके प्रवचन मे अलौकिक छटा है। एक बार दिशाएं भी खामोश हो जाती है आचार्यवर के 81वे वर्ष के उपलक्ष्य मे अंततः शुभ कामनाएं।

शिकवा करते हैं न मिला करते है
तुम सलामत रहो यही दुआ करते है।
महाप्रज्ञ तुम्हारी ज्ञान रश्मि को नमन,
महाप्रज्ञ तुम्हारी, योग रश्मि का नमन,
साहित्य जगत् मे चमत्कृत करती है तुम्हारी प्रज्ञा
महाप्रज्ञ तुम्हारी ध्यान रश्मि को नमन।।❖

परिग्रह से जन्मता है अहंकार

हम अनेकांत के संदर्भ मे अहंकार को परिभाषित करे। अहंकार का जन्म होता है परिग्रह से। परिग्रह केवल धन धान्य आदि का ही नही होता, विचार का भी होता हे। एक विचार को पकड़ लेना विचार का परिग्रह है। एक व्यक्ति सोचता है- मैं बड़ा आदमी हूं, क्या मैं कचरा निकालूंगा ?झाडू से मकान की सफाई करुंगा? क्या मै कुएं से पानी निकालकर पीऊंगा? मैं अमीरजादा हूं, मै नवाबजादा हूं, मै शाहजादा हूं, मै ऐसा काम कैसे कर सकता हूं ? यह विचार का संग्रह और परिग्रह है। मस्तिष्क में यदि एक विचार गहरा जम जाता है तो व्यवहार बदल जाता है। हमारा कोई भी व्यवहार अकारण और अहेतुक नहीं होता। प्रत्येक व्यवहार के पीछे कारण होता है। वह कही व्यक्त होता हें और कही अव्यक्त। एक मनुष्य आया और अकड़कर खड़ा हो गया। दूसरा आदमी आया और हाथ जोडकर खड़ा हो गया। यह व्यवहार में अंतर क्यों आता है ? ऐसा क्यों होता है कि एक व्यक्ति संतो को देखते ही हाथ जोड़ लेता है और एक व्यक्ति अकड़कर खड़ा हो जाता है ? इसकी पृष्ठभूमि में एक परिग्रह होताह है।

—— आचार्य महाप्रज्ञ पहलासुख निरोगी काया, पृष्ठ 42

महाप्रज्ञ ने दिया महिला-समाज को बहुमान

✍ नीलम बोरड़

गृहस्थ जीवन सभी जीते है। गृहस्थी की गाड़ी एक चक्के से नहीं चलती। इसमे पुरूष के साथ महिला का भी बरामबर का योगदान है। शक्ति के बिना शिव भी अधूरे रह जाते है।

आजादी के बाद भारत मे महिलाओं ने विद्या, बुद्धि और कौशल के क्षेत्र मे अप्रत्याशित विकास किया। घर का क्षेत्र सभालते हुए भी बाह्य जगत का दायित्व कुशलता से निभाने का प्रमाण प्रस्तुत किया। इसी सफलता के कारण महिलाओं मे स्वावलंबन की भावना मूर्त हुई।

तेरापंथ धर्मसघ मे तुलसी ने महिला-स्वतंत्र्य पर बल दिया। घूंघट और पर्दा-प्रथा का अत हुआ। आचार्य श्री महाप्रज्ञ न महिलाओं की शक्ति को आंका, उनकी कर्मजा-शक्ति को सदुपयागी समझा और समाज मे उसे बहुमान दिया। यह उनकी दृष्टि का ही प्रसाद है कि महिलाए आज महत्वपूर्ण संघीय दायित्वों का निर्वाह सफलतापूर्वक कर रही है। 'जैन जीवनशेली' और 'नया मोड़' जैसे दायित्व इसका ज्वलंत उदाहरण हैं। संघीय संस्थाओं मे सफल नेतृत्व की कला भी आचार्य श्री महाप्रज्ञ के अगाध विश्वास की निष्पत्ति है।

कभी कहीं कुछ बाते जो अनपेक्षित है, मन में कांटों की-सी चुभन पैदा कर देती हैं। अमेरिका की यात्रा से लौटे एक भारतीय लेखक ने 'राजस्थान पत्रिका' में यात्रा-वृतांत प्रस्तुत करते हुए उल्लेख किया कि अमेरिका मे लोग तीन डब्ल्यू पर विश्वास नहीं करते। लेखक का अभिप्राय पहले डब्ल्यू से 'वाईफ', 'दूसरे डब्ल्यू' से 'वेदर' और तीसरे 'डब्ल्यू' से 'वेल्थ' को इंगित करता है। उनका मंतव्य है कि पत्नी, मौसम और धन पर विश्वास नहीं किया जा सकता, ये चंचल और चलायमान हैं, किसी को कभी भी धोखा दे सकते है। धन की चंचलता नीतिगत बात है, मौसम की चंचलता प्रकृति के हथ है, लेकिन नारी के प्रति अविश्वास की बात संपूर्ण नारी-जाति के कोमल मानस को आहत करती है।

नारी के हृदय की ममता और उसकी अतुलित गहराई को समझने का प्रयास नहीं किया गया। 'भगिनी', 'जाया' और 'जननी' के तीन स्वरूप नारी में पाए जाते हैं। इसा स्वरूप की कल्पना का साकार रूप आजतक किसी कवि की उपमा एवं रूपक की शैली

में भी नहीं समा पाया। ऐसा कौन-सा तथ्य है जिसके कारण महिला बारिश के मौसम की चंचल चपला बन गई? ऐसा कौन-सा तथ्य है जिसके कारण महिला बारिश के मौसम की चंचल चपला बन गई? ऐसा कौन-सा तथ्य है जिसके कारण महिला का सम्मान-सूर्य क्षीण, हीन और बौना-बदना हो गया? क्या आधुनिकता के दौर में आंखों पर कोई धुंध छा गई और केवल तौहीन-भरी दृष्टि ही शेष रह गई? क्या पाश्चात्य की चकाचौंध में नारी के आदर्शों का इतिहास धूमिल लगने लगा? लेखक ने जिस दृष्टि से देखा, जिस रूप में चिंतन प्रस्तुत किया, वह समग्र दृष्टिकोण के सर्वथा अभाव का परिचायक है। सत्य का साक्षात्कार प्राप्त करने की कहीं रंच-मात्र कोशिश भी नहीं है।

विकासोन्मुखी चाह की जगमगाती दीप-शिखा हाथों में थामकर, अदम्य साहसकी प्रतिमूर्ति-स्वरूपा नारी आज जिस मुकाम तक पहुंची है, वहां से एक ओर थोड़े-से फासले पर उसकी मंजिल है तो दूसरी ओर परावर्तन का वह गहन-गह्वर है जिसे अनगिन कष्ट सहकर उसने पार किया है। अंग्रेजी कल्चर एवं पाश्चात्य संस्कृति की ओछी वैचारिकता न तो भारतीय दाम्पत्य-सूत्र को प्रभावित कर पाई है और न ही भारतीय नारी की मान-मर्यादा ओस की क्षणिक बूंदों के प्रभाव से किंचित आहत होने वाली है।

महिला-समाज को आखिर ऐसा दृढ़ विश्वास क्यों है? इसका मूल कारण है-भारतीय सामाजिक और पारिवारिक व्यवस्था। ऋषि-महर्षियों की भावी कल्पना इसमें प्रतिभासित है। भगवान ऋषभदेव ने जब असि, मसि और कृषि की व्यवस्था समाज को दी तो उसके मूल में समाज की सारी व्यवस्थाएं समाहित हो गई। यह परंपरा अक्षुण्ण रूप से आज भी चल रही है। इस व्यवस्था से इतर केवल अंधकूप और अंधपथ है जहां मंगल-जीवन की कहीं कोई बात नहीं है।

दाम्पत्य-विच्छेद को समाज-हित के प्रतिकूल माना गया है। दाम्पत्य गार्हस्थ जीवन का संचालक है, भावी-पीढ़ी के नव-निर्माण के अंश इनमें व्याप्त है। इसके बिना हमारी पहचान और परख समाप्त हो जाएगी। संबंध-हीन संबंधों से कोई अस्तित्व नहीं बनता। तेरापंथ धर्मसंघ में आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी की दृष्टि से 'समस्या समाधान प्रकोष्ठ' स्थापित किया गया है। आपसी रिश्तों में थोड़ी-सी भी कहीं दरार आती है तो उसको शीघ्र समाहित कर जीवन को मंगलमय दिशा देने का प्रयास किया जाता है। समाज की समस्या को समय रहते पकड़ना दूरदृष्टि एवं चिंतन-वेत्ता की विलक्षण दृष्टि का परिचायक है। आज समाज में निभते हुए रिश्ते टूट रहे हैं, बनते-बनते रिश्ते बिगड़ जाते हैं और यह क्रम निरंतर तेजी से बढ़ता हुआ समाज-व्यवस्था व परिवार व्यवस्था पर चोट कर रहा है। इस भटकाव और मानसिक असंतुलन के बहाव को यदि समय रहते समाहित न किया गया तो पानी सिर के ऊपर से निकल सकता है। समाधान की आवश्यकता को महसूस करते हुए आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी ने जो उपक्रम संचालित करने की दृष्टि प्रदान की, वह निश्चयात्मक रूप से महिला समाज के लिए चुनौती भरा एक मंगल कार्य है।

'नया मोड़' की परिकल्पना गुरुदेव तुलसी ने की और आचार्य महाप्रज्ञ जी उस अभियान को आगे बढ़ाना चाहते हैं। इसका उत्तरदायित्व उन्होंने महिला समाज को दिया

है। उनका विश्वास है कि-'नया मोड़' की प्रवृत्ति के विकास के लिए महिलाएं अधिक कारगर सिद्ध हो सकती हैं। उन्होंने महिला समाज से अधिक सचेत एवं जागृत होने का अह्वान किया है ताकि परिवेश में अपेक्षित परिवर्तन लाया जा सके। आज यह दृष्टिगोचर हो रहा है कि पाश्चात्य की नकल करने के क्रम में हम अपनी सभ्यता-संस्कृति भूलते जा रहे हैं। समाज में कई अनपेक्षित कार्य ऐसे हो रहे हैं जिनमें प्रदर्शन, होड़ा-होड़ी, अहम् एवं प्रतिस्पर्द्धा का विकृत रूप दृष्टिगोचर हो रहा है। भौतिकता की चकाचौंध के वशीभूत होकर कुछ लोग वायवीय कल्पनाएं खड़ी कर रहे हैं और उन्हें यथार्थ की ठोस भूमि नजर नहीं आ रही। इस प्रकार की परंपराओं की निरंतर आवृत्तियां होने से हमारी जीवन शैली क्या मोड़ ले लेगी, कहना कठिन है। आचार्य महाप्रज्ञजी ने 'नया मोड़' अभियान को गतिमान करने की अपेक्षा व्यक्त की है। उन्होंने समाज को समझा-बुझाकर प्रबोध देने की बात कही है। सभी की भावनाओं का सम्मान करते हुए मिशन को आगे बढ़ाने की आवश्यकता महसूस की है। मसाज के लिए व्याहारिक तथ्य उद्घाटित करने की दृष्टि प्रदान की है। यह सारा कार्य महिला समाज को अपने परिवार एवं अपने निकटस्थ परिवेश से प्रारंभ करना है। निश्चित ही यह अगाध विश्वास महिला समाज के ज्वलंत कार्य की प्रस्तुति को समाज में उभारेगा।

आचार्य महाप्रज्ञ का पाथेय है-विकास की अनंत संभावनाएं हैं। आज तक जितना उद्घाटित हो चुका है, वही सब कुछ नहीं है। अभी भी बहुत कुछ शेष बचा है, समक्ष प्रस्तुत होने के लिए जैसे वस्तु के अनंत पर्याय हैं, वैसे ही विकास की भी अनंत संभावनाएं है। महिला समाज अपनी कर्मजा शक्ति को चिंतन सापेक्ष पृष्ठपोषण दे तो निश्चित ही उनके कदम विकास की ओर प्रवर्द्धमान रहेंगे।

-1-ई-ब्लाक, पो श्री गंगानगर-335 001 (राजस्थान)

अध्यात्म का कल्पवृक्ष

अध्यात्म के कल्पवृक्ष की शाखाएं तीन है- सम्यग ज्ञान, सम्यग् दर्शन और सम्यग् चारित्र। ज्ञान और दर्शन का समान्वित रुप दर्शन है चारित्र धर्म है। दर्शन और धर्म - ये दोनों शाखों अध्यात्म से अविच्छिन्न रहती है तब सत्य को अभिव्यक्ति मिलती है और वर्तमान जीवन में प्रकाश की रश्मियां फूटती है। जब दर्शन और अध्यात्म से विच्छिन्न हो जाते हैं तब सत्य आवृत्त हो जाता है और वर्तमान अंधकार से भर जाता है। पौराणिक काल में धर्म की धारणाएं बदल गई। उसका मुख्य रुप पारलौकिक हो गया। वह वर्तमान से कटकर भविष्य से जुड गया। जनमानस में यह धारण स्थिर हो गई कि धर्म से परलोक सुधरता है, स्वर्ग मिलता है, मोक्ष मिलता है। इस धारणा ने जनता को धर्म की वार्तमानिक उपलब्धियों से वंचित कर भविष्य के सुनहले स्वप्नों के जगत में प्रतिष्ठित कर दिया।

— आचार्य महाप्रज्ञ जैन परंपरा का इतिहास, पृष्ठ 12[illegible]

विद्वत्ता व विनम्रता की पराकाष्ठा

✍ मुनि कुमुद कुमार

एक बार एक व्यक्ति गांव में गया। गांव वालों से पूछा-क्या तुम्हारे यहां कभी कोई बड़ा आदमी जन्मा है ? एक लड़के ने तपाक से कहा-हमारे यहां सब बच्चे ही जन्मते हैं। बड़ा कोई नही जन्मता। बड़ा कोई नही जन्मता। बच्चे से फिर वे बड़े बनते हैं। यह एक अटूट सच्चाई है कि कोई भी व्यक्ति जन्म से ही महान नहीं बनता। वह महान बनता है अपने कर्म के द्वारा।

राजस्थान का एक छोटा सा गांव टमकोर। वहां के निवासी तोलारामजी चौरडिया के घर बालक का जन्म हुआ, जिसका नाम नथमल रखा गया। एक बार घर मे शादी का प्रसंग। बालक नथमल बालसुलभ चंचलता के कारण आंखो पर पट्टी बांध घर मे घूमने लगा। किन्तु आंखो पर पट्टी होने के कारण सिर दीवार से टकरा गया। सिर में चोट लगी बालक नथमल रोने लगा। पर किसी ने ध्यान ही नही दिया। आखिर रोते-रोते मां के पास गया। मां ने सहलाते हुए कहा-रो मत। देख तेरा भाग्य खुल गया। मां के बोल फलित हो गये और सचमुच बालक नथमल का भाग्य खुल गया। जिस दिन गुरुदेव का कालुगणी ने उनको दीक्षित किया। पूज्य गुरुदेव कालुगणी का वरद हस्त व आचार्य तुलसी की सन्निधि पाकर मुनि नथमल ने अपने संकल्प को प्राणवान बनाया। प्रज्ञा को जागृत किया, पुरुषार्थ की लौ प्रज्ज्वलित की। साधना की गहराई में उतरते चले गए, और एक दिन संघ के शिखर पर पहुंच गए। उनकी प्रज्ञा को देखकर आचार्य तुलसी ने उनको "महाप्रज्ञ" नाम से अलंकृत किया। और यह नाम उनके साथ जुड़ कर स्वयं सार्थक हुआ। जिस बालक के लिए प्रतिदिन एक श्लोक भी याद करना महाभारत था, उसी व्यक्ति से दुनिया का आज कोई भी विषय अनछूता नही रहा। महाप्रज्ञ जी के साहित्य सम्पदा को देखकर कई व्यक्तियों को आश्चर्य होता है कि एक संप्रदाय के आचार्य, लाखों-लाखो अनुयायों की सार-संभाल, सैकड़ों-सैकड़ों शिष्यों की व्यवस्था का दायित्व, फिर भी इतना साहित्य रचना अपने आप में अनूठा व असंभव काम है। किन्तु जो व्यक्ति भीड़ में भी अकेला रहना सीख लेता है। उसके लिए असंभव शब्द सदा-सदा के लिए मिट जाता है।

आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी ने अपने साहित्य में वर्तमान समस्या को ही नहीं उकेरा अपितु समाधान को भी प्रस्तुत किया है। किसी व्यक्ति को अगर जरा सा ज्ञान हो जाए तो अहंकार उसमे समाता नहीं है। परंतु आचार्य महाप्रज्ञ ज्यों-ज्यों ज्ञान के समुद्र में डुबकी लगाते रहे उतने ही अहंकार से दूर होते गए। वह दोनों नदी के दो किनारे बन गए जो कभी आपस में मिलते नहीं। ऐसा लगता है आचार्य महाप्रज्ञ मे विद्धवत्ता व विनम्रता की पराकाष्ठा मौजूद है।

बात उन दिनों की है, जब अष्टमाचार्य श्रीमद् कालूगणीराज मालवा मध्य प्रदेश की यात्रा कर थे। किसी प्रसंग को लेकर मुनि नथमलजी के विद्यागुरु मुनि तुलसी उनसे (मुनि नथमलजी) नाराज हो गए। [illegible] समय प्रतिक्रमण के पश्चात् [illegible] मुनि तुलसी को वन्दना करने गए और मुनि तुलसी के पैर पकड़ कर बैठ गए। [illegible] हुई भूल के लिए क्षमा मांगने लगे। किन्तु मुनि तुलसी टस से मस नहीं हुए। प्रहर रात [illegible] गई। न मुनि तुलसी बोले, न मुनि नथमलजी ने पैर को छोड़ा। प्रहर रात आने पर मुनि तुलसी अपने स्थान पर सोने के लिए चले गए। वस्तुतः मुनि नथमल जी अपने विद्यागुरु को नाराज नहीं देखना चाहते थे। आज का अगर कोई व्यक्ति होता तो सोचता मैंने तो क्षमा मांग ली। नहीं बोले तो मैं क्या कर सकता हूं। संध्या प्रतिक्रमण पश्चात् से प्रहर रात तक पैर को पकड़ कर कौन बैठ सकता है? जिसके भीतर विनम्रता का भाव हो, जो गुरु के इंगित की पालना करने वाला हो। विनम्र व्यक्ति ही विद्या को प्राप्त कर सकता है।

आचार्य तुलसी का सन् 1983 का प्रवास अहमदाबाद में था। युवाचार्य महाप्रज्ञजी के सान्निध्य में गुजरात विद्यापीठ में प्रोफेसर व विद्वान लोगों का शिविर का आयोजन। आचार्य श्री तुलसी उस समय शाहीबाग में विराज रहे थे। शाहीबाग से विहार कर शिविर समापन के अवसर पर शिविर स्थल पधार रहे थे। युवाचार्य महाप्रज्ञ जी आचार्य श्री की आगवाणी के लिए सामने पधारे। अनेक विद्वान साथ में हो गये। ज्योंहि युवाचार्य महाप्रज्ञ जी ने आचार्य तुलसी को देखा सड़क पर वंदन की मुद्रा में बैठ गए। समीप आने पर पैरों में सिर लगाकर वंदन करने लगे। विद्वान लोगों ने इस दृश्य को देखा तो आश्चर्यचकित रह गये। उच्च कोटि का विद्वान, जिसकी प्रतिभा का शिविर में सबने लोहा माना वह किसी के पैरों में सिर लगाकर वंदन कर रहा है। अभी तक विद्वान लोग युवाचार्य महाप्रज्ञ जी की विद्वत्ता से प्रभावित थे परंतु अब विद्वता के साथ-साथ विनम्रता से भी प्रभावित हुए।

सन् 1994 में आचार्य तुलसी ने अपने आचार्य पद का विसर्जन कर युवाचार्य महाप्रज्ञ जी को आचार्य पद पर प्रतिष्ठित कर दिया। आचार्य बनने के बाद भी आचार्य महाप्रज्ञ जी हर छोटे-बड़े कार्य के लिए एक दिन में कई बार गणाधिपति तुलसी को वन्दना करने जाते। हर छोटी-बड़े कार्य के लिए एक दिन में कई बार गणाधिपति तुलसी को वन्दना करने जाते। हर छोटी-बड़ी सलाह, अनुमति के लिए भी आचार्य महाप्रज्ञ जी गणाधिपति तुलसी के पास जाते, वंदन करते, व निर्देश को प्राप्त करते। एक दिन में कई बार वन्दन आदि के लिए बार-बार आना गणाधिपति तुलसी को अच्छा नहीं लगता। एक दिन गणाधिपति तुलसी ने आचार्य महाप्रज्ञ जी से कह दिया-क्या तुम छोटी-छोटी बातों के लिए बार-बार आते हो। अब तुम आचार्य बन गए हो। आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी ने विनम्रता के साथ जवाब दिया-मैं दुनिया के लिए भले आचार्य बन गया, पर आपके लिए आपका शिष्य रहूंगा। ऐसी बात कौन कह सकता है? जिसके भीतर विनम्रता की पराकाष्ठा हो।

वस्तुतः आचार्य महाप्रज्ञ जी दुनिया के जाने माने दार्शनिक, उच्च कोटि के विद्वान होते हुए अपने गुरु के प्रति विनम्रता उनकी उच्च महानता को प्रकट करती है। गुरु के प्रति समर्पण, विनम्रता ने महाप्रज्ञ जी को तहलटी से शिखर पर पहुंचा दिया। तहलटी से शिखर तक की यात्रा करनेवाला अमर पुरुष युगों-युगों तक हमें दिशा बोध देता रहे। ◆

साम्प्रदायिक सद्भाव व मानवीय एकता के भगीरथ

मुनि मोहनलाल शार्दूल

भाव सन्तुलन, संवेदनशीलता, समभाव,सांप्रदायिक, सदभाव, उदारता, अनाग्रह वृति, समन्वयशीलता, भ्रात-भाव, करुणा, प्रमोद-भावना तथा मैत्री आदि वैचारिक और सह अस्तित्व, सौहार्द, सहयोग, सहिष्णुता, विनम्रता एवं क्षमावृति आदि तत्व व्यवहारिक मानवीय एकता के सबल सूत्र है। आचार्य महाप्रज्ञ का व्यक्तित्व इन सभी उदात्त भावों और मानवीय मूल्यों से ओत-प्रोत है। उनके जीवन मे अहिंसा, आत्म-समत्व और समन्वयवाद साकार हुए है। वे एक निष्काम कर्मयोगी की भूमिका पर निरंतर अग्रसर है। बिना किसी भेद-भाव के मानव मात्र का हित, विकास तथा कल्याण हो- यह उनका स्फूर्ट स्वप्न है। वे प्राणिमात्र में आत्मौपम्य के दर्शन करते है। ओर अखिन्न विश्व के प्रति करुणाद्र हैं जाति, समंप्रदाय, धर्म, वर्ण, वर्ग और क्षेत्र के आधार पर मानव-मानव के मध्य भेद की दीवार खडी करना उन्हें बिलकुल भी पसंद नही है। मानव संस्कृति का मुख्य बिन्दु मिती मे स्व भूएसु बेर मज्झ न केणई- मेरी सब प्राणियों के साथ मैत्री है, किसी से भी बैर भाव नहीं आर सर्वे भवन्तु सुखिन: सर्वे संतु निरामया: सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चन दुखभागभवेत। सब सुखी बने, सब निरोग रहें, सबका कल्याण हो और कोई भी दुःख न पाये। तथा उदार चरितांना तु वसुधैव कुटुम्बकम पूरी वसुधा ही अपना परिवार है। मानव संस्कृति के इस मूल बिन्दु के वे श्रेष्ठतम साधक ओर स्थल उद्घाषक है। इस दिव्य बिन्दु के आलोक मे ही मानव मानव सब एक है। कहां द्वैत हे। महावीर ने कहा- पुरिसा तुमंसि नाम सच्चेव जं हन्तत्वं तिमन्नसि- पुरुष तुम्ही वह हो जिसे तुम मारना चाह रहे हो। सबको जीवन प्रिय है। सब सुख के लिए लालायित है। दुख कोई नही चाहता, दुख और वध से सब भयभीत हैं। कितनी स्वाभाविक और व्यापक एकता है।

आचार्य महाप्रज्ञ इसी एकता की संस्कृति के महापथिक है और विश्व को भी इसी श्रेष्ठ सन्माग पर चलने का प्रखर संदेश दे रहे है। उनका व्यक्तित्व निसीम है। उन्हें विराट ओर निःसीम ही दृष्टिगोचर होता है। कुछ समय पूर्व की घटना है- वे जब अहिंसा यात्रा करते हुए महाराष्ट्र मे प्रविष्ट हुए, तब लोगों ने कहा कि आज हम गुजरात की सीमा छोडकर महाराष्ट्री की सीमा मे प्रवेश कर रहे हे।

आचार्य महाप्रज्ञ ने अपने उद्बोधन में कहा- मुझे तो कही कोई सीमा लगती ही नही। वही पृथ्वी, वही आकाश, वही प्रकृति और वही स्वच्छन्द हवा। कहा है सीमा? सीमा तो हमारे दिल दिमाग की उपज है। जरुरी है, हम भेद में अभेद देखना शुरु कर दे, तो हिंसा की समस्या ही नहीं रहेगी। सभी आतंकवाद के अखाडे धराशायी हो जाएंगे। अमन चैन का ध्वज फहर उठेगा। मानवीय एकता मानव समाज की शांति का सुदृढ आधार है। मानवीय चितंन मे यह अवधारणा सदा संस्कार गर्भित रही है।

भगवान बुद्ध ने कहा था- चरण भिक्खवे चारिकां चरत भिक्खवे चारिका, बहुजन हिताय बहुजन सुखाय- भिक्षुओं समग्र जनता के हित सुख और कल्याण के लिए पर्यटन करो। आजीवन चलते रहे। इसी सर्वोदय के उद्देश्य से आचार्य महाप्रज्ञ 5 दिसम्बर 2001 से अपनी पंचवर्षी प्रभावक अहिंसा यात्रा कर रहे है। अहिंसा यात्रा के माध्यम से वे व्यक्ति व्यक्ति के भीतर करुणा, अहिंसा, प्रेम और मैत्री की भावना का संचार कर मानवीय एकता का महनीय सबक सिखा रहे हैं। युवाचार्य महाश्रमण के शब्दों में अहिंसा यात्रा जन-कल्याण की महायात्रा है।

अहिंसा यात्रा ने सद्‌भाव एकता और सौहार्द शांति स्थापन का महत्वपूर्ण एवं बेजोड़ कार्य किया है। लोगों को इसकी स्पष्ट अनुभूति हो रही है। चिंतक और नेतृत्वशील इसे भली-भांति रेखांकित कर रहे हैं।

आचार्यप्रवर का चुम्बकीय व्यक्तित्व है। उनके आभामंडल और अमृतवाणी का तत्काल असर होता है। कुछ समय पहले वे महसद गांव पधारे,वहां कई दिनों से सांप्रदायिक तनाव चल रहा था। लोग भयभीत और आतंकित थे, पता नहीं कब झड़प और दंगा हो जाय। महाप्रज्ञजी ने वहां संक्षिप्त प्रवचन किया- प्रत्येक मनुष्य शांतिपूर्ण जीवन की आकांक्षा करता है। शांति ही स्थायी है वक्तव्य ने जादू सा कर दिया। थोडे ही समय में अकल्पित बदलाव आया। सांप्रदायिक सद्‌भाव की ज्योति जल उठी। उसके लिए तेरह सदस्यीय एक समिति गठित हो गई। एकता की तरफ एक कदम बढ़ गया।

मानवीय एकता का मूल स्तम्भ है- साम्प्रादायिक सद्‌भाव और सौहार्द। यह सहिष्णुता और उदारवृति के बिना नही हो सकता। दूसरे सम्प्रदाय के प्रति सद्‌भावन तभी संभव हो पाता है जब हमारा मानवीय दृष्टिकोण बहुत विशाल हो। हमारी सोच व्यापक हो। विचार बहुत सुलझे हुए और विश्व बन्धुत्व की भावना से ओतप्रोत हो।

आचार्य महाप्रज्ञजी स्वयं तो अनन्त के उपासक है ही साथ ही वे जनता में भी मिलन के सार्वभौम सूत्रों को प्रसारित करके सर्वत्र सद्‌भाव का परिवेश बना रहे है। इस दिशा में उन्होंने अनूठी आस्था को परवान चढ़ाया है। निष्काम भाव से जन-कल्याण के लिये उठाया गया कदम अकस्मात ध्यान आकृष्ट कर लेता है। वह बहुत श्रेयोमयी प्रवृति लगती है। आचार्य श्री महाप्रज्ञ के साम्प्रदायिक सद्‌भाव और सौहार्द संवर्धन के आध्यात्मिक कार्य का आकलन करते हुए भारत सरकार के राष्ट्रीय साम्प्रदायिक सद्‌भाव प्रतिष्ठान की और से आचार्य महाप्रज्ञजी को सन 2004 का राष्ट्रीय साम्प्रदायिक सद्‌भाव पुरस्कार अपहन्त कर सम्मानित करने की घोषणा की है।

अहिसा का यह आलोक जाति, वर्ण, धर्म, संप्रदाय और प्रांतीय भावनाओं से मुक्त है। इसकी लोगों को स्पष्ट झलक मिलती है। प्रख्यात मुस्लिम नेता सूफी सैयद वसीउररहमान ने भारत और पाकिस्तान के बीच सौहार्दपूर्ण सम्बन्धों की स्थापना के लिए आचार्य श्री को पाकिस्तान आने का निमंत्रण दिया है। एक व्यापक धर्म क्रांति के रुप में अहिसा का विस्तार नई संभावनाओं के द्वार खोल रहा है। मनुष्यों को भावनाओं के धरातल पर निकट ला रहा है। राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र, खानदेश और मध्यप्रदेश के जिन क्षेत्रों में अहिंसा यात्रा पड़ती है वहां एक आध्यात्मिक पवित्र जीवन का रंग खिल उठा है। इस यात्रा मे आचार्य श्री ने हजारों हजारों लोगों को शराब, धूम्रपान,नशा आदि दुर्व्यसनों से मुक्त बनाया है। और स्वस्थ शान्त और सुखी जीवन का सन्मार्ग दिखाया है।

अहिंसा यात्रा जिस नगर या गांव में पहुंचती है. बिना भेदभाव पूरी जनता उसका स्वागत करती है। वहां मानवीय एकता का अच्छा माहौल बन जाता है। अहिंसा यात्रा व उसके कार्यक्रम इतनी विशाल

मानवीय भाव भूमि पर चल रहे हैं। कि सबको एक राष्ट्रीय एवं मानवीय अपेक्षित कर्म महसूस हो रहा है। यही कारण है कि सब जातियां, सब धर्म, संप्रदाय, सब स्वतंत्र संस्थाएं, सब राजनैतिक पार्टियां, प्रचार तंत्र और सब वर्गों के लोग मुक्त भावों से सहयोगी बन रहे हैं। किसी को महात्मा गांधी की दांडी यात्रा याद आ रही है तो किसी को महावीर की धर्म क्रांति यात्रा और किसी को बुद्ध की करुणा यात्रा।

सूरत में सैयदना बोहरा समाज के प्रतिनिधि घीसुभाई बहरीवाला ने आचार्य श्री का स्वागत करते हुए कहा- जब भी आप के दर्शन किये मन को अपार शान्ति का अनुभव हुआ। सूरत में वैचारिक एकता का जो माहौल बना है। वह आपकी ही देन है। मेरी दिली तमन्ना है कि आप इसी तरह शान्ति का प्रसार करते हुए दुनियां में भारत का नाम रोशन करते रहें। अहिंसा यात्रा के असांप्रदायिक और शान्तिपूर्ण मानवीय कार्यक्रमों से अनायास सबको अच्छा और निकटता महसूस हो जाती है। मानवीय सोहार्द का एक स्रोत सा फूट पड़ता है। सूरत का एक मुस्लिम बहुल उपनगर है- लिम्बायत। इसे अत्यंत संवेदनशील क्षेत्र माना जाता है। यहां के प्रमुखों ने नगर मे आचार्य महाप्रज्ञ को अपन इधर आने की चर्चा सुनी, तो अनायास सांप्रदायिक सद्भाव जाग उठा। उन्होंने स्वागत का निर्णय लिया। एक स्वागत पत्र अपने समाज मे वितरित किया। अहिंसा यात्रा करते हुए आचार्य महाप्रज्ञ अपन इधर आ रहे हैं। इस महान हस्ती के स्वागत के लिए लिम्बायत की प्रसिद्ध मदीना मस्जिद के तमाम मुस्लिमों की ओर से इस्तकबाल का कार्यक्रम रखा गया है। जिसमे आपको आपके दोस्त व अहल्ला अयाल के साथ तशरीफ लाकर यह साबित करना है कि मुस्लिम कौम मुल्क मे अमन शान्ति और भाईचारा चाहती है। और यह स्वागत इतना सरस, श्रद्धामय और सोहार्दपूर्ण था कि उन्हे बबई के भिण्डी बाजार म हुए स्वागत की मधुर स्मृति उभर आई। मानवीय एकता का स्वस्थ परिवेश बन रहा है। आचार्य महाप्रज्ञ का मनोमंथन इसे निरंतर व्यापक बनाने के लिये सजगता से चलता रहता है।

महान कदम

सूरत में आचार्य महाप्रज्ञ के सान्निध्य मे एक विशेष सर्वधर्म सम्मेलन का आयोजन किया गया। सम्मेलन का विषय था- युनिटि ऑफ माइंड (मस्तिष्कीय एकता) सब धर्मो के जो धर्माचार्य अपने संप्रदाय और जनता पर विशेष प्रभाव रखते थे, विभिन्न धर्मों के 16 धर्माचार्य सम्मिलित हुए। बहुत सरस, सामंजस्यमय और उल्लासपूर्ण कार्यक्रम चले। युनिटि ऑफ माइन्ड विषय पर गंभीर चर्चा हुई। संभागी धर्म गुरु ओं ने इस सम्मेलन को अनूठे और क्रांतिकारी कदम क रुप मे स्वीकार किया। यद्यपि विविधता थी, भिन्नता थी और सैद्धान्तिक वैचारिक पार्थक्य भी था, फिर भी मानवीय एकता व विश्व शांति का सबल सूत्र सबको एक धागे में पिरो गया। सूरत आध्यात्मिक घोषणा पत्र नाम से सार्वजनीक और सार्वभौम एक दस्तावेज तैयार हुआ। उसकी धाराएं विशाल पमाने पर मानवीय एकता को प्रचार देने वाली है। वैसे भी 16 वरिष्ठ धर्मगुरु अपने वर्चस्व का एकत्व की दिशा म प्रयोग कर तो धरा आकाश एकता के नारे से गुंजित हो जाये। मानवीय एकता चेतना की मधुर व सरस ध्वनि मानव अंतःकरण को बहुत तृप्त व पुलकित कर रही है। दिल्ली और राष्ट्रपति भवन के तामझाम से दूर अपना जन्म दिवस मनाने के लिये महामहिम राष्ट्रपति ए.पी.जे अब्दुल कलाम इस विराट सर्वधर्म सम्मेलन में पहुंचे। धर्माचार्यो के सान्निध्य में उन्होने अपना जन्मदिवस सादगी से मनाया। यहा का धार्मिक सद्भाव और मानवीय एकता का वातावरण देखकर उल्लास से रोमांचित हो उठे। यह सम्मेलन भी अपने ढंग का अनोखा ही था। इसमें केवल धार्मिक नेताओं को ही आमंत्रित किया गया था। एग

आध्यात्मिक और अहिंत का वातावरण था। राष्ट्रपति जी के हाथों में जब सभी धर्माचार्यों के हस्ताक्षरों से युक्त सूरत आध्यात्मिक घोषणा पत्र सम्मेलन में थमाया, तो वे हर्ष विभोर हो उठे। उस पर [illegible] टिप्पणी की। उन्होंने आचार्य श्री को धन्यवाद देते हुए कहा- आचार्य जी आपने [illegible] काम किया है। घोषणा पत्र पर सर्वसम्मति होने आश्चर्यजनक है। यह आपके आशीर्वाद का ही [illegible] है। राष्ट्रपति जी को उक्त घोषणा पत्र नैतिक उत्थान और मानवीय एकता की दिशा में एक महान कदम लगा। बहुत शुभ प्रेरणास्पद भासित हुआ। पांडिचेरी में विश्वविद्यालय के उपकुलपतियों के सम्मेलन में भी घोषणापत्र का जिक्र किया और प्रेरणा दी की सूरत आध्यात्मिक घोषणा पत्र पढ़ा जाये और उसके अनुसार कार्यक्रम बनाये जाएं। 26 जूनवरी गणतंत्र दिवस पर राष्ट्र के नाम संदेश देते हुए भी उन्होंने घोषणा पत्र का उल्लेख किया। आचार्य महाप्रज्ञ जी ने अहिंसा यात्रा के दो प्रमुख उद्देश्य निर्धारित किये हैं। 1. अहिंसा चेतना का जागरण और नैतिक मूल्यों का विकास। ये दोनों हीऐसी उर्वरा भूमि का निर्माण करते हैं कि मानवीय एकता और विश्व शांति के पौधे स्वयं लहलहा उठते हैं। सांप्रदायिक उन्माद, जातीय संघर्ष, वर्गवाद, प्रांतवाद और भाषावाद की संकीर्ण दीवारें अपने आप धराशायी हो जाती है। संवेग परिष्कार में प्रेक्षाध्यान, मानवीय मूल्यों की निष्ठा जगाने में अणुव्रत और उच्च संस्कार निर्माण में जीवन विज्ञान सबल आस्था से सहयोगी बन रहे हैं। देश विदेश में अहिंसा यात्रा ने एक स्वस्थ हलचल पैदा की है। हृदय परिवर्तन और मस्तिष्कीय प्रशिक्षण से एक विलक्षण क्रांति घटित हो रही है। मानवीय एकता की पगडंडी मजबूत बन रही है। भारतीय शासन ने इसका मूल्यांकन करते हुए आचार्य महाप्रज्ञ को इंदिरा गांधी राष्ट्रीय एकता पुरस्कार से सम्मानित कर अपने को गौरवान्वित किया है। लंदन में इंटर रिलिजियस एण्ड इण्टरनेशनल अहिंसा के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण कार्य के लिये आचार्य श्री महाप्रज्ञ को अम्बेसेडर ऑफ पीस अवार्ड से सम्मानित किया गया। इस प्रकार अहिंसा यात्रा के रूप में आचार्य महाप्रज्ञ ने देश व मानव समाज को एक ऐसा वातावरण दिया है जिससे देश की प्रमुख समस्याओं के प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष हल निकलने की निकट भविष्य में संभावना बन रही है। ❖

अहिंसा यात्रा

मुनि मोहनलाल शार्दूल

1. आपकी अहिंसा यात्रा ने जनमानस पर अनूठी छाप लगाई है। राजनैतिक तबके में भी गंभीर श्रद्धामयी हलचल मचाई। जुड़ती ही जा रही है। सफलता की कड़िया स्वयं आगे से आगे आया है कोई रहनुमा दुखी लोगों में नई आस उग आई है।

2. अहिंसा यात्रा जन जन के कल्याण का सबल उपाय है। यह आध्यात्मिक मूल्यों को कोमल अध्यवसाय है। उग्रवाद भ्रष्टाचार नशा और दुख मिटा कर स्वस्थ समाज निर्माण का प्रारम्भ अभिनत अध्याय है।

3. अहिंसा यात्रा मानवता का अमिट दस्तावेज है और इसमें पाश्विक वृतियों को पूरा परहेज है कट्टरता, वैमनस्य और जातीय घृणा को धोकर भाईचारे के रंग में रंगने के लिये रंगरेज है।

4. अहिंसा यात्रा काम का तुम्हे अनोखा कदम उठाया है। मानवीय एकता की भरपूर गौरव बढ़ाया यों होते रहते हैं यह प्रयास आपसी मेलजोल के यों होते रहे यहां आपसी मेलजोल है। तुमने तो दूध मिश्री सा मेल दिखाया गया है।

जब कलाकार ने अपना प्रतिरूप गढ़ दिया

-पदमचंद पटावरी

वि.सं. 2035 माघ शुक्ला 6 का पावन पवित्र दिन। राजलदेसर मर्यादा महोत्सव का विराट समायोजन, मध्यान्ह 2.30 बजे की शुभ घड़ी, एक महानगर कलाकार संघ शिरोमणि आचार्य श्री तुलसी ने अपने चिंतन को अंतिम रूप दिया। वे अहर्निश श्रमशील रहकर वर्षों से एक कलाकृति पर अपनी जादुई तूलिका चलाते जा रहे थे। आपने कभी किसी क्षण मुड़कर नहीं देखा कि मेरी कृति अब किस मुकाम तक पहुंची है और आज जब तूलिका थमी तो कलाकार ने हौले से अपनी कृति पर दृष्टिपात किया और वे स्वयं मे हतप्रभ थे कि उन्होंने अपना प्रतिरूप गढ़ दिया है। किसे दिखाये और कैसे छुपाएं तुलसी में महाप्रज्ञ को और महाप्रज्ञ में तुलसी को। ऐसे शुभ क्षणो में धर्मसंघ को उपकृत करते हुए श्रद्धेय आचार्य श्री तुलसी ने मुनि नथमलजी को अपने उत्तराधिकारी के रूप मे उद्घोषित कर दिया। समूचा धर्मसंघ अपने आराध्य की इस अप्रत्याशित घोषणा के हर्षोत्फुल था। अनुशास्ता भी स्वयं मे आश्वस्त और विश्वस्त दिखाई दे रहे थे। और युवाचार्य श्री महाप्रज्ञ भी घनीभूत समर्पण और निष्ठा का गुरू प्रसाद प्राप्त कर संकोच एवं धन्यता का अनुभव कर रहे थे।

यह कहानी है एक गुरू द्वारा एक शिष्य के निर्माण एवं प्रतिष्ठापन की जिसका छोर इससे बहुत पहले कही मिलता है। तब से लेकर आज तक महाप्रज्ञ के व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व की उर्मियां गुरू के उस भरोसे को सत्यापित करती जा रही है। युवाचार्य से आचार्य और तदन्तर गुरूदेव श्री तुलसी के महाप्रयाण के पश्चात् धर्मसंघ के दशम् प्रभावी आचार्य के रूप में आप जिस मुकाम तक पहुंचे हैं, कहा जा सकता है इससे तेरापंथ धर्मसंघ एवं समस्त जैन शासन उपकृत हुआ है। प्रस्तुत है *अतीत से अब तक आवृत्त इस अद्भुत यात्रा के संक्षिप्त स्वर जब एक नन्हा बीज आज सहस्रशाखी वटवृक्ष का रूप धारण कर सका और समग्र विश्व में अपनी पैठ स्थापित करने में सफल हुआ।*

निष्ठा का पहला हस्ताक्षर तुलसी की पौशाल में

आपश्री के दीक्षा गुरू अष्टमाचार्य श्री कालूगणि ने बाल मुनि नत्थू को युवा मुनि तुलसी को देख-रेख में अध्ययन करने का निर्देश दिया। मुनि नथमल अत्यंत श्रद्धा और निष्ठा भाव से तुलसी को पौशाल के सदस्य बने। अध्ययनार्थी मुनि मंडल शिक्षा गुरू तुलसी को घेरे रहता। तुलसी की आंखें भी बाल मुनियों पर टिकी रहतीं। आपश्री का अनुशासन और वात्सल्य प्राप्त कर विकास की दिशाएं उद्घाटित होती रही। यह कहने में अत्युक्ति नहीं होगी कि बाल मुनि नथमलजी के कोमल हृदय मे मुनि तुलसी के प्रति प्रारंभ से ही ऐसी अनुपम छवि अंकित हुई, जिसमें समर्पण

और दृढ़ आस्था के भाव प्रमुख थे। संस्कारों की यह विरासत आज भी श्रद्धेय आचार्य श्री महाप्रज्ञ के मुखारविन्द से बहुधा मुखरित होती रहती है।

तराशने और तलाशने का अनोखा सफर

जब मुनि तुलसी तेरापंथ धर्मसंघ के नवमाचार्य के दायित्व से जुड़े वे क्षण मुनि नथमलजी के लिए विशेष सौभाग्य के थे। उनके लिए यह गौरवपूर्ण बात थी कि उनके शिक्षा गुरू आज धर्मसंघ के सर्वोच्च आसन पर प्रतिष्ठित हुए। आचार्य श्री तुलसी ने भी अपनी कृपापूर्ण निरंतरता को बनाये रखते हुए मुनि नथमलजी को तराशने और उनमें छुपी हुई विलक्षण प्रतिभा को तलाशने का क्रम प्रभावी रूप से जारी रखा। सचमुच ऐसा वही गुरु कर सकते हैं जो क्षमताओं के कुशल पारखी होते हैं। जिनमें वक्त की नब्ज पर हाथ रखने की कला विद्यमान है। गुरू के सतत श्रम, वात्सल्य एवं शुभ दृष्टि से मुनि नथमलजी विकास की सीढ़ियां-दर-सीढ़ियां चढ़ते चले गए।

नवयुग में नव प्रवेश: योजना शुभ भविष्य की

आचार्य श्री तुलसी की आचार्यशासना का प्रथम दशक समाप्ति पर था। आपका विहरण क्षेत्र तब तक थली तक ही सीमित रहा। आप धर्मसंघ की अन्तरंग सारणा-वारणा में संलग्न थे। कोशिश की जा रही थीं एक ऐसी कार्य-योजना तैयार हो जिससे धर्मसंघ का चतुर्मुखी विकास तो हो ही, धर्म का सार्वजनिक स्वरूप भी सामने आये। अणुव्रत की पृष्ठभूमि तैयार करने के वे क्षण थे। इस अर्वाचीन सोच में कुछ विशिष्ट संतजन एवं श्रावकगण अपना विनम्र सहयोग प्रस्तुत कर रहे थे। राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रयोग की भी अपेक्षा अनुभव की जा रही थी ताकि वक्तव्यों एवं साहित्य सृजन में हिन्दी का प्रवेश संभव हो सके। वे क्षण थे जब आचार्य तुलसी धर्मसंघ को नयेयुग में प्रवेश कराने की तैयारी में संलग्न थे।

साहित्य निर्झर : सृजन आलोक का

मुनि नथमलजी की अनुभूत वाणी और उससे मुखरित शब्द समूहों का संचयन-संकलन साहित्य की अनमोल नींव बनते गए। आपने समग्र धर्मग्रंथों का तुलनात्मक पारायण करते हुए अपने अनुभूत रहस्यों को शब्द दिए। सहयोगी संतजनों ने अथक श्रम कर उन्हें साहित्य की माला मे पिरोने का भगीरथ प्रयत्न किया। इससे आपके साहित्य को देखने, समझने और हृदयंगम करने वाले साहित्य पिपासुओं की चाह को राह मिली। न सिर्फ तेरापंथ धर्मसंघ वरन् सभी धर्म सम्प्रदायों से जुड़े संतजनो, श्रावकों एवं देश-विदेश के साहित्यिक पाठकों को आपके विचारो से लाभान्वित होने का अवसर मिला। आज निरंतर बहते साहित्य के इस निर्झर की सर्वोन्मुखी धाराएं पाठको के लिए आदरणीय, पठनीय एवं मननीय बनती जा रही है। अनेक व्यक्तियों ने आपकी सोच को समझकर स्वयं में आलोक का सृजन किया है। मुझे यह कहते हुए गर्व है कि आचार्य श्री महाप्रज्ञ के साहित्य ने धर्मसंघ का मस्तक इतना ऊंचा किया है जिस पर पूरा धर्मसंघ कृतार्थता का अनुभव करता है।

कृतिकार के विश्वास की अमिट मुहर

एक ओर कृति के रचनाकार अपने श्रम को साकार होता देख सहज आत्मतोष का अनुभव कर रहे थे तो दूसरी ओर कृति स्वयं में कृतज्ञता भाव संजोये अपने आराध्य की शुभदृष्टि को बहुमान देती जा रही थी। एक अवसर आया जब गुरू ने मुनि नथमलजी में विराटता का अंकन कर उन्हें महाप्रज्ञ संबोधन से विभूषित कर दिया और उसके कुछ समय पश्चात् मुनि नथमलजी को युवाचार्य

महाप्रज्ञ के रूप में स्थापित कर दिया गया। युवाचार्य के रूप मे अपने दायित्वबोध का सम्यक् निर्वहन करते हुए आपने गुरूदेव के हर इंगित को साकार करने का प्रयत्न किया। प्रेक्षाध्यान के बाद जीवनविज्ञान, अणुव्रत, योगक्षेमवर्ष, समण श्रेणी, जैनधर्म और दर्शन का विस्तार पर प्रचार और प्रसार आदि दिशाओं का उद्घाटन एवं तदनुरूप कार्यक्रमों में युवाचार्य श्री महाप्रज्ञ राम के हनुमान की तरह अपने आराध्य के साथ डटे रहे। आपके शब्दकोष में ना के लिए कोई अवकाश नहीं रहा। इस निर्णायक यात्रा में मुनि नथमलजी की युवा क्षमताएं प्रारंभ से ही विशेष रूप से उभर कर सामने आई। आपने सर्वप्रथम हिन्दी में साहित्य रचना की शुरूआत की एवं वक्तव्य का सिलसिला भी हिन्दी में शुरू हुआ। वि.सं 2005 में अणुव्रत आंदोलन के प्रवर्तन एवं श्री पारमार्थिक शिक्षण संस्था के उद्भव जैसी घटनाएं संघ के आंतरिक निर्माण एवं धर्म के सार्वजनिक स्वरूप की दिशाओं को उद्घाटित कर रही थी। नये युग मे प्रवेश की इस उल्लेखनीय यात्रा में मुनि नथमलजी का योगदान न सिर्फ एक उपलब्धि था वरन् शुभ भविष्य का सूचक भी था क्योंकि उनमे छुपे कर्तृत्व को बाहर आने/लाने का सिलसिला शुरू हो चुका था।

अशांत विश्व को प्रेक्षा का उपहार

आचार्य श्री तुलसी की तीव्र उत्कंठा थी कि धर्म को सच्चे अर्थों मे इस प्रकार प्रतिष्ठापित किया जाए कि वह व्यक्ति-व्यक्ति मे रूपांतरण का आधार बन सके। व्यक्ति स्वयं मे स्वयं को देखकर अपने निर्माण का पथ प्रशस्त कर सके। उन दिनो जैनागमो मे छुपे ध्यान के रहस्यो की खोज शुरू हो चुकी थी। गुरूदेवश्री की दृष्टि प्राप्त कर मुनि नथमलजी ने इस दिशा मे प्रयाण किया। ध्यान के रहस्यो को ढूंढना, उन्हे ध्यान की अन्य पद्धतियो के साथ तौलना, परखना एवं युगीन प्रस्तुति देना एवं प्रायोगिक रूप से इसकी उपयोगिता का अनुभव करना, इस त्रिवेणी को धारण कर आपने नवनीत के रूप मे ऐसी पद्धति का प्रस्तुतीकरण किया जिसे प्रेक्षाध्यान के नाम से पुकारा गया।

प्रेक्षाध्यान पद्धति अशात विश्व के लिए शांति का उपहार बनकर आई। गुरूदेवश्री के प्रति अनन्य निष्ठा भाव एव ध्येय के प्रति तीव्र इच्छाशक्ति का परिणाम था कि प्रेक्षाध्यान की पद्धति आज जन-जन की जुबान पर आ चुकी है। समग्र विश्व प्रेक्षाध्यान पद्धति के प्रणेता आचार्य श्री महाप्रज्ञ के इस अवदान के प्रति श्रद्धानवत है। गुरू की सोच को सार्थक मुकाम देने मे श्रद्धेय श्री महाप्रज्ञ की भूमिका प्रमुखतम रही। सचमुच् गुरू शिष्य की ऐसी जोड़ी अद्भुत थी जिसे ढेर सारी उपमाओं से विभूषित किया जा सकता है। आपको गढ़ने वाले गुरूदेवश्री ने भी हर मोड़ पर अपने विश्वास की अमिट मुहर लगाकर आपको निरतर ऊंचायियां प्रदान की। यह आपश्री के लिए भौगाग्य की बात है।

गुरू का संकेत सर्वोच्चता के शिखर का

धर्मसघों के इतिहास मे एक अनोखी घटना घटित हुई। एक धर्माचार्य ने सर्वाधिकार सपन्न होते हुए अपने पद के विसर्जन की घोषणा की एवं आचार्य पदारोहण तक का समूचा घटनाक्रम सर्वोच्चता का वह शिकर है जहां गुरू के द्वारा शिष्य पर किये गये भरोसे के दर्शन होते है। साथ ही गुरू हृदय की विशालता और महानता भी उजागर होती है। इस प्रसंग मे समूचा विश्व आश्चर्यचकित हो उठा था। विशेषकर उस आपा-धापी के युग में जहां पद एवं अधिकार अहं की नकाब ओढ़े हुए बैठे है वहां त्याग की बात आकाश कुसुमवत प्रतीत होती है।तेरापथ धर्मसंघ के शिखर पुरूष ने ऐसा कर दिया और स्वयं के समक्ष अपने सुशिष्य को प्रतिष्ठित कर सर्वोच्चता
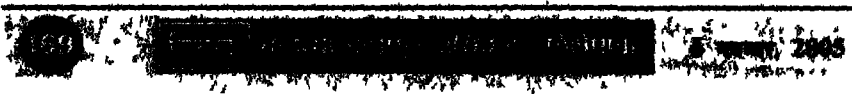
के नव-शिखर उद्घाटित कर दिए।

भाग्यश्री की रेखा में दूसरा कोई जोड़ नहीं

आचार्य श्री महाप्रज्ञ के भाग्यश्री की तुलना में मुझे कोई दूसरा जोड़ दिखाई नहीं देता। आंखें दूर नजदीक झांकते, ढूंढते सिर्फ यही कह रही है कि ऐसे भगवान श्रद्धासिक्त पुरूष यदा-कदा ही अवतरित होते हैं। प्रसंग है आचार्यपद पदारोहण के पश्चात् का जब आचार्य श्री महाप्रज्ञ अपने दायित्वबोध की पालना में संलग्न हो चुके थे। गुरूदेव श्री तुलसी संगीय श्रीवृद्धि के लिए अपना परामर्श समय-समय पर आचार्यश्री तक प्रेषित करते रहते थे। एक दिन विज्ञप्ति (केन्द्रीय) में हमने पढ़ा-गुरूदेव फरमा रहे थे, मैंने पद विसर्जन किया है पर धर्मसंघ के अनुशास्ता पद का नहीं, जहां कहीं अनुशासन का अतिक्रमण होगा वह कतई क्षम्य नहीं होगा। मुझे लगा एक गुरु गुरुता के शिखर तक पहुंचकर भी अपने शिष्य के लिए कितना जागरूक रह सकता है। सब कुछ त्याग कर भी उन्होंने अपनी दिव्य दृष्टि संघ की सारणा-वारणा पर टिकाये रखी और आचार्य श्री महाप्रज्ञ को अपने जीवन के अंतिम क्षणो तक सुरक्षित रखा, उनका योगक्षेम करते रहे। अन्यथा पद त्याग के पश्चात वे निरपेक्ष रह सकते थे पर यह सौभाग्य था श्रद्धेय आचार्य श्री महाप्रज्ञ का कि उनके श्रद्धेय ने उन्हें जीवनपर्यन्त भाग्यश्री से सराबोर रखा।

प्रणम्य पुरूष चिरायु हो

गुरू और शिष्य की जोड़ी का स्वरूप बदल चुका है। गुरूदेवश्री अब हमारे बीच नहीं रहे। श्रद्धेय आचार्य श्री महाप्रज्ञ एवं युवाचार्य श्री महाश्रमण की वर्तमान जोड़ी धर्मसंघ को ऊंचाइयां देने के लिए कृत संकल्पित है। आपके साथ सचेतन अतीत है, प्रभावी वर्तमान है और सम्भावनाओं भविष्य की अनगिनत संभावनाएं है। तेरापंथ धर्मसंघ में सर्वाधिक उम्र प्राप्त आचार्य का स्वर्णिम पृष्ठ आपश्री के नाम के साथ जुड़ चुका है। अभी भी ढेर सारे कीर्तिमान आपकी प्रतीक्षा कर रहे है। मेरी नजर में आप ऐसे कालजयी आचार्य है जिन्हें कीर्तिमानो का रचना कहा जाना अधिक युक्तिसंगत है। वर्चस्वी जीवन के नवे दशक मे प्रलंब यात्रा में प्रवृत्त होना संभवतः जैन इतिहास की विरल घटना है। जब आप अथक श्रम करते हुए अहिंसा और मैत्री का संदेश विश्व मानवता को बांट रहे है। हमारी एक ही अभिलाषा है कि आप कम-से-कम शतायु तो हों ही और यह भी विनंती है कि आप अपने अनुभूत सत्यों को बस यों ही बांटते चलें ओर तब तक ऐसा करने की कृपा करें जब तक विश्व पटल पर छाया हिंसा और अज्ञान का कुहासा छट न जाए।

अत्यंत विनम्र भावो के साथ सादर नमन।

यात्रा करें भीतर की

मध्यकालीन संतो ने इस सच्चाई को बहुत उजागर किया कि तुम तीर्थों की यात्रा करते हो किन्तु असली तीर्थ तुम्हारे भीतर है। कस्तूरी मृग बाहर ही बाहर दौड़ता है, किंतु अपनी नाभि में बसी कस्तूरी से अनजान बना रहता है। तुम बाहर की यात्रा बंद करो, अपने भीतर आओ। ध्यान का महत्त्व इसी बिंदु पर आधारित है। समस्या यह है- भीतर की खोज नहीं चलती, हम बाहर की यात्रा मे ही उलझे हुए हैं। हम एक बार बाहरी यात्रा को स्थगित करें, भीतर की यात्रा आरंभ करें। भीतर की यात्रा करने का अर्थ है- ध्यान साधना और इसी यात्रा का नाम है- आत्मा से परमात्मा तक पहुचना

— आचार्य महाप्रज्ञ जैन धर्म के साधना सूत्र, पृष्ठ 23।

शुभ भविष्य है सामने

पन्नालाल पुगलिया

वैज्ञानिक दृष्टि से वर्तमान युग वर्धमान युग के रूप मे प्रतिस्थापित किया जा रहा है। नित नए आविष्कार, नित नए प्रयोग, यत्र-तंत्र का बढ़ता बोलबाला इस वर्धमान युग की वर्धमानता को प्रकाशित कर रहे है। इतिहास के पन्नो पर दृष्टिपात करे तो एक युग 'वर्धमान' का भी रहा है। उस वर्धमान का जिसकी पहचान वर्तमान मे 'महावीर' से है। अभिनंदन भी उसी का है जो वर्धमान है। वर्धमान की उज्ज्वलता का अभिषेक और पवित्रता की अभिवंदन मानव संस्कृति का अध्याय रहा है। लोकिक और अलौकिक दोनों परंपराओं मे अभिषेक एवं अभिवंदना के स्वर्णिम अध्याय सुनहरी लेखनी से लिपिबद्ध हुए है, पर बीसवी और इक्कीसवीं सदी में ऐसे अध्याय तो क्या स्वर्णिम पृष्ठो से भी इतिहास अतृप्त-सा रहा हे।

काल के भाल पर स्वस्तिक उकेरने वाले युगपुरूषों का अभिषेक ही इतिहास का अमिट आलेख बनता है, पर ऐसे अभिषेचित युगपुरूषो के ऐसे विरल आलेख- यदा-कदा ही आलेखित होते हैं, जो स्वयं इतिहास बनते है। यह मेरा सौभाग्य कहूं या इस युग का अहोभाग्य कि इतिहास के एक दुलंभ दस्तावेज के हम प्रत्यक्षदर्शी बन रहे है। युग प्रधान आचार्य महाप्रज्ञ के वर्धापना समारोह के स्वदर्शन कर हम अपने आप मे धन्यता का अनुभव किया और 84वे जन्मदिवस पर पुनः इस महापुरूष को वर्धापित कर रहे है। वर्धापना समारोह के वे अति आनंदित क्षण इस निस्पृह योगी की उस साधना को उद्घाटित कर रहे है, जिस साधना को महाप्रज्ञ ने केवल प्रतिध्वनित ही नही किया, अपितु जीया है और जन-जन को अमृत पान भी करवाया है। यही कारण हे कि पुरूषार्थ पर्याय गुरूदेव श्री तुलसी ने आपको 'ठियप्पा' (जिसकी आत्मा ज्ञान, दर्शन और चारित्र मे स्थित हो) जैसे शब्द से उपमित किया है और 'णो हीणे णो अइरित्ते' जैम आगम आयारो के इस सूक्त को आपका जीवन दर्पण बताया है।

व्यवहार जगत मे आचार्य महाप्रज्ञ का यह वर्धापना समारोह तेरापंथ धर्मसंघ की आचार्य परंपरा में सबसे लंबे आयुष्य वरण करने का प्रतीक हो सकता है पर मेरा अबोध मन इस वर्धापना को इस रूप मे जान पाया कि वर्धापन किसका-

वर्धापन उस 'समर्पण भाव' का जो एक शिष्य का अपने गुरू के प्रति देखा। आचार्य महाप्रज्ञ का जो समर्पण भाव गुरू तुलसी के प्रति देखा, सुना, पढ़ा और समझा वह अद्वैत है। चिंतक और साहित्यकारों की भाषा मे महाप्रज्ञ आधुनिक युग के विवेकानद हो सकते हैं, पार गुरू तुलसी की भाषा में महाप्रज्ञ कैसा? महाप्रज्ञ जैसा। गुरू शिष्य की विलक्षण परंपरा में अरस्तु

को गर्व था कि उसे सिकंदर जैसा शिष्य मिला और रामकृष्ण परमहंस का सौभाग्य कि विवेकानंद उनका शिष्य था; पर आचार्य तुलसी के शिष्य महाप्रज्ञ के ये शब्द कि मैं जो कुछ हूं गुरू तुलसी की कृति हूं, समर्पण शब्द में प्राणवायु प्रवाहित करते हैं। इसलिए वर्धापन इस समर्पण भाव का।

वर्धापन उस 'भाष्यकार' का, जिसने आगम संपादन का इतिहास रच डाला। उस भाष्यकार का, कवि की इस पंक्तियों में कि-

मौन हो गए ग्रंथ जहां पर,
तुमने दी फिर से वाणी।
गूंजेगी अब दिग्दिगंत में
झनकार के कल्याणी।।

सचमुच मे आगम संपादन के दुरूह कार्य को न केवल विशिष्टता स क्रियान्वित किया अपितु आगमो की विशद् वैज्ञानिक विवेचना कर आचार्य महाप्रज्ञ ने एक भाष्यकार के रूप म जो विशिष्ट उपलब्धि अर्जित की, सारा जैन जगत् नतमस्तक है और यह वर्धापन उस भाष्यकार का है।

वर्धापन उस 'प्रज्ञा पुरूष' का जिसने अपनी प्रज्ञा से जन-मन की प्रज्ञा का जागृत कर दिशा बोध करवाया। जीने की नई शैली जैन जीवनशैली प्रस्फुटित कर आलोकित जीवन का मार्ग प्रशस्त किया। जिसने शिक्षा का अभिनव आयाम 'जीवन-विज्ञान' प्रस्तुत कर सर्वांगीण विकास की राह दिखाई। प्रेक्षाध्यान का अमोघ शस्त्र प्रधान कर स्वस्थ जीवन का रहस्य बताया। वर्धापन उसका है।

वर्धापन 'अनेकांत दर्शन' का -सहस्राब्धियो पूर्व भगवान महावीर ने अनेकांत दर्शन प्रदान किया। वर्तमान युग में महावीर के अनकांत दर्शन को समझना हो तो बेशक आचार्य महाप्रज्ञ अनेकांत की जीवंत प्रतिमा है। केवल दो आखर 'ही' और 'भी' म अनेकांत का प्रस्तुत कर आपने सौहार्द, समन्वय और सहअस्तित्व के नए द्वार खोल दिए, वर्धापन उसका है।

वर्धापन 'महान दार्शनिक' का-महाप्रज्ञ के साहित्य भंडार मे प्रवेशमात्र स ही आपकी दार्शनिकता परिलक्षित होती है। हर विषय पर आपका मौलिक एवं बौद्धिक चिंतन अर्थशास्त्रियो, समाजशास्त्रियो, विधिवेत्ताओं, शासको-प्रशासकों एवं प्राणीमात्र को आध्यात्मिकता के साथ वैज्ञानिकता का रसास्वादन करवाता है। यही कारण है कि आपका दर्शन जो आपकी जीवन चर्या मे झलकता है, जो आपके प्रवचन से प्रवाहित होता है और जो आपके साहित्य मे निखरता है, उसे जानने, समझने और पढ़ने का केवल भारतवासी ही नही, अपितु सात समदर पार विश्व का हर छोर लालायित है, इसलिए वर्धापन उस दार्शनिकता का है।

वर्धापन 'युगप्रधान' का-युगप्रधान वह होता है जो युग की नब्ज का अपनी अंतर्दृष्टि स परखता है और दिशा बोध प्रदान करता है। आपने अपने कर्तृत्व म इसे उजागर किया है। प्रेक्षाध्यान, जीवन-विज्ञान, अहिसा समवाय और विसर्जन आदि सूत्रा का प्रस्तुत कर समस्याओ का समाधान दिया है, वर्धापन उस युगप्रधान का है।

वर्धापन 'करूणावतार' का तेरापथ के इतिहास मे आपकी करूणाभाव के कई उदाहरण मिलते हैं। स्मरण करता हूं गंगाशहर मर्यादोत्सव के उस प्रसंग को जब आपके पदाभिषेक दिवस को समारोह के रूप में मनाया जाना था। गुजरात में आए भूकंपसे प्रभावित लोगा के बारे म

सुनकर आपका हृदय डोल उठा और आपने उस पदाभिषेक समारोह को करूणा दिवस के रूप में परिवर्तित कर एक नए अध्याय का सृजन किया। संघ के आचार्य का पदाभिषेक समारोह जिसे करूणावतार महाप्रज्ञ ने करूणा दिवस के रूप में मनाया-वर्धापन उस करूणावतार का।

वर्धापन 'अहिंसा यात्रा प्रवर्तक' का-जीवन के नवें दशक में लगभग चार हजार किलोमीटर की पद यात्रा का लक्ष्य लेकर नगर-नगर और डगर-डगर में अहिंसक चेतना का जागरण करने, नैतिक मूल्यो का विकास करने, हिंसा के गहन तिमिर में अहिंसा का दीप प्रज्वलित करने चल पड़े अपने कारवां के साथ अहिंसा यात्रा के पुरोधा आचार्य महाप्रज्ञ। वर्ल्ड ट्रेड सेंटर (अमेरिका) पर विध्वंसकारी विमान हमला हो या भारतीय संसद पर आतंकवादियो का आक्रमण, चाहे गुजरात का गोधरा कांड हो या अक्षरधाम की घटना, आपने न केवल अहिसा का संदेश संप्रेषित कर सबल प्रदान किया, अपितु समस्याओं का समाधान अहिंसक शैली से हो, इस हेतु अहिसा प्रशिक्षण का क्रम भी प्रारंभ किया। वर्धापन उस अहिसा यात्रा पुरोधा का।

जैन दर्शन मे वृद्धावस्था मे आचार्य पद पाने का गौरव आचार्य प्रभव के बाद अगर किसी आचार्य को है तो वह केवल आचार्य महाप्रज्ञ को है। अवस्था विशेष से आचार्य महाप्रज्ञ वृद्ध हो सकते है पर आपका मौलिक चितन वैज्ञानिक युग मे चुनौती है तो आपकी दिनचर्या युवा शक्ति के लिए प्रेरणास्रोत। आपका दिशाबोध धर्मनेताओं के लिए पथ-दर्शक हैं तो आपकी लेखनी साहित्य जगत की सपदा। आपका दर्शन दार्शनिको के लिए प्रज्ञा अवतरण है तो आपका नेतृत्व शासको के लिए राजमार्ग की पगडडी।

हे संघ नियता, मुझमे वो सामर्थ्य कहां कि तुम्हे वर्धापित करूं, पर मन की आवाज कागज के हृदय पर, कलम के रक्त से सिंचित कर निवेदन कर रहा हूं, इन पंक्तियो मे कि-

महाप्रज्ञ की ज्योति शिखा से, ज्योतित है हम अंबर, धरती।
दसों दिशाएं मंगल गाकर, गुरूवर का अभिनंदन करती।।
बीत गई है सदी पुरानी, वर्तमान वर्धापित करती।
आने वाली नई सदी बस, इंतजार में करवट लेती।।
करूणा सागर तव करूणा से, रिति झोली सबकी भरती।
अवसर देना नई सदी को, स्वागत की जो आशा करती।।
स्वागत की जो आशा करती।।

जिनका व्यक्तित्व समस्याओं का समाधान है और कर्तृत्व शुभ भविष्य का संकेत, ऐसे यशस्वी नेतृत्व मे शुभ भविष्य है सामने, वर्तमान तो शुभ है ही। आचार्य महाप्रज्ञ को वंदन-अभिवंदन, अभिनंदन।

समता का विकास

समता का विकास मैत्री, अभय और सहिष्णुता-इन तीन आयामों मे होता है। जिस व्यक्ति मे प्रतिकूल परिस्थिति को सहन करने की क्षमता जागृत नहीं होती, वह अभय नही हो सकता और भयभीत मनुष्य मे मैत्री का विकास नहीं हो सक ता। जिसमे अनुकूल परिस्थिति को सहन करने की क्षमता जागृत नहीं होती, वह गर्व से उन्मत्त होकर दूसरो में भय और अमैत्री का संचार करता है। तीन आयामों मे बिकास करने पर ही समता स्थायी होती है

- आचार्य महाप्रज्ञ श्रमण महावीर, पृष्ठ 185

21वीं सदी के सिद्ध सेन

साध्वी ललितरेखा (जदू)

इक्कीसवीं सदी के सिद्ध सेन, आधुनिक विवेकानन्द, प्रतापपुरुष अणुव्रत के भगीरथ, भारतीय संस्कृतिक के गाज्ज्वल्यमान नक्षत्र भारत-ज्योति, मानवता के मसीहा आचार्य श्री महाप्रज्ञ के जीवन का आर-पार विशेषताओं से सजा-संवरा हुआ है। उसे पढ़ने-लिखने और समझने से ऐसा लगता है कि अनेक में से एक को कैसे पकड़ा जाए। एक ओर मानवतावादी, साधनाशील, बहुमुखी प्रतिभा के धनी, ध्यानी, मौनी एवं योगी है तो दूसरी ओर लेखक,कवि, साहित्यकार, कुशल प्रवाचक एवं आगमों के गहन अध्येता हैं। अपने भीतर और बाहर, एक व्यवहार में निहायत अपनापन लिए हुए, औपचारिकता से सैकड़ों मील दूर महात्मा महाप्रज्ञ का जन्म वि.सं. 1877 आषाढकृष्णा त्रयोदशी टमकोर (राज) की पवित्र रत्न वसुन्धरा पर हुआ। गौर वर्ण, लम्बा कद, भव्य-ललाट तेजस्वी आंखें और प्रलम्ब कान यह है उनका ब्राह्य व्यक्तित्व। शबनमी पारदर्शिता के धनी आचार्य महाप्रज्ञ ने मात्र 10 वर्ष की अल्पायु में तेरापंथ के अष्टमाचार्य कालूगणी के कर कमलो से दीक्षित एवं शिक्षित हुए। चाणक्य नीति में बताया गया है कि-

दातृत्वं प्रियं वक्तृत्वं, धीरत्वमुचिज्ञता।
अभ्यासेन लभ्यन्ते, चत्वारः सहजागुणाः।।

अर्थात- उदारता, प्रियवादिता, धीरताऔर अनुचित व उचित की पहचान ये चार गुण जिस व्यक्ति में होता है, उसका व्यक्तित्व स्वतः ही विराट होता है।

हिमालय में ऊंचाई होती है लेकिन गहराई नहीं होता, सागर में गहराई होती है किन्तु ऊंचाई नहीं होती किन्तु इन दोनों का संगम - स्थल होता है किसी महामानव-जीवन। व्यक्ति जन्म से महान नहीं, कर्म से महान बनता है। मसलन उन्होंने अपनी उद्धत साधना की ऊर्जा से जैन धर्म को जनधर्म बनाने खातिर जीवन विज्ञान एवं प्रेक्षाध्यान की भागीरथी बहाई, जिसमें अभिस्नान लाखों-लाखों लोग व्यसन मुक्त बन धन्यता, कृतार्थता का अनुभव किया। उन्होंने मानव -धर्म को सर्वोपरि महत्व दिया। वे कहते हैं व्यक्ति जैन बनें या ना बने किन्तु गुडमैन अवश्य बनें। भौतिकता, ब्रह्मआडम्बरों से सेकड़ों मील दर रहकर स्व पर कल्याण के खातिर अपना सर्वस्व होम देने वाले, तहे दिल से मानवता की खिदमत करके अपनी यश काया को परवान चढाया। जाति, वर्ग, सम्प्रदाय से उपर उठकर मानव-मानव सभी समाज-एका माणुस्स जाई का स्वर जहां में बुलंद किया। मानव-धर्म की नवीन व्याख्या करके शिक्षा, शोध, साहित्य, सेवा,साधना एवं संस्कृति के लिए जैन प्रेक्षा विश्व भारती जैसी कामधेनू संस्था का निर्माण कर, जिस्म एवं जेहन से सदा तनाव पीड़ीत मानवता को अहिंसा अनिय मुक्त कर से बांट रहे

है। नये मोड़ के नव चिन्तन से सामाजिक बुराईयो, कुरूढ़ियो को नेस्तनाबूद करके युग-पुरुष का किरदार [illegible] रहे हैं। सती प्रथा, दास प्रथा, पर्दा प्रथा [illegible] अबलाओं के लिए खपे, तपे [illegible] कर संघर्षों से लोहा लिया, शहादत का [illegible] पावन, गरीब -निवाज, मानवता के मसीहा कहला रहे है। भौतिकता की चकाचौंध [illegible] को जीवन विज्ञान की आंख एवं प्रेक्षा की पांख देकर आध्यात्मिक वैज्ञानिक [illegible] की [illegible] से जहां को सुवासित किया। जीवन विज्ञान का अद्‌भुत तोहफा देकर शिक्षा पद्धति की खामियों को दूर करने का प्रयास किया। मन्दिर, मस्जिद, गिरिजां, मठ एवं धर्म स्थल मे बन्द पडे धर्म को प्रायोगिक रूप दिया। आचरण शून्य धर्म उनकी दृष्टि में कोरा पाखण्ड है। मन्दिर, मस्जिद एवं गिरिजो मे जाकर व्यक्ति प्रहलाद मुक्त बन जाता है। दुकान, ऑफिस, दफ्तर मे जाकर इंसानियत को विस्मृत कर हैवान बन जाता है। ऐसा व्यक्ति कभी भी धार्मिक नहीं है, लिहाजा नैतिकता की सौरभ महकाने के लिए अणुव्रत की मशाल कर में थाम करके 70 हजार किलोमीटर से भी अधिक पदयात्रा करके धरती का चप्पा-चप्पा नाप रहे हैं। गरीब की झुग्गी झोपडी से लेकर राष्ट्रपति भवन तक अणुव्रत की अखण्ड लौ जलाकर अनेकों लोगों से जन सम्पर्क कर रहे है। एवरेस्ट की अमाप्य ऊचाई से उपत्ययका की खाई मे गिरे एव भौतिकता की भुलभुलैया मे भटके मनुज को इन्होंने ज्ञान की टॉर्च एवं अनुभव के सैल प्रदान किये। जीवन-रथ के सारथि बन उजालों से जन-पथ को आलोकित किया। आत्ममथन का नवनीत पाने के लिए निंदा व प्रशस्ति मे सम विरोध को विनोद मान तीव्र आलोचनाओं का गरल पी, लाखों दिलों मे छा रहे है। दुर्व्यसनों की दुर्गंध को दूरकर सद्‌गुणों की परिमल से जहां को महका रहे हैं। देश के विकास के लिये पं. जवाहरलाल नेहरु , लाल बहादुर शास्त्री, वी डी जत्ती, प्रधानमंत्री श्रीमति इन्दिरा गांधी, संजीव गांधी, मेनका गांधी, मुरार जी भाई देसाई ज्ञानी जैल सिह जी, विनोबा भावे, दलाई लामा, संत लोंगोवाल, जैनेन्द्रजी, लालकृष्ण आडवाणी, अटलबिहारी वाजपेयी, मदनलाल खुराना, शिवराज पाटिल आदि देश के मूर्धन्य नेताओं से मिले और मिले रहे है। दैन्दिन जीवन की समस्याओं का समाधान परक मार्गदर्शन जीवन जीने की कला, शिक्षण - प्रशिक्षण, विशिष्ट साधना पद्धतियों को वैज्ञानिक विवेचन पाने देश व विदेश के लाखों नर-नारी उपस्थित होते हैं। सात समुन्दरों पर हालैण्ड, जर्मन, जापान, लन्दन इटली, ताईवान, अमेरिका एवं अफ्रीका मे व्याप्त अनैतिकता की तपन एवं भौतिकता की आधी से बैचेन जनता के लिए प्रेक्षा मेडीटेशन का सनसनीखेज धमाका है। जो भोगवादी संस्कृति मे पल रहे अशान्त मानस के लिये एक महान अजूबा है, विराट शगूफा है। इनकी सेवाओं का मूल्यांकन करते हुए भारत सरकार ने उन्हे इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय एकता पुरस्कार से सम्मानित किया। साधना के शलाका पुरुष, कालजयी व्यक्तित्व प्रेक्षा की भागीरथी बहा रहे है। जन-मन का कलुष परवार रहे हैं। आत्मा को तराश रहे हैं, नारी जाति के उन्नायक के रुप मे इनके भाग्य को सवार रह है। परमात्मा की तफ्तीश के लिए पौरुष को निखार रहे है। फिर भी उन्हे कभी समय से,शिकवा- शिकायत नही है। व्यस्तता का बोझ इन पर कभी हावी न हो पाया, आप भीड से कभी ऊबे नही, श्रम व एकान्त से कभी थके नहीं, विघ्न-बाधाओं के आगे कभी झुके नहीं, निरन्तर गतिशील रहते है तैजस का वह महासूर्य 8 दशकों से धरा पर अपना आलोक बिखेर रहे है। यह ज्योतिपुंज युगों-युगों तक कालजयी रहेगा। जब तक धरा पर भास्कर का तेज एवं मयंक की शीतलता कायम रहेगी टमकोर के लाल की यश" काया अमर रहेगी। इतिहास की स्वर्णिम - पृष्ठों पर बलिदानों की स्याही से महाप्रज्ञ का नाम उकेरा जायेगा लिहाजा कि इन्होंने 'निज पर शासन फिर अनुशासन' के सूत्र को जीवन मे चरितार्थ किया। हम रहे या ना रहे लेकिन महाप्रज्ञ के अवदानों को दुनियां अवश्य याद करेगी। ❖

916

6 फरवरी, 2005

कोटि-कोटि अभिनंदन

सरला संकलेचा

युग प्रधान युग पुरुष तुम्हारा कोटि-कोटि अभिनंदन

परम यशस्वी महाप्रज्ञ को वंदन वंदन वंदन

धरा धन्य हो गई तुम्हें पा महाप्राण महाप्राण

तुमने दी इस धर्म संघ को एक नई पहचान

अनगिन है अवदान तुम्हारे खोले उर्जा स्रोत

प्रेक्षा दीप जलाकर तुमने किया नया उद्योत

जन-जन के जीवन को सींचा तुमने मैत्री जल से

इस युग की धारा को मोड़ा तुमने प्रज्ञा बल से

पहुंचाया उद्घोष अहिंसा का प्राणी-प्राणी में

आप्लावित सौहार्द तुम्हारी कल्याणी वाणी में

सम्प्रदाय से मुक्त धर्म के वैज्ञानिक व्याख्याता

जिन वचनों के भाष्यकार तुलसी स्वर के संधाता

मानवता के संरक्षक तुम जिन शासन के भाल

रहो निरामय युग-युग तक लो शासन की संभाल

युग प्रधान श्री महाप्रज्ञ को शतशत बार बधावें

आज तुम्हारे जन्मोत्सव पर कलि-कलि मुस्कायें

जहां टिकेंगे चरण सुकोमल बने धूलिकण चंदन

कालजयी इस महापुरुष का कोटि-कोटि अभिनंदन

परम यशस्वी महाप्रज्ञ को वंदन वंदन वंदन

युग प्रधान युग पुरुष तुम्हारा कोटि-कोटि अभिनंदन

[illegible] आमेट (राज.)

सांप्रदायिक सद्भावना के प्रतीक

✍ राजकुमार चोपड़ा

अहिंसा यात्रा प्रवर्तक महात्मा आचार्य महाप्रज्ञ का अन्तःकरण इतना प्रशांत है कि उनके पास आने वाला हर व्यक्ति किसी भी स्थिति मे हो, वो शांति का अनुभव करता है। 84 वर्षीय आचार्य महाप्रज्ञ के जीवन का अधिक भाग यात्रा मे व्यतीत हुआ है। उनका अपना न कोई घर है न ही परिवार, रहन-सहन और विचारधारा की दृष्टि से 'सादा जीवन उच्च विचार' का प्रथम दर्शन होताहै। किसी भी संप्रदाय का व्यक्ति हो धर्म गुरु हो, राजनेता हो या फिर झुग्गी-झोपड़ी मे रहने वाला एक साधारण नागरिक। वे हर किसी आगन्तुक श्रद्धालु से वर्तमान स्थिति पर आत्मीयता के बातचीत करते है। बातचीत के दौरान कभी यह प्रदर्शित नही करते कि वे एक बड़े धर्म संघ के आचार्य है।

राजस्थान के झुंझुनू जिले के छोटे से गांव टमकोर मे जन्मे महाप्रज्ञ बचपन से ही अद्वितीय प्रतिभा के धनी है। 29 जनवरी, 1931 को मात्र दस वर्ष की अवस्था मे मुनि जीवन का कठोर मार्ग स्वीकार किया। यह मुनि नथमल की आध्यात्मिक यात्रा की प्रथम सीढ़ी थी। आचार्य महाप्रज्ञ ने किसी भी स्कूल, कॉलेज व विद्या संस्थान मे विद्यार्जन नहीं किया बल्कि अपने गुरु भाई आचार्य तुलसी के सान्निध्य में रहकर प्राचीन आगमो का गहन तलस्पर्शी अध्ययन किया और उनके अन्तः प्रज्ञा व गहन ज्ञान अर्जन पिपासा से प्रभावित होकर आचार्य तुलसी ने उनको महाप्रज्ञ अलंकरण.. से विभूषित किया। महाप्रज्ञ संबोधन के बाद वे युवाचार्य महाप्रज्ञ बने, युवाचार्य पद तेरापंथ परम्परा के अनुसार आचार्य के बाद का सबसे वरिष्ठ पद है। अपनी मातृ भाषा राजस्थानी के अलावा संस्कृत, प्राकृत, हिन्दी, पाली जैसी प्राचीन भाषाएं धारा-प्रवाह बोलते हुए और अंग्रेजी का भी अच्छा ज्ञान रखते हैं।

सन् 1995 मे महाप्रज्ञ आचार्य बनने के बाद आचार्य तुलसी के अणुव्रत दर्शन को विस्तार देते हुए आचार पक्ष के रुप में प्रेक्षा-योग को जोड़ा। हिन्दुस्तान की उन्नति में अनैतिकता व भ्रष्टाचार को कलंक मानने वाले महात्मा महाप्रज्ञ कहते हैं-क्षणिक उत्थान का प्रश्न गौण हो रहा है। आज राजनीति भी स्वार्थ पर केन्द्रित हो गयी है। क्षणिक चुनावी लाभ के लिए कुछ भी किया जा सकता है क्योंकि किसी भी राजनैतिक संगठन का दर्शन स्पष्ट नहीं है। जिस

संगठन का दर्शन स्पष्ट नहीं होता वह कुछ समय तक ही चल सकता है फिर धीरे-धीरे उसका विसर्जन हो जाता है।

अहिंसा यात्रा के दौरान श्रद्धालुओं के भारी दबाव के बावजूद सांप्रदायिक हिंसा के माहौल में मई 2002 में जब गुजरात राज्य में अहिंसा यात्रा का प्रवेश हुआ तब लोग सांप्रदायिक हिंसा से डरे-सहमे थे। असुरक्षा की भावना गहरे तक पैठ गयी थी। ऐसे विकट समय में हिन्दू-मुस्लिम एकता का शंखनाद कर सार्वजनिक रूप से गुजरात के प्रसिद्ध शहर सिद्धपुर और ऊंझा में ..एकता सम्मेलन का आयोजन करना बहुत बड़ी बात थी। सम्मेलन की निष्पत्ति रूप में विभिन्न संगठनो के आपसी वार्ता के कारण सद्भावना का सुन्दर वातावरण बना। गुजरात में सांप्रदायिक हिंसा व उससे उत्पन्न आपसी अविश्वास की खाई और कटुता पूर्ण माहौल को खत्म कर सांप्रदायिक सौहार्द, भाईचारा व अमन चैन की स्थापना के लिए महाप्रज्ञ ने उल्लेखनीय भूमिका निभाई महाप्रज्ञ के इस मानवतावादी दृष्टिकोण से प्रभावित होकर महामहिम राष्ट्रपति डॉ. ए. पी. जे. अब्दुल कलाम ने अपनी प्रथम गुजरात यात्रा के दौरान तमाम प्रोटोकोल व औपचारिकता को नजरअंदाज कर आचार्य महाप्रज्ञ के प्रवास स्थल प्रेक्षा विश्व भारती पहुंचे।

अहिसा यात्रा जनमानस को व बुद्धिजीवियो को इस कदर प्रभावित कर रही है कि आज हर जाति संप्रदाय, धर्म, भाषा के लोग जुडते जा रहे है। मुंबई का भिंडी बाजार जो मुसलमान बहुल क्षेत्र है वहां किसी भी आयोजन से हिन्दू सगठन घबराते है। वहा आचार्य ममाहाप्रज्ञ ने अहिसा यात्रा रैली निकालने का साहस किया और जब अहिसा यात्रा भिंडी बाजार होकर कालबादेवी से गुजरी तो भिडी बाजार मे मुसलमान प्रतिनिधियो ने जिस प्रकार अहिसा यात्रा का स्वागत किया व कुरान भेंट की वो आचार्य महाप्रज्ञ के व्यक्तित्व का ही चमत्कार था। सूरत शहर का मुस्लिम बहुल क्षेत्र लिम्बायत मे अहिसा यात्रा प्रवर्तक के आगमन पर विभिन्न मुस्लिम संगठन के प्रतिनिधियो ने महाप्रज्ञ का स्वागत कर हिंसा को रोकने व धार्मिक उन्माद नही फैलाने का संकल्प व्यक्त किया। महाराष्ट्र का ही छोटा-सा कस्बा महस्दी जहा दोनो संप्रदाय मे पिछले अनेक माह से तनाव व वैमनस्य व्याप्त था। महाप्रज्ञ के एक ही प्रवचन से उग्र तनाव का वातावरण शांत हो गया और विभिन्न संप्रदाय के लोगो वाली चालीस सदस्यो की शांति कमेटी का निर्माण हुआ। आज महस्दी मे अणुव्रत विश्व भारती के कार्यकर्ताओ द्वारा अहिसा प्रशिक्षण का बड़ा केन्द्र चल रहा है।

मुंबई प्रवास के दौरान अहिसा यात्रा प्रवर्तक आचार्य महाप्रज्ञ को बोहरा सम्प्रदाय के प्रमुख धर्म गुरु सैय्यदना बुरहानुद्दीन साहब के निमंत्रण पर जब शेखी महल. पधार वहा मिलन से एक ऐसा वातावरण का निर्माण हुआ वह अपने आप मे सांप्रदायिक सौहार्द की विलक्षण उपलब्धि रही। इस मिलन का प्रभाव पूरी यात्रा मे परिलक्षित होता रहा। अहिसा यात्रा जिस ओर से गुजरी विभिन्न संप्रदाय के साथ-साथ बोहरा संप्रदाय के सैकड़ों-हजारो कार्यकर्ताओं ने अहिंसा यात्रा मे अपनी सहभागिता दर्ज कराई।

दुनिया का हर प्राणी शांतिपूर्ण जीवन जीना चाहता है पर आज अनावश्यक हिंसा हमारी

जीवन शैली पर हावी होती जा रही है। हिंसा के इस युग में हिंसा के कारणों की खोज में पंचवर्षीय अहिंसा यात्रा के माध्यम से गांव-गांव, ढाणी-ढाणी घूमकर महात्मा महाप्रज्ञ अहिंसा का अलख जगा रहे हैं। अहिंसा यात्रा से जहां एक ओर अहिंसक चेतना के प्रयोगों से ग्रामीण जनता अनेक बुराइयों से विमुख हो रही हैं वहीं देश के शीर्ष नेता इस यात्रा में अपनी सहभागिता दर्ज कराकर निकट से यात्रा के लक्ष्यों को समझने का प्रयत्न किया और माना कि आज के युग में समाज और विश्व को बहुत बड़ी अपेक्षा है।

. आचार्य महाप्रज्ञ के लिए अहिंसा केवल राजनीतिक नारा ही नहीं है बल्कि जीवन का ध्येय है। साढ़े तीन वर्षों में चार हजार किलोमीटर की दूरी तय कर चल रही यह यात्रा अहिंसा में आस्था रखने वालों के लिए प्रकाश स्तम्भ बनकर भारत की राजधानी दिल्ली में अहिंसक शक्तियों को संगठित करने का अभियान लेकर यात्रायित है।

अहिंसा यात्रा प्रवर्तक का मूल्यांकन करते हुए भारत सरकार ने राष्ट्रीय एकता एवं सद्भावना के लिए महामहिम राष्ट्रपति ए. पी. जे. अब्दुल कलाम ने विज्ञान भवन में उपराष्ट्रपति भैरोसिंह शेखावत, प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह एवं गृहमंत्री शिवराज पाटिल की उपस्थिति में 23 अगस्त, 2005 को विज्ञान भवन में आचार्य महाप्रज्ञ के सांप्रदायिक सद्भावना पुरस्कार. प्रदान कर राष्ट्र को बताया कि अहिंसा के क्षेत्र मे हो रहे कार्य को और गति देने की जरूरत है।

संपर्क सूत्र-राजकुमार चौपड़ा, प्रेक्षा प्रशिक्षक, जैन विश्वभारती, लाडनूं-341306◆

संयम को जोड़े

महावीर ने सूत्र दिया- श्रम और अर्थ के बीच मे संयम को जोड़ो। केवल श्रम और अर्थ ही नहीं, बीच में संयम भी रहे। श्रम का भी शोषण न हो, आजीविका का भी विच्छेद न हो। कल्पना करें- एक आदमी समर्थ है, वह ज्यादा काम कर लेता है। एक आदमी कमजोर है, उतना काम नहीं कर पाता। किंतु रोटी तो दोनों को चाहिए। यदि श्रम के आधार पर ही उन्हें मूल्य दिया जाएगा तो आजीविका का विच्छेद हो जाएगा, शोषण हो जाएगा। जो प्राथमिकी अनिवार्यताएं, आवश्यकता है, उनकी पूर्ति होनी चाहिए। महावीर ने बड़े महत्वपूर्ण शब्द का चुनाव किया- भक्तपा विच्छेद- रोटी पानी की कमी न हो, उसका विच्छेद्जा न हो।

— आचार्य महाप्रज्ञ महावीर का अर्थाशास्त्र पृष्ठ 41

नई शिक्षा नीति के प्रणेता

साध्वी शुभ्रयशा

स्वस्थे चित्ते बुद्धय: प्रस्फुरंति जीवन विज्ञान का यह प्रतीक सत्यं, शिवं, सुंदरं की त्रिपथगा हैं। इसीलिए भारत के प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने कहा जीवन विज्ञान बिना शिक्षण अधूरा हैं। जीवन-विज्ञान व्यक्ति को जोना सीखाला हैं। शिक्षण में संपूर्णता के लिए जरु री है कि शिक्षण में जीवन विज्ञान के अभ्यास क्रम का समावेश हो। महामहिम वाजपेयी जी के ये विचार जीवन विज्ञान की महत्ता का प्रतिपादन करते हे। प्रश्न उठता हैं प्रधानमंत्री जी ने इसकी मुक्त कंठ से प्रशंसा की। देश के प्रबुद्ध वर्ग ने इसको गौरव को शिखरों चढ़या। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर यह ख्यातनाम बना। इसका कारण क्या है ? मेरे अभिमन से इस प्रणाली की अपनी विलक्षणताएँ हैं, जो व्यक्ति को अपनी और आकृष्ट करती हैं, क्योंकि जीवन विज्ञान की शिक्षा अनुचुंबकोय तरंगों की तरह आकर्षक है। मानव शरीर में दो प्रकार की तरंगें होती हैं। (1) प्रति चुंबकीय (2) अनु चंबकीय प्रथम तरंगे पास आने वाले को अपने से दूर करती है कि व द्वितीय तरंगें पास आनें वालो को अपनी ओर आकृष्ट करती हैं। जीवन विज्ञान प्रणाली में अनु चुंबकीय तरंगों के गुणधर्म हैं, इसलिए जो भी इसके परिचय में आता हैं प्रभावित हुए बिना नही रह सकता। पिछले 25 वर्षो का इतिहास इस बात का साक्षी है कि जीवन विज्ञान शिक्षा प्रणाली शिक्षा के क्षेत्र में एक हलचल पैदा की हैं। भारत के मानचित्र पर ही नही, आतर्राष्ट्रीय क्षेत्रों में अपनी विशेष पहचान बनाई हैं। क्योंकि इस प्रणाली में उन सूत्रो के भी समावेश किया गया हैं, जिनका वर्तमान प्रणाली में अभाव हैं।

इसका जन्म शिक्षा आयोग की तहत किसी शिक्षा शास्त्री के मस्तिष्क से नहीं हुआ अपितु अक आध्यात्म योगी की अंतर्दृष्टि अतीन्द्रिय चेतना से हुआ हैं। 28 दिसंबर, 1978 जैन विश्व भारती तुलसी आध्यात्म नीडम् का प्रागंण आज भी इसका साक्षी हैं। आचार्य महाप्रज्ञ ने आचार्य तुलसी के आध्यात्मिक वैज्ञानिक वैयक्तित्व निर्माण के स्वप्न को साकार रुप देने के लिए इस प्रणाली का आविष्कार किया। आपने कहा वह शिक्षा अपूर्ण है जो जीवन व्यवहार में मूल्यों का अवतरण कर सकें। जीवन विज्ञान इस अपूर्णता को पूर्ण करने का एक उपक्रम हें। यह शिक्षा के क्षेत्र में एक क्रातिकारी चिंतन हैं जो प्रस्तुत करता हैं। प्राचीन अर्वाचीन शिक्षा आदर्शो का दस्तावेज। यह पद्धति शिक्षा के द्वारा सिद्धांत और प्रयोग का समन्वित शिक्षण प्रदान कर व्यक्ति के Right Hemisphere और Lift Hemisphere का समुचित संतुलित और समग्र विकास करने में सक्षम हैं। आचार्यप्रवर के शब्दों में जीवन विज्ञान शिक्षा की एक अनिवार्य अपेक्षा हैं, शिक्षा केवल बौद्धिक विकास, शांतिपूर्ण सहअस्तित्व और सफलता के लिए पर्याप्त नहीं हैं, भावनात्मक विकास की सफलता बौद्धिक विकास

[illegible] महत्वपूर्ण है, जीवन विज्ञान चेतना के रुपांतरण व भावात्मक विकास की [illegible] [illegible] है। जीवन विज्ञान की कुछ मौलिक विलक्षणाऐं है जो अणु चुंबकीय तरंगो को पैदा करती हैं।
(1) भाव परिष्कार की प्रकिया (2) संतुलित विकास की प्रकिया (3) सकारात्मक सोच की प्रकिया

भाव परिष्कार की प्रकिया गुरुदेव तुलसी के शब्दों में राष्ट्र की नई शिक्षा नीति में जीवन विज्ञान एक संजीवनी का कार्य कर सकता हैं। समग्रता से जीवन का बोध और उसके अनुरुप जीवन जीना ही जीवन विज्ञान हैं। भाव परिष्कार के लिए जीवन विज्ञान संजीवनी की तरह हैं। संजीवनी एक जड़ी बूटी है जो मूर्छित मानव मेंप्राण की चेतना का संचार करती हैं। वैसे ही जीवन विज्ञान की शिक्षा मनुष्य के नाड़ी ग्रंथितंत्र का प्रशिक्षित कर भाव परिष्कार की भूमिका अदा करती हैं, क्योंकि हमारे अच्छे या बुरे जो भी विचार उठते है, ये नाड़ी ग्रंथितंत्र की सहक्रिया से उत्पन्न होतो हैं। जीवन विज्ञान के कुछ महत्वपूर्ण प्रयोग बच्चों के मस्तिष्क व ग्रंथितंत्र को प्रकाशित करने में समर्थ हैं, जिससे भावों का परिष्कार हो सकता हैं। आचार्य श्री महाप्रज्ञ का ऐसा मानना हैं कि यदि बच्चों को नियमित 5-10 मिनट दीर्घश्वास का प्रयोग करवाया जाए तो वह कभी भी उच्छृंखल, उद्दंड नहीं बन सकता, क्रोधादि कषाय उनके व्यक्तित्व को कलुषित नहीं कर सकतें।

आसान : शशांकासन
योगमुद्रा
प्रणायाम : समवृति
मुद्रा : सर्वेन्द्रिय संयम
प्रेक्षा : दीर्घश्वास प्रेक्षा

संतुलित विकास की प्रक्रिया वर्तमान शिक्षा प्रणाली में हम अनुभव कर रहे है कि बच्चों का समग्र विकास नही हो रहा हैं। कुछ बच्चें शीरीरिक रुप से स्वस्थ है, कुछ मानसिक व कुछ भावनात्मक दृष्टि से स्वस्थ हैं। सभी बच्चे भारत मे शुभ भविष्य हैं। किन्तु यदि वे सभी दृष्टियों से स्वथ नहीं रहेंगे, उनका शरीर स्वस्थ, मन प्रसन्न व भावधारा पवित्र नहीं रहगी, तो वे भविष्य में देश के कर्णधार नही बन सकेंगे। सम्रग विकास के लिए संतुलित स्वास्थ्य का होना जरुरी हैं। कोई कितना ही महारथी क्यों न हो, संतुलन के अभाव में धराशाही हो सकता है। नट लोग एक डोर पर साइकिल के पहिए और डंडे के बल पर संतुलन का करतब दिखाते है। करतब दिखाने का चक्कर में जीवन के बहुमूल्य क्षण खो देते है। वास्तव मे संतुलन हमारे दैनिक व्यवहार का अंग बने तभी समुद्र के तुफान को झेलते हुए जीवन की नाव सुनारे लग सकती है। संतुलन का अभ्यास नहीं तो फिर तुफान की स्थिति में पतवार कार्यकारी नही हो सकती। संतुलित नाविक ही सही दिशा सूचक की तरह कार्यवाही हा सकता है। जीवन विज्ञान प्रणाली मे शारीरिक स्वास्थ्य के लिए आसान, मानसिक स्वास्थ्य के लिए प्राणायाम व भावनात्मक स्वास्थ्य के लिए विभिन्न प्रयोग करवाऐं जाते है। इस त्रिकोणात्मक दृष्टि का अभ्यास कर विद्यार्थी समग्र व संतुलित स्वास्थ्य का वरण कर सकता हैं, जिनका विवरण पाठ्य पुस्तकों मे दिया दया है।

सकारात्मक सोच की प्रकिया अमेरिका के भूतपूर्व राष्ट्रपति श्री आइजन हावर का कथन है "मेरी सफलता के पीछे मेरी सोच है।" उनके अनुसार नकारात्मक विचार उन्हें परेशान करते है जो अपने दिल और दिमाग में उन्हे हावी होने का अवसर देते है। नकारात्मक विचार मन रुपी धरती पर उगा विष का पौधा है जो फुट पाइजन से भी अधिक खतरनाक है, क्योंकि जहरीली मिठाई (फूट पाइजन)

[illegible] किन्तु नकारात्मक सोच से वह एक बार मरता हैं, किंतु नकारात्मक सोच से वह एक दिन में कई बार मर जाता हैं।

प्राचीन [illegible] से इसी बात की संपुष्टि होती हैं। नारदजी आकाश मार्ग से गमन कर रहे थे। एक बुढ़िया जो कुबड़ी थी, जंगल में लकड़ियाँ चुन रही थी और नारदजी को याद कर रही थी। उसकी प्रार्थना सुन नारदजी धरतीपर आए और कहा-बुढ़ियां ! तुम्हें कूबड़ के कारण बहुत तकलीफ हैं। मैं योगबल में तुम्हारी कूबड़ ठीक कर देता हूं।

बुढ़िया ने नारदजी से करबद्ध प्रार्थना की कृपानिधान ! यदि आप मेरा दुख पर कितना चाहते हो तो मुझे ज्यों की त्यों रहने दो, किंतु मेरे पड़ोसीयों की पीठ की कूब निकाल दो। आश्चर्य से नारदजी ने पूछा इससे तुझे क्या लाभ होगा ? बुढ़िया ने कहा वे मुझे कुबड़ी बुढ़िया कह चिढ़ाते हैं, उनके कूब निकल जाएगी तो फिर चढ़ाऐंगे नहीं। इससे मुझे सुकून मिल जाएगा। बहुत सुख मिलेगा। नकारात्मक सोचवाले लोगों की आज दुनिया में कमी नहीं हैं। लोग भगवान से अपने भले की प्रार्थना नहीं करते। दूसरों के बूरे के लिए तंत्र, मंत्र, यंत्र, जप आदि अनुष्ठान करवाते हैं। अपने नकारात्मक विचारों का पोषण करने के लिए दूसरों को गिराने में पुरुषार्थ करते हैं, स्व को उठाने में नहीं। ऐसे नकारात्मक सोच वाले व्यक्तियों को वरदान देकर भी भगवान सुखी नहीं कर सकता किंतु यह मानना हैं कि जीवन विज्ञान का प्रशिक्षण प्रारंभ से ही व्यक्ति के सोच का परिष्कार कर उनके लिए वरदायी हो सकता हैं, जीवन विज्ञान का प्रशिक्षण व्यक्ति को यह सिखाता हैं कि छोटी लाइन मिटाओ मत, उसके सामने बड़ी लाइन खींचो। विकास होता चला जाएगा। इस सृजनात्मक दृष्टकोण से मस्तिष्क में उठने वाले नकारात्मक भावों के तूफान को रोका जा सकता हैं। क्योंकि किसी विचारक ने ठीक ही कहा हैं-बुरे विचार आवरकोट पर लगी धूल की तरह हैं, उसे झाड़ा जा सकता हैं। जीवन विज्ञान की शिक्षा प्लास्टिक सर्जरी तरह हैं। जैसे शरीर की विद्रपता को प्लास्टिक सर्जरी द्वारा ठीक किया जाता हैं, वैसे ही जीवन विज्ञान द्वारा मस्तिष्क को प्रशिक्षित सोच की नकारात्मक प्रवृतियों का रुपांतरण किया जा सकता हैं।

हर मानव अनंत शक्ति का स्रोत है कितु वह स्रोत बंद पड़ा हैं, उस पर ताला लगा हुआ है। जब कर चरित्र रुपी चाबी से ऊसे खोला नहीं जाएगा, वह बंद ही रहेगा। वह चाबी है सम्यक् आचरण और सम्यक् आचरण की प्राप्ति का साधन हैं, सम्यक् शिक्षा। यह शिक्षा जिससे हमारे बाह्य व आंतरिक व्यक्तित्व का समुचित विकास हो सके। कथनी करनी की दुरी मिट सके और जीवन में कुछ नये प्रयोग, अभिनव अभ्यास जुड़ सकें। उस प्रक्रिया तक पहुँचने का समबक् मंत्र है जीवन विज्ञान का शिक्षण-प्रशिक्षण।❖

शोक- अशोक

आचार्य मानतुंग ने शरीर सौष्ठव का वर्णन कर जिस तथ्य का प्रतिपादन किया है, वह बहुत महत्वपूर्ण है। जिसे अशोक मिल जाता है, पवित्र आभामंडल और भामंडल मिल जाता है, उससे बढ़कर कोई सौंदर्य नही है, कोई आनंद नहीं है। जहां शौक हैं, वहां समस्या है। जहां अशोक है, वहां कोई समस्या नहीं है। यह अशोक की उपलब्धि पवित्र भामंडल और आभामंडल की सन्निधि में सहज संभव है।

— आचार्य महाप्रज्ञ भक्तामर: अंतस्तल का स्पर्श पृष्ठ 120
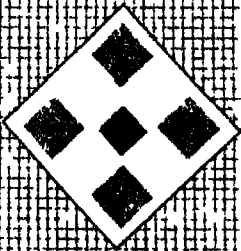
विरल व्यक्तित्व के धनी आचार्य

रश्मिदेवी देवी सोनी (शोध-छात्रा)

वर्तमान युग के महान दार्शनिक संतों में जिनका नाम अत्यंत आदर एवं गौरव के साथ लिया जाता है वे है-आचार्य महाप्रज्ञ। महाप्रज्ञ बीसवीं सदी के ऐसे पावन अस्तित्व हैं जिन्होंने युग के कैनवास पर नए सपने उतारे है। महाप्रज्ञ व्यक्ति नही संपूर्ण संस्कृति है। दर्शन है, इतिहास है, विज्ञान है। आपका व्यक्तित्व अनगिन विलक्षणताओं का दस्तावेज है। तपस्विता, यशस्विता और मनस्विता आपके व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व में घुले-मिले तत्व हे, जिन्हें कभी अलग नही देखा जा सकता। आपकी विचार दृष्टि से सृष्टि का कोई कोना, कोई भी क्षेत्र अछूता नही है। विस्तृत ललाट, करुणामय नेत्र तथा ओजस्वी वाणी ये है आपकी प्रथम दर्शन मे होने वाली बाह्य पहचान। आपका पवित्र जीवन, पारदर्शी व्यक्तित्व और उमदा चरित्र हर किसी को अभिभूत कर देता है, अपनत्व के घेरे में बांध लेता है। आपकी आंतरिक पहचान हे-अंतःकरण मे उमडता हुआ करुणा का सागर, सौम्यता और पवित्रता से भरा आपका कोमल हृदय। इन चुंबकीय विशेषताओं के कारण आचार्य श्री के संपर्क में आनेवाला प्रत्येक व्यक्ति उनकी अलोकिकता से अभिभृत हो जाता है ओर वह बोल उठता है-कितना अभ्दुत! कितना विलक्षण! कितना विरल व्यक्तित्व।

आपकी मेधा के हिमालय से प्रज्ञा के तथा हृदय के विन्ध्याचल से अनहद प्रेम और नम्रता के असंख्य झरने निरंतर बहते रहते हे। इसका मूल उद्‌गम केन्द्र है-लक्ष्य के प्रति तथा अपने परम गुरु श्री तुलसी के प्रति समर्पण भाव।

राजस्थान के जयपुर संभाग का एक छोटा-सा कस्बा टमकोर, उसमे जन्मा और गांव के वातावरण में पला-पुसा एक संस्कारी और संस्कृति से सर्वथा अनजान उस अनपढ़, भोले-भाले और सीधे-सादे दस वर्षीय किशोर को तलाश थी, एक ऐसे गुरु की जो उसकी आंखों में झांक सके, जिसकी करुणा शिष्य के भीतर उतर सके, जो अंगुली थामकर उसके लड़खड़ाते पैरों को प्रज्ञा के शिखर तक पहुंचा सके। जहां चाह, वहां राह। जहां जिज्ञासा वहां समाधान। खोजी बालक को संतप्रवर आचार्य तुलसी जैसे विद्यागुरु मिले। गुरु की प्रज्ञा की अप्रकंप दीपशिखा से लाखों दीप प्रज्ज्वलित हो रहे है।

महान गुरु की उपलब्धि शिष्य के प्रबल पुण्योदय से ही संभव है, वैसे ही योग्य शिष्य का मिलना भी गुरु के प्रकृष्ट पुण्योदय का द्योतक है। जैसे सुकरात को अफलातून मिले, रामकृष्ण परमहंस को विवेकानंद मिले वैसे ही गुरुदेव श्री तुलसी को महाप्रज्ञ जैसे उत्कृष्ट दार्शनिक और सर्वात्मना शिष्य मिले। विश्व क्षितिज पर आचार्य तुलसी और आचार्य महाप्रज्ञ जेसी आध्यात्मिक विभूतियां गुरु-शिष्य के रुप में शताब्दियों के बाद ही प्रकट होती है।

आचार्य श्री महाप्रज्ञजी मनीषा के शिखर पुरुष है, महान चिंतक और दार्शनिक संत है। श्रुतधर हैं, बहुश्रुत हैं, ज्ञान के अपार भंडार हैं। शोध विद्वानों के लिए विश्वकोष है। उनकी आवाज ह्रदय और आत्मा से उठती है। इसीलिए उनका साहित्य सरहदों के पार दूर तक पहुंचा है। आपने अपने साहित्य तथा अद्भुत प्रवचन शैली के माध्यम से जनता से सीधा संवाद स्थापित किया है। आपकी दृष्टि वैज्ञानिक है। दार्शनिक तथ्यों की विवेचना भी आप अपने नए निष्कर्षों से निर्मित स्थापनाओं के उजालों में ही करते है। आप एक आध्यात्मिक-वैज्ञानिक संत है। आपकी विरल विशेषताओं का रेखांकन निम्न बिंदुओं से स्पष्ट हो जाता है।

जीवन में जब अहम् का विसर्जन और निम्रता की प्रतिष्ठा होती है तो वहां सहज ही फलित होती है समर्पण भाव की स्थिति। पूज्य गुरुदेव श्री तुलसी ने 'महाप्रज्ञ अलंकरण अभिवंदना समारोह' में मुनि नथमल की ओर इंगित करते हुए कहा था- "मैंने मुनि नथमल को जब कभी किसी समय, परिस्थिति में, किसी काम को, फिर चाहे वह छोटा हो या बड़ा, साधारण हो या असाधारण, सौंप दिया तो इन्होंने बिना किसी ऊहापोह के, समर्पण भाव से संपादित किया। मेरे मानस पर इनकी प्रज्ञा, समर्पण और विनय की त्रिपदी का प्रतिबिम्ब है"। महाप्रज्ञ के समर्पण भाव ने उन्हें तलहटी से शिखर तक पहुंचा दिया। आइंसटीन से पूछा गया- आपने सापेक्षवाद का प्रणयन कैसे किया ? तो वह बोले- यह हो गया। कैसे हुआ, मैं नहीं कह सकता। महाप्रज्ञ की विकसित अंतर्दृष्टि को देखकर यह प्रश्न उठता है कि क्या आइंसटीन का महाप्रज्ञ के रुप में पुनअंवतरण हुआ है या आइंसटीन की अंतर्दृष्टि के दिव्य आलोक में सफलता की मंजिल तक पहुंची है, नत्थु से महाप्रज्ञ तक की यात्रा।

साधुत्व की सीपीयों में दर्शन के बहुमूल्य मोतियों का निपजना वास्तव में एक विरल विशेषता है। जैन चिंतन के क्षेत्र में आचार्य महाप्रज्ञ के योगदान का मूल्यांकन करते हुए आचार्य विद्यानंद जी उन्हें 'जैन न्यास का राधाकृष्णन' कहा है। महाप्रज्ञ ने अपने जीवन का एक सूत्र निर्धारित किया-नि:शेषम। निश्चित समय पर कार्य के लिए प्रस्तुत होना और निश्चित समय पर कार्य से इन भावना के साथ विरत होना कि आज का कार्य पूरा हो गया, अवशेष कुछ नहीं बचा। उस कार्य की स्मृति पुन: दूसरे दिन उसी समय पर ही करना उससे पूर्व उस कार्य के संदर्भ में न सोचना, न चिंतन करना और न अनावश्यक कल्पना में उलझना। यही सूत्र महाप्रज्ञ के जीवन में निश्चिंतता का आधार है और निश्चिंतता ने ही आपको विरल व्यक्तित्व की श्रेणी में ला खड़ा किया है।

सफलता उसके द्वार पर दस्तक देती है, 'जिसका संकल्प वज्र'-सा होता है। संकल्प शक्ति से उत्पन्न मनुष्य के सामने बाधाएं टिक नहीं पाती। मंत्री मुनि का एक वाक्य- 'नाथूजी के अक्षर तो छत पर सुखाने जैसे है।' महाप्रज्ञ के अंतर्मन को झकझोर गया। उनकी अंतर्चेतना में एक संकल्प जागा- 'मैं पीछे नहीं रहूंगा, सबसे आगे जाऊंगा।' वास्तव में महाप्रज्ञ का जीवन संकल्प शक्ति के चमत्कार का जीवंत निदर्शन है।

प्रज्ञा और साधना के इस ज्योतिपुंज में शालीनता और सृजन-क्षमता अपूर्व है। शब्दों और भाषा के इस अमर शिल्पी में योग-साधना का अपूर्व संगम है। वे केवल आशुकवि ही नहीं बल्कि आशु-चिंतक भी है। यह केवल बौद्धिक स्तर से संभव नहीं है, वस्तुत: इसमें उनकी गहन साधना एवं निरभिमानता है। सारी दुनिया को नवरुपांतरित करने में उनकी साधना ही सफलीभूत हो सकती है। देश के वर्तमान संक्रमण काम में तप: पूत महाप्रज्ञ का महानायकत्व एक ऐसा दैवीय आश्वासन है, जिनकी ऊर्जा से, जिसकी अन्तर्प्रज्ञा से इस देश की नियति निश्चित ही उर्ध्वगामी हो सकेगी।

आचार्य महाप्रज्ञ यद्यपि तेरापंथ के आचार्य हैं, लेकिन उनका संपूर्ण चिंतन एवं कार्यक्रम विश्वव्यापी है। उनका व्यक्तित्व धर्मसंघ से बड़ा है। वे आचार्य से पहले एक मानव है। उन्हीं के शब्दों में- 'जो निखरकर कर बिखर जाए वह व्यक्तित्व और बिखर कर निखर जाए वह कृतित्व है'। असल में आचार्य महाप्रज्ञ का व्यक्तित्व एवं कृतित्व अन्तर्प्रज्ञा से गुंफित है। इसलिए देश, काल, समाज और संप्रदाय आदि की सीमाओं से वे ऊपर है।

आज जबकि समूची दुनिया में आतंकवाद एवं युद्ध का वातावरण बना हुआ है। शक्ति-संतुलन और शांति स्थापना के नाम पर धरती के विनाश की सामग्री जुटाई जा रही है। इन परिप्रेक्ष्यों में आचार्य महाप्रज्ञ का मौलिक चिंतन है- 'अहिंसा और शांति भय से नही, प्रेम से प्रतिष्ठित होती है। दंड या कानून से नहीं, हृदय परिवर्तन से होती है। कायरता से नहीं, सामर्थ्य से उत्पन्न होती है। अहिंसा के सामने बड़ी-बड़ी शक्तियों को झुकना पड़ता है। गोडसे या मानव बम भी संवेदनशीलता को समाप्त नहीं कर सकते। यह स्थिति तभी निर्मित हो सकती है, जब अहिंसा के सामने व्यवस्थित प्रशिक्षण और प्रयोग की दिशा मे ध्यान दिया जाए। हिंसा की वृत्ति जहां पनपती है उस 'एनीमल माइंड' का ब्रेन वॉशिंग किया जाए'।

वर्षों की खोज और आध्यात्मिकता प्रयोगो द्वारा योग मार्ग के सर्वोच्च शिखर पर सुप्रतिष्ठित होने वाले आचार्य श्री महाप्रज्ञ ने ध्यान-योग की अति आधुनिक विधि प्रेक्षाध्यान का आविष्कार कर चित्त शुद्धि, तनाव मुक्ति तथा मानसिक शांति का अनुपम उपक्रम प्रस्तुत किया है। महाप्रज्ञ द्वारा प्रज्ज्वलित प्रेक्षा के दीप युगीन समस्याओं के तमस को समाप्त किया जा सकता है। आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी ने अहिसा के प्रशिक्षण की नयी विधि विकसित की है। जीवन-विज्ञान के प्रशिक्षण द्वारा विद्यार्थियों को प्रारंभ से ही अहिंसा और शांति के संस्कार दिये जाते हैं, जिससे व्यक्ति बचपन से ही आवेगों और आवेशो पर नियंत्रण स्थापित करने की क्षमता अर्जित कर सके और अनुशासित जीवन जी सके। यह 20वीं सदी के लिए महाप्रज्ञ का अलौकिक उपहार है।

आज गुरु और शिष्य की जोड़ी का स्वरुप बदल चुका है। गुरुदेव तुलसी अब हमारे बीच नहीं है। श्रद्धेय आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी एवं युवाचार्यश्री महाश्रमणजी की वर्तमान जोड़ी धर्मसंघ को ऊंचाइयां देते रहने के लिए कृतसंकल्पित है। आपके साथ सचेतन अतीत है, प्रभावी वर्तमान है और समुज्ज्वल भविष्य की संभावनाएं है। आप अपने अनुभूत सत्यो को बस बांटते चले और तब तक ऐसा करने की कृपा करे जब तक विश्व पटल पर छाया अज्ञान का कुहांसा छंट न जाए।

संपर्क सूत्र-श्रीमती रश्मि सोनी, शोधछात्रा-जै. वि. भा. (मान्य विश्वविद्यालय, लाडनूं, मार्फत गिरधारी जी दीपक सोनी।, फोन: 01567-261020, मोबाइल-9828411628◆

दमन

मैं मानता हूं कि किसी भी वृत्ति का दमन नही होना चाहिए। रिप्रेशन खतरनाक होता है। मनोविज्ञान ने इस पर बहुत प्रहार किया है। यह उचित भी है। दमन नहीं करना चाहिए, दबाना नहीं चाहिए, इसका तात्पर्य यह कभी नहीं होता कि उसे सर्वथा मुक्त कर देना चाहिए। हमें तीसरा मार्ग खोजना चाहिए। न दमण का मार्ग अच्छा है और न मुक्तत्ता का मार्ग अच्छा है। अच्छा मार्ग रुपांतरण का, उदात्तीकरण का, शोधन का।

— आचार्य महाप्रज्ञ आभा मंडल पृष्ठ 177

अहिंसक क्रांति के उदघोषक

आचार्य महाप्रज्ञ

के श्री चरणों में श्रद्धासिक्त प्रणाम

PHONE FACT: 407 76 38
407 57 88
RESI: 649 60 75
604 74 63
Mob.: (1) 98202 96223
(2) 94261 56348

Gaharilal R. Jain

DEALERS IN
ALL TYPES OF PLASTIC SCRAPS COLOUR REPROCESSORS

SUNRISE PLASTICS
GODOWN NO. 5,
EAST INDIA TANNERY COMPOUND,
SETH WADI, DHARAVI ROAD,
MAHIM (EAST) MUMBAI-400 017.

SUN SHINE PLASTIC PARGATI INDUSTRIAL ESTATE
SILVASA (Daman-Diw)

विद्वत्जनों की दृष्टि में

साध्वी-चन्द्रलेखा लाडनूं

महापुरुषों के विषय में अपनी लेखनी को गतिशील करना समझदारी नहीं बल्कि बचकानापन ही है। आचार्य मानतुंग ने आदिनाथ की स्तुति में कहा अल्पश्रुतं श्रुतवतां परिहार धाम

त्वद् भक्तिरेव मुखरीकुरु तं बलान्माम्..

मेरा चंचल मन भी मचल उठा अपने गुरु की स्तुति करने के लिए। इसलिए मैं गुरु के असीम व्यक्तित्व को असीम शब्दों का परिधान पहना रही हूं। भारत रत्न गर्भा वसुंधरा है। यह भारत ऋषियों और मुनियों का देश है। पीरों और फकीरों का देश है। इस देश की पवित्र माटी में अध्यात्म की भीनी-भीनी महक आ रही है। अध्यात्म के परमाणु चारों तरफ बिखरे पड़े हैं। अध्यात्म प्रधान देश में, अध्यात्मिक वातावरण में खुली छत के नीचे एक पुण्यवान बालक ने टमकोर गांव में मणिधारी मां की रत्नकुक्षी से अवतार लिया। 14 जून 1920 का पावन दिन, गोधूलि वेला। पिता तोलामल जी चौरड़िया का मन पुलक उठा। अंग-अंग से खुशियां थिरकने लगी। परिवार में प्रसन्नता की उत्ताल तरंगे उछलने लगी। शुभ मुहूर्त में बालक का नाम नत्थु रखा।

बालक की जीवन यात्रा प्रारंभ हुई। बालक नत्थु ढाई मास का था तभी अचानक पिता श्री तोरामल जी का स्वर्गवास हो गया। माता के संरक्षण में बालक नथमल का लालन-पालन होने लगा। बालक ने शैशव अवस्था को लांघकर किशोरावस्था में प्रवेश किया। तभी तपस्वी संतों की मंगल सान्निधि प्राप्त हुई। संत समागम से नथमल का मन मयूर संयम के दुरुह मार्ग पर चलने के लिए संकल्पित हो गया। अंतर मन का फौलादी संकल्प दृढ़ हो गया। ममतामयी माँ के साथ अष्टमाचार्य, करुणासिन्धु पूज्य कालूगणी के कर कमलों से संयम जीवन स्वीकार कर लिया। महाव्रती बनने के बाद अत्यंत आत्मतोष का अनुभव करने लगे। कालूगणी की छत्र-छाया में मुनि तुलसी के आत्मीय भाव से मुनि नथमल का व्यक्तित्व निखरने लगा।

कालूगणी के स्वर्गारोहण के के आचार्य तुलसी के प्रित सहज सममर्पण ने आपके विकास में चार चांद लगा दिये। आपने परिश्रम की अखंड ज्योत जलाई। जिससे आपका मार्ग प्रशस्त बन गया। आप निर्विघ्न उन्नति के उच्च शिखरों पर चढ़ते गये।

आप मुनि नथमल से निकाय सचिव, महाप्रज्ञ, युवाचार्य महाप्रज्ञ और आचार्य महाप्रज्ञ बन गये। विनम्रता व सहज समर्पण द्वारा तलहटी से शिखर तक चढ़ गये।

वर्तमान में आचार्य प्रवर के व्यक्तित्व, कर्तृत्व, पुरुषार्थ और शौर्य को देखते हैं, तब मन में कवि की ये पंक्तियां मुखर हो जाती है-

"सौ सज्जन अरु मित्र लख, मित्र सुमित्र अनेक।
ज्यां देख्यां ही दुःख मिटे, सो लाखन में एक।।"
"लाखन को लेखो नही, करोड़ा माहि जोय।
अरब खरब के बीच में, मिले एक या दोय।।"
आपके बहुआयामी व्यक्तित्व

को अभिव्यक्ति देने में वैसे ही असमर्थ है जैसे-नमक कापुतला। एक बार सागर के तट पर मेला लगा। हजारो-हजारों लोग मेले मे उपस्थित थे। उनमें कुछ बैरिस्टर, प्रोफेसर, अफसर, दार्शनिक तथा चिन्तनशील व्यक्ति भी थे। कुछ चिंतकों ने सागर की गहराई मापने की सोची, मगर सागर की गहराई मापे कैसे? कोई बुखार तो था नहीं जो थर्मामीटर से माप लें। मापने का चिंतन चल ही रहा था। इतने मे एक नमक का पुतला जो पास में ही खड़ा था, बोला-मै माप कर आता हूं, सागर की गहराई को और जोश के साथ कूद पड़ा सागर की गहराई को मापने। आज तक लोग प्रतीक्षा करते ही रह गये। हम भी आचार्यश्री महाप्रज्ञजी की गहराई को लाख कोशिश करने पर भी नहीं माप पायेंगे।

आपका साहित्य सृजन अद्वितीय है। मस्तिष्क सुपर कम्प्यूटर है। आपके ज्ञान का वैभव आज विश्व के विद्वानो, विचारको और वैज्ञानिकों के लिए महान् आकर्षण का विषय है। धर्म और दर्शन के क्षेत्र मे आप शिखर पुरुष है। आपकी लेखनी पारसमणि के समान है। उसका स्पर्श पाकर हर शब्द सोना बन जाता है। आपके साहित्य का अध्ययन करने वाले व्यक्तियों के जीवन में ऐसा रुपान्तरण घटित होता है जो कि व्यक्ति की सोच से परे है। आपके साहित्य म ऐसी अनमोल रत्नराशि बिखरी पडी है, जिसको सहेज कर रखने वाला मानव बहुत सारी अनमोल उपलब्धियों को प्राप्त कर लेता है। आचार्य महाप्रज्ञ द्वारा लिखित पुस्तक-माइंड बियॉन्ड माइंड को पढ़कर स्वीडन का ख्यातनामा वैज्ञानिक जार्ज विकमेन बोला-यह पुस्तक किसी संत की लिखी हुई नही है। यह तो वैज्ञानिक तथ्यो से आपूरित है। इसका लेखक तो कोई वैज्ञानिक होनना चाहिए।

महाप्रज्ञ साहित्य की मूल्यवता और प्राणवत्ता का इस सच्चाई के आलोक में अध्ययन करने वाला, आध्यात्मिक व वैज्ञानिक व्यक्ति अपनी समस्याओं का समाधान प्राप्त कर लेता ह। इसके मूल में अध्यात्मक से अनुप्राणित वैज्ञानिक दृष्टिकोण है।

दिल्ली का प्रसंग है। एक बार प्रख्यात नानाटककार डा. लक्ष्मीनारायण लाल आचार्य महाप्रज्ञ से मिलने .अणुव्रत भवन. दिल्ली में आये। ज्योंहि कमरे में प्रवेश किया..उनका चश्मा जमीन पर गिर गया। डा. लाल ने तत्काल कहा..आचार्य जी। आप और मेरे मिलन म चश्मा बाधक था। कमरे में पैर रखते ही बाधा मिट गयी। इससे पहले एक बाधा अटल बिहारी वाजपेयी जी ने दूर कर दी। आचार्य श्री ने कहा उन्होंने कैसे दूर कर दी? डा. लाल बोले..मैं कुछ दिनों पहले अटल जी से मिलने उनके आवास पर गया था। उस वक्त साहित्यकारों की चर्चा चल पड़ी। अटल जी ने कहा-डा. नारायणलाल जी! आपने युवाचार्य महाप्रज्ञ को पढ़ा है? मैं कहा .नहीं। उन्होंने

कहा-वर्तमान युग के शीर्षस्थ साहित्यकारों में है। उन्हें अवश्य पढ़ो। यह कहते हुए वाजपेयी जी तुरंत उठकर अपने कक्ष में गये तथा 2-3 पुस्तकें लाकर मुझे दी। उनमें एक थी-..मन के जीते जीत.. पुस्तक को पढ़ना शुरु किया तो मैं पढ़ता ही चला गया। सच बात तो यह है कि उसके बाद आपसे मिलने की भावना प्रबल हो उठी। मैं अटल जी का आभारी हूं।

ऐसे एक नहीं अनेकों उदाहरण है। पंचवर्षीय अहिंसा यात्रा के दौरान भारत के राष्ट्रपति ए. पी. जे. कलाम के अनुरोध पर दिल्ली पावस करने पधारे। इतिहास का अभूतपूर्व दिन 2 अगस्त 2005 विज्ञान भवन में महार्महिम राष्ट्रपति श्री कलाम ने राष्ट्रीय सांप्रदायिक सद्भाव पुरस्कार आचार्य महाप्रज्ञ जी को समर्पित करते हुए कहा..यह पुरस्कार स्वयं गौरवान्वित हुआ है।

महामहिम उपराष्ट्रपति भैरोसिंहशेखावत के शब्दों में-आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी देश के एख प्रमुख आध्यात्मिक नेता है। एक् जीती जागती मशाल है। जाने माने शिखर पुरुष है विज्ञान एवं अध्यात्मवाद के समन्वय के। आपने आध्यात्मिक नेतृत्व की लंबी अवधि में अहिंसा दर्शन को जीवित ही नही, अपितु प्रायोगिक बना दिया है। जो हिंसावादी युग के लिए सशक्त समाधान है।

आचार्याा श्री महाप्रज्ञ सांप्रदायिक सौहार्द और सद्भावना के निष्ठावान व्याख्याता है। विपुल साहित्य एवं समन्वय मूलक सम्मेलनों द्वारा इस प्रवृत्ति में अध्याधिक महत्वपूर्ण अवदान दियाहै, दे रहे हैं।

इस अवसर पर ममहामहिमि राष्ट्रपति, उप राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, गृहमंत्री, विपक्षी नेता आडवाणी जी आदि राष्ट्र की महान विभूतियां एक साथ उपस्थित थे।

6 अगस्त 2005 को इंटरफेथ हर्मनि फाउंडेशन ऑफ इंडिया द्वारा आयोजित सर्वधर्म सद्भाव सम्मेलन में आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी को मदर टेरेसा शांति पुरस्कार प्रदान किया गया। विभिन्न धर्मगुरु ओं की उपस्थिति में मुनि-लोकप्रकाश जी ने यह पुरस्कार ग्रहण किया। मुनि श्री ने आचार्यवर के संदेश का वाचन किया।

आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी को ये पुरस्कार मिले। उनके लिए कोई खास बात नही है। परंतु हमारे लिए गौरव की बात है। ◆

आत्मयुद्ध- चेतना विकास का उपक्रम

महावीर का आत्मयुद्ध का यह संदेश मानवीय चिंतन या मानवीय चेतना के विकास का सबसे बड़ा उपक्रम है। निठल्ला बैठना, कायर होकर बैठना महावीर जैसे पराक्रमी व्यक्ति को पसंद नही था। पराक्रमी व्यक्ति कभी निकम्मा बैठना पसंद नहीं करता, खाली होकर बैठनापसंद नहीं करता। वह हमेशा कुछ न कुछ करता रहता है। यह आत्मयुद्ध पराक्रमी व्यक्ति ही कर सकता हैं। इसमें जो व्यक्ति आता है, वह स्वयं सुखी बनता है और दूसरों को भी सुख बांटता है। आत्मना युद्धस्व यह अध्यात्म का एक महत्वपूर्ण सूत्र है। इसकी गहराई मे जाना, इसको जीना अपने आपको विजयी बनाना है। इस विजय में इंद्रिय विजय और मनोविजय - दोनों सहज उपलब्ध हो जाती है।

— आचार्य महाप्रज्ञ मुक्त भोग की समस्या और ब्रह्मचर्य, पृष्ठ 69

राष्ट्रीय सद्‌भावना के प्रतिष्ठापक

✍ डॉ. आनन्द प्रकाश त्रिपाठी 'रत्नेश'

आचार्यश्री महाप्रज्ञ एक राष्ट्रीय संत एवं जैन श्वेताम्बर तेरापंथ धर्मसंघ के एक तेजस्वी आचार्य हैं। नौवें आचार्य तुलसी की विरासत को वे बखूबी सम्हाले हुए हैं। एक आचार्य और एक विचार इस धर्मसंघ की पहचान है अर्थात् समूचा धर्मसंघ एक आचार्य के अनुशासन में गतिमान है। उनकी संज्ञा एक है, नाम एक है किन्तु उनके कर्तृत्व के विविध आयाम हैं। महाकवि, महान कथाकार, अद्वितीय साहित्यकार, परमदार्शनिक विभूति, महाव्याकर प्राचार्य, महामनीषी संत, द्वितीय विवेकानन्द, जैन न्याय के राधाकृष्ण आदि अनेक अलंकरणों से उन्हें विभूषित किया जाता है। ये अलंकरण उनकी विलक्षण प्रज्ञा और अद्वितीय कर्तृत्व क्षमता को उजागर करते हैं। 300 से अधिक ग्रंथों की रचना उनकी विलक्षण प्रतिभा की परिचायक है। उनकी कविताओं में निमाज्जित व्यक्ति उन्हें महाकवि के रुप में देखता है तथा उनकी कहानियों का रसास्वादन करने वाला उन्हें महानकथाकार के रुप में पाता है और उनके साहित्य की विविध विधाओं का आकलन करनेवाला उन्हें महान साहित्यकार के रुप में देखता है। उनके दार्शनिक सिद्धांतों का पारायण करनेवाला उन्हें परमदार्शनिक विभूति मानता है। उनके व्याकरण ग्रंथों का अध्ययन करने वाले उन्हें महान व्याकरणचार्य की संज्ञा से अभिहीत करते हैं। विद्वान संत तो वे हैं ही, उनकी सूक्ष्ममेधा एवं विलक्षण प्रतिभा को देखकर महाकवि दिनकर एवं कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर ने तो उन्हें द्वितीय विवेकानन्द का विशेषण दिया है। विद्वान संत विद्यानन्द ने उन्हें जैन न्याय का राधाकृष्ण माना है।

सचमुच महाप्रज्ञ नाम एक किन्तु अलंकरण अनेक जो उनके व्यक्तित्व की विशिष्टता को प्रकट करता है। बचपन में नत्थू से 10 वर्ष की अवस्था में मुनि नथमल बने। अपने गुरु आचार्य तुलसी की पारखी दृष्टि के कारण उन्हें 'महाप्रज्ञ' का संबोधन मिला और महाप्रज्ञ से युवाचार्य महाप्रज्ञ और युवाचार्य महाप्रज्ञ से आचार्य महाप्रज्ञ की उनकी यात्रा की उनकी विशिष्ट प्रतिभा को द्योतक है। इनको विलक्षण प्रतिभा से प्रभावित होकर आचार्य तुलसी ने अपने आचार्यत्व का विसर्जनकर इन्हें आचार्य बनाकर एक नये इतिहास की सर्जना की। इतिहास में गोविन्दपाद-शंकर, कुमारी भट्ट प्रभाकर, रामकृष्ण परमहंस विवेकानन्द की तरह तुलसी और महाप्रज्ञ की गुरु-शिष्य की जोड़ी देखी जाने लगी। गुरु के प्रति समर्पण महाप्रज्ञ का बेजोड़ है। वे अपना कुछ मानते ही नहीं। वे अपना सर्वस्य गुरु के चरणों में ही अर्पित करते हैं। उनके समर्पण को देखते हु राम के हनुमान की स्मृति मन-मस्तिष्क में बनती है। सचमुच बेजोड़ समर्पण जिसके कारण हर धर्म, हर जाति, संप्रदाय, लिंग के लोगों का उनके प्रति अद्‌भुत आकर्षण है।

एक संघ के आचार्य होते हुए भी वे संघ की खूंटी से बंधे नही है। विशाल धर्मसंघ के अपने दायित्व का निर्वहन करते हुए आचार्य श्री संपूर्ण मानवता के हैं। मानवता के कल्याण के लिए उनके द्वारा किये जा रहे कार्यो के कारण उन्हें 'मानवता का मसीहा' भी कहा जाता है। आचार्य श्री तुलसी ने मानव कल्याण के लिए जिस अणुव्रत आंदोलन का प्रवर्तन किया उसी अणुव्रत आंदोलन को अहिंसा समवाय, अहिंसा प्रशिक्षण एवं अहिंसा यात्रा के माध्यम से गतिशील किया. है। उनका मानना है कि हिंसा के बढ़ रहे ज्वार को रोकने के लिए अहिसक शक्तियों का एकजुट होना आवश्यक है। इसके लिए उन्होंने कठिन प्रयत्न किये है और कर रहे है। उनके प्रयास से ही अणुव्रत महासमिति नयी दिल्ली, राष्ट्रीय अणुव्रत शिक्षक संसद राजसमन्द, खादी ग्रामोद्योग बोर्ड वर्धा, हरिजन सेवक संघ अहमदाबाद, गांधी शांति प्रतिष्ठान एवं गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति नयी दिल्ली, शराब हटाओ समिति जयपुर एवं नशामुक्ति आंदोलन सीकर के कार्यकर्ता एक मंच पर आये और अहिंसा समवाय से जुड़े है। इसके विस्तार एवं संगठित प्रयास से आचार्यश्री की नये भारत की कल्पना चरितार्थ होगी। आपने महामहिम राष्ट्रपति ए. पी. जे. अब्दुल कलाम के साथ मिलकर सूरत घोषणा पत्र जारी किया। जिसमे सोलह धर्मप्रतिनिधियो के हस्ताक्षर है। सूरत घोषणा पत्र के माध्यम से आचार्य महाप्रज्ञ एवं महामहिम ने 2020 तक एक नये भारत की कल्पना की है। आचार्य श्री का मानना है कि यह दुष्कर कार्य फुटकर प्रयास से नही अपितु संगठित प्रयास से ही संभव है। संघटित प्रयास अहिसा समवाय के अन्तर्गत गतिमान है।

आचार्यश्री का मानना है कि परिवर्तन अहिसा से ही संभव है किन्तु यह परिवर्तन अहिसा की रट लगाने से नही अपितु जन-जन को अहिसा का प्रशिक्षण देने से संभव होगा। वे मानते है कि अहिसा के प्रशिक्षण का जितना विस्तार होगा उतना ही शांति। सद्भावना, अमन चैन कायम होगा। आचार्य श्री ने अहिसा प्रशिक्षण की एक वैज्ञानिक शैली एवं वैज्ञानिक कार्यक्रम दिया है। अहिसा का इतिहास, संगठन, हृदय परिवर्तन, जीवनशैली परिवर्तन एवं रोजगार प्रशिक्षण से संयुक्त अहिसा प्रशिक्षण का वैज्ञानिक कार्यक्रम है। प्रशिक्षणार्थियो का अहिसा के बारे मे विस्तृत जानकारी के साथ-साथ उनके हृदय को बदलने के प्रयोग तथा सम्यक् जीवन शैली के लिए आहार एवं स्वास्थ्य का ज्ञान तथा प्रयोग कराये जाते है।

महाप्रज्ञजी का मानना है कि भूखे पेट अहिसा का प्रशिक्षण बेमानी होगा। अतः अहिसा प्रशिक्षण के अन्तर्गत रोजगार प्रशिक्षण का भी एक व्यापक कार्यक्रम है। इसके अन्तर्गत प्रशिक्षणार्थियो को मोमबत्ती बनानां, अगरबत्ती बनाना, कपड़े के थैले बनाना, सिलाई, कढ़ाई, बुनाई सिखाना, कम्प्यूटर सिखाना आदि रोजगार के प्रशिक्षण दिये जाते है ताकि प्रशिक्षणार्थी अपनी जीविका का निर्वाह कर सके और अहिसक जीवन जी सके। पूरे देश मे लगभग 150 अहिसा प्रशिक्षण केन्द्र कार्य कर रहे हैं। इन केन्द्रो का जितना विस्तार होगा, अहिसा उतनी ही घनीभूत होगी और सामाजिक समरसता, धार्मिक, सहिष्णुता एव सांप्रदायिक वैमनस्यत्य उतनी ही बढ़ेगी।

इसी लक्ष्य को लेकर आचार्य श्री 2001 से 2006 तक अहिसा यात्रा पर है। राजस्थान, के सुजानगढ़ कस्बे से शुरु अहिसा यात्रा राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र, छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश होती हुई राजस्थान से होकर जून के अंतिम सप्ताह मे देश की राजधानी दिल्ली पहुंचेगी। इस अहिसा

यात्रा और आचार्य श्री की प्रेरणा से न जाने कितनों को छत, कितनों को वस्त्र, कितनों को रोजगार, कितनों को जीवन जीने का आधार और कितनों को नौकरी मिली है। यात्रा के दौरान गुजरात के शांति कायम हुई, भिवण्डी (महाराष्ट्र) मे भ्रातृत्व का संदेश गूंजा, छत्तीसगढ़ एवं मध्य प्रदेश के आदिवासियों को आगे बढ़ने की प्रेरणा मिली। इस अहिंसा यात्रा के दौरान लोगों की समस्याएं समाहित होने से स्थान-स्थान पर इसके स्वागत का दृश्य अकथ्य है। सचमुच इस यात्रा से आहत ह्रदयों को मरहम लगे है तो वैमनस्य और नफरत की ज्वाला मे जलने वालों को प्रेम, सौहार्द और सद्भावना के छीटे से राहत मिली है। इस प्रकार यह अहिंसा यात्रा संपूर्ण देशवासियों के लिए वरदान साबित हो रही है, ऐसा बुद्धिजीवियों का मानना है। इस संदर्भ में आचार्यश्री कहते हैं कि मैं अपना कर्म कर रहा हूं और विश्वास भी है कि कर्म कभी व्यर्थ नही जाता। इसी विश्वास के साथ मे आगे बढ़ रहा हूं। पांचवें वर्ष बीतने वाले हैं किन्तु अपने कर्म में तल्लीन मुझे आभास भी नही हुआ कि कब पांच वर्ष बीतने वाले हैं?

आचार्य श्री के चिंतन, विचार एवं कर्तृत्व की गूंज आज चतुर्दिक है। सामाजिक, समरसता एवं सांप्रदायिक सौमनस्यता के आचार्य श्री के कार्यो का मूल्यांकन करते हुए भारत सरकार ने राष्ट्रीय सद्भावना पुरस्कार से उन्हे नवाजे जाने की घोषणा की है। इसके पूर्व हकीम खां सूरि पुरस्कार, नैतिक पुरस्कार, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय एकता पुरस्कार उन्हे प्राप्त हो चुके हैं, जो उनके महान व्यक्तित्व के परिचायक है। आचार्य स्त्री का मानना है कि अहिसा से एक ऐसा आधार है जो हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई आदि सभी मजहब के लोगों को एक साथ जोड़ती है। आवश्यकता है महावीर, बुद्ध एवं महात्मा गांधी की इस अहिसा को व्यापक स्वरुप देने की, इसके विस्तार करने की,, यदि ऐसा होता है तो हमारे देश मे कभी कोई समस्या आकार नही ले पायेगी।

संपर्क सूत्र—उपनिदेशक, दूरस्थ शिक्षा निदेशालय जैन विश्वभारती संस्थान (मान्य विश्वविद्यालय) लाडनूं-341306, राज. ❖

सामायिक की पद्धति

शरीर मूलभूत वस्तु है। शरीर की चंचलता छूटती है तो सब कुछ ठीक हो जाता है, प्रकंपन भी कम हो जाते है। सामायिक समाधि का मूल कारण है शरीर की स्थिरता। सामायिक के बत्तीस दोष माने जाते हैं। शरीर का हिलाना डुलाना, सहारा लेना, चंचल करना आदि आदि सामायिक के दोष है। सामायिक में शरीर स्थिर होना चाहिए। शरीर जितना स्थिर है और शांत होगा, उतनी ही सामायिक समाधि प्राप्त होगी, सिद्ध होगी। शरीर चंचल रहेगा तो कुछ भी नहीं बनेगा। सामायिक मे शरीर स्थिर और मन खाली होना चाहिए। तीनों बातें साथ में होती है तब सामायिक समाधि निष्पन्न होती है।

- आचार्य महाप्रज्ञ अध्यात्म का प्रथम सोपान : सामायिक पृष्ठ 24
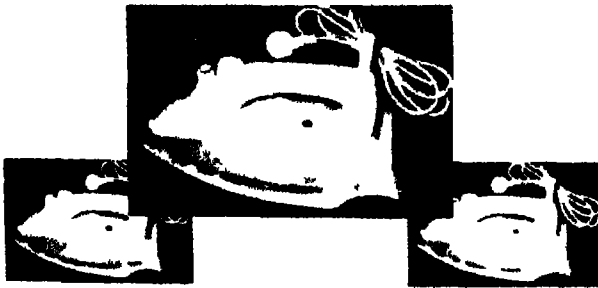
आचार्य महाप्रज्ञ : अछूते संदर्भ

प्रस्तुति-डॉ. प्रकाश सोनी 'रत्न'
(निदेशक-जीवन विज्ञान अकादमी-मुंबई)

जीवन एक अनजानी, अनपहचानी और अनदेखी यात्रा है। वह राजपथ की यात्रा नहीं है जिस पर सरपट गति से दोड़ा जा सके। वह कंटकाकीर्ण और पगडंडियो की यात्रा है। जीवन की इस लंबी यात्रा में मनुष्य को अनेकानेक खट्टी, मीठी, कड़वी और चरपरी अनुभूतियों से गुजरना होता है। कभी वह यात्रा उबड़खाबड़ पथ वाली होती है तो कभी सपाट पथ वाली। कभी मार्ग मे प्रतिकूलताएं अवरोधक बनती है तो कभी अनुकूलताएं अपना आकर्षण दिखाती हैं। कभी कांटो की चुभन, कभी सुकोमल फूलों का स्पर्शन। कभी अंधेरा तो कभी उजाला। इस प्रकार जीवन की इस यात्रा मे कितनी विविधताएं देखने को मिलती है। यह यात्रा द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव से सर्वथा निरपेक्ष नही होती। कोई चाहे, न चाहे फिर भी हर जीवनयात्री को यह यात्रा पूरी करनी होती हे। अनुकूलताएं-प्रतिकूलता किसी व्यक्ति विशेष की प्रतिक्षा नही करती ओर काल की पांखो पर यह यात्रा निरंतर अबाधगति से चलती रहती है।

जीवन की इस यात्रा मे किसी घटना का घटित होना अस्वाभाविक नही है। हर कोई उससे प्रताड़ित होता है। कोई कम होता है तो कोई अधिक। वास्तव मे वे घटनाएं व्यक्ति को कभी-कभी आमूलचूल बदल देती हैं। वे दूसरों के लिए प्रेरणादायक और दिशाबोधक भी बनती है। कौन व्यक्ति कहां खड़ा हे ? किसने कितनी ऊंचाइयो को छूआ है ? उनका लेखा-जोखा और मापन ये घटनाएं ही कराती है। जीवन यात्रा मे ये घटनाएं ही मील के पत्थर बनती हैं।

आचार्य महाप्रज्ञ की जीवन-यात्रा प्रज्ञा और समर्पण की धुरा पर चलने वाली यात्रा है। कही उनके जीवन मे मोड़ है तो कहीं रोमांचक घटनाएं। वह गुरु और शिष्य के मधुर संबंधों की बोलती तस्वीर है और एक अबूझ पहेली है-शिष्य मे गुरुत्व और गुरु में शिष्यत्व को दर्शाने वाली भावधारा। वह यात्रा अपने पैरो से चलने, अपने स्नेह से जलने और अपने पुरुषार्थ से ऊंचे उठने की कहानी है। नियति ने महाप्रज्ञ जैसे एक शिखर को जन्म दिया। उस शिखर का मापन किया जीवनगत परिस्थितियों और प्रताड़नाओं ने। उस शिखर को पाकर टमकोर जैसा छोटा और अपरिचित गांव भी शिखरों चढ़ गया और धन्यता की शिखा बन गयी स्वर्गीया मातु साध्वीश्री बालूजी और ज्येष्ठभगिनी साध्वीश्री मालूज़ी। यह भी कोई नियति की ही नियति थी कि अधिक समय तक उस शिखर को पिताश्री तोलारामजी चोरडिया का साया नहीं मिल

सका। ढाई मास की अल्प-अवस्था और उसमें वह आकस्मिक दुष्पपात। इस घटना के कुछ वर्षों पश्चात् एक और दर्दनाक घटना घटी। वह थी उनके बाबा-सा महालचन्दजी के युवा पुत्र का आकस्मिक वियोग। वह दुःखद घटना भी उनके मन पर गहरा आघात करने वाली थी। जीवन की इस नश्वरता-क्षणभंगुरता ने सत्य आलोक को प्रकट कर दिया। उस आलोक से उनका अध्यात्म-पथ आलोकित हो गया। एक दिन वह आया जब मां-पुत्र दोनों उस पथ के पथिक बन गए।

आचार्य महाप्रज्ञ ने प्रारंभ से ही सुखद और निश्चिंत जीवन जीया है। निश्चिन्तता के अर्थ में उन्होंने शरीर-मन दोनों का पूर्णरूपेण कायोत्सर्ग साधा है। उन्होंने कभी न तो शारीरिक चिन्ता की है और न मानसिक चिन्ता। कहना चाहिए कि जीवन के संबंध में उन्होंने कोई भार ढोया ही नहीं। कहां रहना, कैसे रहना, किनके पास रहना, क्या करना, कौन सा कार्य करना और कैसे करना इत्यादि प्रश्न उनके जीवन से सदा अछूते रहे हैं। यदि किसी ने इन प्रश्नों को समाहित किया है तो वे हैं उनके जीवन निर्माता उस समय के मुनि तुलसी।

आचार्य महाप्रज्ञ मानते हैं-एक प्रभु के जागृत रहने पर स्वय की निद्रा हराम करना बुद्धिमत्ता नहीं है। वे अपनी निश्चिंतता के विषय में बहुधा फरमाते हैं..बचपन में मेरी निद्रा प्रगाढ़ और शीघ्र आने वाली होती थी। सर्दी के दिनो में जब कभी मै पछेवड़ी से मुंह ढांकने का प्रयत्न करता तो बहुत बार इस अन्तराल में ही मुझे नींद आ जाती और मैं बिना पछेवड़ी ओढ़े ही रह जाता। इस निर्भरता, निश्चिंतता ने ही मुझे ज्ञान-दर्शन-शक्ति और आनन्द की गगोत्री में निमज्जन कराया, तनावग्रस्त युग में भी तनावमुक्त रहना सिखाया।

रेत कहां से आई?

आज भी आचार्य महाप्रज्ञ शिशु के समान गहरी और निश्चिंत नींद लेते हैं। यह उनके जीवन का प्रतिदिन का क्रम है। ऐसा ही एक घटना प्रसंग है कि पूज्य गुरुदेवश्री तुलसी वि.सं 2042 (ई.स.1985) का चातुर्मास आमेट में परिसंपन्न कर लाडनूं चातुर्मास के लिए पधार रहे थे। यात्रा लंबी थी। उस श्रृंखला में उन्होंने मर्यादा-महोत्सव उदयपुर में, महावीर जयंती राजसमन्द में, अक्षय तृतीया ब्यावर में परिसपन्न की और पुनः ब्यावर की यात्रा पर प्रस्थित हो गए। उस क्रम में पूज्य गुरुदेव किशनगढ़ पहुंचे। 26 मई को किशनगढ़ से अगली मंजिल रलावता . में गुरुदेव का ससंघ प्रवास था। उस यात्रा मे भयंकर गर्मी, उमस भरी रात, जेठ की चिलचिलाती धूप और बदन को जलाने वाली लूएं साधु-साध्वियों की कड़ी कसौटी कर रही थी। अचनक उस दिन दुपहरी ढलते-ढलते कुछ मौसम बदला। दिनभर की थकान के कारण प्रायः सभी साधु रात आने से पहले सो चुके थे। मध्यरात्रि मे भयंकर तूफान और वर्षा ने अपना ताण्डव दिखाना प्रारंभ किया। उससे हम सबकी नींद प्रायः उचट गयी। आचार्य महाप्रज्ञ तब भी निश्चेष्ट निश्चित और तूफान से सर्वथा अप्रभावित बने हुए निंद्राधीन थे। एकाएक आए तूफान के कारण किसी संत के कपड़े उड़ कर अछाया में चले गए तो किसी के कपड़े अस्त-व्यस्त हो गए। सबका शरीर पूरी तरह धूलीमय हो गया। उस तूफान के कारण उस दिन मकराना क्षेत्र में लाखों-लाखों का नुकसान हुआ। आचार्य महाप्रज्ञ की ओढ़ी हुई पछेवड़ी

पर ऊपर से नीचे तक धूली की एक मोटी सी परत आ गयी। देखने वालों को केवल धूली की ही जाजम बिछी हुई दीख रही थी। मैंने आचार्य महाप्रज्ञ को आवाज देकर उठाने का प्रयत्न किया, किन्तु वे निंद्रा की प्रगाढ़ता के कारण नही उठे। पुनः मैंने आचार्य चरणों को हिला कर उठाया। उन्होंने चौंकते हुए पूछा-क्या बात है? मैंने कहां-पछेवडी रेत से भर गयी है। उसको झटकना है। रेत कहां से आयी? मैंने मौसम की प्रतिकूलता से उन्हें अवगत कराया। उस क्षण तक आचार्य महाप्रज्ञ इस बात से सर्वथा अनभिज्ञ थे कि कोई तूफान भी आया था।

कार्य छोटा या बड़ा?

श्रम की पूजा के लिए कोई भी कार्य छोटा-बड़ा नहीं होता। किन्तु बड़प्पन और पद के सामने वह छोटा-बड़ा- बन जाता है। आचार्य महाप्रज्ञ ने श्रम को अपना उपास्य माना है और आज तक वे उसकी उपासना करते रहे है। उन्होंने किसी भी काम को तुच्छ मानकर गौण नहीं किया। वि. सं. 2025 मद्रास चातुर्मास की घटना है। किसी साधु ने पंचमी के लिए स्वयं की पात्री को स्वयं ले जाना बंद कर दिया। उनकी यह पात्री सहयोगी संत ले जाते थे। कुछ दिनों तक यह क्रम चलता रहा। अन्ततः एक दिन पंचमी समिति की यात्रा लेते समय उन पर गुरु देव की दृष्टि पड़ गयी और पूछा-पात्री कहां है? उन्होंने सहयोगी संत की ओर इशारा किया। गुरु देव ने उलाहना देते हुए कहा..क्या तुम इतने बड़े बन गए कि अपनी पात्री दूसरों को देनी प्रारंभ कर दी। क्या तुम मुनि नथमलजी से भी बड़े हो? वे निकाय सचिव हैं। यदि वे भी स्वयं की पात्री स्वयं ले जाते है तो तुम्हें पात्री ले जाने में संकोच क्यों? अनायास ही सुनने वालों को स्वावलम्बी होने का बोधपाठ मिल गया। ❖

समाधि का मार्ग

-आचार्य महाप्रज्ञ

समस्या का अर्थ है- आस्त्रव और समाधि का अर्थ है- संवर। समस्या का अर्थ है मूर्च्छा और समाधि का अर्थ है- चैतन्य का अनुभव। एक बात है, यदि मूर्च्छा नही होती तो आदमी दुनिया में जी नही पाता। हर व्यक्ति मूर्च्छा से जुड़ा हुआ है, इसलिए वह जी रहा है। हमारे शरीर की एक व्यवस्था है। शरीर में जब तक कष्टों को झलने में असमर्थ होता है तब आदमी मूर्च्छित हो जाता है। जब भयंकर बीमारी, अवसाद और कष्ट होता है तब आदमी तत्काल मूर्च्छा में चला जाता है। यह प्रकृति की अपनी व्यवस्था है कि जागृत रहकर आदमी उतने कष्ट झेल नही सकता, इसलिए उसे मूर्च्छित कर दो। या तो शरीर उसे स्वयं मूर्च्छित कर देता है या फिर डॉक्टर उसे बाहरी साधनो से मूर्च्छित कर देता है-

— आचार्य महाप्रज्ञ अमृर्त्त चिंतन, पृष्ठ 67

आचार्य महाप्रज्ञ जी का जीवन दर्शन

✍ अनोखी लाल कोठारी

साज को बदलने मे साहित्य का महत्वपूर्ण योगदान है, जब जब भी कोई क्रान्ति हुई, क्रान्ति का सवाहक साहित्यकार का साहित्य बना। चाहे वर क्रान्ति आजादी की थी या कोई और लोग स्वरोको गुनगुनाते थे और दिशा को चल पड़ते थे। साहित्यकार था कवि अपनी लेखनी से जा कुछ लिखता था वह समाज के लिए दर्पण बनता है और समाज उसमे अपना प्रतिबिब देखता है और उसके अनुसार ही उसकी कार्य विधि बनतो है। आचार्य महाप्रज्ञ क्रांत द्रष्टा कवि और साहित्यकार है जिनकी लेखनी अनवरत चलती है उन्होने अब तक 200 से अधिक पुस्तको का आलेखन किया है। इन्ही में से एक नयो कृति 'एक पुष्प-एक परिमल' जिसमे उन्होनें जिस प्रांजल भाषा का प्रयोग किया है यही इस कृति का मूलधन है। आपश्री की कविताओं म जहा शील्प है, दूसरा को अपनी ओर खीचने की क्षमता है या यो कहे कि वे कविताएँ ही नही, उसमे उनका जीवन दर्शन निहित है। ये शब्दमुनि श्री विनयकुमार जी आलोक ने राष्ट्रीय मत्री द्वारा 'एक पुष्प-एक परिमल' नामक पुस्तक के लोकार्पण विमोचन कार्यक्रम रक्त गया था। पुस्तक का विमोचन वरिष्ठ साहित्यकार व दैनिक ट्रिब्यून के सम्पादक नरेश कौशल ने किया। जामा मस्जिद के इमाम मौलाना मो. अजमल खान कार्यक्रम के मुख्य अतिथि के रूप मे उपस्थित हुए।

मुनि श्री विनयकुमार जी आलोक ने साहित्य और समाज विषय पर बोलते हुए कहा कि इन्सान को न केवल सहज बनाती हे बल्कि जीवन मे बदलाव लाने में सक्षम है। कविता के साथ जुड़ाव बेहद जरूरी है। ये कविताएं ऐसी है जो एक बार पढ लेना है वह अपने आप कविता के साथ जुड़ जाता हे इसलिए तो साहित्य अर्थात् कविता को समाज का दर्पण मनुष्य को अपने भीतर झांकने के लिए प्रेरित करता है। वही समाज सौभाग्यशाली होता है जिस समाज मे साहित्यकार जन्म लेते है, साहित्य की अनेक विद्याए हे कविता। कविता लिखना सहज नही है यह सबसे कठिन विद्या है, केवल तुकबंदी ही कविता नही, उसके साथतान होनी चाहिए। तभी कविता हृदय को छुपाती है वही समाज जीवंत समाज कहलाता है जो साहित्य के साथ जुड़ जाता है। भारत इस दृष्टि मे साहित्यकारो की खान रहा है।

आचार्य महाप्रज्ञ जीवत साहित्यकार है शायद उन्हे लिखना नही पड़ता। उनकी अन्तरात्मा

से जो कुछ निकला है वह लेखनी के द्वारा प्रकट होता है, उनके साहित्य में शब्द नहीं बोलते है यही इस कविता संकलन की विशेषता है। दैनिक ट्रिब्यून के सम्पादक व वरिष्ठ साहित्यकार तश्री नरेश कौशल ने विमोचन करते हुे कहा कि ये कृति अन्य कृतियो को ओर आकृष्ट कर लेती है। आचार्य महाप्रज्ञ जैसे मनीषी साहित्यकार की कृति का विमोचन कर मुझे हार्दिक प्रसन्नता हो रही है। कृति को पढ़ने पर मुझे लगा कि कहो रामायण तुलसीदासजी बोल रहे हे, तो कहीं वाल्मीकि, महाभारत के रचयिता वेद व्यास भी इस कृति मे यत्र-तत्र दिखाई देते है। इस कृति मे सभी सस्कृतियो का सुमैल है। भारतीय सस्कृति मे इस कृति का अमूल्य स्थान रहेगा, छद बद्ध लिखना बहुत कठिन है। भाव भाषा परिष्कृत है। एक गुरु के मुख से शाखाए बढ़ती चलती है स्थिर रहता है मूल मूलगूढ़ रहकर ही करता जीवन को अनुकूल। उन्होने एक जगह लिखा है रूढ़ होकर तुम चलो, सहार जैसा वह लगेगा। गूढ़ होकर तुम चलो, आधार जेसा वह लगेगा। सचमुच इन 4 लाइना म सर्वस्व छिपा है।

डी जी पी (पजाब) श्री एस के वर्मा ने आचाय महाप्रज्ञ की कृति पर विचार व्यक्त करते हुए कहा मैने आचाय महाप्रज्ञ से कभी साक्षात्कार नहीं किया। कृति का पढ़कर म अनुभव कर रहा हू कि वह कितने महान होगे? कुछ व्यक्ति दूर स महान लगत है निकट स नहीं परन्तु आचाय महाप्रज्ञ की इस कृति को पढ़कर निकट म महान नहीं महानतम लग रहे है। उनका एक एक शब्द रत्नो की तुला मे तोलन जैसा है जीवन का बदलन म यह कृति समथ है।

मौलाना मोहम्मद अजमल खान न कहा हालाकि मरी भाषा उर्दू है हिन्दी का काम अभ्यास है, उसके बावजूद भी मैने जब इसे दखा, पढ़ा ता म इसस एकाकार हो गया। जगा नाम उसस सवाया काम है। हर व्यक्ति का इस कृति का स्वाध्याय क रूप म पढ़ना चाहिए ताकि जीवन म बदलाव आ सके। कृति का एक एक शब्द अनमोल है।

अहिसा यात्रा के प्रवर्तक आचाय श्री महाप्रज्ञ [illegible] पयाय क 75 व वष म प्रवेश [illegible] म साध्वी श्री नगीना न कहा आचाय महाप्रज्ञ क [illegible] चितन न उनके [illegible] एव शक्तिशाली बनाया हे। व स्थित यज्ञ है। प्रियता अप्रियता [illegible] परिस्थितियो मे भी उनका सतुलन बराबर है। [illegible] है। साध्वी डॉ गवेषणा ने कहा- ज्ञान की गहराइ चिन्तन की [illegible] समपण की गाथा [illegible] ओर मानसिकता की जीवत प्रतिमा है 'महाप्रज्ञ'। इस अवसर पर राज्य मत्री श्री अमराराम चाधरी ने कहा कि आचार्य महाप्रज्ञ 'विश्व' क महान सन्त है जिनकी आभा आर प्रकाश सार जहा पर रहा है। इस पावन दिन उनक दिघायु हान की मगल कामना करता है।

जय जय महान सन्त, तुम्हे है मरा वन्दन अनन्त।
त्याग-शिरामणि केवल सुत रहे अपनी साधना म
सन्मति की भाति, बाल काल स ही रत बिखर कर धम क माती
जगत म जगा दी ज्ञान की ज्याति, सब म गारव एस है महाप्रज्ञ

जिसने तजा मोह माया और सुख वैभव, मृत्यु को समझ कर
अहिंसा के महानायक ने जन जन में सन्देश पहुँचाया।
आचार्य महाप्रज्ञ ने गुजरात में प्रेक्षा ध्यान और अणुव्रत संदेश पहुँचाया।
साधु साध्वी ने वखान किया आचार्य महाप्रज्ञ में अहिंसा का खजाना है।

जिनके पावन दर्शन से, पापों के पर्वत हिल जाते हैं।
वीतराग पथ प्रशस्त करते, ऐसे सन्त कहाँ मिल पाते है।।
संयम तप की दिव्य साधना महिमा गरिमा अपरम्पार।
गंगा-सा निर्मल है जीवन, पावनतम जिनका आचार।।

तुमन दीप जलाए जग मे, कभी न बुझने पायेंगे।
सामायिक- स्वाध्याय श्रेष्ठ है अन्तर ज्योति जगायेंगे।।
आचार्य तुलसी की कृपा दृष्टि से अनोखी जिनका ध्यान धरे।
श्रद्धा अर्ध्य समर्पित करके, गुणसागर को नमन करें।।

मै समझता हूं कि कुछ लोग जन्म से महान होते है, कुछ लोगों को महानता का बडप्पन थोपा जाता है, पर कुछ लोग महानता अपने प्रदीर्घ प्रयत्न, लगन और ज्ञान निष्ठा से प्राप्त करते है। अहिंसा के प्रणेता आचार्य महाप्रज्ञ जी ने भी त्याग, तप, धर्म, अपने प्रदीर्घ प्रयत्न व लगन से जीवन को आदर्श व महान बनाया जो आज अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अनुशासन, समर्पण एवं पुरुषार्थ का प्रतीक होना बताया तथा प्रेक्षाध्यान का आविष्कारक बताया। इस माध्यम से व्यक्ति स्वयं को निरोग व सुखी रख सकता हे। ऐसे महान् विभूति को कोटिशः कोटिशः वन्दन है।

सम्पर्क सूत्रः- अनोखी लाल कोठारी, 54 ताम्बावती मार्ग, उदयपुर (राज.), पीन- 313001❖

आशा

-आचार्य महाप्रज्ञ

इस दुनिया के नाना रुप है। कही अच्छा रुप सामने आता है तो कहीं बुरा रुप सामने आता है। कहीं भद्दापन है तो कही सुंदरता है। कुछ बातें मन को खुश करने वाली होती है तो कुछ मन को नाखुश करने वाली होती है। जहां जीवन है, वहां आशा और निराशा दोनों होती हैं। केवल निराशा से काम नहीं चलता। निराशा की स्थिति में भी आशा का दीप जलता रहे तो जीवन ठईक चलता है। जीता वही हैं, जो आशावादी है। आशा ही मनुष्य में उत्साह, सक्रियता और प्राण का संचार करती है-

– आचार्य महाप्रज्ञ पाथेय पृष्ठ 55

विश्व शांति की दिशा में गतिमान

✍ सुखराज सेठिया

समाज में हिंसा कब नहीं थी ? किस काल में नहीं थी ? क्या प्रकाश ही प्रकाश था ? हिंसा कल भी थी और आज भी हैं। हिंसा चलती रहती हैं, तभी अहिंसा का अस्तित्व समझ में आता हैं और शांति की बात हैं। अंधकार कही अवश्य है तभी प्रकाश के अस्तित्व समझ में आता हैं और शांति की बात होती हैं। अंधकार कहीं अवश्य है तभी प्रकाश के अस्तित्व का पता चलता हैं। अहिंसा की स्थापना और शांति की दिशा में प्रस्थान करना लोक मंगलकारी अभियान हैं। इस दिशा में कोई युगांतरकारी प्रज्ञा पुरु ष ही सफलतापूर्वक गतिमान हो सकता हैं। इस श्रेणी का पुरु ष ही शताब्दियों में कभी कभी चेतना के विकास के लिए सर्वात्म मना अपना जीवन समर्पित कर देता हैं। एक महान धंर्मनेता, अध्यात्मवेता, प्रेक्षा प्रणेता एवं दार्शनिक चिंतन के रु प में आचार्य महाप्रज्ञ का नाम देश और दुनिया में विख्यात हैं। उनकी दूरदर्शी सोच की आज पूरे विश्व को जरु रत हैं। आपका संक्षिप्त परिचय इतना ही हैं कि सारी धरती आपका घर हैं, दुनिया के सारे लोग आपके बंधु बांधव एवं अनुयायी हैं, पूरा विश्व आपका परिवार है और मानवता के कल्याण एवं अमन चैन के लिए आपका मार्गदर्शन और पाथेय सभी को सहज उपलब्ध हैं। विश्व शांति का प्रथम सोपान अहिंसा हैं। समाज में अहिंसक चेतना का जागरण आवश्यक हैं। आज दुनिया में तमाम देश एवं संगठन हिंसा के प्रशिक्षण एवं हिंसक साधनों के एकत्रीकरण में जीतना श्रम, शक्ति एवं अर्थ लगा रहे है, उसका एक प्रतिशत भाग भी यदि अहिंसा के विकास एवं प्रसार में लगाया जाए तो दुनिया की मानसिकता और उसका स्वरु प ही कुछ और दिखाई पड़े। एक ऐसी विलक्षण शक्ति का सृजना हो जाए जिसके परिणाम अद्‌भूत एवं आश्चर्यजनक हों। स्वस्थ समाज की कल्पना साकार हो जाए और विश्व शांति की दिशा में गतिशील अभियान अपने उद्देश्य को पूरा कर सकें।

आचार्य महाप्रज्ञ ने अहिंसा और विश्व शांति की दिशा में प्रस्थान करने से पहले हिंसा, अशांति एवं आतंकवाद के कारणों का अन्वेषण किया। उनकी यह स्पष्ट धारणा है कि रणभूमि में युद्ध बाद में लड़ा जाता है, उसकी भूमिका एवं संपूर्ण माहिती व्यक्ति के मानस में पहले से सचिव रहती हैं। युद्ध पहले मानसिक धरातल पर लड़ा जाता हैं, रणक्षेत्र में संघर्ष बाद में होता हैं। हिंसा, अशांति एवं आतंक के खेल का मुख्य केंद्र मानव मन हैं। मानसिक विष्फोट का उपशमन सबसे पहले आवश्यक हैं। मूल कारण को पकड़ना, उसका निराकरण करना हमारा प्रथम लक्ष्य हैं।

आचार्य महाप्रज्ञ ने अहिंसा के दर्शन की व्याख्या की हैं। उनका संपूर्ण जीवन अहिंसा का पर्याय

हैं। उन्होंने लगभग एक लाख किलोमीटर की पद यात्रा की है। पद यात्रा का उद्देश्य गाँव-गाँव, शहर शहर अहिंसा की रक्षा करना और लोगों उसके प्रति आस्था बढ़ाना है। वर्तमान में अहिंसायात्रा का उपक्रम विश्व शांति की दिशा में महत्वपूर्ण कदम हैं। आचार्य महाप्रज्ञ का अहिंसा दर्शन प्राणी मात्र की हिंसा तक की ही व्याख्या नहीं करता। अपितु पेड़-पौधे, पशु पक्षी, वनस्पति, पृथ्वी, जल, पर्यावरण आदि भी उसमें समाहित हैं। भिन्न भिन्न राष्ट्र भिन्न भिन्न मुद्दो को लेकर आपस में टकरा रहे है। बंदूकों की आवाज सीमाओं पर अक्सर सुनाई पड़ ही जाती है। कई देश आतंकवादी संगठनों को पोषण दे रहे हैं। दूसरे राष्ट्रो को भयभीत करने के लिए भी कई वारदातें हुई है। युद्ध और आंतक की छात्रा दिनोंदिन गहरी होती जा राही हैं। लोग शांति की आवाज तो उठाते हैं, परंतु वह उनके कंठो से निकलती है, हृदय से नही। एक और निःशस्त्रीकरण के समझौते पर हस्ताक्षर होते हैं, और दूसरी ओर अस्त्र शस्त्रों की टंकार गूंजती सुनाई पड़ती है। युद्ध ओर आंतक का समाधान असंदिग्ध रुप से अहिंसा और मैत्री हैं। कोई चाहे कितने ही युद्ध कर लें, अंत मे उसे समझौता करना ही पड़ता है। आवश्यकता है कि समझौते की अंतिम परिणति हमारा है कि परिणति बने। आचार्य महाप्रज्ञ ने राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर व्याप्त युद्ध ओर आतंक की समस्या के समाधान के लिए सहअस्तित्व और सापेक्षता का सूत्र दिया। उनकी स्पष्ट धारणा है, निरपेक्ष दृष्टिकोण होगा, वह निरपेक्ष होगा। बहुसंख्यको के लिए अल्पसंख्यकों तथा बड़ों के लिए किसी का अनिष्ठ नही किया जा सकता। अनेकांतवाद ने विश्व को सहिष्णुता, समन्वय, समानता, सह अस्तित्व, सापेक्षता आदि सूत्र दिए गए। जिनको अपनाकर वैश्विक समस्याओं का समाधान किया जा सकता हैं। अनेकांत दृष्टि से चिंतन नहीं करेगा। उसका चिंतन सापेक्ष होगा। वैश्विक संतुलन का सूत्र अनेकांतवाद है। आचार्य महाप्रज्ञ द्वारा प्रवर्तित अनेकांत दृष्टिकोण युद्ध और आतंक की समस्या का समाधान कर विश्व शांति के निरुपण मे सहायक है। आचार्य महाप्रज्ञ द्वारा प्रवर्तित अहिंसा समवाय कार्यक्रम विश्व शांति की दिशा में उनकी समसामयिक सोच का परिणाम है। इस अभियान के द्वारा हिंसा व्याप्त क्षेत्रों मे-अहिंसा की चेतना के जागरण का प्रयास किया जाता है। आज के युग मे अशांति, आतंक एवं हिंसा को देखते हुए अहिंसा के विकास की बात अधिक प्रासंगिक बन गई है। आज अगर हम मानव जाति के कल्याण एवं अमन चेन की बात सोचते है तो हमें अहिंसा को सामाजिक जीवन मे प्रतिष्ठित करना होगा, अहिंसक वातावरण का निर्माण करना होगा। अहिंसा समवाय के द्वारा आचार्य महाप्रज्ञ ने समाज में अहिंसा की अलख जगाने का आह्वान किया है। अहिंसा समवाय का उद्देश्य यह है कि अहिंसा में विश्वास करने वाले सारे संगठन एकजुट होकर एक मंच पर आएँ ओर सामूहिक प्रयास के द्वारा अहिंसा की आवाज और अभियान को प्रभावी बनाएँ। सभी संस्थाओं का एक मंच से कार्यक्रम चलेगा तो वह एक आंदोलन का स्वरूप ग्रहण करेगा और शांति की दिशा में सार्थक होगा। चार वर्षों से संचालित इस आंदोलन ने अब विस्तृत स्वरुप ग्रहण कर लिया है, लोगों मे अहिंसा के प्रति आस्था पैदा हो रही है और विश्व के स्तर पर शांति स्थापना के प्रस्ताव चल रहे हैं। आचार्य महाप्रज्ञ का मंतव्य है समूची दुनिया अहिंसा नही अपना सकती। हम विश्व शांति की बात कर रहे हैं। क्या हम कोई कल्पना कर रहे है? निराश होकर पीछे हटने की जरुरत नही है। हमे तो इस भावना से अहिंसा को लेकर चलना है कि कहीं अहिंसा की तुलना मे हिंसा और अशांति बलवान, स्वच्छंद, और अनियंत्रित न हो जाएं। आगे आचार्य महाप्रज्ञ अपेक्षा करते हुए कहते है - हिंसा करने वाला किसी दूसरे का अहित नहीं करता

बल्कि अपनी आत्मा का अनिष्ठ करता हैं। हम किसी के सुख के साथी बनें, कम से कम किसी के दुख का साधन तो न बनें।

हिंसा से हिंसा का समाधान नहीं हो सकता। रक्त रंजीत वस्त्र रक्त से साफ नहीं हो सकता। अहिंसा की चेतना के विकास से हिंसा की समस्या का समाधान हो सकता हैं और हम एक निरस्त्र विश्व की कल्पना कर सकते हैं। आचार्य महाप्रज्ञ ने व्यक्ति के सर्वांगीक विकास को अहमियत दी हैं। वर्तमान शिक्षा पद्धति बौद्धिक एवं वैज्ञानिक व्यक्तित्व का विकास करने में समर्थ हैं। परंतु नैतिक एवं भावात्मक विकास करने की क्षमता उससे नहीं हैं। एकांगी शिक्षा के परिणामस्वरुप आधा अधूरा व्यक्तित्व विकास होता हैं। इस प्रकार के व्यक्तित्व से देश और दुनिया में अशांति, हिंसा, अपराध, भ्रष्टाचारआदि को प्रोत्साहन मिल रहा हैं। नैतिकता, विवेक, और भावात्मक संतुलन के बिना समाज स्वस्थ नहीं हो सकता और विश्व शांति की कल्पना पूरी नहीं हो सकती। सर्वांगीक विकास के लिए जीवन विज्ञान का उपक्रम आचार्य महाप्रज्ञ की प्रज्ञा चेतना का परिणाम हैं। उसकी प्रतियोगिता को भारत के पंद्रह राज्यों ने स्वीकार किया हैं। विदेशों में भी इस उपक्रम की माँग हैं। सिद्धांतो को हृदयंगम करने के साथ साथ प्रायोगिक प्रशिक्षण का भी इसमें महत्व हैं। आचार्य महाप्रज्ञ का विशाल वांग्मय अध्यात्म दर्शन योग से संपृक्त हैं और राष्ट्र की सीमा के पार जाकर विश्व की समस्याओं के समाधान में योगभूत भूमिका निभा रहा हैं। सहितस्य भावः साहित्यम् की सैद्धांतिक भावना उसके साहित्य का मूल प्राण तत्व हैं। इसे साहित्य की प्राणवत्ता कहें या एक महायोगी के अध्यात्म दर्शन का नवनीत! मगर सच्चाई तो यह हैं, कि आचार्य महाप्रज्ञ का अद्वितीय कोटि का साहित्य विश्व मानस में अहिंसा और शांति का आलोक पैदा कर रहा हैं, और उसमें निबद्ध उनके विचार युग युग तक जीवन की व्याख्या करतें रहेंगे। विश्व शांति की दिशा में गतिमान चरणों को सभक्ति वंदन। वर्धापना की कामना इतनी कि विकास के ये चरण युग युग तक गतिमान रहें और धरा धाम अंकित पदचिन्हों के निशान हम सभी के पर अंकित हों। ❖

मैं महावीर बन सकता हू

-आचार्य महाप्रज्ञ

मैं महावीर हूं- महावीर की सबसे बड़ी विशेषता यही थी कि उन्होंने किसी दूसरे पर भरोसा नहीं किया। जो ईश्वर पर भरोसा करते हैं, वे अपने आपको कमजोर मानते हैं। ईश्वर भला करेगा, ऐसा करेगा, वैसा करेगा। मै स्वयं कुछ भी नहीं कर सकता। वही होगा जो इश्वर की मर्जी होगी। महावीर ने कहा- तुम अपने ईश्वर को जगाओ। ईश्वर तुमसे अलग नहीं है। तुम्हारे भीतर उतनी क्षमता है जितनी क्षमता महावीर में है। महावीर तुमसे अलग नहीं है, जैसे तुम हो, वैसे ही महावीर है। जैसे महावीर महावीर बने वैसे तुम भी भगवान महावीर बन सकते हो। यह आत्मविश्वास पैदा हो जाए तो जीवन में एक नया प्रकाश मिल सकता है। मैं महावीर बन सकता हूं यह आत्मविश्वास शिक्षा के द्वारा मिल सकता है, अभ्यास के द्वारा उत्पन्न हो सकता हैं। – आचार्य महाप्रज्ञ अहिंसा के अछूते पहलु, पृष्ठ 115

आधुनिक युग के कबीर

✍ सुरेश पंडित

भारतीय साहित्य में कबीर जैसा विरोधाभासी चरित्र और कोई मिलना मुश्किल है। वे जन्म से हिन्दु, कर्म से मुसलमान (जुलाहे) होकर भी इनमें से कोई नहीं थे। इनका व्यक्तित्व जातियों, धर्मों और अपने समय के प्रचलित विचारों की हदबंदियों से कहीं अधिक विराट था। वे निरक्षर होकर भी महाज्ञानी थे। लौकिक होकर धर्म से विरत होकर भी महान् धार्मिक हैं। सद्गृहस्थ होकर भी वीतरागी थे। उनका जीवन जितना सादा सात्विक दिखाई देता है उनके दोहे, पद, साखियां भी उतने ही स्पष्ट अर्थ प्रदर्शित करने वाले प्रतीत होते हैं। परंतु उनके चरित्र में जितनी भावनाएं हैं, उनके कुछ पद भी उतने ही उलझे हुए, विरोधाभासी हैं। किसी बहुत गंभीर बात को जब वे सीधी सरल सधुक्कड़ी भाषा में नहीं कर पाते तो वे एक तरह की अटपटी भाषा का इस्तेमाल करते हैं जिससे लगता हैं वे जो कुछ कह रहे हैं उसका कोई अर्थ नहीं है जैसे 'पानी बिच मीन पियासी मोहि सुन सुन आवत हांसी।' सरसरी नजरों से पढ़ने पर इसका कोई अर्थ समझ में नहीं आता। परंतु कबीर साहित्य के टीकाकार इस तरह से पदों को उलटवासियां कहते हैं और इनके लौकिक अभिव्यक्तियों के अलौकिक या आध्यात्मिक अर्थ निकालते हैं।

कभी कभी लगता है कि आज के इस विरोधाभासी दौर में आचार्य महाप्रज्ञ जैसे व्यक्ति भी धारा के प्रतिकूल चल रहे हैं। जब सब तरफ हिंसा का तांडव हो रहा है, वे अहिंसा का उपदेश दे रहे है। जब मनुष्य सब तरह के नियम अनुशासन तोड़ उपभोग की ओर चढ़ रहा है, वे संयम की बात कह रहे है। गजब का आशावाद हैं उनमें। जो भीड़ उन्हें सुनने के लिए प्रतिदिन एकत्र होती है, जो राजनेता रोज उनसे मिलने आते है, जो भक्त, अनुयायी उनकी हर बात को ग्रहण करते दिखाई देते है वे अधिकतर उनके प्रभावक्षेत्र से बाहर होते ही जो कुछ सुना, ग्रहण करने का संकल्प लिया, उसे त्याग, उससे विपरीत आचरण करने में प्रवृत्त हो जाते हैं। लोगों का मानना है कि इस तरह के उपदेश देना धार्मिक साधुसंतों के लिए तो उपयुक्त है क्योंकि उन्हें न तो परिवार का पालन पोषण करना होता है और न व्यापार या नौकरी करनी होती है। लेकिन उन्हें दुनिया की करह चलना होता हैं उन्हें वही सब करना होता है, जो और लोग कर रहे होते है। यह बात नहीं है कि आचार्यश्री लोगों की तरह की द्वित्वमयी मनोवृति को जानते नहीं है, उनसे वास्तव में कुछ भी अनजाना बचा रही हैं। फिर भी अनजान बन वे रोज-रोज वही करते चलते है तो शायद यह सोचकर ही कि कभी न कभी, किसी न किसी को तो उनकी बातें सुनकर यह लगेगा कि वह जो कुछ कर रहा हैं सही नहीं हैं। उसे ऐसा नहीं करना चाहिए।

कबीर की तरह उनका व्यक्तित्व भी जाति, धर्म, सम्प्रदाय और कर्मकाण्ड के चौखटों में सिमटा हुआ नहीं हैं। वे जैन हैं, तेरापंथी हैं, आचार्य तुलसी के पट्ट शिष्य और उनके द्वारा मनोनीत उत्तराधिकारी है फिर

भी उनकी अपनी एक अलग पहचान हैं। वे उतनें ही नहीं है जितने अन्य धर्मों, संम्प्रदायों के साधु संत हैं। वे उनसे कुछ परे, कुछ विशिष्ट हैं। इसका कारण शायद उनका विशद, ज्ञान, व्यावहारिक दृष्टि, लोगों के मनोविज्ञान की जानकारी, कंसीर्णता से दूरी और प्राणीमात्र के प्रति दया, सहानुभूति और करुणा आदि के भाव हैं।

प्रवचन उनके प्रभावी होते है, क्योंकि उनमे वाक्पटुता का अभाव नही हैं। लौकिक दृष्टांतो के साथ भारतीय दर्शन के गहन, सिद्धांतो को सरल व रोचक बना लोगो तक पहुंचा देने की कला में वे सिद्धहस्त हैं। प्राचीन शास्त्रो का निरंतर साम्प्रतिक परिस्थतियों की नवीनतम जानकारी और इन दोनों के कार्यकारण संबंधो की खोज बीन में लगे आचार्यश्री मनुष्य जाती के हित के चिंतन में सदा लगे रहने वाले महानुभाव हैं। दुनिया में जो कुछ भी अच्छा या बुरा होता हैं उसके बारे में इनकी प्रतिक्रिया अर्थहीन होती दिखाई देती है वहां ये प्रभाव हस्तक्षेप करने से भी नही चूकते। अन्य धर्माचार्यो की तरह शासकवर्ग की चाटुकारितो इनके स्वभाव में नही हैं। सही मौके पर खरी बात कहने से इन्हें कोई रोक नही सकता। गतवर्ष गुजरात मे फैली हिसा के दिनों मे ये ही एक ऐसे धर्मगुरु थे जो सदल बल उसी भूमि पर पड़ाव डाले हुए थे और वहां के हर जाति, धर्म के लोगो को गमझा रहे थे कि हिसा बुरी बात हैं। इससे कोई समस्या हल नहीं होती। पारस्परिक प्रेम और सद्भावना, एक दूसरे पर विश्वास और भाइचारा ये ही वे तत्व है जो बड़े से बड़े मसले को सुलझा देते है, गलतियों को सुधार देरे है और दर्द देते घावो को सहला देते है। यह बात तो दृढ़तापूर्वक नही कही जा सकती की इन्दी के प्रयोसो से गुजरात मे हिसा का दौर समाप्त हुआ लेकिन इसमें भी कोई संदेह नही है कि इनके प्रयासो ने भी वहा पर शान्ति स्थापना में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। आश्चर्य है जब गुजरात जल रहा था राजनताओं और चद स्वय सेवी संस्थाओं के कार्यकर्ताओं के अतिरिक्त कोई वहां नही था। अधिकतर धर्माचार्य ने केवल इस करह के हिसात्मक परिदृष्य को अनदेखा कर रहे थे, बल्कि अपने मौन से इसके औचित्य को भी परिपृष्ठ कर रहे थे। ऐसे खूनी दौर मे आचार्य महाप्रज्ञ की गुजरात मे की गई अहिसा पदयात्रा एक साहसिक कदम था और वह आनायास महात्मा गाधी की नोअखली यात्रा की याद दिखाता है।

आचार्य महाप्रज्ञ का मानना हे कि हिसा एक शाश्वत समस्या हैं। परन्तु उनका स्वरुप निश्चित नही है। उसका कोई एक चहेरा नहीं हैं। इसलिए उसे आसानी से पहचाना नही जा सकाता। वह नित नये मुखौटे धारण करती है। अफगानिस्तान, ईरान मे हुई हिसा हमने देखी है। काश्मीर में लगभग रोज होती हिसा को हम देख रहे है। पर कुछ ऐसी हिंसाएं भी है जो प्रतिदिन हमारे सामने या हमारी जानकारी में हो रही है उन्हें हम हिसा ही नही मानते। जितने उद्वेलित हम गुजरात की, अक्षरधाम की या काश्मीर की हिंसा से होते है उतनी हम हजारो मर्छलियों, लाखो पशुओं और सैकड़ो कन्या भ्रुणो की हत्याओं से नही होते। छोटे कृमि कीट पतंगो की बात इनसे अलग है। आखिर प्राणी तो ने भी हैही ? अणुव्रत इस तरह की हिसा को संकल्पजा हिसा मानता है और उसे मनुष्य की बर्बर मनोवृति का परिचायक मानता है। आचार्य श्री सब प्रकारकी हिसा त्याग ने पर जोर देते है और लोगो को सव्वे पाणा ण हंतव्वा के सिद्धांत को अपनाने का अनुरोध करते है। वे अहिसा को एक सार्वजनिक, सार्वभौम तत्त्व मानते हैं। लेकिन इससे अस्तित्व एवं प्रसार के लिए एक आवश्यक शर्त यह हैं कि विश्व की समाज व्यवस्था समानता पर आधारित हो। जब तक आर्थिक विषमता एवं अन्य प्रकार के भेदभाव विश्व मे प्राप्य रहेंगे। अहिसा एक सहज स्वाभाविक मानवीय मनोवृति नही बन सकती। तात्पर्य यह है कि जब तक विश्व में वर्तमान पूंजीवादी व्यवस्था कायम रहती हैं, जब तक बाजारोन्मुख उदारीकृत अर्थनीति सपर्धात्मक उपभोक्तावाद का बोलबाला रहता है, तब तक दुनिया में स्थायी

शान्ति नहीं हो सकती। हिंसा पर प्रभावी अंकुश नहीं लगाया जा सकता।

नई अर्थव्यवस्था की तो पूरा सोच ही हिंसा पर आधारित हैं। यह मूलत: प्रतिस्पर्धा पर फलती फूलती हैं। इस प्रतिस्पर्धा के लिए मनुष्य को अपने में आक्रामक वृतियों को जागत रखता हैं। आगे बढ़ने, दूसरों को पराजित करने के लिए हर तरह के छल कपट का सहारा लेना इस व्यवस्था में सफल होने के लिए जायज माना जाता हैं। प्रतिस्पर्धा की सबसे पहली शिकार सहयोग की भावना सहानुभूति होती हैं। आप दूसरे के हाथ मिलाकर आगे नहीं बढ़ सकते। इसके लिए आपको अधिक तेज चलना होगा या अपने प्रतिद्वन्द्वी को धकियाना होगा। इस व्यवस्था में पिछड़ने का अर्थ है, प्रतियोगिता से बाहर होना अर्थात स्वयं अपने विनाश को बढ़ना। इसमें जीवित रहने के लिए निरंतर दौड़ते रहना और दूसरों को पछाड़ते रहना जरु री हैं।

महाप्रज्ञ हिंसा और परिग्रह को एक ही सिक्के के दो पहलू मानते है। वे कहते हैं कि हिंसा स्थूल हैं- दिखाई देती है लेकन परिग्रह सूक्ष्म हैं, उसका कोई रुप हिंसा की तरह प्रत्यक्ष दृष्टव्य नहीं होता। फिर भी परिग्रह मुख्य हैं और हिंसा गौण हैं। जहां परिग्र होगा वहां हिंसा अवश्य होगी। जो व्यक्ति समाज या राष्ट्र परिग्रह की वृति से मुक्त नहीं हो पाएगा। अहिंसा के लिए परिग्रह का त्याग पुन: हमें समतावादी समाज व्यवस्था की ओर ले जाता हैं। इस तरह आचार्य श्री का अहिंसा अपनाने और परिग्रह का परित्याग करने का अनुरोध प्रकारान्तर से वर्तमान पूंजीवादी व्यवस्था को अस्वीकार करने और पारस्परिक सहयोग पर आधारित समानतावादी समाज की स्थापना करने का ही एक उपक्रम हैं। इसी से विश्व में स्थायी शांति कायम हो करते हैं और विश्व बंधुत्व की भावना को संबल मिल सकता हैं। ❖

सतरंगा व्यक्तित्व

साध्वी योगक्षेमप्रभा

सौम्य आकृति, सहज-सरल स्वभाव, शिशु सा निश्छल व्यवहार।प्रथम दर्शन में ही मन मोह लेते हैं, आने वालों का। प्रज्ञा, प्रतिभा, श्रद्धा, समर्पण, करुणा, निस्पृहता और विनम्रता की सतरंगी आभा से अभिमंडित व्यक्तित्व है आचार्य महाप्रज्ञ। 85 वर्ष की उम्र में अहिंसा की शीतल सुधा जन जन के पिलाने वे नगर-नगर, डगर-डगर घूम रहे हैं। हिंसा की ज्वाला में जलते विश्व को शांति और अमन का पैगाम देने वाला वह अकिंचन फकीर जग की आशाभरी निगाहों का एकमात्र केन्द्र है। संप्रदाय विशेष के अनुशास्ता होते हुए भी वे जन-जन के मार्गप्रदाता है।

अहिसक क्रान्ति के पुराधा, प्रज्ञापुरुष आचार्यश्री महाप्रज्ञ का जन्म राजस्थान के छोटे से गांव टमकोर मे हुआ। पिता तोलारामजी व माता बालू जी के आगंन का दीपक पूरे जग को रोशन करेगा, यह कौन जानता था। अध्यात्म के संस्कारों मे आप्लावित परिवेश में पला बालक नथमल शैशव से ही सुसंस्कारों की संपदा से आपूरित हो गया। मात्र साढे दस वर्ष की वय में सांसारिक मोह बन्धन को तोड़ बालक अपनी जननी के साथ सन्यास की राह पे आगे बढ़ा। अष्टमाचार्य कालूगणी के चरणों में सर्वात्मना समर्पित हो उशका ह्रदय कमल खिल उठा।

गुरु के अमित वात्सल्य सरोवर में शिष्य नथमल सराबोर था। गुरु कालू की करुणा दृष्टि ने नई सृष्टि रचकर मुनि नथमल को कृतार्थ कर दिया। शिक्षा गुरु मुनि तुलसी की पाठशाला में बौद्धिक विकास के नए अभिलेख लिखे जाने लगे। दर्शन, न्याय, व्याकरण, कोश, ज्योतिष, आयुर्वेद आदि अनेक क्षेत्रों में मुनिवर ने विलक्षण उंचाईयों का स्पर्श किया। संस्कृत ओर प्राकृत के धुंरधर विद्वान बने। सर्वतोमुखी प्रतिभा के उदय का वह स्वर्णिम काल जीवन की अनमोल धरोहर बन गया।

गुरु का विश्वास व अन्तः प्रज्ञा का जागरण मुनि नथमलजी के सर्वतोभावेन के प्रमुखआधार है। आचार्य तुलसी के हर चिन्तन, हर निर्णय, हर आयाम मे मुनि नथमलजी कदम से कदम मिलाकर चलते रहे। उनको योग्यता व क्षमता को देखते हुए आचार्य तुलसी ने वि.सं. 2022 में उन्हें निकाय सचिव के सर्वोच्च्य पद पर अभिषिक्त किया। इसी बीच मुनि नथमलजी की साहित्य स्त्रोस्विनी बहुविध धाराओं में बहती हुई समाज व राष्ट्र को आप्लावित करती रही। संस्कृत, प्राकृत, हिन्दी आदि भाषाओं में गद्य-पद्य दोनों विधाओं मे अनेक ग्रंथो का सृजन कर उन्होंने साहित्य निधि को भर दिया।

वि.सं 2035 में आचार्य श्री तुलसी ने उन्हे महाप्रज्ञ अलंकरण से अलंकृत किया। आचार्य श्री ने कहा मुनि नथमल जी की अपूर्व सेवाओं के प्रति समूचा तेरापंथ धर्मसंघ कृतज्ञता ज्ञापित करता है। यह महाप्रज्ञ अलंकरण उस कृतज्ञता की स्मृति मात्र हैं। इसी वर्ष मर्यादा महोत्सव के अवसर पर नये इतिहास का सजन हुआ। प्रज्ञावान, दार्शनिक शिष्य मुनि नथमल जी को संपूर्ण धर्मसंघ के सम्मुख युवाचार्य पद प्रदान किया। 64 वर्षीय आचार्य ने 58 वर्षीय शिष्य को उत्तराधिकारी घोषित कर सबको

आश्चर्यचकित कर दिया। तत्पश्चात उन्हें युवाचार्य श्री महाप्रज्ञ नाम से जाना जाने लगा।

जैन परम्परा की प्राचीन लुप्त ध्यान प्रणाली का पुनरुद्धार करके प्रेक्षाध्यान नामक वैज्ञानिक ध्यान प्रकृति के आविष्कारक के रुप में युवाचार्य महाप्रज्ञ विश्व विश्रुत बने। प्रेक्षाध्यान का यह अवदान संपूर्ण मानव जाति के लिए अनुपम वरदान है। देश-विदेश से समागत अनेक साधक इससे लाभान्वित हो रहे हैं। इसी के तहत आचार्य श्री तुलसी ने उन्हें जैन योग पुनरुद्धारक अलंकरण प्रदान किया।

जीवन विज्ञान के रुप में उन्होंने शिक्षा जगत को जो देन दी है, वह भारतीय शिक्षा प्रणाली में अभिनव क्रान्ति है। युगीन साहित्य की जे धारा उन्होंने बहाई हैं वह मानव मात्र के लिए उपयोगी है। शताधिक ग्रंथो का प्रणयन कर उन्होंने मौलिक चिन्तन से युग को नई खुराक दी है।

तेरापंथ धर्मसंघ के आचार्य के रुप में संघ वे करुणाशील अनुशास्ता या योगी आचार्य है, तो युग में नई दिशा व दृष्टि प्रदान करने वाले युगप्रधान आचार्य है। उनके व्यक्ति की विशिष्टताओं और विलक्षताओं के कारण अनेक सम्मान, पुरस्कार व उपाधियां उन्हें प्राप्त हुई है। उनमें से कुछ इस प्रकार है।

Man of the year
Intellectual man of the year
युग प्रधान आचार्य
डी. लिट. (मानद)
इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय एकता पुरस्कार
धर्मचक्रवती
महात्मा
Ambessdor of peace.
सांप्रदायिक सद्भावना पुरस्कार

उनके 86वें जन्म दिवस पर यही मंगलकामना हैं। कि वे युगों-युगों तक मानव जाति का मार्गदर्शन करें। ❖

सिद्ध पुरुष को नमन

✍ मुनि धर्मचन्द 'पीयूष'

महाप्रभावक भक्तामर का पाठ किया, तो पाया, जहां - जहां तीर्थकरो के परम पावन चरण टिकते, वहां-वहां पदमों (फूलों) की सौम्य सृष्टि हो जाती। बुद्ध की जीवन गाथामे देखा, जन्मते ही बुद्ध सात कदम चलें, वहां महकते-गमकते फूलों का निर्माण हो गया। तुर्की की किंवदन्ती को पढ़ा, चावल की भांति ही गुलाब भी पैगम्बर मुहम्मद के पसीने से पैदा हुआ। एक अन्य दन्त कथा को श्रवण गोचर किया- ईसा मसीह को शूली पर चढ़ाया गया, उनके हाथो-पांवो में कीले ठोक दी गई, उस समय उनके शरीर से खून टपक-टपक कर जहां गीरता रहा, वहां एक सुन्दर गुलाब पैदा हो गया। उपर्युक्त पंक्तियों मे पदमकिचा गुलाब की पैदायश को महापुरुषों से जोड़ने का प्रयत्न मुखर हुआ है, जो एक नये तथ्य को उजागर करता हैं। वह यह कि - वे तीर्थकर, जिन्हें देव, दानव,मानव व पशु-पक्षियों द्वारा विकीर्ण तीक्ष्ज कांटो भरे पथ पर चलना पड़ा, वे बुद्ध जिन्हें लोगों का आक्रोश झेलना पडा, वे महामानव, जिन्हें प्राणान्तिक कष्ट प्रदान कर उनमें क्रोध को अवतीर्थण करने -उभारने- का असफल प्रयत्न किया गया, तथापि उनका सुखद सान्निध्य, समता, सहिष्णुता का सदा बहार गुलाब उत्पन्न कर सदा सर्वदा महकता रहा। लोकोत्तर सृष्टि की सर्जना करता रहा। उपरोक्त महापुरुषों - नर अवतारों के सदर्भ सुने-पढ़े है, प्रेक्षा प्रणेता आचार्य श्री महाप्रज्ञ को साक्षात देख रहे हैं, जहां- जहां उनके चरण टिकते हैं, मैत्री के महकते-गमकते गुलाब खिल उठते हैं। उनकी महक से गुजरात-महाराष्ट्र ही नहीं, देश-विदेश का वातावरण महकने लगा है। पढ़ा है- मन के कांटो को बुहार कर निण्कटंक समता मूर्ति श्रमण महावीर पाद-विहार करते, तब सीधे कांटे उल्टे हो जाते, कैसी विचित्र बात! कैसा अटपटा वचन-विन्यास! भला कांटो को इससे क्या लेना-देना की तीर्थकर चलते हैं, इसलिए सीधे कांटे उलटे हो जाएं। सुना गया है - अरब के गर्म रेगिस्तानों में पैगम्बर मोहम्मद तथा मरुधरा के गर्म मुल्क में ब्रह्मचारी जी (श्री जैन श्वे. तेरापंथ के तृतीय आचार्य श्री मद रायचंदजी) विहार यात्रा करते तब बदलियां उन पर छाया किये चलती कितनी असंभव बात! भलां बदलियों को क्या आवश्यकता की नीचे मोहम्द या ब्रह्मचारी जी चलते है, इसलिए वे छाया करती रहें। असम्भव और सर्वथा असत्य प्रतीत होने वाले ये लोक वचन, निश्चय ही कुछ अनकही, अनसुनी, अनछुई लोकोत्तर बातों का गूढ़तम रहस्य प्रकट कर जाते है। कांटे उल्टे हों या सीधे, बदलियां छतरी किये चलें या नही, कोई फर्क नहीं पड़ता, इन रुपकों में दिन के उजाले की तरह सचाई प्रकट हुई है कि जिस महापुरुष के हृदय में राग द्वे। का कोई कांटा नही रह गया, उसके लिए इस पूरे विश्व में कोई कांटा सीधा नही रहता। जिस महासाधक

[illegible] किरण में [illegible] रह गया। उसके लिए अखिल धरा-गगन मे हर जगह [illegible] ही है, कहीं कोई धूप नही, उत्तप्ति नही

[illegible] प्रतिपादन का गहन तथ्य है-जो विश्व प्रेम से ओतप्रोत होता है, उसकी ओर सारे विश्व का [illegible], [illegible] प्रेम-प्रवाह प्रवाहित होने लगता है। जो विश्व - वात्सल्य से लबालब होता है, उसके ऊपर विश्व का शीतल वितान बना रहता है। जिसका आचार-विचार और व्यवहार समता से छलाछल होता है, उसके लिए विषधर-सुधाकर सम शीतल बन जाता है। जिसका अन्तर्मानस सुर-सरिता के मोती जैसे सलिल सम साफ होता है, उसके लिए कही कचरा-गंदगी नही रहती। वस्तुत: लोकोत्तर लोगों की लोकोत्तर सृष्टि, लौकिक लोचन लभ्य नही होती है। अहिसा यात्रा के प्रणेता आचार्य श्री महाप्रज्ञ, करुणा, वत्सलता, समते के सागर है, उनक साधना सिक्त शरीर के साढे तीन करोड़ रोम कूपों से करुणा का अजस्र स्त्रोद बह रहा है। प्राणी मात्र के प्रति असंख्य आत्म प्रदेशों से वात्सल्य मूर्त हो रहा है। समता-सागर मे हर धर्म सप्रदाय, जाति कौम की सरिताए समा रही है। सर्वगम्य है-जैठ की भीषण गर्मी मे तालाब मे दरारे पड़ जाती है बरसात बरसने पर दरारें अस्तित्व हीन हो जाती है। पानी से लबालब तालाब के किनारों पर बहार आ जाती है। आचार्य श्री महाप्रज्ञ की अहिसा यात्रा समस्त दरारों- दिवारों का तोड़कर बहार ला रही है। छयासीवे वर्ष प्रवेश पर उस सिद्ध पुरुष को नमन करुणा, के अवतार का अभिनदन, अभिवन्दन। ❖

भारतीय संत परम्परा के गौरव पुरुष

✍ साध्वी फूलकुमारी

अहिंसा यात्रा के पुरोधा अणुव्रत शास्ता युगप्रधान आचार्य श्री महाप्रज्ञ भारतीय संत परम्परा के गौरव पुरुष है। उनमें शिशु सी सरलता, युवक सा पौरुष, आंखों में प्रेम, हृदय में कोमलता, सोच में अहिंसा, भाषा में कल्याणकारिता, पैरों में लक्ष्य तक पहुचंने की गतिशीलता- ये सब आपके सृजनशील सफर के साक्षी है। आपका पारदर्शी व्यक्तित्व हर किसी व्यक्ति को अभिभूत कर देता है।

गणाधिपति गुरुदेव श्री तुलसी के आप यशस्वी और तेजस्वी उत्तराधिकारी है। जैन श्वेताम्बर तेरापंथ धर्मसंघ के दशमाधिशास्ता है। अध्यात्म जगत के अप्रकम्प ज्योति स्तंभ है। प्रज्ञा के जीवंत प्रतिमान है। स्थित प्रज्ञ हैं। विलक्षण योगी है। मौलिक चिंतक हैं। मधुर भाषी है। हृदय करुणा से लबालब भरा पड़ा है। कितनी सहजता ? कितनी पवित्रता ? न ही कोई प्रदर्शन, न ही विज्ञापन।

प्रोफेसर रामधारी सिंह ने कहा- 'आचार्य तुलसी के सैकड़ों जन्मों की तपस्या का परिणाम है- महाप्रज्ञ महाप्रज्ञ जैसा शिष्य। जैसे- रामकृष्ण परमहंस की वर्षों की तप्सया का फलित हैं' - स्वामी विवेकानंद। एक साहित्य संगोष्ठी में राष्ट्रकवि दिनकर, जैनेन्द्र जी, यशपालजी, प्रभाकरजी आदि धुंरधर विद्वानों ने गुरुदेव तुलसी से कहा- 'आपने समाज को मौलिक साहित्य तो दिया ही है। पर उससे बढ़कर महाप्रज्ञ के रुप मे हमें विवेकानंद दिया है। हमने विवेकानंद को देखा नही है पर महाप्रज्ञ को प्राप्त कर गौरवान्वित है।'

वे मूर्धन्य साहित्यकार है। उनके साहित्य को पढ़कर आज का प्रबुद्ध वर्ग साहित्यकार, समाजशास्त्री, शिक्षा शास्त्री, पत्रकार, राजनेता आदि अभिभूत ही नही आश्चर्यचकित हैं। इसी संदर्भ में जर्मनी के एक योग शिक्षक ने कहा- 'आचार्य महाप्रज्ञ का साहित्य हीरे-जवाहारात से भी ज्यादा मूल्यवान है। इसी की परिपुष्टी होती है- राजस्थान के गृहमंत्री श्री गुलाबचन्द कटारिया के शब्दों मे- मैं आज राजस्थान विधानसभा के लिए एक बहुत ही गौरव का दिन मानता हूं। वास्तव में आज महाप्रज्ञ के व्यक्तित्व को देखकर आचार्य तुलसी को इस बात केलिए बारम्बरा वंदन करना पड़ेगा कि उन्होंने एक ऐसा योग्य शिष्य तैयार किया, जिसकी योग्यता को विश्व के सारे विद्वान स्वीकार करते हैं।'

इसी संदर्भ में महामहिम राष्ट्रपति अब्दुल कलाम कहते हैं- 'मुझे महाप्रज्ञ के साहित्य से नई दिशा व नई दृष्टि मिली है। उनका साहित्य सभी को पढ़ना चाहिए।'

आपने ढेरों साहित्य लिखा है - हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत व अंग्रेजी में। महाप्रज्ञ का साहित्य पढ़कर न जाने कितने व्यक्तियों का दिल व दिमाग बदला है। सच में महाप्रज्ञ आध्यात्मिक व वैज्ञानिक संत है।

आपने जो भी नए अनेक नए आयाम दिए है, उससे पूर्व स्वयं ने विभिन्न सार्थक प्रयोग किए है। आपके प्रयोग प्रसूत अवदान है- प्रेक्षाध्यान, जो तनाव ग्रस्त व्यक्तियों के लिए रामबाण सिद्ध हुआ है। जीवन-विज्ञान, अहिंसा समवाय जो आज की जागतिक समस्याओं का अविकल समाधान है।

आचार्य महाप्रज्ञ अहिंसा यात्रा के प्रवर्तक है। उनकी अहिसा यात्रा युग का एक अनूठा दस्तावेज है। कालजयी महर्षि सहस्त्राब्दियों तक मानवता के शुभ्र आकाश पर नए-नए स्वस्तिक उकेरते रहें। आपके अवदान अध्यात्म और विज्ञान के समन्वय कीर्तिस्तंभ है। जीवन के नवमें दशक में हजारों कि.मी की यात्रा डगर-डगर, नगर-नगर में अहिंसा चेतना का जागरण और नैतिक मूल्यों का विकास, हिंसा के गहनतिमिर में अहिंसा को प्रस्थापित करना है।

प्रज्ञा के पारावार! आपका दृढ़ संकल्प, अदम्य साहस प्रज्ञा जागरण का माध्यम बना है। आपकी सर्वोपरि विशेषता है- जो भी कहा-वह जी करके, इसलिए आपकी हर प्रस्तुति सर्वमान्य बन जाती है। राष्ट्रीय, नैतिकता के सर्वोच्च अलंकरण महाप्रज्ञ से जुड़ने से स्वयं प्रतिष्ठित हुए। कुछ वर्ष पहले अमेरिका से सर्वोच्च सम्मान man of the year तथा इंगलैण्ड से International man of the year अवार्ड से सम्मानित किया। तेरापंथ धर्मसंघ से युगप्रधान अलंकरण से आपको अलंकृत किया। बेंगलोर में विभिन्न धर्म गुरुओं ने सम्मेलन को संबोधित करते हुए कहा कि- अहिंसा, शांति, सामाजिक समरसता, राष्ट्रीय एकता व सांप्रदायिक सद्भाव की दिशा में आचार्य महाप्रज्ञ का उल्लेखनीय प्रयास है।सबकी सहमति से पंजाबर मठ के जगदगुरु विश्वेश तीर्थ स्वामी द्वारा धर्म चक्रवर्ती अलंकरण तथा महाराष्ट्र मोहमयी नगरी मुंबई में लोक महर्षि अलंकरण से विभूषित किया। मध्यप्रदेश में रतलाम मे महात्मा अलंकरन से अलंकृत किया। भारत सरकार द्वारा इंदिरा गांधी राष्ट्रीय एकता पुरस्कार के साथ हाल ही में अप्रेल 2005 को राष्ट्रीय सांप्रदायिक सद्भाव प्रतिष्ठान की ओर से सन् 2004 को सांप्रदायिक सद्भाव पुरस्कार प्रदान किया गया।

प्रज्ञा के अलौकिक सूर्य

आप अपनी तेजोमयी रश्मियां युगों-युगों तक इस भूतल पर बिखरते रहें। आपके हर आयाम के नये कीर्तिमान बनें।

इन्ही मंगल भावनाओं के साथ-

हम मशकूर रहेंगे, कयामत तक तुम्हारे।

अमर रहेगा नाम जब तक चांद सितारे। ❖

जीवन विज्ञान : शिक्षा का नया आयाम

✍ सुरेन्द्र कुमार नाहटा

भारतीय संस्कृति आध्यात्मिक संस्कृति हैं। धर्म की उपासना एवं मोक्ष को प्राप्त करने के लिए वैराग्य का आचरण यहां की मौलिक विशेषताएं हं। त्याग, तपस्या एवं तप पर यहां अधिक बल दिया गया है। विज्ञान सम्मत सम्यक ज्ञान भारतीय संस्कृति की मुख्य विशिष्टता है। यह विज्ञान सम्मत ज्ञान ही हमें जीवन विज्ञान की शिक्षा देता है। वस्तुत: भारतीय संस्कृति के अनुसार हमारा अपना स्वयं का जीवन एक साधना मय जीवन बन सकता है।

जीवन जीने की कला का नाम ही जीवन है। सम्यक ज्ञान पूर्वक जीवन जीने को ही जीवन विज्ञान कहते हैं। हम सब महापुरुषों द्वारा बताई हुई छोटी-छोटी कुछ बातों को अपने जीवन व्यवहार में अपना कर अपने जीवन को जीवन विज्ञान की शिक्षा के अनुरुप जी सकते हैं। एवं मनोवाञ्छित फल को प्राप्त कर सकते हैं।

निज पर शासन: जीवन विज्ञान की शिक्षा का सबसे महत्वपूर्ण अंग है स्वयं पर अनुशासन निज पर शासन और आत्म अनुशासन करने वाला व्यक्ति ही जीवन विज्ञान की साधना कर सकता है।

साधन शुद्धि- सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि हमारा साध्य शुद्ध है तो हमारा साधन भी शुद्ध होना चाहिए। साधन की शुद्धता ही हमें साध्य की शुद्धता तक पहुंचा सकती है।

संयम ही जीवन हैं- जीवन विज्ञान की शिक्षा में संयम की सबसे अधिक आवश्यकता हमारे मन में हमेशा यह चिन्तन बना रहना चाहिए कि संयम ही जीवन है। संयम मय जीवन ही जीवन का सार है। प्राणों की परवाह नही है। प्रण को अटल निभाना है। जीवन विज्ञान की शिक्षा का यह महत्वपूर्ण सार है कि सादा जीवन उच्च विचार ? मानव जीवन का श्रृंगार। जीवन में हमेशा उच्च विचार और उच्च संस्कार बने रहने चाहिए।

आचरण की पवित्रता:- आचरण की पवित्रता ही जीवन विज्ञान की सबसे बड़ी शिक्षा है। यदि हमारे जीवन में आचरण की पवित्रता है। तो हम नैतिकता की पुन: प्रतिष्ठा कर सकते हैं। सच्चरित्रता और प्रामाणिकता का पालन कर सकते हैं। नवबाड सहित शील व्रत नीयत का पालन कर सकते हैं। अहिंसा और अपरिग्रह का संदेश जन-जन तक पहुंचा सकते हैं। मर्यादा का पालन कर सकते हैं। सबसे बडी बात तो यह है कि आचरण की पवित्रता को अपने जीवन व्यवहार में अपना कर

ही हम ध्यान साधना का अभ्यास कर सकते हैं। ध्यान साधना का अभ्यास कर के ही हम तीर्थंकर भगवान श्री महावीर की शिक्षाओं का सम्यक पालन कर सकते हैं।

मैत्री भाव:- जीवन विज्ञान की शिक्षा को जीवन में अपनाने के लिए सबसे पहली आवश्यकता इस बात की है कि हम सब मैत्री भाव की साधना को स्वीकार करें। मैत्री भाव की साधना करने वाले व्यक्ति का ही जीवन समतामय एवं सौहार्दमय बन सकता है। और समता मय व्यक्ति ही प्रभु की सच्ची सेवा और पूजा कर सकता है। प्रभु की मर्यादापूर्वक सच्ची सेवा और पूजा करने वाला व्यक्ति ही ध्यान साधना के आनन्द को प्राप्त कर अपने चित्त को एकाग्र एवं संयमित कर सकता है।

उपरोक्त तथ्यों से यह स्पष्ट है कि जीवन विज्ञान शिक्षा का नया आयाम है। यदि हम नैतिकता पूर्वक, प्रामाणिकता पूर्वक एवं सम्यक ज्ञान पूर्वक अपने जीवन को जीने का प्रयास करें तो हम भी अपने जीवन में शिक्षा का एक नया आयाम प्राप्त कर सकते हैं। और अपने जीवन् को सच्चरित्रा पूर्वक एवं शील धर्म पूर्वक जीकर कल्याण को प्राप्त कर सकते हैं। ❖

अहिंसा एवं अनेकांत के व्याख्याकार

बसंती लाल बाफना, लावासरदारगढ़

टमकोर में मां बालुकी रत्नकुक्षि से 14 जून 1920 को जन्मा एक शिशु, अज्ञ से प्रज्ञ और प्रज्ञ से महाप्रज्ञ बनकर प्राणी जगत के लिये अभय दाता बन गया।

नथु से मुनि नथमल व मुनि से आचार्य महाप्रज्ञ की यात्रा का वर्णन हम श्री मुख से सुन चुके, आज आप विश्व के प्रथम दार्शनिक हैं। आपकी बौद्धिक क्षमता, प्रवचन क्षमता व साहित्य मनीषा से हम परिचित है, आपका आभामंडल-आपकी प्रज्ञा, अंतर्दृष्टि, अतीन्द्रिय चेतना से संपन्न हैं। आगम साहित्य में आचार्य को अनेक परिभाषाओं से परिभाषित किया है। उन सभी कसौटियों पर विशिष्ट गुणों के समवाय आचार्य श्री महाप्रज्ञ को पाकर न केवल जैन समाज अपितु विश्व समुदाय गौरवमंडित हो रहा है।

भगवान महावीर के अहिंसा दर्शन को युगीन समस्या के संदर्भ में प्रस्तुत करते हुए महाप्रज्ञ जी ने फरमाया कि हिंसा के कारणों का विश्लेषण किया जाय और उनके निराकरण का प्रयास भी, तभी अहिंसा की योजना क्रियान्वित हो सकेगी। हिंसा के कारण है, गरीबी, अनैतिकता, सवेंगों पर नियंत्रण का अभाव, जातीय उन्माद, सांप्रदायिक विद्वेष और जीवन की प्राथमिक आवश्यकताओं का अभाव-रोटी, कपड़ा और मकान-ऐसे सभी कारण हैं जो हिंसा को बढ़ावा दे रहे हैं और इन्हीं कारणों को नियंत्रित करने के लिये आचार्य महाप्रज्ञ प्रयत्नशील है। समूची मानव जाति के हित चिन्तन के संदर्भ में गरीबी व अमीरी को खाई को जब तक कम नहीं किया जायेगा, जो अभाव में जी रहे है उनकी तरफ ध्यान नहीं दिया जायेगा, तब तक अहिंसा की बात करना बेमानी होगी, अहिंसा समवाय व रोजगारोन्मुखी अहिंसा प्रशिक्षण केन्द्रों की स्थापना की योजना के माध्यम से कार्यक्रम आगे बढ़ रहा है। देश में कई स्थानों पर आपके दिशा-निर्देशानुसार समाज ने इस कार्यक्रम को हाथ में लेकर बढ़ावा दिया है। आचार्य महाप्रज्ञ का विशेष जोर अहिंसा पर है क्योंकि आज सारा संसार हिंसा के महाप्रलय से भयभीत और आतंकित है।

अहिंसा की विभिन्न योजनाओं के सफल संचालन के उद्देश्य से 'अहिंसा यात्रा' एक अभिनव उपक्रम है। पांच दिसंबर 2001 को सुजानगढ़ राजस्थान से अहिंसा यात्रा प्रारंभ की जो गुजरात, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, राजस्थान व अब हरियाणा व देश की राजधानी में पहुंचकर विश्व को

दिव्य संदेश प्रदान करने वाली है। अहिंसा यात्रा का यह कारवां जाति, वर्ग, वर्ण, प्रांत, धर्म आदि की परिधी से बाहर निकल कर-विदेश में भी इसकी मांग बढ़ रही हैं। रूस, चीन व अब पाकिस्तान ने भी आचार्य महाप्रज्ञ को अपने देश में आने का निमंत्रण दे दिया है।

एक व्यापक धर्म क्रांति के रुप में अहिंसा का विस्तार नयी संभावनाओं के द्वार खोल रहा है। अहिंसा यात्रा का उपक्रम जहां राष्ट्र की मुख्य धारा से सीधा जुड़कर आज एक राष्ट्रीय आंदोलन के रुप में सक्रिय है। वही 'दुनिया के अनेक राष्ट्र इस तरह के प्रयत्नों से विश्व में शांति एवं अमन कायम होने की संभावनाओं को आशा भरी नजरों से देख रहे हैं।'

आचार्य श्री महाप्रज्ञ का जीवन इतना महान और महनीय है कि उसे शब्दों में समेटना कठिन ही नहीं दुष्कर है। महान दार्शनिक योगी, करुणा के सागर, दर्शन में अनेकांतवाद, वाणी में जगत कल्याण के भाव, पुरूषार्थ, पैरों में लक्ष्य तक पहुंचने की गतिशीलता, क्रोध, राग व द्वेष से कोसों दूर, जिनवाणी के भाष्यकार, वैज्ञानिक सोच के धनी, महान ध्यानी, संघ के आचार्य होते हुए भी पंथगतता से उपरत, शांति के अग्रदूत का वर्धापन का हम धन्यता का अनुभव करते हैं।

बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी

निर्मला बैद

'शासन के सिरताज तुम जनपथ की ज्योति हे,
भारत को है नाज तुम भारत की ज्योति हो.
अपनी उजली आभा को विस्तार दिया इतना
यथार्थ की आवाज पूर्ण जगत की ज्योति हो।'

भारत भूमि की यह विशेषता रही है कि जब इसे राष्ट्र के लिए समर्पित व्यक्तित्व की अपेक्षा हुई है तो किसी न किसी महामानव का आगमन यहां अवश्य हुआ है। इसी परम्परा मे आचार्य महाप्रज्ञ का नाम आता हे। व्यक्तित्व की पहचान का आधार बनता है आचार, विचार और व्यवहार। व्यक्तित्व और कर्तत्त्व के य तीन पैरामीटर है इनकी श्रेष्ठता व्यक्तित्त्व को शिखरजी ऊंचाई देती है, समुद्र सी गहराई देती है। आचार्य महाप्रज्ञ का जन्म वि.स. 1977 आषाढ कृषणा त्रयोदशी को टमकोर (राजस्थान) के चोरडिया परिवार मे हुआ। उनके पिता का नाम श्री तोलारामजी एवं माता का नाम बालूजी था। आपका जन्म नाम नथमल था। वि स 1987 माघ शुक्ला दशमी को सरदार शहर मे बालक नथमल ने अपनी माता क साथ पूज्य कालूगणी से दीक्षा ग्रहण की। प्रज्ञापुरुष आचार्य महाप्रज्ञ युग प्रधान आचार्य तुलसी के सक्षम उत्तराधिकारी है। बुद्ध प्रज्ञा विनय और समर्पण का उनके जीवन मे अदभूत संयोग है। वे महान दार्शनिक कवि, वक्ता एवं साहित्यकार होने के साथ साथ प्रेक्षाध्यान पद्धति के महान अनुसंधाता एवं प्रयोक्ता है। अहिसा यात्रा के प्रणेता है। महाप्रज्ञ एक महासमुद्र है उनकी चाह पाना हर आदमी के वश की बात नही है। महाप्रज्ञ श्रमण परम्परा के एक प्रज्ञानिष्ठ आचार्य है। आपको प्राप्त कर श्रमण गौरवान्वित हुआ है। सचमुच आचार्य महाप्रज्ञ मे अनेक दुर्लभ विशेषताएं है। एकजुटता सरलता की प्रतिमूर्ति समर्पण के अद्वितीय साधक, दार्शनिक विभूति और सरस्वती के अद्भूत आराधक है। सद्भावना से सिक्त उनका जीवन राष्ट्रीय सद्भावना के लिये समर्पित है। वे अपनी अहिंसक सेना के साथ शांति और सद्भावना के लिए समर्पित है। वे अपनी अहिसक सेना के साथ शांति और सद्भावना के लिए समर्पित है। जैनागमों के गंभीर अध्ययन के साथ - साथ उन्होंने भारतीय एवं भारतीयों सभी दर्शनों का तलस्पर्शी एवं तुलनात्मक अध्ययन किया है। संस्कृत, प्राकृत एवं हिन्दी भाषा पर उनका संपूर्ण अधिकार है। उनकी सृजनचेतना से केवल तेरापंथ ही नही अपितु संपूर्ण मानव जाति लाभान्वित हुई है। शोध विद्वानों के लिए आचार्य महाप्रज्ञ एक विश्वकोष है शायद ही कोई ऐसा विषय हो जो आचार्य महाप्रज्ञ के ज्ञान-कोष्ठ में अवतरित न हुआ है। आचार्य महाप्रज्ञ ने प्रेक्षा ध्यान एव जीवन विज्ञान के रुप में एक विशिष्ठ वैज्ञानिक साधना पद्धति का आविष्कार किया है इस साधना पद्धति के द्वारा अनेकों

व्यक्ति मानसकि विकृति से दूर हट कर आध्यात्मिक ऊर्जा व शांति प्राप्त करते हैं। यहां पर भी प्रेक्षाध्यान पद्धति से अनेकों अकादमियों में लाभ उठा रहे हैं। आपकी अहिंसा यात्रा से जन-जन में अहिंसक चेतना का जागरण नैतिकता का जागरण व मानवीय मूल्यों का विकास हो रहा है। ऐसे योगी संत को शत शत नमन। स्वामी विवेकानन्द ने एक बार अपने गुरु देव को भावभीनी श्रद्धांजलि समर्पित करते हुए कहा था मैने जो कुछ भी पाया है मेरे विचारों, शब्दों या क्रियाओं से दुनिया के किसी भी व्यक्ति को कुछ भी सहयोग उपलब्ध हुआ है उस पर मेरा कोई अधिकार नहीं है। उसका सारा श्रेय उस महाप्रभु को है ठीक इसी प्रकार अपनी प्रशस्ति के क्षणों में उनका यहीं प्रत्युत्तर होता कि जो कुछ हो रहा है उसमें गुरु देव श्री का कर्तत्व और सृजनशीलता बोल रही है। मेरा अपना कुछ भी नहीं है।

'प्रज्ञ प्रजागृति नीत चेतो निर्मलीकृतम।
मनोस्तमु गुरवे तस्मै, अभिनाय त्मात्मने।।'

मै उस गुरु को नमस्कार करता हूं जिसने मेरा प्रज्ञा को प्रजागृत कि चित्त को निर्मल किया और जो मेरी आत्मा से अभिन्न है।आप जैसे नन्यावर्त को श्रद्धार्शक्त नमन। आचार्य महाप्रज्ञ जी को इन विशेषताओं को देखते हुए इन्दिराजी राष्ट्रीय एकता पुरस्कार से सम्मानित्त किया गया व लंदन की संत ने भी सम्मान प्रदान किा। ऐसे परमपूज्य आचार्य प्रवर को हम भावभरा शत्-शत् नमन।

सम्पर्क सूत्र- एच.के इन्डूस्ट्रीज कोर्पोरेशन, 4/11 अंजैया काम्पलेक्स हिल स्ट्रीट, सिकन्दराबाद- 500003 आंध्र ❖

प्रभुता का नया नाम

✍ रश्मि सोनी

कालमार्क्स ने एक विचार दिया-किसी के गुणो की प्रशंसा कर अपाना समय व्यर्थ मत करो। उसकी सार्थकता है कि उन गुणो को अपने जीवन मे सक्रात करो।

इस चिंतन मे जीवन की सफलता का महान् अवबोध छिपा हुआ है। यही अवबोध व्यक्ति को ऊचा उठाता हे, लघुता स प्रभुता की ओर ले जाता है। उस प्रभुता का एक नाम है-आचार्य महाप्रज्ञ। महाप्रज्ञ ने अपने जीवन मे उन गुणा का संक्रांत किया, जिनकी संक्राति ने उनको उस सर्वोच्च शिखर पर पहुंचाया, जहां जानो पर अर्हता स्वयं उनका स्वागत करती है। धर्मचक्र उनके आगे-आगे चलता है और हजारो-हजारो प्रबुद्धजन उनक प्रतिबोध को पाकर प्रतिबुद्ध बनते है। आचार्य तीर्थकर के प्रतिनिधि होते है, अनुयोग के ज्ञाता होते है। सोभाग्य से वह गौरव प्राप्त हुआ आचार्य महाप्रज्ञ को।

निर्यति की अनन्त-अनन्त रेखाएं होती है। उन रेखाओं को कौन खीचता है? वे रेखाएं कब और किसके लिए खीची जाती है, वे प्रश्न आज भी अनुत्तरित हैं। महाप्रज्ञ के सामने आज भी नियति के अनेक घटक विद्यमान है। उनमे एक घटक है-गुरु शिष्य का प्रथम बार का मिलन। उनके प्रेणास्रोत मुनि छबीलजी स्वामी की प्रेरणा पाकर वे गुरु दर्शनो के लिए गंगाशहर आए। मुनि तुलसी को प्रथम बार चुम्बकीय आकर्षण से अपने अपलक नेत्रो से निहारा। प्रथम दर्शन मे ही चुम्बक और लोहे की भांति उनका गुरु-शिष्य का तादात्म्य संबध जुड़ गया। शिष्य गुरु के अन्तःकरण मे विराजित हो गए और गुरु शिष्य के चित्त मे समा गए।

वह अज्ञात परिचय शनै शनै गुरु और शिष्य के रुप को उभारने वाला बन गया। वह दिन कितना सुखद, आनन्दमय और उल्लासमय था, जब शिशु नथमल मातुश्री बालुजी के साथ तेरापंथ के अष्टमाचार्य महामना पूज्यपाद कालूगणी क करकमलो से सरदारशहर की पुण्यभूमि मे (सन् 1932, 29 जनवरी को) दीक्षित हो गए और उनकी शिक्षा, सारणा-वारणा का सारा कार्य मुनि तुलसी को सौंप दिया गया।

घुणाक्षरन्याय से वह माणिकाचंन संयोग था। मुनि तुलसी ने उनके केवल अक्षरज्ञान ही नहीं दिया, चक्षुदान भी दिया। उनकी प्रत्येक प्रवृत्ति निवृत्ति से संचालित थी। जीवन व्यवहार वैराग्य से अनुप्राणित था। कुशल अनुशास्ता होने के कारण मुनि तुलसी ने अपने शिष्य विद्यार्थी पर अनुशासन के साथ-साथ वात्सल्य को भी जी भर कर उडेला। उस समय के मुनि नथमल अपने शिक्षा गुरु से इतने अधिक अभिभूत थे कि वे अपने कार्यों से मुनि तुलसी को किंचित्मात्र भी अप्रसन्न करना नहीं चाहते थे।

उसी का परिणाम था कि मुनि तुलसी अपने छात्र को ज्ञान-दर्शन चरित्र के वैभव से संपन्न बनाना चाहते थे और मुनि नथमल विरासत में मिलने वाली गुरुसम्पदा को अपने भीतर संजोना चाहते थे।

घंटों-घंटों तक वे अपने शिक्षा गुरु के समीप बैठे रहते, उनकी मोहिनी मुद्रा को आत्मसात करते रहते। जिस प्रकार मीरा के घनश्याम और तुलसी के राम उपास्य थे, उसी प्रकार मुनि नथमल के मुनि तुलसी ही प्रणम्य थे।

इस प्रेक्षा से शिष्य के भीतर गुरु के गुणों का संक्रमम प्रारंभ हो गया। दिनों-दिन प्रभुता का विकास होता चला गया। शिक्षा विकास में नये उन्मेष आने लगे। एक दिन वह था, जब वे शिक्षा के क्षेत्र में सबसे पीछे गिने जाते थे और एक दिन वह आया, जब वे अपने सहपाठियों में सबसे आगे निकल गए। कहां तो उन दिनों की अल्पज्ञता और मन्थरगति और कहां बाद की प्राज्ञता और द्रुतगति।

उनके अतीत काल को देखने या परखने वाला व्यक्ति सहसा उनके वर्तमानकाल को देखकर विश्वास भी नहीं कर सकता कि ऐसा भी हो सकता है ? पर जो कुछ हुआ, वह स्वयं प्रत्यक्ष है। उसे सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं है। स्वयं महाप्रज्ञ बहुत बार कहते हैं-मेरी प्रारंभिक स्थिति सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक आइंस्टीन जैसी थी। शिक्षाकाल मे आइंस्टीन के लिए गणित का पढ़ना एक सिरदर्द बना हुआ था।

अध्यापक उसको बताते कि एक-एक मिलकर दो होते हैं, पर आइंस्टीन की समझ से कोसा दूर था। उसकी बुद्धि पर तरस खाकर एक दिन अध्यापक ने उससे कहा-आइंस्टीन ! सारी दुनिया गणित को पढ़ सकती है, पर तुम्हारे जैसा मूर्ख इस विषय को कभी नही पढ़ सकता। कालान्तर मे वही आइंस्टीन विश्व का महान् गणितज्ञ बन गया। जीवन के ऐसे कितने ही क्षण उन्होंने भी अल्पज्ञता में बिताएं।

नियति के योग ने उनको अल्पज्ञ से महाप्रज्ञ बना दिया। अथवा यूं कहना चाहिए कि उनके गुरु की अंगुलियों में ही कोई ऐसा चमत्कार था, जिन्होंने ऐसा कर दिखाया और उनके भीतर के प्रभु को जगा दिया।

अनुभूति के लिए शब्द नहीं होते और शब्द के लिए अनुभूति नहीं होती। फिर भी व्यवहार-जगत् शब्दों के सहारे चलता है। गुरु में गुरुता होती है। उनकी गुरुता को जानना मापनना और लांघना बड़ा ही दुर्गम होता है। कभी-कभी गुरु रहस्यमयी भाषा में भविष्य का भी संकेत दे देते है।

एक दिन मुनि नथमलजी मुनि तुलसी के उपपात मे बैठे हुए थे। केवल दो के सिवाय तीसरा वहां कोई नहीं था। अचानक मुनि तुलसी को क्या सूझा ? उन्होंने अपने विद्यार्थी मुनि से पूछा-क्या तुम मेरे जैसा बनोगे ? प्रश्न जितना विचित्र था, उत्तर उससे भी महाविचित्र था। शिष्या ने तपाक से उत्तर देते हुए कहा-आप बनाएंगे तो बन जाऊंगा, नहीं बनाएंगे तो नहीं बनूंगा ? इस प्रश्न और उत्तर में भावी का प्रतिबिम्ब झलक रहा था।

महानता पूज्यपाद कालूगणी स्वर्गवासी हो गए। जीवन का एक अध्याय समाप्त हो गया। दूसरे अध्याय का प्रारंभ हुआ। मुनि तुलसी के कंधों पर आचार्यत्व का दायित्व आ गया। आचार्य अपने शिष्यों के लिए वह सब कुछ करते है, जो उन्हें करणीय होता है। आचार्य तुलसी ने भी वैसा किया। उन्होंने समय-समय पर अपने शिष्यों को महान् बनने के लिए सबको समान रुप से अनेक अवसर प्रदान किए। किन्तु यह तो शिष्य की पात्रता पर निर्भर करता हैं कि वह उस अर्हता को कितना और किस रुप में ले पाता है। मुनि नथमल (आचार्य महाप्रज्ञ) ने इस योग्यता के लिए अपने आपको पात्र बनाया। उन्होंने क्रमशः उन सभी अर्हताओं, क्षमताओं का सर्जन किया, जो एक धर्मसंघ के अनुशास्ता और आचार्य के लिए नितांत अपेक्षित होती हैं। इन योग्यताओं के कारण वे एक के बाद एक महत्वपूर्ण पदो पर प्रतिष्ठित होते चले गए।

. सर्वप्रथम सन् 1966 में हिसार मर्यादा-महोत्सव के अवसर पर उन्हे संघ का निकाय सचिव बनाया गया। संघ कि शिक्षा, साहित्य, साधना और व्यवस्था संबंधी गतिविधियों की गतिशीलता के

लिए निकाय चतुष्टय की स्थापना हुई। उन निकायों के नियन्ता और शीर्षस्थ का दायित्व आपको सौंपा गया।

. प्रारंभ से ही महाप्रज्ञ प्रज्ञा जगाने के पक्षधर रहे हैं। उनका चिंतन है कि बुद्धि कुण्ड के पानी के समान है। जितना पानी डालो, उतना पानी निकाल लो। प्रज्ञा कुएं के पानी के समान है। उसका अखूट स्रोत कभी खूटता नहीं है। उन्होंने स्वयं प्रज्ञामय जीवन जीया है और प्रज्ञा-पराग को जन-जन में बांटा है। उसी का मूल्यांकन करते हुए आचार्य तुलसी ने बारह नवम्बर सन् 1978 में दीक्षा समारोह के पावन अवसर पर गंगाशहर में महाप्रज्ञ अलंकरणा से आपको अलंकृत किया।

. एक बार डीडवाना के श्रावक सुप्रसिद्ध ज्योतिर्विद जयचन्दलालजी मुणोत ने आचार्य तुलसी के बारे में भविष्य वाणी की थी कि वे अपने जीवन के सातवें दशक में अपना उत्तराधिकार सौंप देंगे और उस मुनि के नाम का आद्यक्षर होगा ..मकार..। 4 फरवरी सन् 1979 में राजलदेसर मर्यादा-महोत्सव पर वह कार्य संपन्न हुआ और वे युवाचार्य पद पर मनोनीत हो गए और साथ ही साथ महाप्रज्ञ अलंकरण को मूल नाम के रुप में रुपायित कर दिया गया। वे मुनि नथमल से युवाचार्य महाप्रज्ञ बन गए।

. महाप्रज्ञ का बचपन से ही योग-ध्यान की ओर आकर्षण रहा है। उन्होंने जितना अधिक योग साहित्य पढ़ा है, उससे अधिक उसका अभ्यास किया है। इसलिए प्राणायाम, आसन और ध्यान उनके जीवन के अभिन्न अंग हैं। बहुधा लोग पूछते हैं कि जैन परम्परा में भी योग का कोई स्थान है? उसका उत्तर महाप्रज्ञ द्वारा लिखित ..जैन योग.. की पुस्तक है। उन्होंने योग के संदर्भ में जैन आगमों को पढ़ा है। अपनी प्रज्ञा से उन लुप्त विधियों को खोजा है। प्रेक्षाध्यान पद्धति उस अन्वेषणा का ही विकास है। इन खोजों को मूल्यांकित करते हुए आचार्य श्री ने सन् 1986 में लाडनूं चातुर्मास में पट्टोत्सव के दिन महाप्रज्ञ को जैन योग के पुनरुद्धारक का संबोधन प्रदान किया।

. तेरापंथ धर्मसंघ में संघीय दृष्टि से आचार्य का स्थान सर्वोपरि होत है। उस अर्हत तक पहुंचने के लिए अनेक भूमिकाओं को पार करना होता है। वर्तमानवर्ती आचार्य यही चाहता है कि मेरा प्रत्येक शिष्य आचार्य की अर्हता को अवश्य पाए। पर कोई उसके लिए अपने आपको उम्मीदवार प्रस्तुत न करे। यह आचार्य की स्वेच्छा होती है कि वह किसको अपना उत्तराधिकारी चुनता है? जैन परम्परा के इतिहास में वर्तमान आचार्य ने अपने उत्तराधिकारी को युवाचार्य पद पर ही प्रतिष्ठित देखा। दिगंबर आम्नाय में यह एक विधि है कि वर्तमानवर्ती आचार्य अशक्ति की अवस्था में, संलेखना या संथारे के समय युवाचार्य को आचार्य का कार्यभार सौंपकर आचार्यपद से मुक्त हो जाते हैं और आध्यात्मिक साधना में लग जाते हैं। स्वस्थता की स्थिति में किसी आचार्य ने अपने जीवनकाल में युवाचार्य को आचार्य ने बनाया हो, ऐसा इतिहास के पन्नों में कहीं भी उल्लेख नहीं हैं।

वे क्षण आंखों के लिए कितने रोमांचक, क्रांतिकारी और साहसिक थे, जब एक धर्म संघ के अनुशास्ता अपने फौलादी मनोबल से नए इतिहास का सृजन कर रहे थे। सुजानगढ़ का मर्यादा-महोत्सव। भव्य आयोजन और 18 फरवरी 1994 का पावन दिन। घड़ी में साढ़े तीन बजने को थे। अचानक आचार्य श्री ने लोगों में उत्सुकता को जगाते हुए कहा-आज कुछ नया होने वाला है। वह क्या होगा? उसकी प्रतीक्षा कीजिए। कहीं ऐसा न हो कि आप लोग उस कार्यक्रम से वंचित रह जाए। युवाचार्य श्री ने साधु-साध्वियों के चतुर्मासों की उद्घोषणा की। उसके तत्काल बाद आचार्यश्री ने कहा-हमारा धर्मसंघ एक प्राणवान् संघ है। पता नहीं मेरी प्रकृति में क्या है कि मैं कुछ-कुछ नया करता रहता हूं। हमारे धर्मसंघ के पूर्ववर्ती आचार्यों ने अपने जीवनकाल में अपने उत्तराधिकारी (युवाचार्य) को आचार्यपद पर नहीं

देखा। मैं उसे देखना चाहता हूं। आज से मैं अपने युवाचार्य को आचार्यपद पर प्रतिष्ठित करता हू।

हमारे युवाचार्य आचार्य का दायित्व संभाले और मैं इस पद से अपने आपको विसर्जित करता हूं। युवाचार्य महाप्रज्ञ ने चतुर्विध संघ का प्रतिनिधित्व करते हुए आग्रहपूर्ण शब्दो में कहा-गणाधिपति परम पूज्य गुरु देव! आप सदा से ही मेरे मार्गदर्शक रहे हैं। चतुर्विध संघ को आपका संबल और पाथेय मिलता रहे, इसके लिए आप ..गणाधिपति परमपूज्य गुरु देव . का पद ग्रहण करें। आचार्यश्री तुलसी नहीं चाहते थे कि वे एक पद को छोड़कर दूसरे पद को ग्रहण करें। संक्षेप में उन्होंने यही कहा-काश! मैं अपने जीवन को और अधिक आध्यात्मिक साधना में लगाता। फिर भी संघ की बलवती भावना और प्रार्थना पर उन्होंने उस पद को बड़ी झिझक के साथ स्वीकार किया। वह दृश्य कितना मनोरम और सजीव था जब चतुर्विधसंघ अपने नए आचार्य महाप्रज्ञ को श्रद्धांजलि अभिवंदना-स्तवना कर रहा था। गणाधिपति अपने नए आचार्य को छाती से लगाकर गले मिल रहे थे। दिग्दिगन्त जय-जय के घोषो से गूंज रहा था। सर्वत्र प्रशंसा के फूल बरसाए जा रहे थे गणाधिपति के साहसिक कार्य और महान कर्तृत्व पर। बधाइया बांटी जा रही थी नये व्यक्तित्व पर। उस अवसर पर किसी का मन प्रफुल्लित हो रहा था उसकी भविष्यवाणी की सत्यता पर और किसी का मन हर्षित था नए परिधान में पुराने चेहरे पर।

प्रणाम है उस प्रभु को, जिसने अपने समान प्रभु को बना दिया। प्रणाम है उस पर [illegible] अपने प्रभु को जगा दिया।

[illegible] श्री सजन कुमार पुत्रश्री [illegible] ❖

दीर्घजीवी

साध्वी ओरोग्यजी

जीवेम शरद् शतम् हम सौ वर्षो तक जीएँ, यह अभाप्सा पत्येक व्यक्ति मे रहती है। किसी को भी मृत्यु प्रिय नहीं। बच्चे, युवा और बुद्ध सभी के जन्म दिन पर आशीर्वाद स्वरुप निकलता हैं- तुम जीयो हजारो साल, साल के दिन हो पचास हजार। प्रश्न उठता है कि जीवन के ऐसे कौन से नियामक तत्व हैं जिसके द्वारा दीर्घायु भव, स्तायु भव और चिरायु भव की मंगल कामना सार्थक हो सकती है। अतीत का अवलोकन करने पर ज्ञात होता है कि प्राचीन काल में ऋषि महर्षि योग साधना के बल पर दीर्घायुष्य को प्राप्त होत थे। इसी श्रृंखला मे वर्तमान युग मे युग प्रधान आचार्य श्री महाप्रज्ञजी एक ऐसे ऋषि पुरुष हैं, जिन्होने अपनी योग साधना के बल पर दीर्घायुष्य को प्राप्त किया हैं। उनके अनुसार दीर्घ जीवन के आधारभूत तत्व है। समता प्रधान जीवन शैली, संयम प्रधान जीवन शेली, श्रम प्रधान जीवन शैली, सकारात्मक सोच।

समता प्रधान जीवन शेली - समता मनुष्य जीवन का सहज स्वभाव हैं। किन्तु वही व्यक्ति समता को जीवन में आत्मसात कर सकता है जो आत्मा के नीकट रहना जानता है। जो आत्मा के निकट रहना नहीं जानता, वह परिस्थितिया आने पर सहज स्वभाव से विभाग मे चला जाता हैं। आचार्य श्री महाप्रज्ञ के जीवन मे करुणा का अजस्र स्रोत प्रवाहमान है। करुणा उसी के भीतर से प्रस्फुटित होती है जिसके कषाय उपशान्त हो, सवेगो पर जिसका नियंत्रण हो। आचार्य श्री की दीर्घजीविता का बहुत बड़ा राज है उनकी उपशांत कषाय की साधना। दिन भर लोगो से घिरे रहना, कार्य की अत्यधिक व्यस्तता। लेकिन फिर भी कभी याद नही कि आचार्य के कषाय प्रबल हुए है क्या? कषायो की प्रबलता तो दूर की बात है किंचित मात्र झंझुलाहट की सिकन भी उनके चेहरे पर नही देखी जाती है। वैज्ञानिकों के अनुसार क्रोध करने का मतलब है अपनी आयु को कम करना। स्विटजरलैंड के प्रसिद्ध डॉ कारंजेस्की के अनुसार दीर्घजीविता का रहस्य है, आवेशमुक्त और शान्त मनोभूमि का निर्माण। एक बार गुरुदेव श्री तुलसी से पूछा गया आप 80 की उम्र मे पहुंच रहे है, फिर में 40 वर्ष के प्रतीत होते है। इसका रहस्य क्या है? पूज्य गुरुदेव का उत्तर था। हल्का परिमित भोजन और चित्त की प्रसन्नता। आचार्य श्री महाप्रज्ञजी सदेव और प्रफुल्लित नजर आते है। आक्रोश कभी उनके पास नही फटकता। अपितु उनके पवित्र और निर्मल आभामंडल मे आनेवाले व्यक्ति का भी आक्रोश ठंडा पड़ जाता हैं। समता भूयात् का महामंत्र उनके जीवन का अभिन्न साथी। बन चुका है। उपशांत रस से सिंचित उनकी जीवन फुलवारी हम सबके लिए अबोला संदेश है। दीर्घ और स्वस्थ जीवन जीना होतो उपशांत कषाय की यात्रा साधना करनी होगी। उपशांत रस से मस्तिष्क की लय बुद्धता बनी रहती हैं और व्यक्ति वास्तविक आनंद को प्राप्त कर सकता है।

संयम प्रधान जीवन शेली - संयमः खलु जीवनम् का उद्घोष आचार्यजी के जीवन का आदर्श रहा हैं।

संयम की उदात्त भूमिका पर अवस्थित उनका व्यक्तित्व हम सब के लिए अनुकरणीय है, वर्तमान संस्कृति में आचार्यश्री के दिर्घायुष्य का राज है, संयम प्रधान जीवन शैली। उनके जीवन की प्रत्येक क्रिया में सौरभ है। प्रसंग चाहे आहार संयम का हो, या वाणी संयम हो या काय संयम नहीं, ब्रेक नहीं है, वहां दुर्घटनाओं से बचाने के लिए कुछ नियम बनाये जाते हैं, अन्यथा छेदयुक्त नौका में यात्रा करने की तरह जीवन में पग पग भर खतरों का सामना करना पड़ सकता हैं। आहार संयम - आहार के संबंध में आचार्यश्री का दृष्टिकोण साधना एवं स्वास्थ्य की परिधि में केंद्रित है। स्वाद विजय उनके जीवन का संकल्प हैं। आचार्यश्री ने अपने प्रयोग किए हैं। वे अनेक वर्षों से शनिवार को अन्न वर्जन और रविवार को नमक, वर्जन का प्रयोग कर रहे हैं। कई वर्षों तक उन्होंने चीनी और चीनी से बने पदार्थों का उपभोग नही किया। सामान्यता आहार की स्वादिष्टता नमक, चीनी और मिर्च से ही होती है, किन्तु बिना, चीनी, नमक और मिर्च से बना भोजन ही आपको रुचि का विषय हैं। आचार्यश्री बहुधा कहा करते है कि पापड़,पकौड़ी, कचौड़ी या अन्य तले हुए तथा गरिष्ठ पदार्थ का स्वाद विजय की साधना का ही सफल है कि आचार्यश्री आज भी स्वस्थ और तंदुरस्थ जीवन जी रहे हैं।

वाणी संयम - आचार्यप्रवर का वाणी संयम अनूठा है। आपके द्वारा कभी भाषा का असम्यक् प्रयाग नहीं होता, कभी किसी के दिल को ठेस पहुंचे वैसे शब्दो के प्रयोग नहीं करते। आपका VOICAL CARD बहुत सधा हुआ है। प्रतिदिन निश्चित समय पर मौन का क्रम चलता है।

काय संयम - अहर्निश् अर्हत् शासन की सेवा में लगे आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने आसना के द्वारा अपनी काया को साधा हैं। 83 वर्ष की उम्र में आज भी व प्रतिदिन नियामक रुप से आसान प्राणायाम का प्रयाग करते हैं। उम्र के इस पड़ाव मे प्रवचन के समय घंटो तक आसन में बैठे रहना बिना योग साधना के सभव नहीं। ऐसा लगता हैं कि उनके शरीर की प्रत्येक के कोशिका ओर प्रत्येक मांगपेसियां उनके अनुशासन मे अनुशासित हैं। स्टेडफोर्ड यूनिवर्सिटी स्कूल ऑफ मेर्डिसन के विशेषज्ञो द्वारा किये गये शोध के अनुसार स्वस्थ और संयमित आदतें व्यक्ति को उम्र को लंबी करती है। इन विशेषज्ञों ने लगभग 1700 व्यक्तिया की आदतों की विस्तृत जांच से यह निष्कर्ष निकाला कि जो नियमित व्यायाम करते है, धुम्रपान नहीं करते और सही खान पान रखतें और जीवनशैली से संबंधित बीमारियों जैसे हृदय रोग, उच्च रक्तचाप आदि से सुरक्षित रहते हैं। रसायनशास्त्रविद् डॉ. लुई पोलिग ने कहा था कि जो व्यक्ति संयमित और प्राकृतिक जीवन जीता हैं वह निरोग और दीर्घायु होता हैं। इस प्रकार आचार्यश्री का जीवन संयम के विविध प्रयोगो का जीवन्त निदर्शन हैं। श्रमप्रधान जीवन शैली - अथर्ववेद मे कहा गया है कि यदि व्यक्ति सौ वर्ष जीना चाहता हें तो उसे उन्नतिशील जीवन जीना चाहिए। उन्नतिशील का अर्थ हैं-क्रियाशील रहना। हर पल नया सोचो, नया करो। निठल्ला जीवन दूभर होता है। ऐसा व्यक्ति स्वयं के लिए तथा दूसरो के लिए भारभूत बन जाता है। उसे बीमारियो को बुलाने के लिए जरुरत नही होती, बीमारियां स्वयं उनके द्वार पर दस्तक देती है, पाचन शक्ति कमजोर हो जाती है और व्यक्ति हीन भावना से ग्रस्त हो जाता है।

आचार्य श्री महाप्रज्ञजी श्रमशीलता के जीवन्त पर्याय है। उट्ठए णो पमायए उनके जीवन का आदर्श वाक्य हैं। प्रातः 4 बजे से लेकर रात्रि में 10 बजे तक निरंतर कार्यशील रहना। उनकी कर्मजा शक्ति ही उनके स्वास्थ्य का आधार है। एक बार किसी व्यक्ति ने आचार्यश्री से पूछा आप दिन भर श्रम करते हैं, निरंतर अध्ययन और मनन में लगे रहते है। क्या आप क्लान्त नहीं होते ? क्या आपको विश्राम की आवश्यकता महसूस नहीं होती ? आचार्यश्री ने बड़ी ही सहजता के साथ उत्तर देते हुए कहा कि मैं किसी कार्य को बोझ महसूस नहीं करता। थकान जब आती है जब कार्य का भार महसूस किया जाता हैं। दूसरी बात यह है कि

जब मैं एक कार्य से निवृत्त होता हूं, तब दूसरे कार्य में लग जाता हूं। मेरे लिए यह कार्यान्तर ही विश्राम है। इसके अतिरिक्त विश्राम की विशेष आवश्यकता की अनुभूति नहीं होती। इस स्थिति का निर्माण वही व्यक्ति कर सकता है, जिसने साधना के द्वारा अपने शरीर को साध लिया है। निष्क्रियता का जीवन आचार्यश्री को पसंद नहीं। हर पल नया चिंतन, नई योजना और ऊंचे लक्ष्यों ने ही उनके व्यक्तित्व को शिखर तक पहुंचाया है। सोवियत रुस के 158 वर्षीय किसान मखमूद इवाजोव ने अपनी लंबी जिंदगी के बारे में बताया कि कुछ न कुछ शारीरिक और मानसिक मेहनत करते रहना चाहिए। निष्क्रीय बैठे रहने से शरीर के अवयवों में जंग लगने लगता है। स्नायुतंत्र को सक्रिय रखने के लिए और बुढ़ापे को दूर भगाने के लिए जरुरी है, सतत क्रियाशीलता।

सकारात्मक सोच - हार्वर्ड यूनिवर्सिटी के प्रोफेसर विलियम जेम्स का कहना है कि मेरी पीढ़ी की सबसे बड़ी खोज यह है कि इंसान अपने नजरिए में बदलाव लाकर अपनी जिंदगी को बेहतर बना सकता है। वस्तुतः प्रोफेसर जेम्स का कथन सही है। हमारी जिन्दगी को बेहतर और बदतर बनाने में हमारे विचारों की, हमारे सोच व चिंतन की अहम् भूमिका है। वैज्ञानिकों ने तो अपने गहन अनुसंधान से यहां तक सिद्ध तक दिया कि व्यक्ति अपनी सोच के द्वारा अपनी आयु को घटा-बढ़ा सकता है। यूनिवर्सिटी ऑफ टेक्सास की गेलपेस्टन स्थित मेडिकल ब्रांच द्वारा किये गये अध्ययनों से यह निष्कर्ष निकाला गया कि नकारात्मक दृष्टिकोण जीवन को निराशा के गर्त में धकेलता है और ऐसी भावनाएँ पनपने लगती है कि मेरा कुछ नही हो सकता, जीवन बेकार है यह सब कुछ खतम हो गया। यह भावनाएँ दिल पर इतना बोझ डालती है कि हृदयाघात होने की स्थिति बन जाती है। जबकि आशा का दामन थामने वाला व्यक्ति अपना पूरा जीवन प्रसन्नतापूर्वक जीता है।

आचार्य श्री महाप्रज्ञजी की दीर्घजीविता का यह बहुत बड़ा हेतु है कि नकारात्मक चिंतन की परछाई उन पर कभी नहीं पड़ती। उनका हर चिंतन सकारात्मक होता है। उनकी डिक्शनरी में निराशा या हार जैसे शब्द नही है। वे दुःख में से ही सुख निकालने की कला में पारंगत है। छोटी बातों में अपने मानस को समझाना उनका स्वभाव नहीं है। सन् 1960 की बात है। प्रधानमंत्री पं. नहेरु टेलीविझन के प्रश्नोत्तर कार्यक्रम में भाग लेने आकाशवाणी भवन गए। उनसे प्रश्न पूछने के लिए अनेक लोग आए थे। वे पंडितजी से विभिन्न विषयों पर प्रश्न पूछ रहे थे। एक बूढ़े सज्जन ने पूछा पंडितजी ! आप भी 70 के ऊपर के है और मे भी, लेकिन क्या कारण है कि मे छोटी छोटी और ओछी किस्म की बातों से ऊपर उठा रहता हूं। मेरी जेहनीयत पर उनका असर नही पड़ता। मै तो दुनिया भरके मसलों को ऊंची नजरो से देखने की कोशिश करता हूं और इसलिए मेरी सेहत और मेरे विचार ढ़ीले ढ़ीले नही हो पाते।

आचार्य श्री महाप्रज्ञजी का भी सागर के समान गंभीर चिंतन लोगो का पथ प्रदर्शन करता है। उनका स्वयं का चिंतन हैं कि सकारात्मक भावनाएँ मन पर अच्छा प्रभाव डालती हैं। इससे रोग प्रतिरोधक क्षमता का विकास होता हैं। वैज्ञानिक अनुसंधानों के अनुसार सकारात्मक सोच से शरीर में। मिनट में 1600 डब्लयु.बी.सी. बनते है जो हमारी प्रतिरक्षा प्रणाली के संवाहक हैं। आचार्यप्रवर के जीवन को देखकर लगता है कि सकारात्मक भावों की तरंगें अनवरत आपके आभावलय की उपासना करने वाला हर व्यक्ति सुख और शांति का अनुभव कराते है।

वस्तुतः आचार्यप्रवर का जीवन संयम के उन्नत शिखरो पर प्रतिष्ठित है। मन, वचन और काया की समरसता कथनी करनी की एकता और हर घटना प्रसंग को अनेकांत दृष्टि से देखने की सापेक्षता ही आपकी दीर्घजीविता की कुंजी है। आपको दीर्घ दृष्टि दीर्घकाल तक जन जन की चेतना को दीर्घजीविता का मंगल संदेश प्रदान करती है। ❖

परम पूज्य आचार्य महाप्रज्ञजी के चरण कमलों में नोहर (राजस्थान) निवासी परिवार द्वारा हार्दिक मंगलकामनाएं

श्रीमती मघादेवी सिपानी
धर्मपत्नी स्व रेवतमल जी सिपानी

: परिवार परिचय :

बाबूलाल	-किरणदेवी-बीकानेर
कमलचंद	- संतोष
सुरेन्द्र	- संतोष
अशोक	- शशि
इन्द्रा	- प्रदीप कोचर
लक्ष्मी	- ललित पारख

-: कमल सिपानी :-

जैन स्टील्स

देशबंधू प्रेस काम्पलेक्स,
पो. रायपुर-492001 (छत्तीसगढ़)
दूरभाष : (ऑफिस) 534151, 536802, 253151, 253051
(मोबाइल) 98271-11606

इक्कीसवी सदी के देदिप्यमान नक्षत्र

✍ साध्वी कारुण्य प्रभा (श्री डूंगरगढ़)

बीसवीं सदी के प्रारम्भ मे रत्न क्षोतिज की इस पुण्य वसुधरा पर एक असाधारण बालक ने जन्म लिया, माता-पिता ने अपने लाडले बेटे का नाम रखा नत्थु। बालक जब 2-3 महिने का हुआ तभी सिर से पिता का साया उठ गया। बालक के पालन पोषण का जिम्मा अकेली मां बालू के नाजुक कधो पर पड गहया, मा बालू का पूरा जीवन धार्मिक प्रवृति से ओतप्रोत था। उन्होंने अपने बच्चों मे धार्मिक बीजों का तपन किया, जिसका परिणाम है कि बाल्य अवस्था मे ही बालक के कदम सयम पथ की राह पर बढ़ गए। अँपनी मा बालूजी के साथ अष्टमाचार्य पूज्य कालूगणी के करकमलों से संयम जीवन स्वीकार किया। दिक्षित होते ही आपका विद्या आपका विद्या गुरु के रुप मे मुनि तुलसी का सान्निध्य मिला जिन्होंने एक अज्ञ बालक का केवल अक्षर ज्ञान ही नही कराया आपके पावन सान्निध्य मे रहकर मुनि नथम ल ने विद्या अध्ययन शुरु किया हिन्दी, प्राकृत भाषा, सस्कृत भाषा के साथ साथ प्राचीन भारतीय विद्या, पाश्चात्य दर्शन, आत्मवाद, साम्यवाद और कर्मवाद का गहन अध्ययन किया। अपनी निर्मल प्रज्ञा से आगमों का गहन अध्ययन कर उनके सूक्ष्म रहस्यों का आत्मसात कर लिया। आचार्य तुलसी के सन्निधि में रहकर आपन अनेक आगमों के सम्पाद का कार्य किया, आगम क साथ साथ साहित्य लेखन मे भी आपने लेखनी चलाई, कोइ भी विषय आचार्य महाप्रज्ञ की लखनी स अछूता नही रहा। मुनि नथमल अपने विद्या गुरु आचार्य श्री तुलसी के प्रति पूण समर्पित थ, उन्होंन अपना वात्सल्यमयी हथौडी स आपव गशा आपको अपनी प्रजा जागृत करने का अवसर दिया। आचाय श्री तुलमी केअथक परिश्रम का ही ल ह। कि उन्होंन आपका अज्ञ मे महाप्रज्ञ बना दिया। आपका जीवन अनुशासन मय था आपने कठोर अनुशास्ता आचार्य श्री तुलसी के अनुशासन को सहा। किसी दार्शनिक न ठीक ही कहा ह।

"Most Powerful is he who has himself in his power." सबसे शक्तिशाली व्यक्ति वह ह जो अपन का अपने अनुशासन म रखता है। कठोर अनुशासन के साथ-साथ आपको जो वात्सल्यमय सस्कार दिए उन सस्कारों का आज आप खुल हाथों से दुनिया को बांट रहे है इस नवे दशक मे भी आप जो अथक परिश्रम कर रहे हे अहिसा यात्रा के द्वारा जन-जन की अहिसा का सदेश दे रहे है अमन और शांति का संदेश दे रहेहै, आज सब जगह हिसा की ज्वाला भभक रही है। चाह घर, परिवार हा, दुकान, ऑफिस हो या फिर राजनैतिक क्षेत्र सब जगह हिसा के बादल गहरा रहे है सब एक दूसर कि हिसा करने पर उतारु हो रहे हे भाई-भाई के खून का प्यासा बना हुआ है। आज इस हिसावादी इक्कीसवी सदी मे आपने इस उम्र मे अहिसा यात्रा करने का लक्ष्य बनाया सचमुच मे यह एक शोध का विषय है। आपने इस भारत भूमि को अपने कोमल चरणों से नापा उसके लिए जन-जन आपका आभारी है। आपकी समता शमता और श्रम निष्ठा को देखकर गणाधिपति गुरु देव तुलसी ने व्यवहार बोध में एक पद्य लिखा :-

महाप्रज्ञ को सम्मुख रख सम शम श्रम साधे
श्रद्धा ज्ञान चरित्रत्रयी को ही आराधे।
मन उत्साही मधुर प्रमित वच काय सजग हो
अन्तरंग धर्मानुराग रंजित रग रग हो।

किसी को समता, उपशम भाव और श्रमशीलता की सीख लेने होतों वे आचार्य महाप्रज्ञ को सामने रखे। समता उनकी साधना का प्रथम बिन्दु है उपशम भाव के कारण वे अपने किसी भी कार्य में किसी भी समय कभी उत्तेजित नहीं होते। श्रम आपके जीवन में बोलता है इस उम्र में भी दिन भर काम में व्यस्थ रहते हैं, श्रद्धा,ज्ञान और चारित्र की आराधना में उनकी जो जागरुकता है वह हम सबके लिए जीवंत प्रेरणा है हरक्षण विधायक भावो में जीते हैं। आचार्य श्री महाप्रज्ञजी अपने श्री मुख से बहुतबार फरमाते हं कि उन्होंने अपने जीवनकाल में कभी भी किसी का अनिष्ट नहीं सोचा इसलिए आप सदा प्रसन्न रहते है हर काम में बच्चों जैसा उत्साह और स्फूर्ति रखते हैं, मधुर वाणी सहज ही लोगों को आपकी ओर खींच लेती है, हर वर्ग के लोग आपको अपने प्राण देवता मानते जीवन निर्माता मानते है। हे शासन नायक ! आज हर वर्ग का इन्सान सूतत आपकी सन्निधि पाना चाहते हैं आपकी उपासना मे आकर लोग शीतल छाव का अनुभव करते है। सौभाग्यशाली है हम, जिन्हें आपकी पावन पुनीत सन्निधी मे साधना करने का अवसर मिला।

तुम्हारी मुस्कान संघ की मुस्कान बन जाए
तुम्हारा अवदान संघ का अवदान बन जाए।
खुशियो का गुलदस्ता बांटता है यह दिन तुम्हारा वरदान विश्व का वरदान बन जाए।

ओम अर्हम्

श्री पारस जैन

प्रेम कुटीर, सरावगी मौहल्ला
पो. बोरावड-३४१५०२
जिला-नागौर (राजस्थान)
फोन : ०१५८८-२४३१४४ (निवास)
०१५८८-२४४४४४ (ऑफिस)

संदेश

श्री धर्मेन्द्रजी जैन,

जय जिनेन्द्र,

पत्र आपका प्राप्त हुआ, जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि आप 'जिनेन्दु' की ओर से महात्मा महाप्रज्ञ अभिनन्दन विशेषांक का प्रकाशन करने जा रहे है।

आपका गत विशेषांक (भगवान महावीर जन्म कल्याणक विशेषांक) बहुत ही उत्कृष्ट एवं संग्रहणीय विशेषांक था। आपका प्रकाशित होने वाला महात्मा महाप्रज्ञ अभिनन्दन विशेषांक जनता की भलाई के लिए उपयोगी सिद्ध होगा, ऐसी आकांक्षा है।

मै 'जिनेन्दु' के महात्मा महाप्रज्ञ अभिनन्दन विशेषांक के सफल प्रकाशन हेतु अपनी शुभकामना प्रेषित करता हूं।

शुभेच्छु
पारस जैन
अध्यक्ष-श्री दिगम्बर जैन सभा
बोरावड (राजस्थान)

दिनांक : 25 जुलाई, 2005

महाप्रज्ञ के नाम महावीर का आमन्त्रण

अर्हम

✍ तनसुखलाल बैद

ले आये फरमान वीर का इसको मान्य बनाना होगा
महाप्रज्ञ को महावीर बन वीर धरा पर आना होगा
धरा बुद्ध, महावीर, गुरु गोविन्द,और राजा अशोक की
था सुख का साम्राज्य, कही भी, नही लहर संताप शोक की
बदल गई सारी धाराएं, रक्षक भी भक्षक बन बैठे

ऐसे मे किसको पुचकारें,किसके कान पकड़ कर ऐंठे
संशय की फूटी धाराएं, फिर विश्वास जगाना होगा
नजर नही आता जब कुछ भी,अंगुली पकड़ चलाना होगा
सुखद अहिंसा यात्राओं का शंखनाद गुंजाना होगा
नये प्रयोगों से चिन्तन पर नया निशान लगाना होगा।

महाप्रज्ञ को महावीर बन......
हिंसा के नंगे तांडव में, भस्म हुए कितने निर्दोषी
नष्ट हुई सारी पहचानें, कौन पराया कौन पड़ोसी
अधिकारों की छिड़ी लडाई, अर्थवाद हावी जीवन पर
टूट गई सारी सीमाएं, नजर आ रहा हे केवल डर

महावीर आवाज दे रहे, गुरु वर कान लगाना होगा
धूं-धूं कर रही आग को आकर शीघ्र बुझाना होगा
तप्त धरा पर मेघदूत को निज संदेश सुनाना होगा
सूखे सारे स्रोत स्वरों के गीत सुहाना गाना होगा
महाप्रज्ञ को महावीर बन....

सम्पर्क सूत्र :- इस्टर्न ट्रेडिंग कम्पनी,
बी 13 बंसल टावर, आर.के भट्टाचार्य रोड, पटना- 800001 (बिहार)

ज्ञान के अक्षय कोष

-मुनि राकेश कुमार

वर्तमान मे अनेक धर्माचार्य है। उनके द्वारा रचित विशालकाय ग्रथ भी उपलब्ध है। फिर भी विश्व के क्षितिज पर धर्म और अध्यात्म के क्षेत्र मे आचार्य श्री महाप्रज्ञजी और उनके साहित्य की एक अलग पहचान है। आज हर जिज्ञासु और सत्यान्वेषी मानव के मानस मे उनके चिंतन और मार्गदर्शन के प्रति श्रद्धा और जिज्ञासा का भाव दृष्टिगोचर हो रहा है। इसका कारण है कि (उन्होने जो बोला और लिखा है, उसे स्वय जिया है। उनकी वाणी अनुभवपूत है, तप पूत है। आचार्य श्री महाप्रज्ञजी का जीवन एक महाकाव्य के समान है, जिसके हर सर्ग के मनन और अनुशीलन से हमारा मानस अध्यात्मरस से आप्लावित हो जाता है।) 'रामो विग्रहवान् धर्म' प्राचीन साहित्य मे भगवान राम को धर्म का शरीरधारी रुप बताया गया है। इसी प्रकार आचार्य श्री महाप्रज्ञ अध्यात्म के शरीरधारी मूर्तरुप है। उन्होने अपनी साधना की तूलिका से जिन स्वर्णिम रेखाओं का अकन किया है। उनका अनुसरण कर हम चेतना के ऊर्ध्वारोहण की दिशा मे अग्रसर हो सकते है। उन रेखाओं का निर्माण जिन आदर्शो के आधार पर हुआ है उनकी [illegible] चर्चा हम यहा कर रहे है।

आत्म--निरीक्षण

जीवन की सफलता के लिए आत्म निरीक्षण बहुत जरुरी है। पर हमारी आखे बहिर्मुखी हैं। वे दूसरो को देख सकती है, अपने को नही देख पाती। यह उसकी बहुत बड़ी दुर्बलता है। इससे हम सत्य का बोध नहीं कर सकते। किसी शायर ने लिखा है

आख सबको देखती है, खुद से अंधी है मगर,
देख अपने को रे गाफिल, कौन इसका दे सलाह।

आचार्य महाप्रज्ञजी की जीवनशैली मे प्रारभ से ही आत्म निरीक्षण और शोधन का प्रमुख स्थान रहा है उनके द्वारा निर्दिष्ट प्रेक्षाध्यान का प्रारंभ इस आगम वाणी से होता है- 'संपिक्खए अप्पग मप्पएण' अपने से अपने को देखो। जब तक हमारा चिंतन पर दर्शन पर केन्द्रित रहता है तब तक हम ध्यान की गहराई मे प्रवेश नहीं कर सकते तथा नाना प्रकार के तनावो से मुक्त नहीं हो सकते। आचार्य श्री ने अपने आदर्श सूत्रों में लिखा है 'अपने सुधार और बदलाव के लिए स्व-दोष दर्शन जरुरी है।' इसके बिना हम अपनी विवशताओं और दुर्बलताओं पर विजय नहीं पा सकते। हर व्यक्ति को अपना बड़ा दोष भी छोटा और दूसरों का छोटा दोष भी बड़ा दिखाई देता है। संस्कृत कवि ने लिखा है-

यदा पश्यामि स्वदोषान्, दृष्टिं संकुचिता भवेत्।
विशाला सैव जायेत, परेषां दोष दर्शने।

जब मैं अपने दोष देखता हूं तो मेरी आंखें छोटी हो जाती है, जब दूसरों के दोष देखता हूं तो वे बड़ी हो जाती है। राजनीति और धर्मनीति की दिशा बिलकुल भिन्न है। जो दूसरों के दोषों का दर्शन और विवेचन कर सकता है वह राजनीति में पंडित समझा जाता है। पर धर्म नीति के अनुसार उसे विद्वान समझा जाता है जो अपनी स्खलना का शोधन और विवेचन कर सकता है।

आचार्य श्री महाप्रज्ञजी ने हर मनुष्य को अपना निर्णायक स्वयं बनने पर बल दिया है। जो दूसरों की प्रशंसा से प्रसन्न और आलोचना से हतोत्साहित हो जाता है, वह उनकी भाषा में कठपुतली के समान होता है। उसका कोई स्वतंत्र अस्तित्व नही होता। हमें हर व्यक्ति की प्रतिक्रिया को शांति से सुनना-समझना चाहिए। पर उसके संबंध में अपने विवेक से निर्णय करना चाहिए। आचार्य प्रवर ने संस्कृत श्लोक मे लिखा है-

"तोलयत स्व तुलया, मिमीध्वं निज मानतः।
मा भवत क्रीडनकं, पर हस्त प्रताडितम्।।"

अपने आपको अपनी तुला से तोलो, अपने माप से मापो, तुम दूसरो के हाथ के खिलोने मत बनो। दार्शनिक चर्चाओं मे 'कोहम्' मैं कौन हूं, यह प्रमुख प्रश्न रहा है। आचार्य प्रवर न आध्यात्मिक साधना के लिए 'क्वाहं' मै कहां हूं, की जिज्ञासा पर विशेष बल दिया है। हर साधक का अपने विकास की भूमिका का चिंतन और मनन करना चाहिए, उसके आधार पर वह साधना का परिष्कार कर सकता है। 'क्वाहं' मै कहां हूं-साधना की किस भूमिका मे हू, इस जिज्ञासा के अभाव मे 'कोहम्' का प्रश्न केवल बुद्धि का व्यायाम बन जाता है।

संकल्प बल

स्थानांग सूत्र में लाख, मोम, काठ और मिट्टी इन चार प्रकार के गोलों के रुपक से मानव के संकल्प बल की तरतमता का मार्मिक निरुपण हुआ है। जिनका संकल्प बल बहुत दुर्बल हाता है वे मनुष्य लाख और मोम के समान है। लाख और मोम अग्नि का ताप लगते ही पिघलकर पानी हो जाते है। जिनका संकल्प बल थोड़ा सबल होता है वे काठ के गोले के समान है। काठ ज्वाला में रखने से जलकर भस्म हो जाता है। पर मिट्टी के गोले को अग्नि मे जितना तपाया जाता है वह उतना ही मजबूत होता है। जो हर अनुकूल और प्रतिकूल परिस्थिति मे अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर होते है वे मिट्टी के गोले के समान है।

जब हम आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी की शैशव काल से लेकर वर्तमान के इस शिखर काल की महायात्रा का अवलोकन करते है तो लगता है वे प्रारंभ से ही मिट्टी के गोले के समान वज्र सकल्प के धनी रहे है। उनका शैशव काल अविकसित ग्राम्य वातावरण में बीता था और आज वे विश्व के समस्त आध्यात्मिक और दार्शनिक जगत मे सर्वमान्य मार्गदर्शक है, यह उनकी अप्रतिम सकल्प शक्ति का चमत्कार है।

गुरुदेव श्री तुलसी ने धर्मसंघ के विकास के लिए जो भी सपने संजोए थे, उन्हे साकार करने का पहला निर्देश आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी को ही प्रदान किया था। आपने सहजता से उन्हे स्वीकार किया, उनमें कभी भार का अनुभव नहीं किया। दो-तीन दशक पूर्व तक धर्म संघ में साधनो और

परिस्थितियों की अनुकूलता नहीं होने पर भी आपने-अपने संकल्प बल से उन्हें सफल बनाया। चाहे साधु-साध्वियों के अध्ययन का क्रम निश्चित करना हो, चाहे आगम-साहित्य का संपादन और विवेचन हो और चाहे समण श्रेणी की कल्पना को व्यवस्थित रुप प्रदान करना हो। आचार्य श्री महाप्रज्ञ ने स्वयं अपने अनुभवों में लिखा है-गुरु देव श्री तुलसी ने मुझे जितने निर्देश प्रदान किए है किसी अन्य आचार्य ने अपने शिष्य को दिए है या नहीं, यह खोज का विषय है। इसीलिए (प्रसिद्ध जैन विद्वान डॉ. दलसुख भाई मालणिया ने कहा था-गुरु देव श्री तुलसी और आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी जैसी गुरु-शिष्य की जोड़ी अन्यत्र दुर्लभ है। जीवन के नौवें दशक में अहिंसा यात्रा का भागीरथ अनुष्ठान आचार्य श्री के संकल्प बल का संजीव उदाहरण है।)

स्थितप्रज्ञता

आचार्यश्री महाप्रज्ञ जी ज्ञान के अक्षय कोष है। उनकी महाप्रज्ञता के समक्ष सभी श्रद्धा से नतमस्तक है। पर इससे भी उनकी महान उपलब्धि जो है, वह है स्थितप्रज्ञता। भारतीय जीवन दर्शन में स्थितप्रज्ञता का सर्वोच्च स्थान है। जो हर स्थिति में निर्द्वंद्व होता है, जो वीतराग कल्प होता है, वह स्थितप्रज्ञ होता है) जिसकी प्रज्ञा स्थिर होती है, वहीं महाप्रज्ञता के शिखर पर आरुढ़ हो सकता है। श्री भगवद्गीता में स्थितप्रज्ञता का एक स्वतंत्र प्रकरण है। भगवान महावीर की वाणी में प्रयुक्त 'स्थितात्मा' और 'स्थित धी' शब्दों का भी वही अर्थ है जो स्थित प्रज्ञ का है। गुरु देव तुलसी ने ,स्वयं आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी के संबंध में अपने उद्गार प्रकट करते हुए कहा था-'महाप्रज्ञ आज भी वैसे ही है, जैसे युवाचार्य और आचार्य बनने से पूर्व मुनि नथमल की अवस्था में थे'। गुरु देव ने रामायण के इस सुप्रसिद्ध श्लोक को भी इस प्रसंग में उद्धृत किया-

आहूतस्याभिषेकाय, विसृष्टस्य बनाय च,
न लक्षितो मयातस्य, स्वल्पोप्याकार विभ्रमः।

राजा दशरथ ने राम के वनवास प्रस्थान पर कहा-'मैंने राम को अभिषेक के लिए बुलाया और तत्काल उसे चौदह वर्ष के दीर्घ वनवास की आज्ञा सुना दी। इन दोनों विपरीत परिस्थितियों में मैंने राम के चेहरे पर कोई अंतर नहीं पाया' यही स्थिति महाप्रज्ञ के जीवन में मैं देख रहा हूं। गुरु देव के उपरोक्त उद्गार आचार्य प्रवर की स्थिप्रज्ञता के प्रतीक है।

समर्पण

आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी अपने जीवन की सफलता ओर ऊंचाई का सारा श्रेय श्रद्धा और समर्पण को देते हैं। इन दोनों का प्रयोग विभिन्न संदर्भों में होता है। सत्य के प्रति, लक्ष्य के प्रति तथा गुरु और मार्गदर्शक के प्रति जीवन में समर्पण आवश्यक होता है। आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी के जीवन में इन सबका नैसर्गिक संगम है। पर सबसे पहले समर्पण से हमारा ध्यान विनय और नम्रता के आदर्श पर केन्द्रित होता है सरस्वती का अनुपम वरदान प्राप्त कर भी गुरु देव के प्रति आचार्य प्रवर की नम्रता और कृतज्ञता सबके लिए आल्हाद/दायक और प्रेरणादायक थी। एक विश्वविद्यालय के विद्वानों ने जब आचार्य श्री के संस्कृत भाषण और आशु कवित्व को सुना तो वे मंत्रमुग्ध हो गए। जब उन्होंने पूछा कि आपने इतना गहरा अध्ययन कहां से किया तो आपने तत्काल गुरु देव की ओर संकेत करते हुए कहा-मैंने सारा अध्ययन इस तुलसी विश्वविद्यालय में किया है। वे विद्वान इस उत्तर से आचार्य श्री के प्रति श्रद्धा से प्रणत हो गए। ◆

अगले वर्ष फिर उपहार में देंगे

इतना ही शानदार और जानदार विशेषांक

हमारा निवेदन

'जिनेन्दु' खरीद कर पढ़िये
हर अंक का पैसा दीजिए

यह बात आपकी प्रतिष्ठा और आपके 'जिनेन्दु' प्रेम से संबंध रखती है

खरी बात यह है

आज तक जितने अखबार बन्द हुए है,

बिना पैसे दिये पढ़नेवाले अखबारप्रेमियों के कारण ही बन्द हुए है

जिन्दा समाज वह-जिसके बहुत सारे अखबार हो,
और अखबार तब ही जिन्दा रहते हैं,
जब लोग उन्हें खरीद कर पढ़ें।

अगर हमें 'जिनेन्दु' को जिन्दा रखना है तो

'जिनेन्दु' खरीद कर पढ़ने की आदत बनाइये